# सहज ज्ञानप्रदीप

परम पूज्य माताजी श्री निर्मला देवी के
प्रवचनों से संकलित

# सहज ज्ञानप्रदीप

परमपूज्य माताजी श्री निर्मला देवी के
प्रवचनों से संकलित

**संकलन**
श्रीमती लीला अग्रवाल
डा.(श्रीमती) सरोजिनी अग्रवाल

# प्राक्कथन

प्रिय सहजी भाई/भगिनी

श्रीमती लीला अग्रवाल एवं डा.सरोजिनी अग्रवाल के अथक प्रयास तथा परिश्रम के फलस्वरूप, सर्वज्ञान की स्रोत, साक्षात श्री महासरस्वती, हमारी परम-परमेश्वरी श्री माताजी के निर्मल ज्ञानसागर से संकलित और उन्हीं के पावन चरण-कमलों में समर्पित कुछ मोती, 'सहज ज्ञानप्रदीप' के रूप में आपके लाभार्थ प्रस्तुत हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि उत्क्रान्ति पथ के हर कदम पर साधक का मार्गदर्शन करते हुए सहज ज्ञानप्रदीप उसे अन्तिम लक्ष्य (मोक्ष) प्राप्त करने में सहायक होगा। आवश्यकता है पूर्ण निष्ठापूर्वक इसके अनुरूप चलने की।

पुस्तक में वर्णित सभी संदर्भ अक्षरश: परम पूज्य श्री माताजी की निर्मल वाणी से उद्धृत हैं। संकलनकारिका के शब्दों में :-

''इस संकलन में हमारी दृष्टि दो बातों पर विशेष रूप से केन्द्रित रही है-एक तो हर आलेख में आदि से अन्त तक एक प्रवाह बना रहे और दूसरा-विषय से सम्बन्धित पर्याप्त सामग्री हम आलेख में दे पाएं। इस कारण कहीं-कहीं तो एक ही प्रवचन के अंशों का क्रम ऊपर-नीचे हो गया है और कहीं कुछ पंक्तियों को एक साथ जोड़ दिया गया है।

अन्त में बड़ी ही विनम्रता से एक बात और कहना चाहेंगे कि ये संकलन श्री माताजी के प्रति पूर्ण समर्पण भाव से, पूरी ईमानदारी के साथ तैयार किया गया है। इसके पीछे मात्र एक ही शुद्ध इच्छा है कि सहजी भाई-बहन श्री माताजी द्वारा दिए गए ज्ञान को उन्हीं की पावन वाणी के माध्यम से समझें और ध्यान की गहनता में उतरें।''

पुस्तक की विषयवस्तु को आवश्यकतानुसार प्रस्तुत करने का यथासम्भव प्रयत्न किया गया है। आशा है कि सभी हिन्दीभाषी साधक इससे लाभान्वित होंगे।

सम्पादक

# विषय-क्रम


| अध्याय | प्राक्कथन | पृष्ठ |
|---|---|---|
| | ओ मेरे पुष्प सम बच्चो! | 7 |
| 1 | माँ | 9 |
| 2 | निर्मला | 12 |
| 3 | सहजयोग-शान्ति एवं आनन्द का स्रोत | 19 |
| 4 | निर्मलविद्या | 26 |
| 5 | सृष्टि की सूत्रधार-श्री आदिशक्ति | 28 |
| 6 | आदिशक्ति के अवतरण का प्रयोजन एवं रहस्य | 37 |
| 7 | मानव का विकासक्रम एवं कलियुग में उत्क्रान्ति | 47 |
| 8 | सूक्ष्मतन्त्र एवं कुण्डलिनी शक्ति | 59 |
| 9 | तत्व की बात | 76 |
| 10अ | वाहिकाओं पर स्थापित शक्तियाँ | |
| | ईड़ा नाड़ी - I श्री महाकाली | 78 |
| | II श्री भैरवनाथ | 82 |
| | पिंगला नाड़ी - I श्री महासरस्वती | 84 |
| | II श्री हनुमान | 89 |
| | सुषुम्ना नाड़ी - श्री महालक्ष्मी | 93 |
| 10ब | सूक्ष्म चक्रों पर स्थापित शक्तियाँ | |
| | मूलाधार चक्र - श्री गणेश | 100 |
| | मूलाधार - श्री गौरी (कुण्डलिनी) | 109 |
| | स्वाधिष्ठान चक्र -I श्री सरस्वती | 111 |
| | II श्री ब्रह्मदेव | 115 |
| | नाभि चक्र - I श्री विष्णु-धर्म एवं विकास के आधार | 116 |
| | II श्री लक्ष्मी-क्षेमप्रदायिका | 121 |
| | भवसागर - श्री आदिगुरु-गुरुतत्व | 132 |

| | | |
|---|---|---|
| | अनाहत चक्र (मध्य) - शक्ति प्रदायिनी श्री जगदम्बा | 140 |
| | अनाहत चक्र (दायां) - मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम | 144 |
| | अनाहत चक्र (बायां) - आत्मज्योति-श्री शिव | 148 |
| | विशुद्धि चक्र - 1) योगेश्वर श्री कृष्ण | 161 |
| | 2) कृष्णशक्ति श्री विष्णुमाया | 170 |
| | आज्ञा चक्र - 1) भगवान ईसामसीह | 174 |
| | 2) ज्ञानमूर्ति भगवान बुद्ध | 181 |
| | 3) श्री महावीर | 185 |
| | 4) श्री एकादश रुद्र | 191 |
| | सहस्रार चक्र - सहस्रार स्वामिनी-महामाया-माताजी श्री निर्मलादेवी | 196 |
| 11 | श्री कल्कि | 203 |
| 12 | परमात्मा का अस्तित्व एवं अवतरण | 210 |
| 13 | आत्मसाक्षात्कार का अर्थ एवं आशीर्वाद | 219 |
| 14 | आत्मसाक्षात्कार की स्थिरता | 224 |
| 15 | ध्यान में गहनता एवं निर्विचार चेतना | 230 |
| 16 | अन्तर्वलोकन | 241 |
| 17 | सामूहिक चेतना एवं सामूहिकता | 245 |
| 18 | निर्वाज्य प्रेम | 249 |
| 19 | योगपथ में अन्तर्निहित बाधाएं | 255 |
| 20 | सहजयोग में परिपक्वता | 262 |
| 21 | अन्तिम निर्णय | 271 |
| 21अ | उत्क्रान्ति का मध्य मार्ग | 286 |
| 22 | सूक्ष्म अवस्था की प्राप्ति-‘पुनर्जन्म’ | 295 |
| 23 | सहस्रार का सार-पूर्ण समग्रता | 302 |
| 24 | निरानन्द की अनुभूति | 306 |

| | | |
|---|---|---|
| 25 | सत्-चित्-आनन्द | 309 |
| 26 | ‘आत्मा’ एवं ‘आत्म-बोध’ | 315 |
| 27 | परमात्मसाक्षात्कार (God Realization) | 321 |
| 28 | सच्चे सहजयोगी की पहचान | 324 |
| 29 | पूर्ण समर्पण एवं अखण्ड श्रद्धा | 333 |
| 30 | एकमात्र कार्य-सहजयोग प्रचार-प्रसार | 346 |
| 31 | पूजा-महत्व एवं नियमाचरण | 353 |
| 32 | श्री मातृ-वन्दना | 374 |

# मेरे पुष्पसम बच्चो !

ओ मेरे पुष्पसम बच्चो,
आप जीवन से नाराज हैं,
नन्हें शिशुओं की तरह
'माँ' जिनकी अँधेरे में खो गई,

यात्रा के निष्फल अंत की निराशाभिव्यक्ति के कारण
रुष्ट हो तुम!
सौन्दर्य की खोज में
असौन्दर्य ओढ़े हो तुम!
सत्य के नाम पर असत्य का नाम लेते हो तुम !
प्रेम प्याला भरने की खातिर भावनाएं बहाते हो तुम!

मेरे मधुर मधुर बच्चो!
स्वयं से, अपने अस्तित्व से
और साक्षात आनन्द से युद्धरत हो,
किस प्रकार शांति प्राप्त कर सकते हो तुम?

शांति की बनावटी नकाब और
त्याग के प्रयत्न काफी हुए,
अपनी गरिमामयी 'माँ' की गोद में,
कमल की पंखुड़ियों पर
अब करो विश्राम,

सुन्दर पुष्पों से
सजाऊँगी जीवन तुम्हारा,
आनन्द सुगन्ध से

भर दूँगी हर पल तुम्हारा,
दिव्य प्रेम से करूँगी,
तुम्हारे मस्तक का अभिषेक,

कष्ट तुम्हारे अब
मुझसे सहन होते नहीं,
आओ! डुबो दूँ तुम्हें
आनन्द-सागर में,
डुबो दो अपने अस्तित्व को
एक महान अस्तित्व में,
जो आत्मा के बाह्य दलपुंज में
मुस्करा रहा,
सदा तुम्हें छेड़ने के लिए
रहस्यमय ढंग से छुपा हुआ,

चेतन होकर देखो उसे,
दिव्य आनन्द से तुम्हारे रोम-रोम को
चैतन्यित करता हुआ,
पूर्ण ब्रह्माण्ड को प्रकाश से भरता हुआ।

**आपकी माँ निर्मला**

परम पूज्य श्री माताजी की अंग्रेजी कविता का हिन्दी रूपान्तरण

# अध्याय १

# माँ

...... मैं आपकी माँ हूँ। आप अच्छी तरह से जान लें कि मैं आपकी माँ हूँ। माँ होने का मतलब होता है कि सम्पूर्ण सिक्योरिटी (संरक्षण) है। .....मैं ही आदि माँ हूँ। मैं ही आदिशक्ति हूँ।

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, १.२.१९७५**

...... माँ बच्चे को जानती अच्छे से है, जानती है उसमें क्या दोष है? क्या बात है? किस  तरह से रुक गये? उसको उसकी मालूमात गहरी होती है बहुत। वह समझती है कि किस तरह से बच्चे को ठीक किया जाए। कहीं डाँटना पड़ता है तो डाँट भी देती है। जहाँ दुलार से समझाना पड़ता है, समझा भी देती हैं। ये सिर्फ माँ का काम है, और कोई कर भी नहीं सकता, मुश्किल है और किसी के लिये करना, क्योंकि ये सारा काम प्यार का है। आप चाहे मुझसे हजारों मील दूर हों, आपके सांसारिक नाम चाहे मुझे पता न हो; अपने अंग प्रत्यंग के रूप में मैं आप सबको जानती हूँ, मैं आप सबके विषय में जानती हूँ।

**प.पू.श्री माताजी, देहली, १०.२.८५**

...... ये माँ ही समझ सकती है कि बच्चे कितनी आफतें उठा रहे हैं, उनको कितनी परेशानियाँ हैं और किस तरह से उनका भार उठाना चाहिए, उनके अन्दर किस तरह प्रभु का अस्तित्व जागृत करना चाहिए – ये माँ ही समझ सकती है और कर सकती है।

...... आप लोग मेरे अपने हैं, मेरी जान के प्यारे हैं। लेकिन आप लोग गलतफहमी में फँसे हुए इधर–उधर भटक गए हो। तो सोचो एक माँ के लिये कितनी आर्तता, कितनी परेशानी की बात है!

**प.पू.श्री माताजी, ३१.३.८५**

...... मैंने  देखा कि जितने भी अवतरण हुए वे बहुत जल्दी चले गए। परन्तु माँ की स्थिति भिन्न है। वह तो अपने बच्चे के लिए लड़ती ही रहेगी, संघर्ष करती ही रहेगी। अंतिम क्षण तक वह संघर्ष करेगी कि उसके बच्चे को सभी आशीर्वाद मिल जायें। यह धैर्य, प्रेम और क्षमाभाव एक माँ में अन्तर्जात होता है। उसका दृष्टिकोण बिल्कुल भिन्न होता है। किसी उपलब्धि, यश या पुरस्कार के लिये वह कुछ नहीं

करती, केवल माँ होने के नाते सब कुछ करती है। एक माँ की, एक सच्ची माँ की यही पहचान है। अपने बच्चों के लिये वह किसी भी सीमा तक जा सकती है। अपने बच्चों को विनाश से बचाने के लिये वह दिन रात परिश्रम कर सकती है। माँ यह जानती है कि किस प्रकार बच्चों को पालना है, ये माँ का ही कार्य है, माँ ही इसे कर सकती है।

**प.पू.श्री माताजी, १०.५.१९९८**

...... बच्चे को ठीक करना है, उसे सँभालना है तो माँ को गन्दगी में हाथ डालना पड़ता है, अगर वह 'गन्द' – 'गन्द' कहने लगी तो बच्चे को कौन साफ करेगा? और इसीलिये ये एक माँ का काम है और यही हम 'सहजयोग' में करते हैं। आप सब उसमें नहा लीजिए, उसका आनन्द उठाइये– यही एक माँ की इच्छा है। माँ की एक ही इच्छा होती है कि अपनी शक्ति अपने बच्चों में आनी चाहिये।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली २२.९.७९**

...... ये तो एक माँ की बात है कि वो आपके सुख की बात करती है। आपको जिससे सुख मिले, जिससे आपको संतोष मिले, जिससे आपको शांति मिले, जिससे आपको प्यार मिले और दुनिया में आप एक सज्ज्ञन इंसान हो जायें। ये तो एक माँ का तरीका है।

...... ये आपकी माँ आपको पुनर्जन्म देने वाली हैं। इनकी जो शक्ति है वो माँ की शक्ति हैं और मातृत्व की शक्ति ऐसी है कि वो अपने बच्चे को हमेशा संरक्षित करती है। यही आपकी गुरु है और आपकी अगुआ है।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १४.२.९९**

...... मैं इसीलिये आयी हूँ कि आपकी अपनी जो शक्ति है, जो आपके अन्दर अपना बसा हुआ है उसे मैं देख पा रही हूँ – उससे मैं आपका मिलन करवा दूँ।

– माँ के नाते मेरा यह बताना आवश्यक है कि आपको अपना आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करना है।

**प.पू.श्री माताजी, फरवरी १९८१**

...... यह सौभाग्य की बात है कि आप इस समय पर जन्मे हैं। आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के लिये आपने इस समय पर जन्म लिया है, क्योंकि आप युग–युगान्तरों के साधक हैं।

समय आ गया है, वक्त आ गया है। यह आपको आत्मसाक्षात्कार प्राप्त होने का समय है। अपने–अपने अस्तित्व को, अपनी गरिमा को पाइये, उसको जानिये

और उसमें समाईये।

**प.पू.श्री माताजी, किंगस्टन, ११.६.१९८०**

...... आपमें विचारों का इतना भंडार है, इतना भ्रम है कि आप कुछ निर्णय नहीं कर पाते। अत: आदिशक्ति को मानव रूप में पृथ्वी पर अवतरित होना पड़ा और अत्यन्त चतुराई पूर्वक आपको सब कुछ बताना पड़ा। सभी विचारों का समन्वय और मानव स्वभाव को समझ कर संतुलन करने के लिये एक माँ की ही आवश्यकता है।

**प.पू.श्री माताजी, ३.१.१९७८**

...... माँ जो होती है वो समझ के बताती है। ये नहीं कि मैं आपकी हर समय परीक्षा लूँ और आपको परेशान करूँ और फिर देखूँ कि आप इस योग्य हैं कि नहीं, या पात्र हैं कि नहीं।

**प.पू.श्री माताजी, १०.२.१९८१**

...... इस कलियुग में आपकी सहायता करने के लिये तथा प्रेमपूर्वक आपको हर बात बताने के लिये आपकी माँ अवतरित हुई हैं।

**प.पू.श्री माताजी, २४.१०.१९९३**

...... जितना गोपनीय है वह सब मैं आपको बता रही हूँ। जितना खुलकर मैंने इस जन्म में कहा है, उतना कभी नहीं कहा।

– माँ हर समय इसी चिन्ता में लगी रहती है कि बच्चे का हित किस चीज़ में है? अगर बच्चा अपना हित समझ ले तो माँ का कर्तव्य भी पूरा हो जाएगा।

**प.पू.श्री माताजी, ३१.३.१९९१**

...... तो माँ होने के नाते मैं विनती करती हूँ और शक्ति के नाते आगाह करती हूँ कि अपनी गहराई को पाइये, पाने का समय आ गया है। ......हर कदम पर, हर स्थल पर मैं आपके साथ हूँ, सर्वत्र। कहीं आप चले जाएं, हर स्थान पर मैं आपके साथ हूँ – पूर्णतया व्यक्तिगत रूप से, हर प्रकार से, दिलोदिमाग़ से। जब भी आप मुझे याद करेंगे तो अपनी पूरी शक्तियों के साथ आपके पास हूँगी। यह मेरा वचन है।

**प.पू.श्री माताजी, मुम्बई, २७.५.१९७६**

# अध्याय २

# निर्मला

स्वयं आपकी माँ का नाम ही निर्मला है और इसमें अनेक शक्तियाँ हैं।

'नि:'– इस नाम में पहला शब्द नि: है जिसका अर्थ है नहीं। कोई वस्तु जिसका वास्तव में अस्तित्व नहीं है, किन्तु जिसका अस्तित्व प्रतीत होता है उसे महामाया (भ्रम) कहते हैं। सम्पूर्ण विश्व इस प्रकार है। यह दिखता है किन्तु वास्तव में नहीं है। यदि हम इसमें तल्लीन हो जाते हैं तो प्रतीत होता है कि यही सब कुछ है। तब हमें लगता है कि हमारी आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं है, सामाजिक व पारिवारिक स्थितियाँ अंसतोषजनक हैं, हमारे चारों ओर सम्पूर्ण, जो कुछ भी है, सब खराब है। हम किसी चीज़ से सन्तुष्ट नहीं हैं।

समुद्र सतह पर जल अत्यंत गदला होता है। उसके ऊपर अनेक वस्तुएं तैरती हैं किन्तु यदि हम उसकी गहराई में जाएं तो देखेंगे कि उसके भीतर कितना सौन्दर्य, किती धन–सम्पदा और कितनी शक्ति है, तब हम भूल जाएंगे कि सतह का जल मैला है। कहने का अभिप्राय है कि हम चारों ओर जो देखते हैं वह सब माया (भ्रम) है। सर्वप्रथम आपको स्मरण रखना चाहिए कि यह जो दिखता है, यह कुछ नहीं है। यदि आपको 'नि:' भावना अपने अन्दर प्रतिष्ठित करनी है तो जब भी आपके मन में विचार आए तो कहिए 'यह कुछ नहीं है, यह सब भ्रम है, मिथ्या है।' दूसरा विचार आये तो कहिए 'यह कुछ नहीं है।' आपको बारम्बार यह भाव लाना है, तब आप 'नि:' शब्द का अर्थ समझ पाएंगे।

.....आपको जो कुछ माया रूप दिखता है, यह सम्पूर्णत: भ्रम मात्र नहीं है, इस दृश्यमान के परे भी कुछ है किन्तु अपने जन्मों के इतने बहुमूल्य वर्ष हमने वृथा गँवा दिए हैं कि हम वे वस्तुएं जिनका वास्तव में अस्तित्व ही नहीं है उनको महत्व देते हैं और इस प्रकार हमने पापों के ढेर इकट्ठे कर लिए हैं। इन सब वस्तुओं से हमने आनन्द लाभ करने का प्रयास किया है किन्तु वास्तव में इनमें से हमें कुछ भी आनन्द प्राप्त नहीं हुआ। तत्वरूप से ये सब कुछ नहीं हैं। अत: दृष्टिकोण यह होना चाहिए कि यह सब 'कुछ सत्य नहीं' है, केवल ब्रह्म ही सत्य है, अन्य सब मिथ्या है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आपको यह दृष्टिकोण अपनाना होगा, तब आप सहजयोग को समझेंगे।

..... साक्षात्कार के पश्चात् अनेक सहजयोगियों का यह होता है कि वे सोचते हैं कि हमें सिद्धि (साक्षात्कार) प्राप्त है। हमें पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त है तो हम समृद्ध क्यों नहीं हैं? उनके विचार में परमात्मा का अर्थ है समृद्धि। यदि आप विचार करें कि क्या कारण है कि साक्षात्कार के पश्चात् भी आपका स्वभाव नहीं बदला तो आप देखेंगे कि आपकी आत्मा का स्वरूप नहीं बदला, देखिए, 'स्व' अर्थात 'आत्मा' और 'भाव' अर्थात स्वरूप के योग से बना, स्वभाव शब्द कितना सुन्दर है। बताइए क्या आपने अपनी आत्मा का स्वरूप प्राप्त कर लिया है? यदि आप आत्मा में स्थित हो गए तो आप देखेंगे कि भीतर इतना सौन्दर्य है कि आपको बाह्य सब कुछ नाटक सा प्रतीत होगा। जब तक आपकी यह साक्षी स्थिति जागृत नहीं होती, आपने 'नि:' शब्द का अनुसरण नहीं किया, उसके अनुसार आचरण नहीं किया। यदि आप जानते हैं कि 'नि:' आपके भीतर प्रतिष्ठित नहीं हुआ है, फिर भी आप इतने भावुक, अहंकारी, हठी अथवा विनम्र व निराश होते रहते हैं तो इन पराकाष्ठाओं (असीम अवस्थाओं) में स्थिति का कारण 'नि:' से संबंधित है। आप न इधर न उधर, न इस स्थिति में हैं और न उस स्थिति में, अर्थात डाँवाडोल स्थिति में हैं। 'नि:' स्थिति ध्यान–योग में सर्वश्रेष्ठ रूप में प्राप्त की जा सकती है। अपने जीवन में 'नि:' विचार का अनुसरण करने से आप निर्विचार स्थिति प्राप्त कर लेंगे।

..... निर्विचार अवस्था में आप परमात्मा की शक्ति के साथ एकरूप हो जाते हैं अर्थात बूँद (आप स्वयं) समुद्र (परमात्मा) में आकर मिल जाती है। तब परमात्मा की शक्ति भी आपके भीतर आ जाती है––– अर्थात जब परमात्मा की शक्ति के साथ आप एकरूप हो जाते हैं तो वह (परमात्मा) आपकी देख–रेख करता है। वह आपकी छोटी छोटी बातों के विषय में सोचता है–यह आश्चर्यजनक है।

..... अब मैं आपको अपना रहस्य बताती हूँ। आप प्रार्थना कीजिए, 'माँ, मेरे लिए कृपया ऐसा कर दीजिए' आप आश्चर्य करेंगे, मैं आपकी विनती पर विचार नहीं करती, उसे केवल अपनी निर्विचारिता को समर्पित कर देती हूँ। सम्पूर्ण संयंत्र वहाँ क्रियाशील होता है। उसे (विचार को) उस संयंत्र (निर्विचारिता) में डालिए और माल तैयार होकर आपके सम्मुख आ जाता है। आप उस संयंत्र–यों कहें नीरव अथवा शान्त संयंत्र–को काम तो करने दीजिए। अपनी सारी समस्यायें उनको सौंपिये।

..... आपको निरासक्त रहना चाहिए। ––––आपको कहना चाहिए मेरा कुछ भी नहीं है। सब कुछ आपका ही है। सन्त कबीर कहते हैं 'जब तक बकरी जीवित

है तब तक वह 'मैं, मैं' करती है, किन्तु उसको मारने के बाद उसकी आँतों के तारों से जो ताँत (जिससे धुनिया रुई धुनता है) बनती है उसमें से 'तू ही तू' आवाज आती है। आपको भी 'तू ही तू' भावना में मग्न रहना चाहिए। जब आप 'मैं नहीं हूँ, मेरा कोई अस्तित्व नहीं है।' इस भावना में दृढ़ स्थित हो जाते हैं तभी आप 'नि:' शब्द को समझ सकेंगे।

.....'ला'– अब निर्मला नाम के अन्तिम अक्षर ला के विषय में विचार करें। मेरा दूसरा नाम है 'ललिता'। यह देवी का आशीर्वाद है। यह उनका आयुध (शस्त्र) है। जब 'ला' अर्थात देवी ललिता रूप धारण करती हैं अथवा जब शक्ति ललित अर्थात क्रियाशील रूप में परिणत होती है अर्थात जब उसमें चैतन्य–लहरियाँ प्रवाहित होती हैं, जो आप अपनी हथेलियों पर अनुभव कर रहे हैं, वह शक्ति ललिता शक्ति है। यह सौन्दर्य एवं प्रेम से परिपूर्ण है। जब प्रेम की शक्ति जागृत होती है तब वह 'ला' शक्ति बन जाती है। यह आपको चारों ओर से घेर लेती है। जब वह क्रियाशील होती है तब चिन्ता कैसी? तब आपकी कितनी शक्ति होती है? क्या आप वृक्ष से एक भी फल बना सकते हैं? फल की तो बात क्या आप एक पत्ता या जड़ भी नहीं बना सकते, केवल मात्र 'ला' शक्ति यह सब कार्य करती है। आपको जो आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हुआ है वह भी इसी शक्ति का काम है। इसी शक्ति से 'नि:' तथा 'म' (निर्मला नाम के प्रथम व द्वितीय अक्षर) शक्तियों का जन्म हुआ है। 'नि:' शक्ति श्री ब्रह्मदेव की श्री सरस्वती शक्ति है। सरस्वती शक्ति में आपको 'नि:' के गुण अर्जन (प्राप्त) करने चाहिए। 'नि:' शक्ति प्राप्त करने का अर्थ है पूर्णत: निरासक्त बनना। आपको पूरी तरह निरासक्त बनना चाहिए।

.....'ला' शक्ति में प्रेम का समावेश (सम्मिलित) है। वह हमारा दूसरों से नाता जोड़ती है। 'ल' शब्द 'ललाम' 'लावन्य' में आता है। 'ल' शब्द में उसका अपना ही विशेष माधुर्य है, आपको चाहिए कि दूसरों को उससे (माधुर्य से) प्रभावित करें। दूसरों से बातचीत करते समय आपको इस शक्ति का प्रयोग करना चाहिए। चराचर में यह प्रेम की शक्ति व्याप्त है। ऐसी स्थिति में आपका क्या कर्तव्य है? आपको अपने सारे विचार प्रथम (नि:) शक्ति पर छोड़ देने चाहिए क्योंकि विचारों का जन्म उस प्रथम शक्ति से ही होता है। अन्तिम (ला) शक्ति जो प्रेम और सौन्दर्य की शक्ति है, उससे आपको प्रेम के आनन्द का रसास्वादन करना चाहिए? यह कैसे करें? अपने आपको दूसरों के प्रति प्रेम–भाव में भूल जाएं, उस भाव में खो जाएं। क्या किसी ने अनुमान लगाया है कि वह दूसरों से कितना प्रेम करती है? यह बढ़ता ही रहना

चाहिए।

..... प्रेम अबाधित रूप से प्रवाहित होना चाहिए। अत: 'ललाम' शक्ति जो चैतन्य लहरियों के रूप में विशुद्ध दिव्य प्रेम की शक्ति है उसे पहले अपने भीतर जागृत करें।

..... आपको ललाम शक्ति का, जो चैतन्य लहरी रूप में दिव्य प्रेम की शक्ति है, उपयोग करना चाहिए। दूसरे व्यक्ति को देखने मात्र से आप निर्विचारिता में पहुँच जाएं। इससे दूसरा व्यक्ति भी निर्विचार हो जाएगा। अत: आप अपने को और दूसरे को भी विशुद्ध दिव्य प्रेम का बन्धन दें। 'नि:' शक्ति और 'ला' शक्ति को बँधने दें। 'ला' शक्ति अर्थात चैतन्य लहरियों के रूप में प्रेम की शक्ति को 'नि:' शक्ति अर्थात निर्विचारिता में पहुँचाना परिणत करना है। दोनों को बन्धन देना लाभप्रद है।

.....बहुत से लोगों को, जो बड़े अभिमानी हैं अथवा जो सोचते हैं कि वे बड़े काम करने वाले कर्मवीर हैं, उनसे मैं अपनी बाएं पार्श्व (साईड) को उठाने को बताती हूँ। इस भाँति हम अपने स्वयं के पंच तत्वों (पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश) में अपने स्वयं के विशुद्ध प्रेम को भरते हैं, संचारित करते हैं। अपने हृदय के प्रेम की शक्ति (हमारा बायाँ पार्श्व) को अपनी क्रिया शक्ति (हमारा दायाँ पार्श्व) में पहुँचाना चाहिए। जैसे आप कपड़े पर रंगों से चित्रण करते हैं। जब इस भाँति क्रियाशक्ति में प्रेम का समर्पण किया जाता है तब वह व्यक्ति अत्यंत मधुर हो जाता है और क्रमश: वह माधुर्य, प्रेम, उसके व्यक्तित्व और उसके आचरणों में प्रकाशमान होता है।

.....ललाम शक्ति से मनुष्य को एक प्रकार का सौन्दर्य एक भव्यता और स्वभाव में माधुर्य प्राप्त होता है। इस शक्ति को अपने वचन, कर्म तथा अन्य क्रिया–कलापों में विकसित करने का प्रयास करें। कुछ लोगों का रोष भी मनोहारी होता है। इस मधुर, मनोहारी शक्ति को 'ललिता' शक्ति कहते हैं। लोगों ने इसके भाव को बिल्कुल विकृत कर दिया है। वे कहते हैं कि यह संहार की शक्ति है, किन्तु यह बिल्कुल ठीक नहीं है। यह शक्ति अति मनोरम, सृजनात्मक और कलात्मक है, जिसे 'ललिता' शक्ति कहते हैं। मानो आपने एक बीज़ बोया और उसके कुछ अंश नष्ट हो गए, किंतु यह विनाश अत्यंत कोमल और सरल होता है। तब बीज उग कर एक वृक्ष बनता है जिसमें पत्ते होते हैं फिर पत्ते झड़ते हैं। यह क्रिया भी अत्यंत सुकोमल व सरल होती है। तब फूल आते हैं। जब फूल बनते हैं तब उनके अंश झड़ कर गिर जाते हैं और तब फल आते हैं। उन फलों को भी खाने के लिए काटा जाता है। खाने पर आपको स्वाद प्राप्त होता है। वह भी यही शक्ति है। इस प्रकार ये दोनों शक्तियाँ कार्य करती हैं।

आप जानते हैं बिना काटे, सँवारे आप कोई मूर्ति नहीं बना सकते। यदि आप समझ लें यह काटना, सँवारना भी उसी जाति की क्रिया है तो यदि आपको कभी ऐसा करना पड़े तो आपको बुरा अनुभव नहीं करना चाहिए। वह भी आवश्यक है।

..... 'म'–'नि:' और 'ला' के मध्य में 'म' अक्षर अत्यंत रोचक है। 'म' महालक्ष्मी का प्रथम अक्षर है। 'म' धर्म (पवित्र आचरण) की शक्ति है और हमारी उत्क्रांति की भी। 'म' शक्ति में आपको समझना होता है, फिर उसे आत्मसात करना होता है और पूर्णता, कुशलता (Mastery) प्राप्त करनी होती है। उदाहरण के लिए एक कलाकार में 'ल' शक्ति से उसके सृजन का विचार अंकुरित होता है। 'नि:' शक्ति द्वारा वह उसका निर्माण करता है और 'म' शक्ति के द्वारा वह उसे अपने विचार के अनुरूप बनाता है। प्रत्येक पग पर वह देखता है कि क्या यह उसके विचार के अनुरूप है, यदि नहीं तो वह उसमें सुधार करने की कोशिश करता है। वह यह बार–बार करता है। यह 'म' शक्ति है अर्थात यदि कोई वस्तु ठीक नहीं है तो एक बार, दो बार, बार–बार सुधार करें।

इस सुधार कार्य में परिश्रम लगता है। हमें अपने स्वयं का भी सुधार करना चाहिए। यदि यह न होता तो उत्क्रान्ति की प्रक्रिया असम्भव थी। इसके लिए परमात्मा को महान परिश्रम करना पड़ता है। हमें 'म' शक्ति अर्जित करनी है और उसे सँभालकर रखना है। यदि यह न किया जाए तो दूसरी दोनों शक्तियाँ समाप्त हो जाती हैं क्योंकि यह शक्ति संतुलन बिन्दु (Centre of gravity) है। आपको संतुलन बिन्दु पर स्थित रहना चाहिए और हमारी उत्क्रांति का संतुलन बिंदु 'म' शक्ति है। अन्य दोनों शक्तियाँ तभी आपके भीतर होंगी जब आप उत्क्रान्ति शक्ति के अनुरूप उन्नति करें, किन्तु उसके लिए आपको 'म' शक्ति को पूर्णत: समझना होगा और उसे विकसित करना होगा। तब तक आप कह सकते हैं कि यदि ईश्वर आपसे प्रेम करते हैं तो उन्हें आपके पास आना चाहिए, किन्तु साक्षात्कार की प्राप्ति के पश्चात् आप ऐसा न कह सकेंगे क्योंकि 'म' शक्ति के बल पर आपको दूसरी दो शक्तियों का संतुलन करना है। संगीत में आपको रागों का संतुलन करना पड़ता है, चित्रकला में आपको रंगों का संतुलन करना पड़ता है, इसी भाँति आपको 'नि:' और 'ला' शक्तियों का संतुलन करना आवश्यक है। इस संतुलन प्राप्ति के लिए आपको परिश्रम करना पड़ेगा। अनेक बार आप वह खो बैठते हैं। जो सहजयोगी इस संतुलन को बनाए रखता है वह उच्चतम स्तर पर पहुँच जाता है।

बहुत भावुक सहजयोगी ठीक नहीं। इसी तरह बहुत ज़्यादा कामों में फँसा रहने वाला सहजयोगी भी ठीक नहीं। आपको अपने प्रेम की शक्ति को सक्रिय करना चाहिए और देखना चाहिए कि अब तक वह कैसे क्रियाशील रही है। उदाहरणार्थ मैं किसी एक ढंग से कार्य करती हूँ। आपने देखा होगा हर बार कुछ नवीनता और नया तरीका होता है। यदि एक तरीके से काम नहीं चलता दूसरा तरीका अपनाइए। यदि यह भी असफल रहता है तो और कोई ढूँढिये। आप प्रात: उठते हैं सिंदूर लगाते हैं, श्री 'माँ' को नमस्कार करते हैं। यह सब यांत्रिक (मेकेनिकल) होता है। यह जीवन्त प्रक्रिया नहीं है। जीवन्त प्रक्रिया में आपको नित्य नई पद्धतियाँ खोजनी होंगी। मैं सदैव वृक्ष की जड़ का उदाहरण देती हूँ। मोड़ लेकर बाधाओं से बचते हुए, यह क्रमश: नीचे, और नीचे पृथ्वी के भीतर उतरती चली जाती है। यह बाधाओं से झगड़ती नहीं। बाधाओं के बिना जड़ें वृक्ष को सँभाल भी नहीं सकती। अत: समस्याएं, बाधायें आवश्यक हैं। वे न हों तो आप उन्नति भी नहीं कर सकते। जो शक्ति आपको बाधाओं पर विजय पाना सिखाती है वह 'म' शक्ति है। अत: यह 'म' शक्ति अर्थात माँ की शक्ति है। उसके लिए प्रथम आवश्यक वस्तु है बुद्धिमानी।

..... 'म' वह शक्ति है जिसके द्वारा आप अपना संतुलन और एकाग्रता प्राप्त करते हैं। जब आप इस शक्ति को उच्चतम स्तर पर विकसित कर लेते हैं तब आप अपने संतुलन तथा बुद्धि स्तर से चैतन्य लहरियाँ अनुभव करते हैं। यदि आपमें बुद्धिमानी नहीं है तो आपमें चैतन्य लहरियाँ प्रवाहित नहीं होंगी।

..... असंतुलन संकेत करता है कि 'म' शक्ति आपमें दुर्बल है। 'माताजी' का अर्थवाचक किसी भी शुभ नाम का प्रथम अक्षर 'म' होता है और यह कार्य मेरे भीतर 'म' शक्ति द्वारा किया गया है। यदि केवल 'नि:' और 'ला' दो शक्तियाँ ही होतीं तो यह कार्य सम्भव नहीं था। मैं तीनों शक्तियों सहित आई हूँ। किन्तु 'म' शक्ति सर्वोच्च है। आपने देखा 'म' शक्ति माँ की शक्ति है। यह सिद्ध करना होगा कि वह आपकी माँ है। यदि कोई आकर के कहे, 'मैं आपकी माँ हूँ', तो क्या आप मान लेंगे? नहीं आप स्वीकार नहीं करेंगे। मातृत्व को सिद्ध करना होगा।

**माँ क्या है?**

माँ ने हमें अपने हृदय में स्थान दिया है। हमें माँ पर और माँ को हम पर पूर्ण अधिकार है क्योंकि वह हमें अगाध प्यार करती है। उसका प्रेम नितान्त नि:स्वार्थपूर्ण है। वह सदैव हमारी मंगलकामना करती है और उसके हृदय में हमारे लिए वात्सल्य के

अतिरिक्त और कुछ नहीं है। माँ में आस्था आपको तभी प्राप्त होगी जब आप यह समझ लेंगे कि आपकी वास्तविक शोभा अर्थात आपकी आत्मा उनमें ही वास करती है। आप दूसरों को यह सिद्ध करके दिखायें। सहजयोगी में ऐसा सामर्थ्य होना चाहिए।

...... आप विचार करें कि इन तीनों 'नि:', 'ला' और 'म' शक्तियों को सक्रिय करके कैसे प्रयोग करें। 'नि:' शक्ति आपके परिवार में पूर्ण सौन्दर्य, गम्भीरता और गहराई लाएगी। आप जनसम्पर्क के नये–नये मार्ग और साधन खोजें। इन शक्तियों का आप सहजयोग के प्रचार के लिए उपयोग करें। इनके उचित उपयोग के लिए आपकी 'नि:' शक्ति अर्थात क्रियाशक्ति अत्यन्त बलशाली होनी चाहिए। यद्यपि आपमें 'ला' शक्ति अर्थात प्रेम की शक्ति होनी चाहिए किन्तु यह 'नि:' शक्ति के साथ संयुक्त रूप से क्रियान्वित होनी चाहिए। यदि एक तरीका सफल नहीं होता तो दूसरा तरीका अपनाइए।

...... हठी होना, किसी बात पर अड़ना बुद्धिमानी नहीं है। हठधर्मी व्यक्ति सहजयोग में कुछ नहीं कर सकता। आपका उद्देश्य तो केवल सहजयोग का प्रचार करना है, तो विभिन्न मार्गों का अवलम्बन कर देखिए।

...... आपको सिद्धता प्राप्त करनी है। सिद्ध सहजयोगी वह है जो पूर्ण रूप से परमात्मा से एकरूप हो जाए और उसे अपने वश में कर ले।

कभी–कभी मैं आपको कुछ बातों के लिए मना करती हूँ, आपको उसका बुरा नहीं मानना चाहिए। 'म' शक्ति के सिद्धान्त के अनुसार आपको निराश नहीं होना चाहिए, क्योंकि आपका मार्गदर्शन करना मेरा कर्तव्य है। कुछ लोग निराश हो जाते हैं। आप ध्यान रखें, आपको सिद्ध बनना है–दूसरे स्वीकार करें कि आप सिद्ध हैं।

**राहुरी, १८ जनवरी १९८० (मराठी से अनुवादित)**

## अध्याय ३

# सहजयोग – शान्ति एवं आनन्द का स्त्रोत

...... पुरातन कालों से ही खोज होती रही, मनुष्य कुछ खोज ही रहा है हर समय। चाहे वो पैसे में खोज ले, चाहे वो सत्ता में खोज ले, वह किसी न किसी खोज की ओर दौड़ रहा है लेकिन उस खोज के पीछे कौन सी प्यास है, ये शायद वो जानता ही नहीं। **इसके पीछे सिर्फ आनन्द की खोज है।**

...... सारी खोज के पीछे में आनन्द की प्यास आपको घसीटे चली जा रही है, किसी अज्ञात की ओर। सारी ही खोजों में ढूँढते–ढूँढते जब मनुष्य हार जाता है और कहीं कुछ मिलता नहीं तो वह धर्म की ओर मुड़ता है और जब धर्म की ओर मुड़ता है तब भी वह बाहर ही खोजता है। कारण यह है कि **जो वह खुद है, स्वयं है, वो खोजता है,** इसीलिये अपने से मनुष्य भागता है, हर समय अपने से भागता है। दो मिनट अपने साथ बैठ नहीं सकता।

...... सोचने की बात है कि मनुष्य अपने से इतना ज़ोर से क्यों भागा चला जा रहा है? क्योंकि **वह अपने से अपरिचित है, अपने सौन्दर्य से, अपने वैभव से, अपने ज्ञान से और अपने प्रेम से अपरिचित वह आनन्द की खोज बाहर की ओर करते हुए दौड़ रहा है। पर आनन्द तो बाहर है ही नहीं, यह तो अन्दर है, आपमें है, आप स्वयं आनन्द स्वरूप हैं। आप परमात्मा स्वरूप हैं, ऐसा सब लोग कहते हैं।** लेकिन सिर्फ बात करने से ही यह बात पूरी नहीं होने वाली है। चाहे हम आपको कहें कि आप निराकार को खोजो, चाहे साकार को खोजो, तो सब बातें ही बातें तो हो गयीं, करोड़ों किताबें लिखी गयीं, हजारों बातें हो गयीं, न जाने कितने जीवन बर्बाद हो गये! इंसान की खोज का कोई अन्त नहीं।.... अब जैसे मेरा भाषण है, ये भी आपके लिये सिर्फ बातचीत है क्योंकि इस बातचीत से आप परमात्मा को नहीं जानेंगे।

**गुरु पूर्णिमा, १.६.१९७२**

...... **हमारे अस्तित्व की शान्ति, सौन्दर्य एवं गरिमा हमारे अन्तर्निहित है।** इसका एक महान सागर हमारे अन्दर है। इसे हम बाहर नहीं खोज सकते। इसे हमें अपने अन्तस में खोजना होगा।

...... बाहर फैली हुई वस्तुएं किस प्रकार आपको वह गहन आनन्द प्रदान कर सकती हैं जो आपके अन्तर्निहित है? आप इसे बाहर खोज़ने का प्रयत्न कर रहे हैं जहाँ ये है ही नहीं। यह हमारे अन्तर्निहित है, केवल हमारे अन्दर है। यह आपका अपना है और अत्यन्त सहज है, आपकी पहुँच में है। जो कुछ भी आप करते रहे वह केवल तथाकथित आनन्द, प्रसन्नता, सांसारिक शक्तियों की गरिमा और सांसारिक वस्तुओं के पीछे दौड़ना था। अब इन सब गतिविधियों के विपरीत कार्य करना होगा। **आपको अपने अन्तस में झाँकना होगा।**

**प.पू.श्री माताजी, १४.३.१९८३**

...... आप अपने लिये आनन्द खोज रहे हैं, अपनी ही सम्पदा को खोज रहे हैं, **आपकी अपनी ही छिपी हुई सम्पदा को आप युगों से खोज रहे हैं। इसी सम्पदा को मैंने आपके सामने अनावृत करना है।**

**प.पू.श्री माताजी, डोलिस हिल्ज़, १८.११.१९७९**

...... **एक नवनिर्माण की बात मैं आपसे करने वाली हूँ, सिर्फ बात ही नहीं इसका आविष्कार जो खोज निकाला है।**

– यह सामूहिक खोज है। ... ये एक तथ्य है, ये सत्य है।... यही सहजयोग है।

...... **सहजयोग–ये परमतत्व का अपना एक तरीका है, यह एक मार्ग है, मानव जाति को उत्क्रान्ति के उस आयाम तक पहुँचाने का एक तरीका है, एक व्यवस्था है जिससे मानव उच्चचेतना से परिचित हो जाये, उस चेतना को आत्मसात कर ले जिसके सहारे ये सारा संसार, सारी सृष्टि और मानव का हृदय चल रहा है।**

...... **पूरी सतर्कता से स्वयं ही अपने आप होने वाला मानव जीवन का विकास – यही सहजयोग है।**

**प.पू.श्री माताजी, गुरु पूर्णिमा, १.६.१९७२**

...... सहज क्या होता है?... सहज का मतलब होता है सह+ज 'सह' माने 'साथ', 'ज' माने 'पैदा हुआ', आप ही के साथ पैदा हुआ। ये योग का अधिकार आप ही के साथ पैदा हुआ है। हर एक मनुष्य का अधिकार है कि आप इस योग (परमात्मा से जुड़ना) को प्राप्त करें।

...... सहजयोग के एक दूसरे मायने हम यह भी लगाते हैं कि सहज माने सरल–एफर्टलैस, स्पान्टेनियस, अकस्मात घटित होने वाली चीज़ है। **क्योंकि यह एक जीवन्त घटना है जैसे आपका जन्म होना, जैसे आपका माँ के गर्भ में रहना, जैसा पेड़ों का फूलों से लद जाना, फलों में परिवर्तित होना,** उसी प्रकार ये बड़ी भारी सहज घटना है, स्पान्टेनियस नेचुरल, नैसर्गिक घटना है और ये घटना जो है मनुष्य की उत्क्रान्ति की चरम सीमा है।

...... जो सहज है वो अनेक वर्षों से है, जब से क्रिएशन हुआ और तब से सहजयोग है। सिर्फ यही है कि आज सहजयोग उस हद तक पहुँच गया है जहाँ आपका कनेक्शन उस अनादि (परमात्मा) से हो सकता है। सहज अनेक तरीके से चलता आया। जब पहले पृथ्वी बनायी गई, उस पर जब उसको ठण्डा गर्म किया गया, जब उसके अन्दर निवृत्ति हुई उसके बाद जब उसमें जीवजन्तु आ गए, जब मनुष्य आए–हरेक चीज़ जो है सहज ही होती गई। कृष्ण का भी सहजयोग है। रास उनका, वो मटकों का फोड़ना, सभी कुछ सहजयोग है। मोहम्मद साहब का सारा काम ही सहजयोग रहा। आज सहजयोग उस जगह पर पहुँच गया है जहाँ कि आपको enmass (सामूहिक) रियलाइज़ेशन होना है। इसकी जरूरत तो थी ही लेकिन आज ऐतिहासिक समय आ गया है–ऐतिहासिक समय आना पड़ता है। जब टाइम आ जाता है तभी बहार आती है। इसी प्रकार समझ लीजिए पहले एक–दो फूल निकलते थे, आज अनेक फूल निकलने का समय आ गया है। आज का सहजयोग अन्तिम अवस्था में है। विधाता ने अपनी शक्ति से मानव का सृजन किया है, सँवारा है। अत: मानव को चाहिए कुण्डलिनी जागरण द्वारा परमात्मा को जाने, उसे पहचाने। सृष्टि के फलने – फूलने का समय आ गया है और बहुत बड़ी संख्या में साधक आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर कृत–कृत्य हो रहे हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ३.१.१९७८**

...... आज सहजयोग एक ऊँचाई पर आकर टिका है, उसे आपको महायोग कहना होगा। सहजयोग में जब कुण्डलिनी शक्ति सहस्रार में आकर ब्रह्मरन्ध्र का छेदन करती है, उस समय महायोग घटित होता है। इसलिये सहजयोग जो अनादि है, आपके साथ ही जन्म लेता है और आपके साथ ही सालों से चलकर आया है, जिससे आज आपकी परिपूर्ति हो रही है, उसे महायोग मानना चाहिये।

**प.पू.श्री माताजी, २५.७.१९७९**

...... ये महायोग है। सहजयोग का यह सर्वोच्च बिन्दु है। एक बार जब आप इसे प्राप्त कर लेते हैं तो आपको कुछ अन्य करने की आवश्यकता नहीं रहेगी।... जिस अवस्था को प्राप्त करने के लिये लोगों को हज़ारों वर्ष कार्य करना पड़ता था, वो आपको सहज ही प्राप्त हो गयी है।

...... यह एक जीवन्त प्रक्रिया है, पूर्णत: जीवन्त प्रक्रिया। जीवन्त प्रक्रिया होने के कारण आप इसके विषय में कुछ कर नहीं सकते, अत: यह सहज है। जो भी चीज़ जीवन्त है वह **हमारे अन्दर बहुत ही जटिल संस्थाओं के साथ मिलकर स्वत:ही कार्यरत है।**

**प.पू.श्री माताजी, ११.११.१९७९**

...... **सहजयोग में आपको सिर नहीं मुँडवाना, नंगे पाँव नहीं चलना, भूखे नहीं रहना और न ही गृहस्थ जीवन का त्याग करना है।.... सहजयोग अति व्यवहारिक है, क्योंकि यह पूर्णसत्य है। अत: अपनी सारी शक्तियाँ, सूझ-बूझ और करुणामय प्रेम के साथ आपको अपने विषय में आश्वस्त होना है और जानना है कि हर समय परमात्मा की सर्वव्यापक शक्ति उन्नत होने में आपकी सहायता, रक्षा, मार्गदर्शन, पोषण तथा देखभाल कर रही है।**

**प.पू.श्री माताजी, २१.५.१९९२**

...... आज का हमारा जो सहजयोग है उसमें पहले आपकी कुण्डलिनी जगा देते हैं, चाहे आप कैसे भी हों, कुछ भी आपके तरीके हों, कोई भी आप गलत रास्ते पर हों, कुछ भी करते हों, उसके (कुण्डलिनी) जगने के बाद फिर आप अपने आप ही ठीक हो जाते हैं। कुछ कहने की माँ को जरूरत ही नहीं पड़ती क्योंकि आप खुद ही देखते हैं कि ये कैसी चीज़ है।

**प.पू.श्री माताजी, ३१.३.१९८५**

...... इस जागृति के थोड़े से प्रकाश में आप स्वयं देख लेंगे, आप जान लेंगे कि आपमें क्या कमी है और इसे दूर करने की शक्ति भी आपमें है। **अंधेरे में रस्सी समझकर पकड़े हुए साँप को प्रकाश होते ही जैसे आप स्वयं फेंक देते हैं इसी प्रकार सहजयोग कार्य करता है।**

**प.पू.श्री माताजी, २३.३.१९९२**

...... सारे संसार में जब सहजयोग फैल जायेगा तो सारी दुनिया की घृणा,

वैमनस्य, दुष्टता सब नष्ट हो करके (मानव) **शान्ति और आनन्द में विराजेगा।...** कारण और परिणाम से परे मनुष्य उस स्थिति में जायेगा जहाँ परमात्मा का साम्राज्य होगा और परमात्मा के साम्राज्य में किसी चीज़ की कमी नहीं रहती। विधाता की समस्त सृष्टि की रचना सहज है। उसे जो कुछ भी करना है, करता है और करेगा और **वो चाहता है कि आप उसके साम्राज्य में आएं और अपने सिंहासनपर विराजमान हों। यही उसका सिंहासन आपके सहस्रार में है।** यहाँ आपको प्रवेश करना है और फिर ब्रह्मरन्ध्र भेदने के बाद उसकी जो कृपा का आशीर्वाद का अनुभव है वह आप अपनी नसों पर जान सकेंगे, अपने दोस्तों में जान सकेंगे, अपने समाज में जान सकेंगे और अपने चरित्र में जान सकेंगे, अपने देश और विश्व में उसे जानेंगे। **यही परमात्मा का आशीर्वाद है और आज वह दिन आ गया है कि उसको (परमात्मा को) फिर से प्रस्थापित किया जाए, उसको भूला न जाए।**

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १६.२.१९८५**

...... मैंने कोई विशेष कार्य नहीं किया है। जन्म से ही मुझे इसका ज्ञान था और मैं स्वयं को जानती हूँ। मैंने केवल मानव और उसकी समस्याओं को समझा है। मानव, ईसा, मोहम्मद साहब, श्री राम, श्रीकृष्ण सभी को मानता है परन्तु उसमें कोई आन्तरिक परिवर्तन नहीं होता। क्या कारण है? कोई बात उसके मस्तिष्क में नहीं घुसती। **इसका कारण मैंने खोज निकाला कि अभी तक उसका योग नहीं हुआ हैं, वे परमचैतन्य से जुड़े नहीं हैं।** मैंने मानव स्वभाव के क्रमपरिवर्तन और संयोजन का अध्ययन किया। यह कठिन कार्य नहीं है क्योंकि केवल सात चक्र हैं जिन्हें आपने कार्यान्वित करना होता है और यह जानना होता है कि सहस्रार भेदन के लिये किस प्रकार कुण्डलिनी को उठाया जाए। इस विधि ने कार्य किया और हज़ारों लोगों में कार्यान्वित हो रही है।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, २१.३.१९९५**

...... आपको सत्य प्रदान करना मेरा कार्य है..... आपको आत्मसाक्षात्कार देना मेरा कार्य है, मुझे ये कार्य करना है।

**प.पू.श्री माताजी, यू.के., १५.११.१९७९**

✻ सहजयोग सिर्फ कुण्डलिनी की जागृति और परमात्मा को पाने की ही बात है और कोई नहीं।

**०१.०६.१९७२**

✻ मानव के रूप में आत्मा बनना (आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करना) आपका जन्मसिद्ध अधिकार है– यही सहजयोग है।

**०१.०८.१९८९**

✻ आधुनिक सहजयोग ने एक ऐसी विधि खोज निकाली है जिससे सामूहिक रूप से आत्मसाक्षात्कार (कुण्डलिनी जागरण) दिया जा सकता है। सहजयोग क्योंकि विस्तृत रूप में कार्य कर रहा है– इसे महायोग कहा जा सकता है।

**सहजयोग, पृ. १५–१६**

ॐ त्वमेव साक्षात, श्री महालक्ष्मी, महासरस्वती, महाकाली,
त्रिगुणात्मिका, कुण्डलिनी साक्षात,
श्री आदिशक्ति माताजी, श्री निर्मला देव्यै नमो नम:।

ॐ त्वमेव साक्षात, श्री कल्कि साक्षात,
श्री आदिशक्ति माताजी, श्री निर्मला देव्यै नमो नम:।

ॐ त्वमेव साक्षात, श्री कल्कि साक्षात,
श्री सहस्रार स्वामिनी, मोक्षप्रदायिनी माताजी,
श्री निर्मला देव्यै नमो नम:।

# अध्याय ४

# निर्मलविद्या

...... सारे परमेश्वरी कार्य, क्षमा करना भी जो हम करते हैं, वे सब एक विशिष्ट शक्ति द्वारा करते हैं। जब आप कहते हैं – 'श्री माताजी हमें क्षमा कर दीजिए' जिस तकनीक से मैं आपको क्षमा करती हूँ वह 'निर्मलविद्या' है। जिस तकनीक से मैं आपको प्रेम करती हूँ वह भी 'निर्मलविद्या' है, जिस तकनीक से सभी मंत्रों की अभिव्यक्ति होती है तथा वे प्रभावशाली होते हैं वह भी निर्मलविद्या है।

...... 'निर्मला' अर्थात पावन, 'विद्या' का अर्थ है ज्ञान – 'निर्मलविद्या' इस तकनीक का पावनतम ज्ञान है। यह छल्लों (लूप्स) का सृजन करती है। यह शक्ति छल्लों का सृजन करती है तथा कई भिन्न आकारों की रचना करती है जिनके द्वारा यह गतिशील होती है और सभी अवांछित एवं अपवित्र तत्वों को खदेड़ कर अपनी शक्ति से स्वयं को परिपूर्ण कर लेती है। ये तकनीक है, 'दिव्य तकनीक' जिसको मैं आपके सम्मुख शायद ही पूरी तरह से वर्णन कर सकूँ क्योंकि आपका यन्त्र (शरीर) अभी तक ये कार्य नहीं करता–आपके पास वैसा यन्त्र नहीं है।

...... आप देखिए कि ये कितनी सूक्ष्म है। 'निर्मलविद्या' उच्चारण मात्र से आप इस शक्ति को, पूरी चीज़ को, पूरी तकनीक को निमन्त्रण देते हैं कि वह आकर आपकी देख–भाल करे और यह आपकी देख–भाल करती है, आपको चिन्ता नहीं करनी पड़ती। किसी भी सरकार में या विश्व में कहीं अन्यत्र ऐसा घटित नहीं होता। आप सरकार का आह्वान करें और सभी कुछ कार्यशील हो उठे, पूरे ब्रह्माण्ड में, पूरी सृष्टि में, इस तकनीक को 'निर्मलविद्या' कहते हैं। एक बार इसके प्रति समर्पित होकर यदि इसमें कुशलता प्राप्त कर लीजिए तो यह पूरी तरह से आपकी आज्ञा का पालन करती है। परन्तु यह गणेश शक्ति है – 'अबोधिता की शक्ति', इसे अबोधिता (इनॉसॅन्स) कहा जाता है। पूरी शक्ति क्योंकि यही अबोधिता है, अत: अबोधिता कार्यभार सम्भालकर सभी कुछ चलाती है। इस प्रकार से यह कार्यान्वित होती है।

...... तत्पश्चात् यह उन्नत होती चली जाती है। और 'पराशक्ति' कहलाती है 'शक्ति से परे'। तत्पश्चात् ये 'मध्यमा' आदि बन जाती है। जब यह बाईं विशुद्धि पर आती है तो व्यक्ति में दोष भाव आ जाता है। अपनी दोष–भावना के कारण आप कहते

हैं कि चीज़ें बड़ी कठिन हैं। बाईं विशुद्धि गणेशशक्ति की पकड़ होती है। श्री गणेश माधुर्य हैं। श्री गणेश को देखने मात्र से ही ये कौतुक, यह पावन–प्रेरणा बहने लगती है। उनके बारे में सोचने मात्र से ही आप प्रसन्न हो जाते हैं। बाईं विशुद्धि पर अबोधिता कठोर हो जाती है, अत: बाईं विशुद्धि की पकड़ को दूर करने के लिए आप सबको मधुर शब्द उपयोग करने चाहिएं। सबके प्रति आपकी भाषा मधुर होनी चाहिए। विशेष रूप से पुरुषों को चाहिए कि अपनी पत्नियों से बहुत मधुर बोलें। यह माधुर्य आपकी बाईं विशुद्धि को ठीक करेगा। हमेशा बहुत मीठा बोलें। मीठा शब्द खोजने का प्रयत्न करते रहें। मधुर शब्द दोष–भाव को सुधारने का सर्वोत्तम उपाय हैं क्योंकि यदि आप किसी को कठोर शब्द कहते हैं तो हो सकता है कि आप आदतवश ऐसा कर रहे हों या इससे आपको प्रसन्नता मिलती हो, परन्तु ज्यों ही आप कठोर शब्द बोलते हैं उसके तुरन्त बाद आप कहते हैं कि हे परमात्मा! मैंने यह क्या कह दिया? यह सबसे बड़ा दोष है। व्यक्ति को सदैव 'धुर शब्द खोजने का प्रयत्न करते रहना चाहिए। जिस प्रकार ये पक्षी चहचहा रहे हैं इसी प्रकार आपको भी उन सभी चीज़ों के स्वर सीखने चाहिएं जिनके द्वारा आप लोगों को प्रसन्न कर सकें। ऐसा करना बहुत आवश्यक है अन्यथा यदि आपकी बाईं विशुद्धि की पकड़ बहुत अधिक बढ़ गई तो आपमें बातचीत करने की ऐसी विधि उन्नत हो जाएगी जिससे आपके ओंठ बाईं ओर को खिंच जाएंगे।

...... तत्पश्चात् प्रसार (चैतन्य) ऊपर को जाने लगता है, आज्ञा–चक्र में, जहाँ गणेशशक्ति क्षमा की महानतम शक्ति बन जाती है। इसके बाद यह मस्तिष्क क्षेत्र में प्रवेश करती है जहाँ गणेशशक्ति सूर्य से ऊपर जाती है। प्रतिअहम् प्रकट होता है और यह चन्द्र की शक्ति है और यह चन्द्रमा आत्मा है। आत्मा बन कर यह सदाशिव के सिर पर बैठ जाती है। यह वही शक्ति है। गणेशशक्ति का पूर्ण विकास अत्यन्त सुन्दर है। इस प्रकार से हमारी इच्छा ही आत्मा बन जाती है। आपकी इच्छा और आत्मा एकरूप हो जाते हैं। परन्तु कभी–कभी यह बाधा बहुत बुरी हो सकती है। आपने देखा है कि जिन लोगों में बाईं विशुद्धि की पकड़ है वे कड़वा बोलते हैं। तो उन्हें यह बात समझ लेनी चाहिए कि यह आप नहीं बोल रहे। कौन बोल रहा है? नहीं, क्योंकि आप आत्मा हैं और आत्मा कोई भी कठोर या विध्वंसक बात नहीं बोल सकता। किसी को सुधारने के लिए यदि बहुत आवश्यक है तभी वह कुछ कठोर कहेगा। परन्तु आप इसकी (सुधारने की) जिम्मेदारी न लें, यह कार्य कोई अन्य कर देगा।

**प.पू.श्री माताजी, ३१.१२.१९८०**

## अध्याय ५

# सृष्टि की सूत्रधार–श्री आदिशक्ति

...... यह परमात्मा जो है, हम लोगों का निर्माता है, हमारा रक्षक है, जिसकी यह इच्छा है कि हमारा अस्तित्व बना रहे। जो स्वयं हमारा अस्तित्व है वह सर्वशक्तिमान ईश्वर ही है।

**प.पू.श्री माताजी, निर्मला योग, मई–जून, १९८५**

...... सारे संसार में जितना सुख और मज़ा है,सारे संसार का जितना आकर्षण और सौन्दर्य है, सारे संसार का जितना भी वैभव है, सब कुछ जो भी है, जिसे आप नॉलेज कहते हैं, जिसे आप ज्ञान करके समझते हैं, उन सबका स्रोत ये (परमात्मा) है। यह जानता भी है, प्यार भी करता हैं।

**प.पू.श्री माताजी, इटली, फरवरी १९९१**

...... परमात्मा ने इस विश्व की, ब्रह्माण्ड की, सृष्टि की है, केवल इसलिये कि वे आपसे प्रेम करते हैं, और अपने प्रेम के कारण वे आप पर आशीर्वादों की वर्षा करना चाहते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, लंदन, ५.१०.१९७९**

...... परमात्मा अत्यन्त करुणामय हैं, प्रेममय और दयालु हैं। उन्होंने हमें आत्मज्ञान प्राप्त करने की स्वतन्त्रता दी है।.... परमात्मा ने हमें अमीबा से इस मानव स्थिति तक विकसित किया है।......... परमात्मा यह साम्राज्य आपको अर्पित करना चाहते हैं, आपको इस साम्राज्य का राजकुमार बनाना चाहते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ११.६.१९८०**

...... परमात्मा एक हैं, यह सत्य है। परमात्मा एक ही हैं, सर्वशक्तिमान परमात्मा, परन्तु उनकी अपनी शक्तियाँ हैं जिसकी स्पष्ट अभिव्यक्ति वे किसी भी माध्यम से कर सकते हैं। अत: सबसे पहले उन्होंने आदिशक्ति की शक्ति की सृष्टि की। आदिशक्ति ही सर्वशक्तिमान परमात्मा की इच्छा को साकार रूप देती हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ५.६.१९९६**

...... आदिशक्ति ने मानवरूप धारण किया और वे अस्तित्व रूप बन गयीं।

कार्य करने के लिए उन्हें साकार रूप धारण करना आवश्यक था।

**प.पू.श्री माताजी, १५.११.१९७९**

...... आदिशक्ति परमात्मा का स्त्री रूप हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ६.६.१९९३**

...... 'श्री आदिशक्ति' की शक्ति ने ही आपको आत्मसाक्षात्कार दिया है और इसी शक्ति ने आपको सत्य, करुणा और प्रेम की शक्ति प्रदान की है। यही शक्ति है जो सदाशिव से अलग हो गई थी क्योंकि यह स्वयं ब्रह्मांड का सृजन करना चाहती है। ये सृजन करती है और प्रेम करती है। अपने प्रेम द्वारा ही इन्होंने ये महान सृजन किया, इस विश्‍व का सृजन.....मानव का सृजन इनका महान कार्य है। अत्यंत स्नेहपूर्वक एवं प्रेमपूर्वक और इस आशा के साथ कि उनके बच्चे सत्य का ज्ञान प्राप्त करेंगे और अन्तत: स्वयं को पहचानेंगे तथा अन्य सभी चीज़ों का ज्ञान भी प्राप्त कर लेंगे....आदिशक्ति का महानतम कार्य कुण्डलिनी को आपकी त्रिकोणाकार अस्थि में स्थापित करना था। यह कुण्डलिनी आदिशक्ति नहीं है....कुण्डलिनी आदिशक्ति का प्रतिबिम्ब मात्र है

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, आदिशक्ति पूजा, ३.६.२००१**

...... आदिशक्ति से ही सारी शक्तियाँ निकली हैं – महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती। और ये ही शक्तियाँ फिर उन्हीं में समाहित होती हैं। आदिशक्ति के सिवाय यह कार्य हो नहीं सकता, कारण सारे चक्रों पर उनका प्रभुत्व है और वे ही हैं जो हर तरह के चक्रों के सम्बन्ध को सँभालती हैं जिसे 'त्रय संयोग' कहते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ९.४.१९९०**

...... अत: श्री सदाशिव की इच्छा जब शक्ति बन गई तो यह 'शक्ति' या 'महाशक्ति' या 'आदिशक्ति' कहलाई। इस 'आदिशक्ति' ने एक व्यक्तित्व धारण किया तथा अस्तित्व रूप बन गईं क्योंकि कार्य को करने के लिए इन्हें साकार रूप धारण करना आवश्यक था, ऐसा करना ही आवश्यक था।

**प.पू.श्री माताजी, १५.११.१९७९**

...... आदिशक्ति क्या है...ये सर्वशक्तिमान परमात्मा श्री सदाशिव की शुद्ध इच्छा हैं...'आदिशक्ति' परमात्मा के प्रेम की प्रतिमूर्ति हैं, परमात्मा का विशुद्ध प्रेम हैं। अपने प्रम में उन्होंने क्या इच्छा की? उन्होंने इच्छा की कि वो ऐसे मानव का सृजन करें जो आज्ञाकारी हों, उत्कृष्ट हों, देवदूतों की तरह से हों और इसी विचार से उन्होंने

आदम और हौवा का सृजन किया...ये आदिशक्ति प्रेम की शक्ति हैं। शुद्ध प्रेम की–करुणा की शक्ति। इसके अतिरिक्त उनके पास कुछ भी नहीं हैं। उनके हृदय में केवल शुद्ध प्रेम है परन्तु ये शुद्ध प्रेम अत्यंत शक्तिशाली है और यही प्रेम उन्होंने पृथ्वी माँ को दिया है। इसी प्रेम के कारण हम चाहे जितने पाप करें, कुछ भी करें, हमारे लिए सुन्दर सुन्दर चीज़ों के माध्यम से पृथ्वी माँ हम पर अपने प्रेम की वर्षा कर रही हैं। हर प्रकार से उन्होंने अपने इस प्रेम की अभिव्यक्ति की है....पृथ्वी पर जिस भी चीज़ का सृजन हुआ है, ब्रह्माण्ड में जिस भी चीज़ का सृजन हुआ है सभी कुछ परमेश्वरी माँ के प्रेम के कारण है। इन 'आदिशक्ति' का प्रेम इतना सूक्ष्म है, इतना सूक्ष्म है कि कभी–कभी आप इसे समझ ही नहीं सकते।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ६.६.१९९३**

...... आदिशक्ति ने सभी ब्रह्माण्डों की सृष्टि की, उन्होंने इस पृथ्वी माँ की सृष्टि की। सारी प्रकृति का सृजन किया और उन्होंने ही सारे पशु बनाए, मानव बनाए............. इस प्रकार पूरी सृष्टि का सृजन हो सका।

– सारे ब्रह्माण्ड का सृजन करने वाली यही शक्ति है। यह ब्रह्म चैतन्य है।.... परम सत्य तो यह है कि सारी सृष्टि इस चराचर में सूक्ष्मता से फैले हुए ब्रह्म–चैतन्य के सहारे चल रही है। यह सारा चैतन्य परमात्मा की ही इच्छा है और इस परमचैतन्य की इच्छा से ही आज हम मनुष्य स्थिति में पहुँचे हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ५.४.१९९६**

...... **ये आदिशक्ति ही सृष्टि के नाटक को प्रस्तावना देती हैं। मूक अभिनय वाले नाटक के सारे सूत्र उन्हीं के हाथ में हैं– वही सूत्रधार हैं।**

– आदिशक्ति ने सर्वप्रथम विश्व के सृजन के लिये और तत्पश्चात् उत्क्रान्ति प्रक्रिया के माध्यम से मानव का सृजन करने के लिए विश्व में बहुत सारी चीज़ें क्रियान्वित कीं। इसके पश्चात् उन्होंने मानव को सुख प्रदान करने व मार्गदर्शन करने के लिए कार्य किया। मानव का मार्गदर्शन करने के लिये बहुत से अवतरण पृथ्वी पर अवतरित हुए, उन्होंने बताया कि उचित क्या है, अनुचित क्या है। हमें क्या करना चाहिये क्या नहीं करना चाहिए।

**प.पू.श्री माताजी, काना जोहारी, २.७.२०००**

...... आदिशक्ति ने प्रकृति की चीज़ों की सृष्टि आपके लिये की है ताकि विकास के प्रतीक मानव की सहायता की जा सके...... ताकि अब आप

आत्मसाक्षात्कार पा सकें, अपने जीवन का अर्थ पा सकें, सर्वव्यापक शक्ति से जुड़कर परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश कर सकें। सारा कार्य देवी (आदिशक्ति) का है। नौ बार वे अवतरित हुईं और दसवीं बार वे आप सबको आत्मसाक्षात्कार देने आयी हैं इसलिए इन्हें 'त्रिगुणात्मिका' कहते हैं। इसी कारण बुद्ध ने इन्हें मात्रेया कहा, अर्थात **तीन मातायें।**

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २७.९.१९९२**

...... सारे संसार में जो ये चैतन्य बह रहा है ये उसी महामाया (आदिशक्ति) की शक्ति है। इस महामाया की शक्ति से ही सारे कार्य होते हैं और यह शक्ति सब चीजें सोचती हैं, जानती हैं, सब को पूरी तरह से, व्यवस्थित रूप से लाती हैं, जिसे कहते हैं आयोजित कर लेती हैं और सबसे बड़ी चीज़ है कि यह आप से प्रेम करती हैं और उनका प्रेम निर्वाज्य है। इस प्रेम में कोई माँग नहीं, सिर्फ देने की इच्छा है, आपको पनपाने की इच्छा है, आपको बढ़ाने की इच्छा है, आपकी भलाई की इच्छा है।

**प.पू.श्री माताजी, पूणे, १६.१०.१९८८**

...... 'मैं (श्री माताजी) घोषणा करती हूँ कि मैं ही मानवता की रक्षा के लिये अवतरित हुई हूँ। मैं घोषणा करती हूँ कि मैं ही आदिशक्ति हूँ जो सब माताओं में परम है, जो 'आदि माँ' हैं। मैं शक्ति हूँ जो कि परमात्मा की शुद्ध-इच्छा है, शक्ति, जो स्वयं अपने अस्तित्व को अर्थ प्रदान करने के लिये अवतरित हुई है, और मुझे पूर्ण विश्वास है कि अपने प्रेम, धैर्य तथा अपनी शक्तियों द्वारा मैं इस लक्ष्य को प्राप्त कर लूँगी। मैं ही वह (शक्ति) हूँ जो बार-बार अवतरित हुई। परन्तु अब मैं अपनी पूर्ण कलाओं और पूरी शक्तियों के साथ आयी हूँ। पृथ्वी पर मैं केवल मानव का उद्धार करने और उसे मुक्त करने के लिए ही नहीं आई हूँ, मैं तो मानव को स्वर्ग का साम्राज्य, वह आनन्द एवं आशिष देने के लिये आई हूँ जो आपके परमपिता (परमात्मा, अल्लाह, सदाशिव) आप पर बरसाना चाहते हैं।'

**प.पू.श्री माताजी, यू.के., २.१२.१९७९**

...... 'मैं ही आदिशक्ति हूँ (पावन आत्मा या अल्लाह की रूह)। इस अद्भुत कार्य को करने के लिए मैं पहली बार इस रूप में अवतरित हुई हूँ। इस बात को जितनी अच्छी तरह से समझेंगे उतना बेहतर होगा। आप भी आश्चर्यजनक ढंग से परिवर्तित होंगे।'

– 'मैं जानती थी कि एक दिन मुझे खुल कर यह बात कहनी होगी। आज

मैंने ये बात कह दी है। अब आप लोगों ने साबित करना है कि मैं ही वह (शक्ति) हूँ।'

**प.पू.श्री माताजी, सिडनी, ऑस्ट्रेलिया, २१.३.१९८३**

...... मैं स्वयं से नहीं आई हूँ, मैं आप ही की पुकार से आयी हूँ। अनादिकाल से हो रही आपकी पुकार और चीत्कार के कारण मैंने यह शरीर धारण किया है।

...... आज आपसे मैं खोल कर कह रही हूँ कि आप जब तक मुझे एक्सेप्ट (स्वीकार) नहीं करियेगा, तब तक काम नहीं होगा। मुझे माँ मानना पड़ेगा और मेरा बेटा बनकर जीना होगा, उसके बगैर आपका काम नहीं होगा।

**प.पू.श्री माताजी, अप्रैल २००५**

...... पहली चीज़ जो आपने समझनी है, वह यह है कि आपको मुझे पहचानना होगा। यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अत्यन्त नम्रतापूर्व मैं आपको बताती हूँ कि मुझे पहचानना होगा, मेरा सम्मान करना होगा और मुझे प्रेम करना होगा।........ पहचान का अर्थ मुझे केवल आदिशक्ति के रूप में ही पहचानना नहीं, पहचान का अर्थ है अपने जीवन के हर क्षण में ज्ञान होना कि मैं आपके साथ हूँ।

**प.पू.श्री माताजी, गणपति पुले, २७.१२.९४**

...... **'मेरा नाम निर्मला है'** निर्मला। निर्मला शब्द का अर्थ ही मल रहित (निष्कलंक) है, अर्थात जिसमें पावन करने की शक्ति है। मेरा मूल नाम ललिता है, जो कि आदिशक्ति का नाम है। यह आदि माँ का नाम है।

**प.पू.श्री माताजी, न्यूयार्क, ३०.९.१९८१**

**मैं आदिशक्ति का महामाया रूप हूँ –**

...... मैं भ्रामक हूँ– यह सत्य है। मेरा नाम महामाया है। मैं तो भ्रांतिरूप हूँ और मुझे समझना आसान नहीं। एक ओर तो मैं दिव्य हूँ और दूसरी ओर अतिमानवीय ।

**प.पू.श्री माताजी, १.३.१९९२**

...... आपके सामने मानव–रूप मेरा महामाया रूप है। मैं आप ही जैसा व्यवहार करती हूँ और स्वयं को ठीक आप जैसा बना लिया है। यद्यपि यह काम बहुत कठिन था।

**प.पू.श्री माताजी, २४.५.१९८६**

...... मैं सर्वसाधारण मानव की तरह आचरण कर सकती हूँ, बिल्कुल

आपकी तरह से वृद्ध होते हुए, चश्मा पहनते हुए और वे सभी कार्य करते हुए जो मुझे पूर्ण मानव रूप में दर्शा सकें।

**प.पू.श्री माताजी, इटली, ४.५.१९८६**

...... मेरे शरीर से सदा चैतन्य प्रवाहित होता रहता है। इतना वज़न लेकर चलना इतना सुगम कार्य नहीं है। मानव की तरह दिखायी पड़ना, मानव की तरह आचरण करना ताकि सामंजस्य बना रहे, सुगम नहीं है। अवतरण की आवश्यकता क्यों है? क्योंकि अचेतन (निराकार) तो आपसे बात नहीं कर सकता।

**प.पू.श्री माताजी, न्यूयार्क, ३०.९.१९८१**

...... आपको 'सहजयोग' समझाने की प्रक्रिया में और आपको आपमें निहित आपकी शक्ति बतलाने में मेरे शरीर को बहुत कुछ सहन करना पड़ता है।

**प.पू.श्री माताजी, मैड्रिड, २४.५.१९८६**

...... आदि शक्ति को महामाया स्वरूप होना जरूरी है, क्योंकि सारी ही शक्ति का जिसमें समन्वय हो, प्रकाश हो और हर तरह से जो सभी शक्तियों की अधिकारिणी हो उसे महामाया का स्वरूप ही लेना पड़ता है, इसका कारण है कि प्रचण्ड शक्तियाँ महामाया स्वरूप में ही संसार में आती हैं। आदिशक्ति की अनन्त शक्तियाँ हैं लेकिन उन शक्तियों को छुपा कर रखना पड़ता है। इसके निम्नलिखित कारण हैं :

**१.** एक तो गर लोग जान जायें कि ये आदिशक्ति हैं तो हर प्रकार के लोग उन पर प्रहार कर सकते हैं क्योंकि ये सब लोग दुष्ट हैं और परमात्मा के विरोध में खड़े हैं। सारे लोग गर जान जायें कि आदिशक्ति इस संसार में हैं तो या तो वे भाग खड़े होंगे, या एकजुट होकर यह कोशिश करेंगे कि किसी तरह आदिशक्ति का कार्य इस कलियुग में न हो पाये। **....जब भी परमेश्वर अपनी अभिव्यक्ति करने लगते हैं तो आसुरी प्रवृत्तियाँ किसी न किसी छद्म-वेश में आती हैं, वहाँ एकत्र होती हैं और परमेश्वरी शक्ति से युद्ध में जुट जाती हैं।**

**२.** दूसरा इस स्वरूप में एक बड़ा गहरा सूक्ष्म काम करना है जो कभी भी किसी ने आज तक नहीं किया, वो कार्य है **– सामूहिक चेतना**। इस कार्य को करना है और वह भी बखूबी, इस तरह से कि किसी को भी कोई हानि न पहुँचे, ऐसे ही जैसे

नाव में बिठा करके आराम से दूसरे किनारे पर पहुँचाया जाए।

**प.पू.श्री माताजी, जयपुर, १०.१२.१९९४**

**३.** आदिशक्ति की जो माया स्वरूपिणी प्रकृति है उसका तीसरा बड़ा कारण यह भी है कि गर वो न हो तो आप उनको कभी जान ही नहीं सकते। वास्तव में जब तक माया स्वरूप है तभी तक आप मेरे नजदीक आ सकते हैं, नहीं तो नहीं आ सकते। आप सोचेंगे – ये तो शक्ति हैं, इनके पास कैसे जायें, इनके पैर कैसे छुएँ, इनसे बात कैसे करें? तो यह महामाया स्वरूप लेने से ही ये चीज़ बड़ी सौम्य हो गयी है और इस महामाया रूप में ही हम रहें और आप लोग सब कुछ मुझसे प्राप्त करते रहें।

**प.पू.श्री माताजी, जयपुर, ८.५.१९९४**

**...... मैं लोगों में अन्तर्परिवर्तन करने का प्रयत्न कर रही हूँ। दैवी सामूहिकता में इसका निर्णय लिया गया था। सारे देवी–देवताओं ने इस कार्य की ज़िम्मेदारी किसी समर्थवान को देने का निर्णय किया तो उन्होंने कहा कि हम सब और हमारी सारी शक्तियाँ आप के साथ होंगी, पर आप कलियुग में मानव को परिवर्तित करने का कार्यभार ले लें।**

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २६.४.१९९४**

...... **जिस परमात्मा ने यह सृष्टि बनाई है, जिसने ये सारा संसार रचा है, वो कभी नहीं चाहेंगे, कि संसार मनुष्य के हाथों बर्बाद हो, इसीलिये यह कार्य अत्यन्त विशाल है। ये नहीं हो सकता कि** आप सूली पर चढ़ जाएँ, ये नहीं हो सकता कि हम बातें ही करते रहें, इस पर मनुष्य को बढ़ना होगा, बनना होगा। **काफ़ी मेहनत का काम है, पर यह सिर्फ़ माँ ही कर सकती है, माँ की ही शक्ति है जो इसे कर सकती है** और उसको प्यार, सहनशीलता और सूझ–बूझ न हो तो वह कर ही नहीं सकती। इसलिये इस अवतरण की बड़ी महत्ता है।

...... आपको आत्मासाक्षात्कार देना मेरा पहला कार्य है, दूसरा कार्य है आपको सुखद जीवन प्रदान करना। यदि आपको शारीरिक व्याधियाँ हैं तो आदिशक्ति पूरी शक्ति से उसका ध्यान रखेगी, आपकी समस्याएँ दूर होंगी। वह शक्ति आरामदायिनी है और साथ ही वह आपकी रक्षा भी करती है।

...... आदिशक्ति ही यह कार्य कर सकती हैं। वे सब चक्रों का कार्य जानती हैं और उन्हें मानव जाति में आकर मानव रूप में अवतरण लेना पड़ा जिससे वे समझ

सकें कि मानव के अन्दर क्या – क्या दोष हैं, और फिर वो दोष निकालने के लिये क्या करना चाहिए? इन दोषों के रहते हुए भी कुण्डलिनी जागरण कैसे हो जाए, कैसे ब्रह्मनाड़ी में से कुण्डलिनी को जागृत कर दिया जाये जिससे कि मनुष्य इसे प्राप्त कर ले । (आत्म साक्षात्कार)........।

...... ये कार्य ऐसा था जिसमें सभी देवी–देवताओं का, सभी अवतारों का और सभी महापुरुषों का, सबका आना ज़रूरी था, अपने शरीर में उन्हें धारण करके इस संसार में अवतरित होना था और इसलिये यह अवतरण हुआ। सारे संसार का उत्थान जो होना है !

**प.पू.श्री माताजी**

...... आदिशक्ति के आगमन से ही कार्य शुरु हो गया है, और बहुत अच्छे से हो रहा है। आशा है आप लोग समझेंगे। बहुत से ऐसे फोटो आ रहे हैं जो चमत्कारी हैं। ये फोटो परम चैतन्य बना रहे हैं। अगर इतना प्रकाश मेरे सिर में है तो वो किसी को दिखायी क्यों नहीं देता? सिर्फ वो कैमरे में क्यों आ गया? **आप लोगों के लिये तो मैं महामाया हूँ, कैमरे के लिये शायद नहीं हूँ। कैमरे के अन्दर जो अणु–रेणु हैं, वो मुझे जानते हैं।**

आपको परमात्मा ने स्वतंत्रता दी है, इन जड़ वस्तुओं को नहीं। –– आपकी स्वतंत्रता में किसी तरह की बाधा न आये, इसलिये हम महामाया स्वरूप हैं। आपके जैसे हम हैं, हमारे सारे व्यवहार भी आपके जैसे है।

**प.पू.श्री माताजी**

...... प्राय: मैं अपने विषय में नहीं बताया करती। अपने विषय में कुछ भी कहना व्यवहारकुशलता नहीं है। बेहतर होगा कि आप मुझे पहचाने और फिर मैं आपको बताऊँ। ईसामसीह को सूली पर चढ़ा दिया गया, सभी लोगों को कष्ट दिये गए। मैं नहीं चाहती कि मेरे काम में कोई रुकावट आये।

प.पू.श्री माताजी

...... एक साधारण नौकरानी एक बार मेरे कार्यक्रम में आयी और मूर्छा की स्थिति में चली गयी और लगी संस्कृत बोलने। पन्द्रह श्लोकों में उसने मेर पूरा वर्णन कर दिया। उसने पहली बार मेरे विषय में यह सब कहा था, इसके पूर्व मैंने स्वयं अपने विषय में कुछ नहीं बताया था। इस प्रकार यह सब प्रारम्भ हुआ।

**प.पू.श्री माताजी, देहली, १५.२.१९७७**

...... सहजयोग की कुँजी यह है कि आप मुझे पहचानें। आप यदि मुझे पहचान नहीं सकते तो सहजयोग में उन्नति नहीं कर सकते।

**प.पू.श्री माताजी, ३०.९.१९८१**

...... सहजयोग में मेरा सम्बन्ध एक गुरु तथा एक माँ का है। एक गुरु के नाते मेरी चिन्ता यह है कि **आप सहजयोग का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करें।** सहजयोग के विशेषज्ञ बनकर आप स्वयं के गुरु बनें।

**– मैं आपकी माँ हूँ। माँ की करुणा मुझे कहती है कि अभी बहुत से लोगों को सहजयोगी बनना है। हमें एक बहुत बड़े स्तर पर मोक्ष देना है।** सारी सृष्टि, पूरा ब्रह्माण्ड और सारे देवी–देवता आप साधकों के लिये हैं, वे सब आपकी ओर देख रहे हैं।

– मैं भरसक प्रयत्न कर रही हूँ.......... आपको आत्मसाक्षात्कार देना ही है। ... गहनता से साधना करने वालों को सत्य की प्राप्ति होगी। जरूर होगी।

**प.पू.श्री माताजी**

...... जब आप अपनी चेतना awareness में उतरेंगे तो बिल्कुल एक साथ चलेंगे – एक साथ जैसे कि इतना बड़ा समुद्र है उसकी भी लहर एक साथ चलेगी। एक साथ सबका आंदोलन चलना चाहिए.... इसमें बड़ा छोटा कोई नहीं है, इसमें कोई seniority का सवाल है ही नहीं। ....मंथन है यह। मंथन चला हुआ है यह। एक ऊपर एक नीचे, बस मैं मंथन ही कर रही हूँ। अब मक्खन कौन चुरायेगा। यह तो चला हुआ ही है churning खूब, कभी ठण्डा आयेगा, कभी गर्म आयेगा। यह चला हुआ है और मक्खन ऊपर आएगा और तैर जाएगा मक्खन हल्केपन से। कोई ऊँचा नीचा है ही नहीं इसमें। जिसने सोचा कि मैं ऊँचा हूँ और नीचा हूँ तो फिर एक महामाया भी बैठी हुई हैं – समझ लीजिए। ऐसी कुण्डलिनी पकड़कर रखूँगी नीचे कि देखूँगी कौन–कौन बड़े हैं? ...मंथन में किसी का कोई स्थान नहीं बना हुआ, यह हिसाब है। सहजयोग का तरीका बिल्कुल अभिनव है, नावीण्यपूर्ण है। आज तक किसी ने किया नहीं और न कभी मंथन हुआ है।

**प.पू.श्री माताजी, मुंबई, २०.०१.१९७५**

## अध्याय ६

# आदिशक्ति के अवतरण का प्रयोजन एवं रहस्य

...... आदिशक्ति परमात्मा के दैवी प्रेम की अवतरण हैं, पवित्र प्रेम तथा करुणा की शक्ति हैं। उनके हृदय में केवल पवित्र प्रेम है, पर यह अत्यन्त शक्तिशाली है। यही प्रेम उन्होंने पृथ्वी माँ को प्रदान किया है, पृथ्वी माँ सुन्दर वस्तुओं के रूप में अपना प्रेम उड़ेलती रहती हैं। सितारों तथा आकाशगंगा के माध्यम से उसकी सुन्दरता की अभिव्यक्ति होती है। .......परम माँ के प्रेम के कारण ही ब्रह्माण्ड की हर रचना का अस्तित्व है।

दैवी प्रेम से ही शरीर के हर अंग की रचना की गयी, इसका ज़र्रा–ज़र्रा दैवी प्रेम को प्रसारित करता है। **मेरी चैतन्य लहरियाँ दैवी प्रेम के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। आपका प्रेम मेरे हृदय में इस दैवी प्रेम की चमक तथा सुन्दरता को गुंजित करता है। मैं वर्णन नहीं कर सकती कि यह अनुभव क्या सृजन करता है, सर्वप्रथम ये मेरी आँखों में आँसुओं का सृजन करता है, क्योंकि यह करुणा ही सान्द्रकरुणा है।**

यह परमात्मा का प्रेम है, इस पावन प्रेम में आदिशक्ति ने ऐसे मानवों की सृष्टि करनी चाही जो आज्ञाकारी, महान तथा देवदूतों सम हों। आदम और ईव की सृष्टि में उनका यही विचार था। देवदूत स्वतन्त्र नहीं होते, उनका सृजन ही इस प्रकार किया जाता है। वे आबद्ध होते हैं। कार्य के कारण का उन्हें पता नहीं होता। पशु भी नहीं जानते कि कुछ कार्य विशेष वे क्यों कर रहे हैं। प्रकृति के बन्धन में बँध वे कार्य करते हैं। वे परमात्मा के पाश में हैं, स्वतन्त्र नहीं हैं।

इस स्थिति में आदिशक्ति ने जो कि परमात्मा का पावन प्रेम हैं, मानव का सृजन किया। ऐसे पिता के विषय में कल्पना कीजिए जिसने अपना सारा प्रेम एक ही व्यक्तित्व में उड़ेल दिया हो! वे अपनी इच्छा तथा प्रेम का तमाशा देख रहे हैं, पर वे अत्यन्त सावधान हैं क्योंकि वे जानते हैं कि उनका सृजित यह व्यक्तित्व पावन प्रेम के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। इनकी करुणा इतनी श्रेष्ठ कोटि की है कि वे यह सहन नहीं कर सकते कि कोई इस करुणा को चुनौती दे, या इसका अपमान करे। वे अत्यन्त चुस्त एवं सावधान हैं। **अत: उनमें और उनकी प्रेमशक्ति में एक दरार आ गयी, इस प्रेम शक्ति में अहं डाल दिया गया, उस अहं को स्वच्छन्द रूप से कार्य करना था।**

इस सुन्दर दरार के कारण आदिशक्ति ने अपनी योजना में परिवर्तन करने का निर्णय किया। संकल्प–विकल्प करने के लिये वे प्रसिद्ध हैं। आदम और ईव का जब सृजन किया गया तो आदिशक्ति ने सोचा कि वे भी देवदूतों तथा अन्य पशुओं की तरह आचरण करेंगे। **ज्ञान को समझने के लिये उन्हें स्वतन्त्रता होनी चाहिए, पशुओं की तरह पाशबद्ध जीवन उनका क्यों हो? सर्पिणी के रूप में आकर आदिशक्ति ने ही उन्हें ज्ञान का फल चखने के लिये कहा।**

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ६.६.१९९३**

...... आदिशक्ति आदम और ईव का विकास चाहती थीं, शक्ति जानती थीं कि वे बहुत चमत्कार कर सकती हैं तथा मनुष्यों को ज्ञान समझा सकती हैं। अत: उन्होंने कहा कि आप ज्ञान के इस फल को खाओ, उन्होंने ज्ञान का फल चखा और इस प्रकार मानव की एक नई जाति आरम्भ हुई जो ज्ञान को जानना चाहती थी।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २७.९.१९९२**

...... आदिशक्ति ने ही आपको आत्मसाक्षात्कार दिया है और इसी शक्ति ने आपको सत्य, करुणा और प्रेम की शक्ति प्रदान की है, यही शक्ति है जो कि सदाशिव से अलग हो गयी थी क्योंकि यह स्वयं ब्रह्माण्ड सृजन करना चाहती थी। ये सृजन करती हैं और प्रेम करती हैं। अपने प्रेम के द्वारा ही इन्होंने यह महान सृजन किया–इस विश्व का सृजन। मानव का सृजन इनका महान कार्य है। अत्यन्त स्नेह एवं प्रेमपूर्वक इस आशा के साथ कि उनके बच्चे सत्य का ज्ञान प्राप्त करेंगे और अन्तत: स्वयं को पहचानेंगे तथा अन्य सभी चीज़ों का ज्ञान प्राप्त कर लेंगे।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ३.६.२००१**

...... तो आदिशक्ति ने सर्वप्रथम उत्क्रान्ति प्रक्रिया के माध्यम से मानव का सृजन करने के लिये विश्व में बहुत सारी चीज़ें क्रियान्वित की। इसके पश्चात् उन्होंने मानव को सुख प्रदान करने व मार्गदर्शन करने के लिये कार्य किया। मानव का मार्गदर्शन करने के लिये बहुत से अवतरण पृथ्वी पर अवतरित हुए।

**प.पू.श्री माताजी, २.७.२०००**

...... हर समय शक्ति ही कार्यान्वित होती है। **यह शक्ति सारा कार्य करती है, सबको ऑपरेट करती है, सब इंटेग्रेट करती है और प्यार करती है। यह ऐसी शक्ति है जो प्यार में ही सारा कार्य करती है। इस शक्ति में सारी शक्तियों का समूह होता है, इसी में लाइट है, इसी में चुम्बक है।** इसी शक्ति के तीन अन्य अंग हो जाते

हैं, इनको महालक्ष्मी, महाकाली और महासरस्वती, ऐसे तीन नामों से कहा जाता है, ये ही हमारा गाइडेन्स अभी तक कर रही हैं।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, ३.२.१९७८**

...... पूर्ण ब्रह्माण्ड के सृजन के पश्चात ये इच्छा की शक्ति–आदिशक्ति को प्रक्षेपित करने के बाद बची हुई अवशिष्ट शक्ति यह '**कुण्डलिनी**' है। हमारे अन्दर भी ऐसा ही है–तीन महाशक्तियाँ और अवशिष्ट शक्ति, जो कि इच्छाशक्ति है, यह बैठी हुई आपको पुनर्जन्म देने की इच्छा रखे हुए है।

**प.पू.श्री माताजी, यू.के., १५.११.१९७९**

...... सर्वप्रथम आदिशक्ति की अभिव्यक्ति बाईं ओर को होती है। यह महाकाली की अभिव्यक्ति है। तो महाकाली के कार्य के लिये बाईं ओर को उन्होंने पावनता, अबोधिता तथा मंगलमयता के गुणों के कारण श्री गणेश की सृष्टि की। ब्रह्माण्ड का सृजन किये जाने से पूर्व यह किया जाना आवश्यक था। सर्वप्रथम श्री गणेश का सृजन करके वे स्थापित हो जाती हैं। तत्पश्चात् विराट के शरीर में प्रवेश करके वे दाईं ओर को जाती हैं जहाँ सारे ब्रह्माण्डों–भुवनों का सृजन करती हैं। भुवन संख्या में चौदह है, अर्थात कई ब्रह्माण्डों को मिलाकर एक भुवन बनता है। दाईं ओर पर वे इन सबका सृजन करती हैं। तब वे ऊपर की ओर जाती हैं और फिर नीचे की ओर आते हुए इन सभी चक्रों, आदिचक्रों या पीठों की सृष्टि करती हैं। कुण्डलिनी रूप में वे स्थापित हो जाती हैं। अत: अवशिष्ट शक्ति का अर्थ यह हुआ कि यह सारी यात्रा करने के बाद वे कुण्डलिनी रूप में आती हैं।

...... इस कुण्डलिनी और चक्रों के कारण वे एक क्षेत्र की रचना करती हैं जिसे हम शरीर में चक्र कहते हैं। सर्वप्रथम वे सिर में इन चक्रों का सृजन करती हैं, इन्हें हम चक्रों की पीठ कहते हैं और तब नीचे की ओर आकर वे चक्रों की सृष्टि करती हैं, जो कि विराट के शरीर में हैं। एक बार जब यह सब कुछ हो जाता है तो वे विकास प्रक्रिया द्वारा मानव का सृजन करती हैं.........और इस प्रकार विकास आरम्भ होता है। तब जल में सूक्ष्मदर्शी अस्तित्व से इसका विकास आरम्भ होता है। ..........अपनी विकास लीला के लिये वे पृथ्वी माँ को ही सर्वोत्तम स्थान मानती हैं, वहाँ पर आदिशक्ति इस सूक्ष्म अस्तित्व को बनाती हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २१.६.१९९८**

...... पृथ्वी माँ, पूरा वातावरण, पंचतत्व सभी की एकाकारिता आदिशक्ति

से थी, तो इन सभी का सृजन वे सुगमता से कर सकीं। परन्तु जब मानव की बारी आयी तो उसे स्वतन्त्रता प्राप्त हो गयी। यही एक ऐसी जाति है जिसमें अहं है तथा जो सोच–विचार की माया में फँसी है। अहम् के कारण माया ने उन पर कार्य किया और विश्व का सृजन करने वाले सिद्धातों को वे भुला बैठे। उन्होंने इसे अपना अधिकार समझ लिया। उन्हें लगा यह उन्हीं के परिश्रम का फल है और वे इन सभी चीज़ों के स्वामी हैं।

...... मानव को प्राप्त स्वतन्त्रता के कारण ही पूरे विश्व में उथल–पुथल है। पृथ्वी पर ऐसा बहुत बार हुआ है।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, १९९६**

...... **आदिशक्ति ने प्रकृति की चीज़ों की सृष्टि आपके लिए की है, ताकि विकास के प्रतीक मानव की सहायता की जा सके, अब आप आत्मसाक्षात्कार पा सकें, अपने जीवन का अर्थ पा सकें, सर्वव्यापक शक्ति से जुड़कर परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश कर सकें।** सारा कार्य देवी का है। नौ बार वे अवतरित हुईं और दसवीं बार वे आप सबको आत्मसाक्षात्कार देने आई हैं। दसवीं बार तीनों शक्तियाँ सम्मिलित रूप में आयी हैं इसलिए इन्हें 'त्रिगुणात्मिका' कहते हैं। इसी कारण बुद्ध ने इन्हें मात्रेया कहा है, अर्थात तीन माताएं।

...... यह शक्ति जब कार्य करने लगती है तो तीनों मार्ग तथा सातों चक्र इनके वश में होते हैं। **शक्ति का नाम लिये बिना आप कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकते।**

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २७.९.१९९२**

......आदिशक्ति से ही तीनों शक्तियाँ निकली हैं-**महाकाली–महालक्ष्मी–महासरस्वती** और ये तीनों शक्तियाँ फिर उन्हीं में समाहित होती हैं। आदिशक्ति के सिवाय यह कार्य हो नहीं सकता, कारण सारे चक्रों में उनका प्रभुत्व है, और वे ही हैं जो हर तरह से चक्रों के आपसी सम्बन्ध को सम्भालती हैं। इसे त्रयसंयोग कहते हैं। आदिशक्ति आप सबको सिंहासन पर बैठे अपनी शक्तियों का आनन्द लेते हुए देखना चाहती हैं इसलिए हर आवश्यक कार्य अति सावधानीपूर्वक किया गया है।

**प.पू.श्री माताजी, ९.४.१९९०**

**मेरा लक्ष्य–**

...... **सहजयोग** का ज्ञान मुझे सदा से था। इस अद्वितीय ज्ञान के साथ मेरा

जन्म हुआ, परन्तु इसे प्रकट करना आसान कार्य न था। अत: इसे प्रकट करने की विधि मैं खोजना चाहती थी।

सर्वप्रथम मैंने सोचा कि सातवें चक्र (सहस्रार) का खोला जाना आवश्यक है और पाँच मई १९७० को मैंने यह चक्र खोल दिया। ये एक प्रकार से रहस्य है। पहले ब्रह्मचैतन्य अव्यक्त था। इसकी अभिव्यक्ति नहीं हुई थी, यह स्वत: स्पष्ट न था। जो लोग किसी तरह आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करके ब्रह्मचैतन्य के करीब पहुँच जाते थे, वे कहते 'यह निराकार गुण है, व्यक्ति एक बूँद की तरह है जो सागर में विलीन हो जाती है।' इससे अधिक कोई भी न तो वर्णन कर पाता था और न ही लोगों को बता पाता था। ब्रह्मचैतन्य के सागर से अवतरित महान अवतरणों ने भी अपने इने-गिने शिष्यों को यह रहस्य समझाना चाहा, उनका परिचय ब्रह्मचैतन्य से करने का प्रयत्न किया, **परन्तु ब्रह्मचैतन्य के व्यक्त रूप में न होने के कारण ये अवतरण स्वयं इसी में विलीन हो गये।** ज्ञानेश्वर जी ने समाधि ले ली। कुछ लोगों ने कहा कि वे इसकी बात नहीं कर सकते, यह तो अनुभव की चीज़ है। अत: बहुत कम लोग इसे प्राप्त कर सके।

कोई भी अपनी उँगलियों के सिरों पर, अपनी नाड़ियों पर, अपने मस्तिष्क में इसका अनुभव करके या अपनी बुद्धि से इसे समझकर आत्मसाक्षात्कार के अनुभव का वास्तवीकरण न कर सका। इस प्रकार यह बहुत बड़ी समस्या थी। सभी ने इसके लिये आधार बनाने का प्रयत्न किया।

अब ब्रह्मचैतन्य के विराट अवतरण के रूप में मैं आई हूँ। निराकार सागर एक बहुत बड़ा बादल (साकार) बन गया है।  इसने रूप धारण कर लिया है। इसके पूर्व जो भी अवतरण आए थे वे इसके अंग-प्रत्यंग थे, अब पूर्ण अवतार हुआ है। इस बादल में जल है, वर्षा का यह जल लोगों के मस्तिष्क का पोषण कर रहा है। शनै: शनै: वे उस स्तर पर लाए गए हैं जहाँ उनकी कुण्डलिनी उठ गयी है, उन्हें आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हो गया है और अब वे अपनी नस-नाड़ियों पर सभी समस्याओं को महसूस कर सकते हैं।

यही कारण था कि अब तक किसी ने स्पष्ट रूप से चैतन्य लहरियों के विषय में नहीं बताया, उन्होंने चैतन्य लहरी की बात की परन्तु तब तक यह अव्यक्त रूप में थी। केवल एक अवस्था थी, आनन्द की एक अवस्था जिसकी अभिव्यक्ति स्थूल रूप में नहीं हुई थी। उस अवस्था में वे क्रोध और प्रलोभनों से ऊपर उठ गए। हमारे सम्मुख इसके प्रमाण हैं। वो किस प्रकार ऐसा कर पाए, ब्रह्मचैतन्य क्या था-इसका प्रत्यक्ष रूप वे नहीं दर्शा पाये, केवल उपमाओं और नीतिकथाओं के माध्यम से उन्होंने इसके

विषय में बताया।

**मैंने यही प्राप्त किया है–यह प्रत्यक्ष रूप है। ब्रह्मचैतन्य का साकार रूप मैं सागर में से ले आई हूँ। अब मैं आपको इसमें विलीन होने की आज्ञा नहीं देती। इसे मैंने एक बड़े घट के रूप में स्थापित किया है। आप लोग छोटे घट हैं, दूसरे शब्दों में मैंने आपको सूक्ष्म कोशाणुओं के रूप में अपने शरीर में ले लिया है, जहाँ मैं आपका पोषण करती हूँ,** आपकी देखभाल करती हूँ, आपकी अशुद्धियाँ स्वच्छ करती हूँ और यह सब कार्यान्वित करती हूँ, परन्तु मैं **महामाया** हूँ इसलिए मुझे शनै: शनै: उचित समय तथा उचित परिस्थिति में काम करना होता है।

जब सातवाँ चक्र खोला गया तो सभी चक्र आपके सहस्रार में आ गए और मैं सभी चक्रों का और आपके सभी देवी–देवताओं का संचालन कर पायी। किसी भी देवता के रूप में मेरी प्रार्थना करने भर से आपको चैतन्य लहरियाँ आने लगती हैं, यह प्रमाणित करता है, कि **मैं ब्रह्मचैतन्य हूँ।**

ब्रह्मचैतन्य ही आदिशक्ति हैं। **सभी अवतरण मुझमें निहित हैं और सदाशिव भी मेरे हृदय में विराजित हैं,** परन्तु बहुत अधिक मानवीय होने के कारण मुझमें सदाशिव को खोज पाना सुगम नहीं।

अब तक कोई भी अन्य लोगों को आत्मसाक्षात्कार नहीं दे पाया। हो सकता है एक दो लोगों ने दूसरों को साक्षात्कार दिया हो। अधिकतर लोगों को तपस्या द्वारा ही आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हुआ। उदाहरणार्थ महात्मा बुद्ध को तपस्या द्वारा ही आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हुआ। ब्रह्मचैतन्य ने उनमें इसलिए प्रवेश किया क्योंकि उन्होंने इसके लिये प्रार्थना की, इसके लिये **शुद्ध इच्छा की और तब ब्रह्मचैतन्य ने उनका शुद्धिकरण किया।** परन्तु इसको पाने के पश्चात वे उस अवस्था में स्थापित हो गए। इसके बाद उन्होंने इसके विषय में कुछ नहीं कहा। अब यही चीज़ सामूहिक रूप से मिल रही है। सामूहिक आत्मसाक्षात्कार उस अवस्था के प्रकटीकरण आरम्भ होने के कारण हुआ।

पर उन दिनों इस अवस्था को समझने और आत्मसात करने वाला कोई न था। जिन लोगों ने आत्मसाक्षात्कार प्राप्त किया वे इसी में विलीन हो गए, इसलिए सारा अनुभव व्यक्तिगत रहा, सामूहिक न बन पाया। अब वह स्थिति समाप्त हो गयी है। आत्मसाक्षात्कार अब सामूहिक बन गया है।

एक बिन्दु पर आकर हर चीज़ को सामूहिक बनना पड़ता है। इस अवस्था तक पहुँचने के लिये भी परीक्षाएं हुई। अन्ततोगत्वा ईसामसीह ने अपना बलिदान दिया। इसी प्रकार मोहम्मद साहब, गुरुनानक, तुकाराम ने परीक्षाएं दीं। आप देखें उनसे किस प्रकार व्यवहार किया गया! वैकुण्ठ से आए इन सन्तों के साथ लोगों ने किस प्रकार व्यवहार किया? चीज़ें तब कार्यान्वित न हो पायीं।

वैकुण्ठ के आगे की सब चीज़ें मैं जानती हूँ, परन्तु इसे मैंने अभी तक प्रकट नहीं किया है। धीरे–धीरे ये सब मैं प्रकट करूँगी क्योंकि अभी तक लोग इसे आत्मसात् करने को तैयार नहीं हैं। **ये खिचड़ी पकने जैसा है जो अभी तक पकी नहीं हैं। तो अभी इसे तैयार होने दें। आप सब लोग इसमें हैं। अब जो लोग तैयार हो रहे हैं उनकी गुणवत्ता भूतकाल के पैगम्बरों के गिने चुने शिष्यों की गुणवत्ता के बराबर है।** अब यहाँ पर आप सब लोग धीरे–धीरे उन्नत होंगे। जो लोग इस दिव्य रसोइये की हाँडी में आ जाएंगे, वो तैयार हो जाएंगे, जो लोग इस हाँडी से बाहर रह जाएंगे, वो बाहर ही रह जाएंगे।

यह सब समय से परे की चीज़ है। हर व्यक्ति में प्राप्त करने की अपनी ही योग्यता है। समय का बन्धन मानव की अपनी रचना है। वास्तव में शरीर का कोई समय नहीं है। आदतों के कारण मानव ने समय के आयाम (Time Dimension) की सृष्टि की। आदतें बनने के साथ काल या समय बन्धन की सृष्टि हुई। आदत अगर न हो तो समय बन्धन नहीं रह जाता।

सहजयोग में आने के बाद आप कई बन्धनों से मुक्त हो जाते हैं, परन्तु इसमें भी समय लगता है। आदतों से यदि आप मुक्ति चाहते हैं तो इन्हें उचित न ठहराएं। उचित ठहराने के कारण ही आदतें बनी रहती हैं। एक जीवन काल में यदि आप आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करना चाहते हैं तभी इस जीवन में वह स्थिति प्राप्त करना आपके लिये सम्भव होगा। **इस जीवन में यदि आप आधेअधूरे रहे तो यह उपलब्धि पूर्ण करने के लिये आपको पुन: आना पड़ेगा।** कुछ समय के लिये अब सहजयोग इसी प्रकार कार्य करेगा, यह अन्तिम निर्णय है।

सदैव मध्य में रहें। सहजयोग में अपनी उन्नति के विषय में चिन्तित न हों, एक बार जब आप मध्य में आ जाएंगे तो उन्नति स्वत: होने लगेगी। मैं इसका पोषण कर रही हूँ। प्रतिदिन आप दाएं बाएं होते रहते हैं। अपनी आदतों के कारण आप बाएं को जाते हैं और आकांक्षाओं के कारण दाएं को। मुझे अपने हृदय में बिठाना एक भाव

है, एक अनुभूति। जिस प्रकार आपमें आदतें विकसित होती हैं, उसी प्रकार भाव के रूप में मुझे अपने हृदय में स्थापित करने का अभ्यास करें। एक बार जब आप अपने अन्दर मेरा भाव स्थापित कर लेते हैं तो आपके पूरे शरीर में यह अपना स्थान ले लेता है और शाश्वत बना रहता है। ये आप पर निर्भर करता है कि अन्त:करण की शुद्धि के लिये आप मुझे अपने हृदय में कहाँ तक बिठाते हैं।

अब यह प्रश्न उठता है कि किस प्रकार मेरे भाव को अपने हृदय में स्थापित करें? उत्तर ये है कि चित्त को निरन्तर रोकने से स्थिरता आती है। सदैव चित्तनिरोध करें। चित्त को अन्दर की ओर ले जाएं। इसके साथ ही आपको सामूहिक होना होगा। अन्यथा व्यक्तिगत रूप में तो आप निराकार में खो जाएंगे और मेरे दर्शन भी नहीं कर सकेंगे, क्योंकि आप उस अवस्था में चले जाएंगे जहाँ सागर में आप विलीन हो जाएंगे। **अत: सागर से विकसित होना या उसमें विलय हो जाना कोई अद्वितीय कार्य नहीं है। सागर से वाष्पीकृत होकर बादल बनना और फिर सब पर वर्षा करना अद्वितीय उपलब्धि होगी। मेरा यही लक्ष्य है और यही खेल।**

**डॉ.तलवार से वार्ता, २६-२७ फरवरी १९८७**

सहजयोगियों को मैंने बिना सोचे समझे अपने शरीर में डाल लिया है, इसलिए मुझे कष्ट उठाना पड़ता है। मेरा चित्त जब आप पर होता है तो मैं आपकी सभी समस्याओं को अपने में खींच लेती हूँ। उन्हें स्वच्छ करने के लिए मैं स्वयं कष्ट उठाऊँगी, परन्तु ऐसा मैं चाहूँगी तभी होगा। इस मामले में सहजयोगी बैरोमीटर के समान हैं, उन्हें मेरी तरह कष्ट नहीं उठाना पड़ता। कभी थोड़ा बहुत कष्ट हो सकता है क्योंकि जो कुछ भी नकारात्मकता वो आत्मसात करते हैं वो विशाल सागर में चली जाती है।

...... वास्तव में आपकी जिज्ञासा तथा विवेक आपको सहजयोग में ले आए हैं। सामूहिक कार्यक्रम जो सामूहिक जागृति के लिये होते हैं उनमें मुझे अपनी कुण्डलिनी उठानी पड़ती है। मैं अपनी कुण्डलिनी में आपकी सभी समस्याओं को पकड़ लेती हूँ। यह बड़ा कष्टकारी कार्य है। इसलिए पूजा के उपरान्त मैं सुस्त हो जाती हूँ। मैं आप सबको अपने शरीर में डाल लेती हूँ, आप मेरे शरीर के अंग-प्रत्यंग बन जाते हैं। मेरा हर कोशाणु आपके उत्थान के लिये है। यह समझने के लिये आपको अति सूक्ष्म होना होगा।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ६.६.१९९३**

...... यह अवतरण पृथ्वी पर स्वयमेव मात्र आपकी रक्षा, पोषण तथा राक्षसों का विनाश करने के लिए नहीं आया। आपके अन्दर निहित सूक्ष्मताओं के तथा आपके आन्तरिक तथा बाह्य सम्बन्धों के बारे में आपको बताने के लिए वे पृथ्वी पर अवतरित हुई हैं। आप कभी भी सत्य, सर्वव्यापक शक्ति तथा सर्वशक्तिमान परमात्मा से नहीं जुड़े थे। व्यक्ति को समझना चाहिए कि कितनी महान घटना घटित हुई है कि मेरे अन्दर से निकलकर कुण्डलिनी ने सारे ऊपरी चक्रों को छू लिया है। इसके पूर्व यह कभी नहीं घटित हुआ। साधकों की रक्षा तथा देखभाल हुई।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २४.१०.१९९३**

मैं ही आदिशक्ति हूँ (होलीघोस्ट), नि:सन्देह मैं ही आदिशक्ति हूँ, वो शक्ति जिसके विषय में ईसामसीह ने कहा था.............मैं घोषणा करती हूँ कि मैं ही आदिशक्ति हूँ, मैं ही वह पावन आत्मा हूँ जो आपको आत्मसाक्षात्कार प्रदान करने के लिए अवतरित हुई है।'

**न्यूयार्क, ३०.९.१९८१**

'ॐ –सभी देवता देवी के समीप गये और नम्रता से पूछने लगे–हे महादेवी! तुम कौन हो? ।।१।।

उन्होंने कहा–मैं ब्रह्मस्वरूप हूँ। मुझसे प्रकृति–पुरुषात्मक सद्रूप और असद्रूप जगत उत्पन्न हुआ है। ।।२।।

मैं आनन्द और आनन्दरूपा हूँ। अवश्य जानने योग्य ब्रह्म और अब्रह्म भी मैं ही हूँ। पंचीकृत और अपंचीकृत महाभूत भी मैं ही हूँ ।।३।।

वेद और अवेद मैं हूँ। विद्या और अविद्या भी मैं हूँ। अजा और अनजा भी (प्रकृति और उससे भिन्न) भी मैं हूँ। नीचे–ऊपर, अगल, बगल भी मैं ही हूँ ।।४।।

**– श्री देवी अथर्वशीर्ष**

# मानव का विकासक्रम

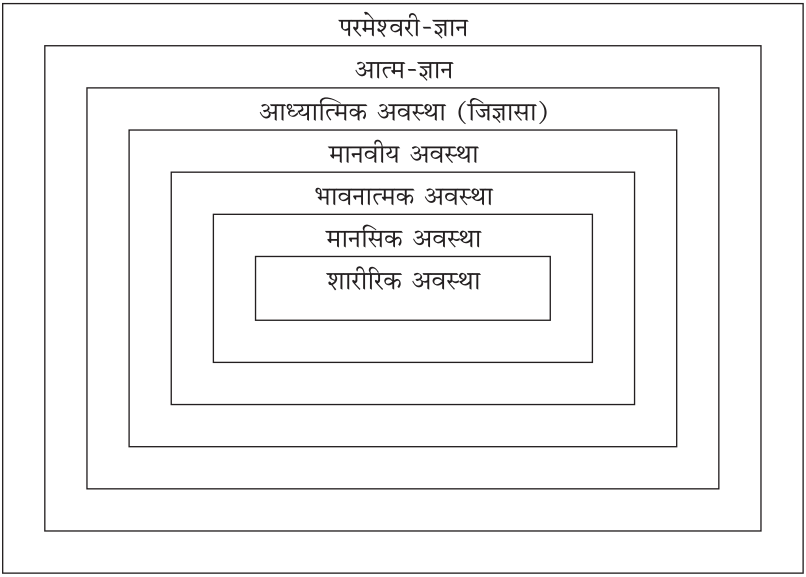


## परा आधुनिक युग

## अध्याय ७

# मानव का विकासक्रम एवं कलियुग में उत्क्रान्ति

...... **आप प्रकृति की एक बहुत सुन्दर रचना हैं।** बहुत मेहनत से, नज़ाकत के साथ, अत्यन्त प्रेम के साथ, परमात्मा ने आपको बनाया है। **आप एक विशेष अनन्त योनियों में से घटित होकर इस मानव रूप में स्थित हैं।**

– कार्बन से अमीबा अवस्था तक, अमीबा से पशु अवस्था तक और पशु से मानव अवस्था तक।

कार्बन⟶अमीबा⟶ मछली⟶ रेंगने वाले जीव⟶स्तनधारी जीव⟶नर वानर (बंदर)⟶मानव

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, २२.३.१९७९**

...... चौदह हज़ार वर्षों से, जैसा माना जाता है, हम मानव हैं। **पूर्ण स्वतन्त्रता में अपने अन्दर विकसित हो रहे हैं।** मानव ही एकमात्र वह जीव हैं जिन्हें स्वयं विकसित होने की स्वतन्त्रता प्राप्त है, और इस विकास में वे भले–बुरे का भेद समझ सकते हैं। यह स्वतन्त्रता दी गयी है क्योंकि स्वतन्त्रता के बिना आप आगे नहीं बढ़ सकते। **..... आप अब विकास की एक विशेष अवस्था तक पहुँच चुके हैं। इस अवस्था में आपको खोज करने की स्वतन्त्रता दी जाती है। इस तरह आपका विकास होता है।**

मानव को समझने की, अपनी कुशलता को विकसित करने की और सृष्टि के सृजनकर्ता तथा उनकी शक्तियों को प्राप्त करने की स्वतन्त्रता दी गयी है। यही कारण है कि केवल मानव में ही कुण्डलिनी (सुप्त शक्ति) स्थापित की गयी है। यद्यपि कुण्डलिनी शक्ति और कुण्डलिनी सभी जीव–जन्तुओं में भी विद्यमान है **पर केवल मनुष्य में ही इस शक्ति को त्रिकोणाकार अस्थि में सुप्तावस्था में रखा गया है ताकि अज्ञात क्षेत्र में उसकी उत्क्रान्ति को यह अन्तिम ऊर्जा (शक्ति) प्रदान कर सके। यह कुण्डलिनी है, इसका अस्तित्व है।**

**प.पू.श्री माताजी, देहली, फरवरी १९७९**

...... संयोग के नियम को यदि हम देखें तो मानव स्तर तक उत्क्रान्ति में

बहुत कम समय लगा। मानव स्तर के विकास की तुलना अंतरिक्षयान स्फोटिका से की जा सकती है। इनमें बहुत से इंजन होते है और कैप्सूल में (स्फोटिका में) बहुत सी आन्तरिक सतहें होती हैं। अंतरिक्षयान को जब छोड़ते हैं तो यह अन्दर बनाये हुए सारे साज़ोसामान के साथ तेज़ी से पृथ्वी से उठता है और जब बाह्य विस्फोटिका में विस्फोट होता है तो जले हुए भाग को त्याग कर यही विस्फोट यान को तीव्रगति प्रदान करता है।

इसी प्रकार हमारा मानव स्तर तक उत्थान घटित हुआ। यह इस प्रकार है–

(१) शारीरिक अवस्था (२) मानसिक अवस्था (३) भावनात्मक अवस्था (४) मानवीय चेतना तक पहुँचाने वाली आध्यात्मिक अवस्था (५) आधुनिक समय में इस में विस्फोट हो चुका है और आध्यात्मिक जिज्ञासा आरम्भ हो गयी है। सारी प्रगति मध्यनाड़ीतन्त्र पर होती है तथा यह हमारी चेतना का विस्तार करती है। (६) आत्मत्व (selfhood) की छठी उपलब्धि सहजयोग के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है जिसमें हम आत्मचेतन हो जाते हैं। कृण्डलिनी के माध्यम से हम आत्मज्ञान प्राप्त करते हैं। (७) परमात्मा के ज्ञान की ओर अब हमारी यात्रा आरम्भ होती हैं। आत्मज्ञान के बिना व्यक्ति परमात्मा को अनुभूत ज्ञान के रूप में नहीं जान सकता है।....... हमारे धर्मग्रन्थों में यह वर्णन है कि मानव को एक ऐसे साम्राज्य तक उन्नत होना है जहाँ वह **अपनी चेतना के चतुर्थ आयाम (तुर्या अवस्था) को प्राप्त कर ले।...... तुर्या अवस्था सम्पूर्ण चेतना की अवस्था है।......... प्राय: हम तीन आयामों में जीवित रहते हैं। सन्तों ने चतुर्थ आयाम प्राप्त किया और इस उत्क्रान्ति के माध्यम से वे पूर्ण प्रशान्ति, पूर्ण सामंजस्य और वास्तविकता की पूर्ण चेतना की अवस्था पा लेते हैं।**

**जिन तीन आयामों में हम प्राय: जीवित हैं वे हैं – शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक। चतुर्थ आयाम आध्यात्मिकता है।** पहले तीन आयामों का गहनतापूर्वक उपयोग करने पर हम अपने जीवन की सारहीनता को समझ जाते हैं, और तब पूर्ण सत्य को खोजने लगते हैं क्योंकि हम असन्तुष्ट होते हैं कि जो ज्ञान हमें प्राप्त है वह तो मानसिक शान्ति भी प्रदान नहीं कर सकता।

**परा आधुनिक युग**

...... पूरे ब्रह्माण्ड की रचना की गयी, सारा वातावरण बनाया गया, सारा

विकास हुआ किसलिये ? कि मानव सत्य को जान लें।

**प.पू.श्री माताजी, २४.१०.१९९३**

...... आपका जन्म केवल मानव बनने के लिये नहीं हुआ, बल्कि महामानव बनने के लिये हुआ है। आपको आनन्द लेना होगा। आपका जीवन आनन्द लेने के लिये योग्य होना चाहिये। सुबह से शाम तक इस विषय में चिन्ता, उस विषय में चिन्ता! परमात्मा ने मानव की सृष्टि इसलिये नहीं की कि आप लड़ाई–झगड़े के लिये, रक्षा के लिये हर समय चिंता करें। परमात्मा ने इसलिये आपकी सृष्टि की है, कि **आप पूर्ण तादात्म्य तथा आनन्द के साथ जीवन व्यतीत करें।** इसलिये हमारा सृजन हुआ और यही हमारा ध्येय है। मैं यह बात आपको केवल बता नहीं रही, ये वास्तविकता है।

**प.पू.श्री माताजी, लंदन, १४.७.२००१**

...... मैं कहूँगी कि यह परमात्मा का दिव्य प्रेम है। परमात्मा की कृपा है जिसने आपको मानव योनि दी और उनकी कृपा ही आपको श्रेष्ठ मानव बनाएगी।

**प.पू.श्री माताजी, २२.३.१९८१**

...... मनुष्य को ईश्वर ने स्वतन्त्रता दी है। आपको भिन्न बनाया गया है। अब आप स्वयं थोड़ा सीखें। स्वयं सीखने पर आप जान सकेंगे कि **आप उस सम्पूर्ण (परमात्मा) के एक अवयव हैं, एक घटक हैं। ये जो एक घटक है जब जागृत होकर उस सम्पूर्ण से एकाकार होगा (जुड़ेगा) तभी उसे अपना पूर्णत्व प्राप्त होगा।**

**प.पू.श्री माताजी, ८.९.१९७९**

...... हम मनुष्य स्थिति तक आए हैं तो हमें इसका अर्थ जानना होगा। ज़िन्दगी भर वही–वही (रूढ़िवादी) बातें करने में कोई अर्थ नहीं हैं। ज्यों–ज्यों लोग परमेश्वर को तत्वत: छोड़ रहे हैं, वे केवल परमात्मा के नाम से चिपके हुए हैं। सुबह उठकर भगवान को दीपक दिखाया, घंटी बजायी कि हो गया काम पूरा! इस तरह ही फिज़ूल की बातों से परमात्मा कदापि प्राप्त नहीं होंगे। परमात्मा आपमें है, उन्हें जागृत करना पड़ेगा।

**प.पू.श्री माताजी, २२.९.१९७९**

...... आपका मस्तिष्क सीमित है। यह अत्यन्त सीमित मार्ग है। अपने इस मस्तिष्क से आप कुछ नहीं कर सकते हैं। अपने इस मस्तिष्क से आप कुछ नहीं कर सकते। आपको इसके परे जाना होगा। कोई व्यक्ति ऐसा होना चाहिए जो आपको

अन्तरिक्ष में ढकेल दे। वहाँ आपको जाना होगा । आपको आत्मा बनना है। **केवल आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करके ही परमात्मा से आपका सम्बन्ध जुड़ सकता है,** उससे पूर्व आप परमात्मा से जुड़े हुए नहीं होते। यही कारण है कि आपको आत्मा बनना होगा क्योंकि आत्मा ही यह योग है, परमात्मा से जोड़ने वाला तार। इसके अतिरिक्त परमात्मा से जुड़ने का कोई अन्य मार्ग नहीं है। आप यदि स्वयं को भ्रम में रखना चाहते हैं तो आपकी इच्छा है, परन्तु मैं आपको बता रही हूँ कि केवल यही सत्य है।

**प.पू.श्री माताजी, न्यूयार्क, ३०.९.१९८१**

...... सत्य को जानने का मतलब होता है कि आप उस चीज़ को जाने जो सब चीज़ों का सार और तत्व है, जैसे कि मनुष्य का सार और तत्व क्या है? **उसका सार और तत्व उसकी आत्मा है।**

**प.पू.श्री माताजी, १०.२.१९८५**

...... आपके जीवन का लक्ष्य आत्मा को पाना है। आत्मा को पाते ही बाकी सब चीज़ें खत्म हो जाती हैं, अपने आप बाकी सब चीज़ें घटित हो जाती हैं।

– पूर्ण ज्ञान भी केवल आत्मा से प्राप्त होता है, आत्मा को जाने बिना हम पूर्ण सत्य को पूरी तरह नहीं जान सकते।

**सहजयोग से उद्धृत**

...... परमात्मा ही पूर्ण सत्य है

– यदि हम पूर्ण में स्थित हैं तो हम जानते हैं कि हर चीज़ के लिये केवल एक ही सत्य है। तब न कोई तर्क होगा और न वाद–विवाद । हर व्यक्ति इस सत्य का आनन्द लेगा क्योंकि यही पूर्ण है।

– सत्य और आनन्द दोनों एक ही चीज़ हैं – जैसे चन्द्र की चन्द्रिका होती है या जिस तरह सूर्य का अपना प्रकाश होता है, उसी प्रकार सत्य और आनन्द दोनों चीज़ें एक साथ हैं। जब आप सत्य को (परमात्मा को) पा लेते हैं तो आत्मविभोर हो जाते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, दिवाली पूजा, ९.३.१९७९**

...... (आज) परमात्मा के नाम पर लोग जो कार्य कर रहे हैं वे हिला देने वाले हैं। इस कलियुग में मनुष्य ने अपना सारा विवेक खो दिया है। ........... मानव

अत्यन्त व्यक्तिवादी बन गया है, उनका स्वयं पर नियन्त्रण नहीं है। लोग दास बन गए हैं फिर भी सोचते हैं वे स्वतन्त्र हैं, वे स्वतन्त्र लोग हैं और वे जो चाहे कर सकते हैं। कलियुग में इस स्वच्छन्दता के परिणाम स्वरूप वे इतने घिनौने हो गये हैं और जिस प्रकार के कुकृत्य कर रहे हैं उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। कलियुग के लिये कहा भी गया है कि यह भ्रम का युग है और इस भ्रम में यदि आप फँस गये तो समाप्त हो जायेंगे, परन्तु भ्रम को यदि पहचान लेंगे तो सत्य को खोजने लगेंगे। यही कारण है कि आज जिज्ञासा बहुत बढ़ गयी है, क्योंकि लोग भ्रम को महसूस कर सकते हैं। वे जानते हैं कि ये सत्य नहीं है और जब वे ये बात जान जाते हैं तब क्या करते हैं? तब वे जानना चाहते हैं कि सत्य क्या है। इस प्रकार कलियुग में सत्य साधना आरम्भ हुई।

**प.पू.श्री माताजी, डेल्फी, ७.११.१९९९**

...... कलियुग में ही यह होना है। कलियुग जब तक पूरी तरह से परिपक्व नहीं हुआ था, **मानव पूरी तरह संतुलन में नहीं पहुँच पाया जहाँ उसे पहुँचना है। जब तक परमात्मा की कृति, मानव, पूरी तरह से तैयार नहीं हो गया, ये कार्य (आत्मसाक्षात्कार) होने वाला नहीं था।** कलियुग में ही, जो दिखने में अत्यन्त घोर और दर्दनाक है, अत्यन्त भीषण और भयंकर सा नज़र आ रहा है, इसी कलियुग की आग में तपकर आप वो होने वाले हैं, जो आपको होना है।

**प.पू.श्री माताजी, २६.१२.१९७६**

...... मनुष्य जो कुछ भी सोचता है अपने मन से, वो मन के दायरे में खोजता हैं, मन से परे की (परमात्मा की) जो बात है वो इस मन से समझने वाली है नहीं........... अब एक नया मानव आने की ज़रूरत है जो मन से परे उस शक्ति को जान ले जो कि इस मन को भी चलाता है और इस हृदय का स्पंदन भी करता है।

**प.पू.श्री माताजी, १.६.१९७२**

...... मेरी हाथ जोड़कर विनती है कि अपने जीवन के प्रति एक तरह की मान्यता का विचार होना चाहिये .... मैं इतनी योनियों में से आज मनुष्य बनकर आया हूँ और मुझे आत्मा बनने का है, और इस आत्मा के प्रकाश में मुझे चलने का है जिससे कि मैं परमात्मा के साम्राज्य में अनन्त जीवन और अनन्त काल तक आनन्द में रहूँ।

**प.पू.श्री माताजी, १५.१.१९८४**

...... सर्वव्यापक शक्ति अतिक्रियाशील हो चुकी है, इसलिये कलियुग ब्रह्मचैतन्य के कृतयुग में परिवर्तित हो रहा है। यही सामूहिक ज्ञान, बोध प्राप्ति तथा

आत्मसाक्षात्कार में सहायक हो रहा है। निरन्तर इस सर्वव्यापक शक्ति से जुड़े रहकर अपना साक्षात्कार पाकर तथा इसे स्थायी बनाकर हमें ब्रह्मचैतन्य की गतिविधि से लाभ उठाना है।

**सहजयोग**

...... **श्री आदिशक्ति** ने पूरी प्रकृति की सृष्टि की। अपने चहुँ ओर आप जो कुछ भी देखते हैं उसकी सृष्टि उन्होंने ही की। यह सब उन्हीं का कार्य है। दो तरह के विश्व की सृष्टि की गयी। एक तो दैवी था और दूसरे का विकास आरम्भ हुआ था। इसको देखना बहुत बड़ा कार्य था, इस प्रकार के कार्य को करने के लिये अरबों वर्ष बीत गए हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २६.६.१९९४**

...... अब देखिये पृथ्वी की रचना भगवती (आदि माँ) ने कैसे की–पहले सूर्य से कुछ हिस्सा भगवती ने निकाल लिया उसके बाद उस हिस्से को बहुत दूर ले गयीं जिससे वह कुछ ठण्डा हो गया–बर्फ की तरह। फिर उसको धीरे–धीरे सूर्य के पास ले गयीं, उससे बर्फ पिघलने लग गयी, उससे पानी का प्रवाह शुरु हो गया, उसके बाद फिर से उसको दूर ले गयीं, फिर नज़दीक लाकर ऐसा एडजस्ट कर दिया, जिससे वहाँ जीव–धारण हो सके।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, ३.२.१९७८**

...... समुद्र में ही जीवधारणा हुई। हम पहले अमीबा (एक सेल का जीव) थे। यानी पहले हम सब लोग मछलियाँ ही थे। और उसके बाद कुछ मछलियाँ बाहर की ओर चली आयीं, उन मछलियों को पहली बार लाने वाला मत्स्य अवतार हुआ।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १७.२.१९८१**

...... आरम्भ में एक ही मछली पानी से बाहर निकली थी, उसके बाद दस–बारह निकलीं होंगी, फिर एक आध हज़ार निकलीं, उसके बाद न जाने कितनी मछलियाँ ऊपर निकलकर आज मानव स्थिति में बैठी हुई हैं। इसी प्रकार अनेक वर्षों से आप लोगों ने तपस्या की है, परमात्मा से योग माँगा है, मेहनत की है और आज सर्वसाधारण मनुष्य बनकर संसार में आए हैं। आज उसको प्राप्त करने का जो आपका हक है, आपकी इच्छा है, पूरी होगी।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १६.२.१९८५**

**रहस्यमय मानव शरीर –**

...... अमीबा से होते–होते आज हम मनुष्य बन गए और ये जो हम मनुष्य बने हैं उसके दस धर्म हैं और वह दस धर्म हमारे अन्दर बसते हैं। इस धर्म से ही हमारा इवोल्यूशन हुआ है, उत्क्रान्ति हुई है। हम अमीबा बने, धर्म हमारे अन्दर बदलते गये, जब इन्सान के धर्म में हम आ गए तो हम इन्सान कहलाने लगे। इन्सान का धर्म जानवर से ऊँचा है।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १७.२.१९८१**

...... सब कुछ जो भी सृष्टि करने में बनाया गया था वह सब कुछ मनुष्य के अन्दर में भी बना दिया गया है। पहले वलय, उसके बाद बिन्दु इसके बाद अर्धबिन्दु, फिर सारी कुण्डलिनी की रचना। पूरी कुण्डलिनी को बना दिया गया और वो जो आदि कुण्डलिनी है वो ही आपके अन्दर में आ गयी और आपकी कुण्डलिनी बन गयी।

**प.पू.श्री माताजी, २५.११.१९७३**

...... आदिशक्ति और कुण्डलिनी में अन्तर यह है कि एक ओर आदिकुण्डलिनी कुण्डलिनी को प्रतिबिम्बित करती हैं और दूसरी ओर आदिशक्ति हैं जो कि परम चैतन्य हैं। पूर्णरूप से यदि आप इसे देखें तो इसके दो पक्ष होते हैं, एक परम चैतन्य के रूप में इसकी शक्ति और दूसरे कुण्डलिनी के रूप में मानव में इसका प्रतिबिम्ब।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २६.६.१९९४**

...... आदिकुण्डलिनी बनाने के लिये पहले कुछ लोगों को बिठाया गया था। शुरुआत करने के लिये किसी को बिठाना पड़ता है। पहले उन्होंने गणेश जी को बिठाया। आदिशक्ति ने सिर्फ एक चक्र के साथ श्री गणेश जी को बिठाया, एक गणेश, एक ही चक्र के साथ 'श्री गणेश'।

उसके बाद दूसरा चक्र लेकर वो जब आयीं तब उन्होंने ब्रह्मदेव की रचना की, लेकिन करी वह उल्टे ढंग से। पहले उन्होंने श्री विष्णु जी को पैदा किया, उसकी वजह यह कि पहले क्रिएशन करने से पहले ही एक पालनकर्ता पहले ही बना दिया, इसलिए नाभिचक्र से हमें भी अपनी माँ से पहले ही पैदा किया जाता है और फिर इस पिता स्वरूप बाप को बनाने के बाद उनकी नाभि से ही श्री ब्रह्मदेव की रचना हुई। बिल्कुल हुआ है, ऐसे ही हुआ, जैसे खूँटे बिठाये जाते हैं इसी तरह से हुआ, इसमें झूठ कुछ भी नहीं।

अब भवसागर बन गया, भवसागर की तैयारी हो गयी, सारा void तैयार हो गया, Vagus nerve और Aortic Plexus चारों तरफ भवसागर के, उसके अन्दर से बहने वाला प्यार, क्रिएशन उसी में फँस गयी। All Pervading Power है प्यार और उसके बीच में क्रिएशन है, अब इस भवसागर को लाँघने की बहुत जरूरत है।

अब भवसागर में फँसे लोगों को निकालने के लिये कोई न कोई व्यवस्था करनी पड़ी, इसलिए ब्रह्मा–विष्णु–महेश ये बड़ी अजीब सी हस्ती बनायी है, इन तीनों की धर्म पर स्थापना कर दी गयी–**दत्तात्रेय**–और यही आदिगुरु हैं, और हमेशा गुरु रूप रहे हैं, इन्होंने अनेक बार संसार में जन्म लिया। उनका जन्म राजा जनक के रूप में हुआ जो आदिशक्ति के पिता स्वरूप हैं, उसके बाद उनका जन्म ईरान में हुआ, जोरास्टर के रूप में, मच्छिन्दरनाथ भी वही, मोहम्मद साहब भी वही, नानक साहब भी वही, उसके बाद हमारे शिरडी के साईंबाबा वो भी आदि गुरु थे। **मेरे भी यही गुरु हैं,** इन्होंने मुझे सब धन्धा सिखाया, जन्म–जन्मान्तर सिखाते रहे, अन्त में मुझे ही आकर यह सब काम करना पड़ा, ये उन्होंने भी नहीं किया और इस **जन्म में मुझी को वो गुरु स्थान में बैठा रहे हैं कि मैं गुरु बनूँ।**

अब भवसागर को पार करने के लिये जो गुरु की स्थापना हुई उस पर भी बहुत कुछ काम किया गया कि गुरु किसी तरह से इस भवसागर से मनुष्य को पार कर देगा। कुछ काम बने, कुछ नहीं बने। बहुत से लोग हो गए, वो ही आज भी मदद कर रहे हैं। वो चिरंजीव हैं। लेकिन सबके लिये experimental था, सबने experiment किये–कभी इस दिशा में कभी उस दिशा में लाकर कि किसी तरह से मनुष्य पार हो जाए। थोड़े बहुत हो जाते थे, चिरंजीव हो जाते थे, लेकिन amass जिसे कहना चाहिये, इतने लोगों को पार करना कलियुग में ही हो सकता है।

**अब जो ईश्वर हैं, हमारे हृदय में आत्मस्वरूप बैठे हैं,** जब बच्चा माँ के उदर में ही होता है तभी साक्षी स्वरूप ईश्वर उसके हृदय में आ जाते हैं और एक फ्लेम, जैसे अंगूठा है, एक फ्लेम के जैसे दिखायी देते हैं। ये बायीं ओर हृदय में है, हृदय चक्र में नहीं। वो हृदय चक्र में क्यों नहीं? क्योंकि वह कुण्डलिनी के जाने का मार्ग है। **इसके बाद रामचन्द्र जी संसार में आए, वो बिल्कुल ही मानव हो गए,** उनको तो भुला दिया गया था कि तुम मानव हो। वो एकदम अपने को भुला करके आप इस माया में पड़कर एकदम अपने को भुलाकर आए और मानव ही बनकर इस संसार में वो जिए हैं, इस भवसागर से आपको निकालने के लिये। उस वक्त भी दो–

चार लोग थे वो पार हो गए इसमें कोई शक नहीं, पर बहुत ज़्यादा नहीं हो पाए।

उसके बाद छ: हजार साल पहले श्री कृष्ण आए। लेकिन श्री कृष्ण के आने से पहले आदिकाल से ही जब भवसागर से लोग पार होना चाहते थे तब उन भक्तों को बड़ी आफत आती थी। वे जब भी मेडीटेशन में बैठते थे उनको सताया जाता था। तब आदिशक्ति अपने सम्पूर्ण रूप में प्रकट हुईं और उन्होंने १०८ बार अवतार लिया। देवीमहात्म्य आप पढ़ें, मेरी बात आप समझ जाएंगे।

देवीरूप वे संसार में आयीं और उन्होंने आकर के लोगों को पहचाना। लेकिन तब वो सिर्फ देवी स्वरूप आयी थीं, **उनकी कोई माया बीच में नहीं थी, इस वजह से मनुष्य तारण नहीं पा सकता था, उनकी सिर्फ प्रोटेक्शन ही जिसे कहना चाहिए कि बचाव ही सिर्फ हो सकता था, लेकिन तारण नहीं हो सकता था।** उन्होंने महिषासुर को मारा, शुम्भ, निशुम्भ को मारा। जो राक्षस सताते थे, जो भक्तों को सताते थे उनको मारा, जो negative लोग थे उनको सबको मारा, लेकिन उनसे उनका तारण नहीं हुआ क्योंकि वो पूर्णतया human नहीं थे।

इसलिए राधा का जन्म हुआ, सीता के बाद श्री राधा जी का जन्म हुआ जो बहुत ही human थीं और प्रेम का संगीत उन्होंने गाया। विशुद्धि चक्र पर उनका स्थान है, पाँचवें चक्र पर। जब कंस को मारा था श्री कृष्ण ने, अपना मामा था, तब भी राधा जी को बुला कर लाए थे। श्री कृष्ण की शक्ति राधा थीं जो बाद में दो भागों में बँट गयीं, जो रुक्मणी और राधा बनकर के एक वृंदावन में और एक द्वारिका में, बहुत ही **मानवीय (human)**।

उसके बाद श्री कृष्ण का एक ही पुत्र था..........जो साक्षात ओंकार स्वरूप था वो, उसने यहाँ (आज्ञा चक्र पर) अवतार लिया। उसका नाम जीज़स क्राइस्ट है, उसकी माँ **'मेरी'** थीं। आज्ञा चक्र पर वो आए। वो आज्ञा चक्र पर ईसामसीह का नाम है और महालक्ष्मी स्वयं मेरी हैं, वे जब भी अपने बच्चे के साथ आती हैं तब शान्त होती हैं लेकिन जब अकेले आती हैं तब वो भयानक होती हैं।

सहस्रार का स्थान साक्षात भगवती का है, वे स्वयं इसे तोड़कर इसमें सातों चक्र पूरे होते हैं। इसलिए माया भी सात पर्दों की है और माया की पहचान बड़ी मुश्किल है। पूरा का पूरा उसका human चक्र पूरा हो जाता है। सात चक्रों का।

**प.पू.श्री माताजी, २५.११.१९७३**

...... अपने अन्दर परमात्मा ने चौदह स्तर बनाये हैं, अगर आप गिनिए सीधे तरीके से, तो भी अपने अन्दर आप जानते हैं सात चक्र हैं, इनके अलावा दो और चक्र हैं, चन्द्र का चक्र और सूर्य का चक्र, फिर एक हंसा का चक्र है, इस प्रकार तीन और चक्र आ गए। तो सात और तीन – दस, उसके ऊपर और चार चक्र हैं – अर्ध बिन्दु, बिन्दु, वलय और प्रदक्षिणा, ऐसे चार चक्र हैं। जब कि आपका सहस्रार खुल गया उसके ऊपर भी इन चार चक्रों में आपको जाना है। इन चार चक्रों के बाद कह सकते हैं कि हम लोग सहजयोगी हो गए है।

और दूसरी तरह से भी आप देखें तो हमारे अन्दर चौदह स्थितियाँ, सहस्रार तक पहुँचने पर भी हैं, अगर चक्रों को विभाजित किया जाए तो सात चक्र ईड़ा नाड़ी पर और सात पिंगला नाड़ी पर हैं। मनुष्य जब चढ़ता है तो वह सीधे नहीं चढ़ता, वो पहले बाएं में आता है फिर दाएं में जाता है, फिर बाएं में आता है, फिर दाएं में जाता है और कुण्डलिनी जो चढ़ती है तो इन दोनों में विभाजित होते हुए चढ़ती है।

...... अब यह हमारा जो ब्रेन है, ये हमारी सारी उत्क्रान्ति का फल है, आज तक जितना हमारा **evolution** हुआ है, जो अमीबा से आज हम इन्सान बने हैं, वह सब हमने इस ब्रेन के फलस्वरूप पाया है। **ये जो ब्रेन है, ये सब कुछ जो कुछ हमने पाया है इस ब्रेन में है, इसी में सब तरह की शक्तियाँ सब तरह का इसी में सब पाया हुआ धन संचित है।**

...... अब इस हृदय के अन्दर जो आत्मा विराजती है और उसका जो प्रकाश हमारे अन्दर सहजयोग के बाद सात परतों में फैलता है, दोनो तरफ से, वो तभी हो सकता है जब आदमी का सहस्रार खुला हो। बस अपनी इज्ज़त खुद ही करनी होगी, बस अपनी जैसे जैसे इज्ज़त आपने कर दी वैसे वैसे ही आपकी स्थापना अन्दर हो गयी, क्योंकि **यह मन्दिर है** और इस मन्दिर की आपने जितनी भी इज्ज़त करी हुई है उतना ही इसके अन्दर परमात्मा का प्रकाश है।

**आपका जन्म केवल मानव बनने के लिये नहीं हुआ है बल्कि महामानव बनने के लिये हुआ है।** आपको अब आनन्द लेना होगा। परमात्मा ने मानव की सृष्टि इसलिए नहीं की है कि आप लड़ाई–झगड़े के लिये, रक्षा के लिये हर समय चिन्ता करें, परमात्मा ने आपकी सृष्टि इसलिए की है कि आप पूर्ण शान्ति और तादात्म्य तथा आनन्द के साथ जीवन व्यतीत करें। इसलिए हमारा सृजन हुआ है, यही हमारा लक्ष्य

है। यह बात मैं केवल आपको बता नहीं रही, ये वास्तविकता है।

अब सहजयोग का आरम्भ हुआ है। इसके आरम्भ होने के पश्चात सहजयोगी आदिशक्ति से सीधे आशीर्वाद प्राप्त कर रहे हैं। यह समझ लेना आपके लिये आवश्यक है कि आप अत्यन्त उच्च चेतना के क्षेत्र में प्रवेश कर गए हैं, जहाँ आप अब परमात्मा से जुड़े हुए हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ५.५.१९८३**

.... ये विधिलिखित है कि इस कलियुग में ही यह कार्य (आपका आध्यात्मिक विकास) होने वाला है और इसकी सम्पन्नता भी होनी है। समय आना आवश्यक है और ये समय आ गया है। कलियुग में यही खास बात है कि भ्रांति इसमें मनुष्य में आती है और भ्रांति की ही वज़ह से वह खोजता है–जब अँधेरे में पूरी तरह से भ्रांत हो जाता है तो वह खोजता है और यह समय है – इस समय में ही यह होने वाला है।

**चैतन्य लहरी, जुलाई–अगस्त २००३**

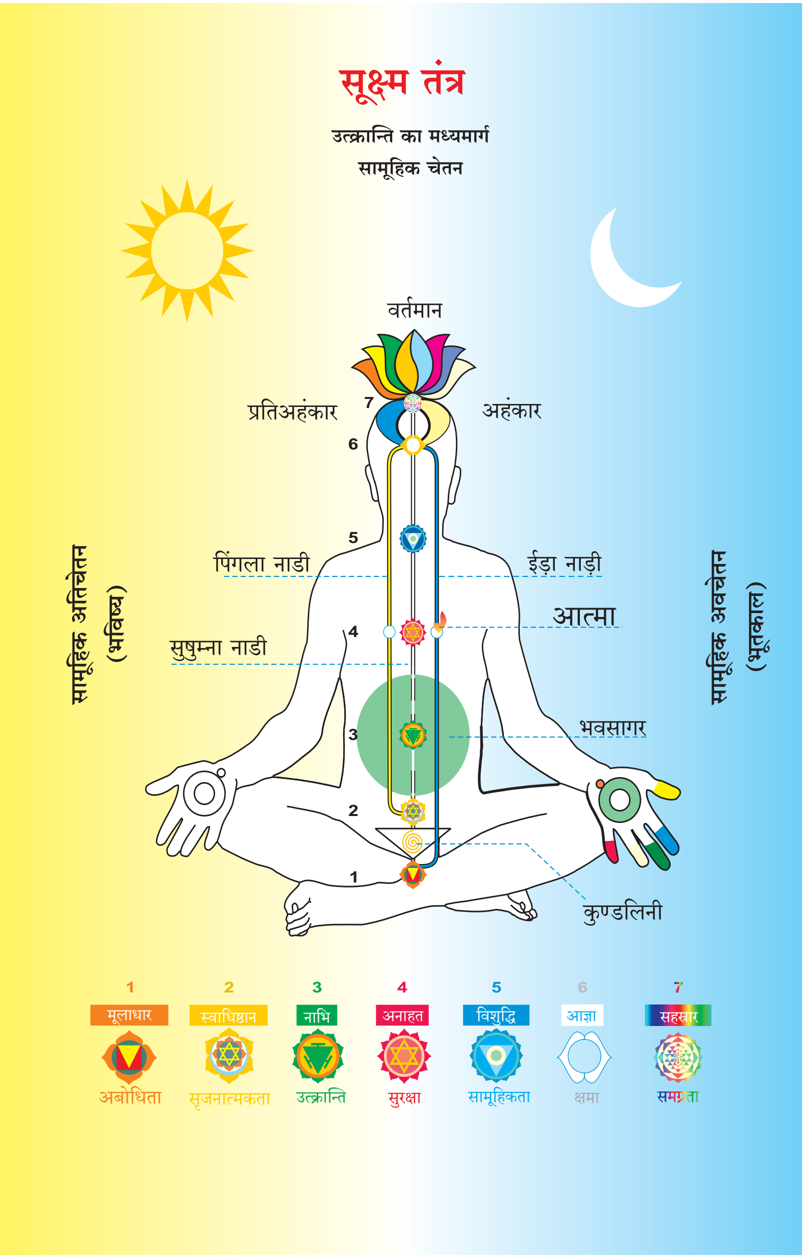
सूक्ष्म तंत्र
उत्क्रान्ति का मध्यमार्ग
सामूहिक चेतन
वर्तमान
प्रतिअहंकार
अहंकार
7
6
5
4
3
2
1
पिंगला नाडी
ईड़ा नाड़ी
आत्मा
सुषुम्ना नाडी
भवसागर
कुण्डलिनी
सामूहिक अतिचेतन
(भविष्य)
सामूहिक अवचेतन
(भूतकाल)
1 मूलाधार अबोधिता
2 स्वाधिष्ठान सृजनात्मकता
3 नाभि उत्क्रान्ति
4 अनाहत सुरक्षा
5 विशुद्धि सामूहिकता
6 आज्ञा क्षमा
7 सहस्रार समग्रता

## अध्याय ८

# सूक्ष्म तन्त्र एवं कुण्डलिनी शक्ति

...... हम क्या हैं? हमारे अन्दर कौन–कौन सी व्यवस्था परमात्मा ने की है, और किस मशीन के कारण, किस तन्त्र के कारण हम परमात्मा को प्राप्त होंगे इसके बारे में मैं आपको बताना चाहती हूँ। पूरी तरह से तैयारी परमात्मा ने कर रखी है, उसको जगाना मात्र है। जब आप आलोकित हो जाते हैं तो सारी चीज़ें आपको आसानी से समझ में आ जाती है।

– उत्क्रान्ति के अन्तिम भेदन तक पहुँचने के लिये हमारे शरीर में सूक्ष्म तन्त्र विद्यमान हैं।

**प.पू.श्री माताजी, २२.३.१९७९**

**नाड़ीतन्त्र**

१. अनुकम्पी नाड़ीतन्त्र (बायां)
२. अनुकम्पी नाड़ीतन्त्र (दायां)
३. परानुकम्पी नाड़ीतन्त्र (मध्य)

**वास्तव में हमारे नाड़ीतन्त्र में तीन मार्ग हैं–**

१. बायीं ओर का मार्ग ईड़ा नाड़ी कहलाता है।..... यह सूक्ष्म नाड़ी है जो बायें अनुकम्पी नाड़ीतन्त्र का पोषण करती है। ....इसे चन्द्र वाहिका भी कहते हैं .... चन्द्र नाड़ी।.... यह मार्ग हमारे भावनात्मक तथा बीते हुए जीवन की देखभाल करता है।.... हमारे भूतकाल की यह रचना करता है।... अवचेतन मन इसी मार्ग द्वारा सूचना प्राप्त करता है।

२. दायें मार्ग को पिंगला नाड़ी कहते हैं। यह मार्ग दायें अनुकम्पी नाड़ीतन्त्र के लिये कार्य करता है।... पिंगला नाड़ी शरीर–मस्तिष्क के लिये कार्य करती है अर्थात मानव के बुद्धिवादी कार्यों के लिये।... दायें भाग में अतिचेतन मन है जो हमारे भविष्य की रचना करता है। यह सूर्य नाड़ी है।

३. बीच का पथ सुषुम्ना कहलाता है। इसी रास्ते से ब्रह्मरन्ध्र का भेदन करने के लिये तथा सर्वव्यापक शक्ति की सूक्ष्म ऊर्जा में प्रवेश करने के लिए कुण्डलिनी गुज़रती है।

.... बायां और दायां अनुकम्पी नाड़ीतन्त्र परस्पर सम्पूरक होने के कारण विपरीत दिशा में कार्य करते हैं।

.... परानुकम्पी बाएं और दाएं नाड़ीतन्त्र के छल्लों से बना है। आपात स्थितियों के कारण जब–जब भी अनुकम्पी नाड़ीतन्त्र थक जाता है तो परानुकम्पी इन दोनों नाड़ीतन्त्रों को शांत करके इनका पोषण करता है और अन्ततः इनकी सहायता करता है। जिस स्थान पर ये छल्ले परस्पर मिलते हैं वहाँ ऊर्जाकिन्द्रों का सृजन होता है जिन्हें 'चक्र' कहते हैं। ये छल्ले जीन के अनुरूप हैं जो हमारे बाएं और दाएं अनुकम्पी नाड़ीतंत्र की रोज़मर्रा की गतिविधियों से प्रभावित होते हैं।

**चक्र –** हमारे उत्थान मार्ग (सुषुम्ना मार्ग) पर सात सूक्ष्म ऊर्जा चक्र हैं। कुछ सहायक चक्र भी हैं। हमारी विकास प्रक्रिया के दौरान इन सूक्ष्म चक्रों का सृजन हुआ।

१. मूलाधार चक्र (श्रोणीय – Pelvic)
२. स्वाधिष्ठान चक्र – (महाधमनी – Aortic)
३. नाभि चक्र – (भवसागर – Void)
४. अनाहत् चक्र – (हृदय – Cardiac)
५. विशुद्धि चक्र – (Cervical Plexus)
६. आज्ञा चक्र–(पीयुष और शंकुरूप ग्रन्थियाँ–Pituitary & Pineal Glands)
७. सहस्रार चक्र – (ब्रह्मरन्ध्र – Fontanelle)
हँसा चक्र, श्रीचक्र और श्री ललिता चक्र आदि भी हैं।

## कुण्डलिनी

कण–कण में व्याप्त हो जाने वाली सूक्ष्म शक्ति (परम–चैतन्य) से हमारा सम्बन्ध जोड़ने के लिये एक शुद्ध इच्छा –शक्ति है जिसे मनुष्य की पावन अस्थि में रखा गया है। यही कुण्डलिनी कहलाती है। यह कुण्डलाकार होती है। यह साढ़े तीन कुण्डलों में विद्यमान है। कुण्डलों का भी दैवी गणितीय महत्व है। पावन त्रिकोणाकार अस्थि 'सेक्रम बोन' कहलाती है.... यह पवित्र अस्थि मेरुरज्जु (रीढ़) के आधार पर स्थित है।

– हमारे अस्तित्व में एक 'स्वचालित नाड़ीतन्त्र' (ऑटोनोमस नर्वस सिस्टम) कार्यरत है।

**– यह 'स्व' आत्मा है– जो इस स्वचालित नाड़ीतन्त्र को चला रहा है। यह आत्मा हर मनुष्य के हृदय में निवास करती है, सर्वशक्तिमान परमात्मा का यह प्रतिबिम्ब है, जबकि कुण्डलिनी परमात्मा की शक्ति का प्रतिबिम्ब है,**

**परमात्मा की शुद्ध इच्छा जो आदि माँ है, जिन्हें हम आदिशक्ति, होली घोस्ट (आदिशक्ति) या अथेना कह सकते हैं।**

– कुण्डलिनी किसी विद्युत यन्त्र से सम्बन्ध जोड़ने वाले तार की तरह है जो कि यन्त्र का सम्बन्ध विद्युत के स्रोत से जोड़ती है। इसी प्रकार जब कुण्डलिनी की यह शक्ति जागृत होती है तो उसके कुछ सूत्र आरोहित होकर अन्तत: मानव को सर्वव्यापक शक्ति (परम–चैतन्य) से जोड़ देते हैं।

– यह सहज घटना है, एक जीवन्त क्रिया है। विकास की सारी क्रिया जीवन्त क्रिया रही है और **अब समय आ गया है कि आत्मासाक्षात्कार द्वारा मानव आध्यात्मिक अस्तित्व की अन्तिम अवस्था को भी पा लें।** मानव की तुलना बीज से की जा सकती है, जो कि आध्यात्मिक रूप से सक्रिय नहीं है, जिसने आध्यात्मिकता में उन्नत होने की जीवन्त क्रिया ही नहीं शुरु की, परन्तु बीज को जब धरा माँ में गाड़ दिया जाता है तो जल की सहायता से बीज को अंकुरित करने की शक्ति पृथ्वी माँ में है, इसी प्रकार सहजयोग की शक्ति से कुण्डलिनी भी जागृत की जा सकती है।

**– जब यह कुण्डलिनी उठती है तो मानवीय चेतना में एक जीवन्त क्रिया शुरु हो जाती है जिसका परिणाम आध्यात्मिक उत्क्रान्ति है। आध्यात्मिक जीवन का यह विकास एक नयी अवस्था है जिसमें मनुष्य अपने अन्तर्जात देवत्व में उन्नति करने लगता है। यह उसके शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक तथा आध्यात्मिक अस्तित्व का पोषण करता है और इसे प्रकाशित करता है।**

– कुण्डलिनी जब उठती है तो व्यक्ति अपने सिर के तालू भाग में सहज ही शीतल लहरियों के प्रवाह का अनुभव कर सकता है। स्वयं ही मनुष्य को इसका अनुभव करना होता है और स्वयं ही प्रमाणित करना होता है। इन शीतल लहरियों को व्यक्ति अपने चहुँओर भी अनुभव कर सकता है। परमात्मा के प्रेम की सर्वव्यापक शक्ति द्वारा ही यह शीतल वायु प्रकट की गयी है। जीवन में पहली बार मनुष्य इस सूक्ष्म दैवी शक्ति के अनुभव का वास्तवीकरण करता है।

– स्वत: ही कुण्डलिनी की जागृति घटित होती है और यह ब्रह्मरन्ध्र का भेदन करती है। हमारे हृदय में प्रतिबिम्बित आत्मा ज्योतित होकर हमारे चित्त को ज्योतित करती है और हम आत्मा के प्रकाश को अपने चित्त में फैलते हुए देखते हैं। यह सब स्वत: घटित होता है।.... उंगलियों के सिरों पर भी शीतल लहरियों का

अनुभव होता है।

**सहजयोग एवं परा–आधुनिक युग**

– परमात्मा की सर्वव्यापक शक्ति से जुड़े बिना व्यक्ति उस यन्त्र के समान होता है जो न तो अपने स्रोत से जुड़ा हुआ है और न ही जिसका कोई व्यक्तित्व, अर्थ या लक्ष्य है। स्रोत से सम्बन्ध जुड़ते ही सारा तन्त्र कार्य करने लगता है तथा अपनी अभिव्यक्ति करता है।

**प.पू.श्री माताजी, १३.९.१९९५**

– मनुष्य जो बनाया गया है, वो एक विशेष रूप से, एक विशेष विचार से बनाया गया है और वो जो मनुष्य का भविष्य है वह उसे प्राप्त हो सकता है, उसको मिल सकता है पर उसकी पहली सीढ़ी है आत्मसाक्षात्कार (कुण्डलिनी जागरण) जैसे कि कोई दीप जलाना हो तो सबसे पहले है कि उसके अन्दर ज्योति लानी पड़ती है, उसी प्रकार आपके अन्दर ज्योति जागृति हो गयी तो आप उसको फिर से प्रज्वलित कर सकते हैं, या उसको आप बढ़ा सकते हैं, पर प्रथम कार्य है कि ज्योति प्रज्वलित हो और उसके लिये आत्मसाक्षात्कार नितान्त आवश्यक है।

**प.पू.श्री माताजी, लन्दन, १६.१०.१९८८**

– आपका सम्बन्ध केवल परमात्मा के साम्राज्य से है, हमें वही प्राप्त करना है। वहीं पर आपको होना चाहिये। उसके लिए सर्वशक्तिमान परमात्मा ने आपके अन्दर व्यवस्था की है। इसे कुण्डलिनी कहते हैं। इसकी जागृति हो सकती है और ये जागृति आपको आत्मसाक्षात्कार दे सकती है, आत्मज्ञान दे सकती है – इसी को आत्मसाक्षात्कार कहते हैं। आपके जीवन में इस आत्मसाक्षात्कार को प्राप्त करना बहुत महत्वपूर्ण हैं। आप सब आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर लेंगे।

– **आपकी अन्त:स्थित शक्ति जागृत हो जायेगी। ये भलीभाँति आयोजित है। वास्तव में परमात्मा महान सृजनकार है, जिस प्रकार उन्होंने इसका संतुलन किया, जिस प्रकार से ये कार्यान्वित होती है, ये सब प्रशंसनीय है। इसके लिये अत्यन्त सूक्ष्म रूप से कार्य किया गया।** .... आप सब इसमें उन्नत हों। एक बार जब आप इसमें उन्नत होते हैं तब आपको महसूस होता है कि आप कितनी महान चीज़ हैं, कितने बहुमूल्य रत्न, कितने महान व्यक्ति, कितने प्रेममय।.. तो आज हम ये अनुभव प्राप्त कर सकते हैं, आत्मा का यह अनुभव, यह विशिष्ट चीज़ है, यह अत्यन्त विशिष्ट चीज़ है। इसे इस प्रकार से कभी भी प्राप्त नहीं किया जा सकता था,

परन्तु आज इसे प्राप्त किया जा सकता है। मैं तो सहायता कर सकती हूँ, इसे कार्यान्वित कर सकती हूँ। अत: मैं आप सबसे प्रार्थना करूँगी कि आप अपना आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के लिये तैयार हो जाएं। अच्छी बात है। परन्तु जो लोग इसे पाना नहीं चाहते उन्हें विवश नहीं किया जा सकता।

**प.पू.श्री माताजी, लन्दन, १४.७.२००१**

**- मनुष्य को स्वतन्त्रता परमात्मा ने दी हुई है, यह स्वतन्त्रता परमात्मा ने विशेष रूप से इसलिये दी है कि परमात्मा के साम्राज्य में यदि हमें जाना है तो पहले अपनी स्वतन्त्रता में हम उसका वरण करें, अपनी स्वतन्त्रता में ये कहें कि हमें परमात्मा चाहिये।**

**– इस स्वतन्त्रता में जब आप जाते हैं और परम की इच्छा करते हैं तभी परमात्मा के महाद्वार आपके लिये खुलते हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, २२.३.१९७९**

**''कुण्डलिनी'' आपकी आध्यात्मिक माँ हैं :**

**– यह कुण्डलिनी आपके अन्दर स्थित आपकी माँ है,** जो हज़ारों वर्षों से आपके जन्म लेते ही आपमें प्रवेश करती है, वो आपका साथ नहीं छोड़ती। जब तक आप पार न हो जाएं (आत्मसाक्षात्कार प्राप्त न कर ले) वो प्रतीक रूप आपकी माँ ही हैं यानी ये समझ लीजिये, आपकी महामाँ की एक छाया हैं, छवि हैं।

**प.पू.श्री माताजी, १०.२.१९८१**

– ये कुण्डलिनी आपकी माँ है, जन्म– जन्म आपके साथ ही पैदा हुई, आप ही में स्थित रहती हैं। मृत्यु के बाद भी जीवात्मा के साथ ऊपर में आत्मा और कुण्डलिनी दोनों ही साथ रहते हैं। ये हर समय आपमें स्थित रहती हैं और यही आपके पास अवचेतन (सबकान्शस) का पूरा लेखाजोखा हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ३.२.१९९८**

– आपने आज तक जो भी किया, आपका सारा जो भव है, भूत है उसका सारा टेप इस कुण्डलिनी में लिखा हुआ है। आप इसको ठहरा नहीं सकते और यह नोट करती जाती है कि आपकी क्या सम्पदायें हैं, आपने क्या–क्या गलतियाँ की हैं, क्या अच्छाइयाँ की हैं, क्या आपमें गुण हैं और क्या अवगुण हैं। यह त्रिकोणाकार अस्थि में अत्यन्त पवित्र **आपकी माँ** हैं।

**प.पू.श्री माताजी, २२.३.१९७९**

– कुण्डलिनी अवशिष्ट ऊर्जा है। अवशिष्ट शक्ति का अर्थ ये है कि ये मूल आद्यशक्ति है जिसका विभाजन नहीं हुआ। परमेश्वरी शक्ति जब पूर्ण विकसित भ्रूण के मस्तिष्क पर पड़ती है तब प्रिज़्मसम मस्तिष्क में यह तीन श्रेणियों में आती है। ऐसा विकीर्णन (refraction) के कारण होता है। जो ऊर्जा मस्तिष्क के किनारों पर पड़ती है वह अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र की सृष्टि करने के लिये एक दूसरे को पार करती है, पर परमेश्वरी ऊर्जा जब मस्तिष्क के शिखर पर पड़ती है तो मस्तिष्क प्रिज़्म जैसा होने के कारण, यह मूलभूत शक्ति बिना विकीर्णित हुए उसमें से गुज़र कर पावन अस्थि में कुण्डल आकार में कुण्डलिनी के रूप में बैठ जाती है। ये मूलभूत पूर्ण शक्ति साढ़े तीन लपेटों में हैं तथा सम्भावित अवस्था में सुप्त हैं। (Resting Potential state)

**परा आधुनिक युग**

– कुण्डलिनी, जो कि एक ऊर्जा मात्र है, यह सोचती है, समझती है, आपको प्रेम करती है, आपके इस जीवन के विषय में और पूर्व जन्मों के विषय में सभी कुछ जानती है....... यह हर व्यक्ति की व्यक्तिगत माँ है... वही आपको आत्मसाक्षात्कार देती है, आपको आपका पुनर्जन्म देती है।... कुण्डलिनी पूर्ण धर्मपरायण है, पूर्ण पावनता है। यह आपके मस्तिष्क द्वारा कल्पना किया जाने वाला आदर्शतम व्यक्तित्व है। यह किसी भी प्रकार की मूर्खता, झूठ, असत्य आदि किसी भी चीज़ को बर्दाश्त नहीं करती। **यह निर्मल है, आप इसे निर्मल कह सकते हैं। यह पावन है, यह पावनता का अवतरण है।** किसी भी प्रकार की बेवकूफी को यह स्वीकार नहीं करती और न यह किसी प्रकार का समझौता करती है। ये आपके अन्दर विद्यमान है। आप देखें कि आप कितने सुन्दर हैं। किसी भी चीज़ का इसे भय नहीं हैं, न इसे किसी भी चक्कर में फँसाया जा सकता है और न किसी चीज़ से इसे प्रलोभित किया जा सकता है।... आपके अन्दर विराजमान कुण्डलिनी **आपमें परमात्मा की इच्छा है,** यह परमात्मा के लिये इच्छा नहीं है। आपके अन्दर यह परमात्मा की इच्छा है, केवल उसी इच्छा से इसे जागृत किया जा सकता है। परमात्मा की इच्छा को ही उठाया जा रहा है। परमात्मा की इच्छा ही शक्ति है और परमात्मा का प्रेम ही उनकी इच्छा है। उनकी इच्छा है कि वे अपनी शक्तियाँ, अपना वैभव और प्रेम करने का सामर्थ्य आपको प्रदान करें। **इसी इच्छा को आपके अन्दर स्थापित किया गया है। यह सुप्त है, जब यह जागृत होती है तो आपके अन्तस में उनकी (परमात्मा की) इच्छा पूर्ण होती है और आपकी पूर्ति हो जाती है।** जब तक आप परमात्मा नहीं हैं,

आप परमात्मा की इच्छा को नियंत्रित नहीं कर सकते। **आत्मसाक्षात्कार (कुण्डलिनी जागरण) के बाद परमात्मा आपको अपनी शक्तियाँ देता है जिनके द्वारा आप उनकी इच्छा का संचालन कर सकते हैं, अन्य लोगों की कुण्डलिनी उठा सकते हैं क्योंकि यह परमात्मा की ही इच्छा है।**

**प.पू.श्री माताजी, ११.११.१९७९**

– पूर्णतया परमेश्वर की इच्छा होने के कारण अथवा इसमें अपनी इच्छा का कोई समागम न होने के कारण और उस पर आपकी इच्छा का कोई परिणाम न होने के कारण कुण्डलिनी अत्यन्त शुद्ध है, उसी शुद्धता में वह वहाँ पर बैठी हुई है।

– यह कुण्डलिनी शक्ति हमारी जो महाकाली की इच्छा शक्ति है, उसका शुद्ध स्वरूप है। पूर्ण शुद्ध स्वरूप है। मतलब ये कि मनुष्य संसार में आता है तो उसे एक ही इच्छा होती है–शुद्ध इच्छा कि परमात्मा से उसका मिलन हो और दूसरी उसे इच्छा नहीं होती। यही इच्छा का शुद्ध स्वरूप है। **यह इच्छा कुण्डलिनी स्वरूप हो कर बैठती है और मनुष्य का पूरा पिण्ड बनाती है, पर अभी इच्छा ही है। पूरा मनुष्य बनाने पर भी वह इच्छा ही बनी रहती है क्योंकि उसकी जागृति नहीं है, इसलिये पूरी की पूरी वैसी ही बनी रहती है और वह इच्छा छाया की तरह आपको सम्भालती रहती है** कि देखो इस रास्ते पर गए तो यहाँ पर इच्छा पूरी नहीं होगी, जो सम्पूर्ण शुद्ध इच्छा आपके अन्दर है, वह पूरी नहीं होगी। उस इच्छा को पूरी करे बगैर आप कभी सुख भी नहीं पा सकते। **सारा आपका पिण्ड जो है वो इसलिये बनाया गया है कि वह इच्छा पूर्ण हो जिससे आप परमात्मा को पाएं।** .... पर महाकाली शक्ति (यानि अपनी इच्छा शक्ति) को जब आप इस्तेमाल करने लगते हो तो आपकी महाकाली शक्ति में जो उसका कार्य है वह बाहर की ओर होने लग जाता है, माने आपकी जो इच्छायें हैं वे बाहर की ओर जाने लग जाती हैं (भौतिक – सांसारिक वस्तुएं प्राप्त करने की इच्छा पैदा हो जाती है।) आप सोचते हैं कि मैं ये चीज़ पा लूँ और तब आपका चित्त बाहर की ओर जाने लग जाता है, इसकी वजह से आपके अन्तर्मन की शुद्ध इच्छा कि 'परमात्मा से योग घटित हो' वो कार्यान्वित नहीं हो पाती। आप सिर्फ यही सोचते रहते हैं कि हम इसे पायें, उसे पायें इसलिये आपकी शुद्ध इच्छा वैसी की वैसी बनी रहती है, इसीलिये इसे बची हुई शक्ति कहते हैं।

– अब ये जो आपकी शुद्ध इच्छा है वही आपको खींचकर इधर से उधर ले

जाती है और आप दर–दर पे ठोकरें खाते हैं। कर्मकाण्ड करते हैं, इधर ढूँढते हैं, किताबें पढ़ते हैं और आप अपने अन्दर धारणा सी बना लेते हैं कि परमेश्वर को पाना यह होता है। जब तक आप उसे पाते नहीं आप सोचते रहते हैं कि आपकी इच्छा इस चीज़ से पूरी हो जाएगी, उस चीज़ से पूरी हो जाएगी, पर नहीं होती।.........आप गुरु की शरण में जाते हैं, बहुत से अगुरु इस संसार में है, बहुत से दुष्ट लोगों ने भी गुरु रूप धारण कर लिया है और इसी वजह से **वे आपकी इस इच्छा को मंत्रमुग्ध कर देते हैं।** माने कुण्डलिनी को तो कोई छू नहीं सकता, लेकिन आपकी महाकाली की जो शक्ति है उसको मंत्रमुग्ध कर देते हैं जिसके कारण आपकी वास्तविक इच्छा परमात्मा से योग पाने की, वो छूट करके आप सोचते हैं कि ये जो अगुरु है जिसने हमको मंत्रमुग्ध किया है वह इस इच्छा को पूरी कर देगा और इसीलिये उस चीज़ से आप चिपक जाते हैं। फिर आपको ध्यान में ही नहीं आता कि आपकी वास्तविक इच्छा पूरी नहीं हुई है और आप गलत रास्ते पर चल रहे हैं। ... परमात्मा को पाना तो कुण्डलिनी के ही जागृति से होता है, और यह कुण्डलिनी तो सहज में ही जागृत होती है।

**प.पू.श्री माताजी, १०.२.१९८१**

– यह कुण्डलिनी है, इसका सारा चित्त आप पर लगा हुआ है, सारा विचार इसका आपके ऊपर है, यह इतनी इच्छुक है और इन्तज़ार कर रही है उत्कंठा से कि कब **मेरा बेटा** इस ओर आएगा जहाँ वह अपने पुनर्जन्म को प्राप्त करे। उसे दुनिया की कोई और चीज़ नहीं चाहिये। उसका यह कार्य जब तक पूरा नहीं होगा तब तक उसको चैन नहीं। वह ढूँढती फिरेगी। इधर जा, उधर जा, जंगल में जा, पैसे में खोज, इसमें खोज – उसमें खोज। आप जो गलतियाँ करेंगे बेचारी उससे आहत होती जाएगी पर अन्त तक वह बैठी रहेगी, इस आशा में कि एक दिन ऐसा आएगा, जरूर आएगा जिस दिन सुबुद्धि से मेरा बच्चा इस योग को प्राप्त करेगा।

**प.पू.श्री माताजी, १६.२.१९८५**

– यह कुण्डलिनी आपकी, हर व्यक्ति की, आध्यात्मिक माँ है। अपने बच्चे की पूर्वाकांक्षाओं को जानती है और उन्हें अपने में अंकित किया हुआ है। वह अपने बालक को दूसरा जन्म देना चाहती है इसीलिये अपने उत्थान के समय उसके छ: शक्ति केन्द्रों का पोषण करती है।

**प.पू.श्री माताजी, १३.९.१९९५**

– मानव के पूर्ण अस्तित्व की अभिव्यक्ति हो चुकी है परन्तु कुण्डलिनी अभी

भी सुप्तावस्था में है। जीव को मानव रूप में सृजन करने के बाद भी यह सुप्त है क्योंकि इच्छा की इस शक्ति को अपनी अभिव्यक्ति करने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ। इस इच्छा शक्ति के विषय में लोग सोचते हैं कि इसको उत्तेजित किया जा सकता है। कुछ लोगों ने तो कुण्डलिनी योग के उद्यम आरम्भ कर दिये हैं। यह व्यापार की चीज़ नहीं है, यह जीवन्त प्रक्रिया है, इसे आप व्यापार में परिवर्तित नहीं कर सकते।

**– हमारे अन्दर मस्तिष्क है, हम मानव हैं, हमें यह बात समझ लेनी चाहिये कि परमेश्वरी प्रेम को हम पैसे से नहीं खरीद सकते।... बन्दर से मानव बनने के लिये आपने कितना पैसा खर्च किया था?**

– यह सब स्वत: घटित हुआ जैसे अंकुरण तन्तु के माध्यम से बीज अंकुरित होता है और फिर वही अंकुरणतन्तु जड़ बनता है तथा जड़ की नोक पर एक छोटा सा कोशाणु स्वत: खुदाई का सारा काम कार्यान्वित करता है। इसके सारे अस्तित्व का नक्शा इसी बीज में सूक्ष्मरूप से निहित होता है। इसी प्रकार हमारे अन्दर भी अंकुरणतत्व निहित होता है, 'अंकुरित करने वाली शक्ति', इसी को कुण्डलिनी कहते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, आस्ट्रेलिया, २२.३.१९८१**

**जागृत होकर कुण्डलिनी सभी चक्रों को प्रकाशित करती है।**

– कुण्डलिनी श्री गणेश की पावन (कुवाँरी) माँ हैं। अपनी पवित्रता की रक्षा हेतु उन्होंने श्री गणेश को जन्म दिया। कुण्डलिनी ही गौरी हैं। मूलाधार गौरी कुण्डलिनी का निवास है और श्री गणेश कुण्डलिनी की रक्षा करते हैं।

– मूलाधार के नीचे श्री गणेश जी का चक्र है (मूलाधार चक्र)।

– जिस वक्त कुण्डलिनी जागृत हो जाती है, आप गणेश स्वरूप हो जाते हैं, क्योंकि जब हाथ आपके मेरी ओर हैं तो बहता हुआ चैतन्य हाथ से गुज़र कर इन दोनों नाड़ियों (ईड़ा– पिंगला) से नीचे उतरता है और जाकर श्री गणेश को खबर देता है कि अब कुण्डलिनी उठ सकती है।

– यह शक्ति अत्यन्त पवित्र है, अछूती है। इस तक कोई भी नहीं पहुँच सकता, कोई भी नहीं पहुँच पाता जब तक जो आदमी इसका अधिकारी है आपके सामने खड़ा न हो जाए। जब इसका अधिकारी आपके सामने खड़ा हो जाता है तब आपके हाथों के द्वारा यह शक्ति अन्दर जाती है और कुण्डलिनी जागृत हो जाती है।

यह अपने आप जागृत होती है, इसके लिये कोई भी मेहनत करने की जरूरत नहीं होती क्योंकि यह जीवन्त क्रिया है।

**प.पू.श्री माताजी, २२.३.१९७९**

– कुण्डलिनी उठती है और श्री गणेश उन्हें आश्रय देते हैं तथा उनकी देखभाल करते हैं। कुण्डलिनी पवित्र ऊर्जा है। यह एक अलिप्त शक्ति है जो किसी चक्र या कार्य से लिप्त नहीं होती। केवल एक कार्य है – **वह है धीरे – धीरे सन्तुलनपूर्वक सब चक्रों से गुज़रना और चक्रों की सहनशक्ति के अनुसार उनकी आवश्यकताओं को पूरा करना।**

– यह इतनी विवेकपूर्ण तथा प्रेममय है कि जागृति के समय ये कोई जटिलता उत्पन्न नहीं करती, धीरे–धीरे नियमित रूप से सहस्रार खोलना इसका कार्य है। साधारणतया कुण्डलिनी के उठने का पता नहीं चलता। पूरे तन्त्र से आश्रित ये एक प्रकार से स्वत: ही ऊपर जाती है, एक केन्द्र से दूसरे पर ये जाती है। सबसे पहले नीचे का चक्र इनके प्रवेश (उत्थान) के लिये खुलता है, फिर संवर्धन करता है और फिर बन्द हो जाता है ताकि कुण्डलिनी को अपने स्थान पर रख सके।

**प.पू.श्री माताजी, ८.४.१९९१**

– कुण्डलिनी इसके बाद छ: चक्रों को भेदती हुई ऊपर जाती है। उसमें से जो महत्वपूर्ण चक्र है वो नाभि चक्र है, हालांकि यह तीसरा चक्र माना जाता है, पर कुण्डलिनी दूसरे चक्र को न छेदती हुई पहले तीसरे पर जाती है क्योंकि दूसरा चक्र नाभि से निकलकर ऊपर घूमता रहता है।

**प.पू.श्री माताजी, २२.३.१९७९**

– ये जो बीच का void है, 'भवसागर', उसमें उठने के लिये कोई सीढ़ी नहीं है। समझ लीजिये दो ऐसी सीढ़ियाँ (ईड़ा–पिंगला) लगी हुई हैं लेकिन बीच वाली सीढ़ी (सुषुम्ना) आधी लटक रही है और उस पर चढ़ने का जो मार्ग है वो नीचे है – कुण्डलिनी। इस कुण्डलिनी को इस गैप को भरना होता है।

**प.पू.श्री माताजी, ३.२.१९७८**

– एकमात्र कुण्डलिनी के जागरण से ही **यह मध्य मार्ग आप नाप सकते हैं। पहले तो एक सोपान ब्रिज बनाते हैं, भवसागर पर और उससे गुज़र कर यह कुण्डलिनी शक्ति मध्यमार्ग से उठकर ब्रह्मरन्ध्र को छेदती हुई एकाकारिता प्राप्त**

**करती है और जब यह घटना घट जाती है, उसके बाद त्रिगुणात्मिकता मिलकर आपकी मदद करती हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, मार्च १९९३**

– जब कुण्डलिनी **नाभि चक्र** के आगे स्थित तीसरे भाग में पहुँचती है तो हम पूर्णत: धर्मपरायण हो जाते हैं। जिस क्षेत्र को हम भवसागर कहते हैं वह गुरुतत्व के दस धर्मादेशों से ज्योतित हो जाता है। आदि गुरुओं ने दस धर्मस्थान बनाए जिनके ज्योतित होने पर हम पवित्र हो जाते हैं। अपने आचरण में कठोरता लाने की आवश्यकता नहीं, स्वत: ही हम वास्तव में आध्यात्मिक हो जाते हैं।

– जागृति के पश्चात कुण्डलिनी जब **भवसागर** में आती है तो हम अपने अन्तस में शाश्वत पावन धर्म को महसूस करते हैं, यह चक्र जब **पूर्णत: प्रकाशित हो जाता है और आध्यात्मिकता इसमें स्थापित हो जाती है** तब हम स्वत: ही धर्म परायण बन जाते हैं, अपनी मूल्यप्रणाली का हम सम्मान करने लगते हैं और चरित्रवान, ईमानदार, अहिंसात्मक तथा अन्तर्जात रूप से करुणामय हो जाते हैं। हमारे अन्दर ये सब गुण इतने प्रत्यक्ष होने लगते हैं कि हम परिवर्तित होकर नया रूप धारण करते हैं जो कि अत्यन्त धर्मनिष्ठ, सन्तसम होता हैं।

– **दूसरा चक्र (स्वाधिष्ठान)** जब प्रकाशित होता है तो हमारे अन्दर सृजनात्मकता आश्चर्यजनक रूप से बढ़ जाती है। ... स्वाधिष्ठान चक्र का बायाँ भाग हमें परमेश्वरी नियमों का ज्ञान प्रदान करता है कि ये किस प्रकार कार्य करते हैं और किस प्रकार अपने अन्दर हमें शक्तियों का उपयोग करना है और अपने तथा अन्य लोगों के लिये किस प्रकार इन्हें काम में लेना हैं। स्वाधिष्ठान चक्र का उद्भव नाभि के मध्य में स्थित नाभि चक्र से होता है, यह कमल की तरह से भवसागर में घूमता हैं। जब यह बायीं ओर को आता है तो बायीं ओर की सभी बाधाओं को दूर करता है तथा ज्योतित स्वाधिष्ठान चक्र जब दायीं ओर को आ जाता है तो सीधे ही पिंगला नाड़ी से जुड़ जाता है और मानव बुद्धि को अत्यंत विवेकशील, सन्तुलित चेतना में परिवर्तित करता है।

– भविष्यवादी लोग जो आक्रामक रूप से प्रचण्ड व्यवहार करते हैं और उन्हें जिन पर लोग आघात करते हैं, बहुत से रोग हो सकते हैं, जैसे जिगर की समस्या, जटिल कब्ज, अस्थमा, भयानक हृदयघात, पक्षाघात, शक्कर रोग, रक्त

कैंसर और गुर्दा रोग आदि–आदि। प्रचण्ड व्यवहार के कारण उत्पन्न हुई दायें या अवांछित सहनशीलता से हुए बायें ओर के सभी रोग कुण्डलिनी के द्वारा ठीक हो सकते हैं क्योंकि जब इसकी जागृति होती है तो वह मध्य की ओर चित्त को खींचती है और व्यक्ति प्रचण्डता और ग्लानि को छोड़कर अत्यन्त सन्तुलित व्यक्तित्व हो जाता है। इतना ही नहीं **अहं चालित** आदतें छूट जाती हैं।

**परा आधुनिक युग**

...... इस स्वाधिष्ठान चक्र में आपका चित्त है, इस चक्र से चित्त को खींचकर कुण्डलिनी अपने ऊपर छा लेती है, जैसा कि समझ लीजिये कि किसी कपड़े में ये मेरा हाथ चला गया हो। आपका जो चित्त है, आपको आश्चर्य होगा आपके पेट में रहता है, आपके सिर में नहीं, लेकिन ज्ञात अपने मस्तिष्क से होता है।....... ये चित्त जो है, उसे लेकर कुण्डलिनी ऊपर उठती है।

**प.पू.श्री माताजी, २२.३.१९७९**

...... मेरुरज्जु पर उरोस्थि (sternum bone) के पीछे मध्य नाड़ीतन्त्र पर जो चक्र है, जिसे अनाहत् या **हृदय चक्र** कहते हैं, इसके दो उपचक्र भी हैं। बायीं ओर स्थित हृदय चक्र हृदय को देखता है। यही चक्र है जहाँ सर्वशक्तिमान परमात्मा, आत्मा के रूप में प्रतिबिम्बित हैं। आत्मसाक्षात्कार (कुण्डलिनी जागरण) के पश्चात यही आत्मा चित्त को ज्योतिर्मय करती है।

**परा आधुनिक युग**

...... हृदय में आत्मा स्वरूप शिव जी बसते हैं हर समय। मैं इसके किये हमेशा उदाहरण देती हूँ **.... जिस तरह लाईट (Light) में एक छोटासा दीप जलता रहता है गैस के या अपने गैस घर में होती हैं, उसमें एक छोटी सी फ्लिकर जलती रहती है। जैसे ही लाईट आ जाती है, या यूँ कहिये गैस की धारा आ जाती है, माने कुण्डलिनी ऊपर आ जाती हैं, इसकी लाइट उसको पकड़ लेती है और आपकी जो चेतना है उसमें लाइट आ जाती है। आपकी जो चेतना अभी प्रकाशित (enlightend) नहीं हैं, उसको किसी तरह हृदय के पास पहुँचना चाहिये** और हृदय जहाँ पर शिव जी का स्थान है, असल में सदाशिव की पीठ ये (सिर) है, स्थान हृदय है पर पीठ ये है–कुण्डलिनी जैसे ही यहाँ पर छू जाती है वैसे ही हृदय आलोकित हो जाता है। ये है सदाशिव का स्थान, इसे हम कहते हैं ब्रह्मरन्ध्र से ऊँचा सदाशिव का स्थान है। जैसे ही कुण्डलिनी वहाँ छू लेती है आपकी चेतना आलोकित हो जाती है।

तभी परब्रह्म आपमें से बहने लगता है। ये जो बह रहा है वो साक्षात ब्रह्म है।

...... यह ब्रह्म आपके अन्दर से बह रहा है। ब्रह्म जो है आत्मा का प्रकाश है और आत्मा ही परमात्मा की परछाईं है।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, ३.१.१९७८**

...... हृदय चक्र के ऊपर एक अन्य चक्र है जिसे हम **विशुद्धि चक्र** कहते हैं। यह रीढ़ की हड्डी पर कंधों के झुकाव के ऊपर दोनों ग्रीवा अस्थियों (सर्वायकल बोन) के मध्य में स्थित है। सामूहिक रूप से यह चक्र संचारण के लिए है। यह चक्र जब दायीं ओर अधिक गतिशील होता है तो व्यक्ति के बोलचाल को आक्रामक तथा अहंकारपूर्ण बनाने का कारण बनता है।

...... लोग जब दोषभावग्रस्त होते हैं तो विशुद्धि चक्र का बायां भाग संकट में पड़ सकता है, ऐसा व्यक्ति अत्यन्त झेंपू, भीरू तथा चालाक हो जाता है।

...... कुण्डलिनी जागृत होकर इस चक्र के सारे दोषों को दूर करती है।

**खेचरी मुद्रा**

– विशुद्धि चक्र पर कुण्डलिनी विशुद्धि को खोलती है। जब कुण्डलिनी विशुद्धि से गुज़रती है तो इसके बहाव को चालू रखने के लिए जीभ मामूली सी खिचंती है, इस कार्य को 'खेचरी' कहते हैं। लोग जब गहन ध्यान में होते हैं तो अचानक वे स्वयं को 'खेचरी मुद्रा' में पाते हैं। इस अवस्था में यदि आप अपनी जीभ हिलायें तो तालू से एक अमृत का बहाव शुरु हो जाता है, स्वत: ही यह आपके जीभ को ठंडा करने लगता है।

**प.पू.श्री माताजी, ८.४.१९९१**

– भँवों के मध्य में विशुद्धि चक्र की एक अन्य शाखा है जिसे **हँसाचक्र** कहते हैं। यह चक्र विवेक शक्ति के लिये है। आत्मसाक्षात्कार (कुण्डलिनी जागरण) के पश्चात ज्योतिर्मय हो जाने पर यह दिव्य–विवेक प्रदान करता है। विवेक के बिना जब मनुष्य पर निर्णय लेने का बोझ होता है तो नाड़ीव्रण (साईनस) या एक तरफ तेज़ सिर दर्द रोग हो सकता है।

– मस्तिष्क में दृक–स्वस्तिक (optic chiasma) के चौराहे पर **आज्ञा चक्र** है। इस चक्र की दो पंखुड़ियाँ हैं। .......... बहुत अधिक सोचने पर इस चक्र के दायीं ओर की समस्याएं हो सकती हैं। अहं का गुब्बारा मस्तिष्क के दायीं ओर फूलता चला

जाता है और हमारे विवेक को पूर्णतया ढक लेता है। बचपन से हमारे अन्दर बने बन्धन मस्तिष्क के दायीं ओर चले जाते हैं और समस्याएँ उत्पन्न करते हैं।

– आज्ञा चक्र को जब कुण्डलिनी लाँघ जाती है तो आप निर्विचार हो जाते हैं।

– **तालू क्षेत्र में अन्तिम चक्र है, इसके ऊपर तालू अस्थि होती है जिसका भेदन हमारा अन्तिम भेदन, ब्रह्मरन्ध्र भेदन है।** यह चक्र, 'सहस्रार', महत्वपूर्णतम है, इसकी एक हज़ार पंखुड़ियाँ है अर्थात एक हज़ार नाड़ियाँ हैं। जब यह ज्योतिर्मय होता है तो ये नाड़ियाँ शान्तिपूर्वक जलती हुई दीपशिखाओं सम प्रतीत होती हैं। **...........सातवें चक्र को पार करती हुई कुण्डलिनी तालूअस्थि का भेदन करती है जो एक बार फिर शैशवकाल की तरह से थोड़ा सा कोमल हो जाती है और ये कुण्डलिनी परमेश्वरी प्रेम की सर्वव्यापी शक्ति से जुड़ जाती है। परिणाम स्वरूप अपनी उँगलियों के छोरों पर और बाद में अपने हाथों और तालूअस्थि क्षेत्र पर हम चैतन्य की शीतल लहरियों को अनुभव करने लगते हैं। इस प्रकार पहली बार हम प्रेम की शक्ति का अनुभव करते हैं।**

**परा आधुनिक युग**

– **सहस्रार,** जो एक सहस्त्र नाड़ियों से बँधा है, उसको छेद करके तालू से जब कुण्डलिनी निकलती है तब वे सर्वव्यापी शक्ति में एकाकार होती है। उस वक्त हाथों से हृदय का स्पन्दन शुरु हो जाता है क्योंकि जो सदाशिव का स्थान है वो हमारे सिर में है और वही शिव हमारे हृदय में बसे है, जैसे ही वहाँ प्रकाश होता है वैसे ही हृदय से आत्मा का प्रकाश हमारे अन्दर बहने लगता है और अनुकम्पी नाड़ी तंत्र को हम नियंत्रित कर लेते हैं। एकदम आपको लगता है ठंडी ठंडी हवा आ रही है। इस चक्र का खुलना बहुत ज़रूरी है। जब तक ये चक्र नहीं खुलता, जब तक सहस्रार को कुण्डलिनी नहीं छेदती, तब तक आप पार नहीं हो सकते।

**प.पू.श्री माताजी, २३.३.१९७९**

– आपके अन्दर की कुण्डलिनी हमें पहचानती है। उन्माद से, आवेग से और खुशी के मारे हमें देखते ही यह उछल पड़ती है और बाहर आ जाती है। आपको अनुभव हो जाता है। लेकिन अनुभव की स्थिरता इसलिये नहीं टिकती क्योंकि आपमें अनेक दोष हैं। जैसे बाढ़ आकर नदी आगे बढ़ जाती है और उसके (मार्ग के) अन्दर गड्ढे भरने लगते हैं उसी प्रकार कुण्डलिनी आपके अनेक रोग, तकलीफों को ठीक

करने लगती है। एक बार अनुभव होने के बाद इसे संजोना पड़ता है।

– एक बार जब सहस्रार का भेदन हो जाता है, ब्रह्मरन्ध्र खुल जाता है, तब हम परमात्मा के चैतन्य को महसूस करने लगते हैं और यह चैतन्य, कुण्डलिनी नहीं, जो कि चहुँ ओर व्याप्त है, हमारे बायें और दायें अनुकम्पियों को शान्त करता है और इसके कारण हमारे चक्र खुलते हैं और कुण्डलिनी के अधिक से अधिक तन्तु इन चक्रों का भेदन करने लगते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ६.५.२००२**

– कुण्डलिनी इतनी सुहृदय, मधुर, भली एवं प्रभावशाली हैं कि वे हमारे जीवन को अर्थ प्रदान करती हैं, हमारी इच्छाओं की वे पूर्ति करती हैं और हमें उस बुलन्दी पर ले जाती हैं जहाँ हम पूरे ब्रह्माण्ड को अखण्ड रूप में देखने लगते हैं। कुण्डलिनी हमें सामूहिक चेतना प्रदान करती हैं। अकेले कुण्डलिनी यह सब कार्य करती हैं। **यदि वे किसी चक्र पर जाकर वहाँ के देवता को न जगाएं तो हम उसके फल को भी न पा सकें। यह सब उन्हीं का कार्य है, उन्ही की सूझ–बूझ तथा विवेक है जिसने हमें सुन्दर अवस्था प्रदान की है कि हम स्वयं को योगी कह सकते हैं।**

**– हमारा शारीरिक, मानसिक, भौतिक सारा अस्तित्व चक्रों पर ही है। वे ही हमारे शक्तिदायक स्रोत हैं। मान लो आपके चक्र खूब काम कर रहे हैं,** आपका अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र खूब काम कर रहा है, इस्तेमाल करते –करते इनमें संकीर्णता आ गयी है, चक्रों में संकीर्णता आते ही या तो इनकी शक्ति खत्म हो जायेगी या फिर ये टूट जाएंगे। टूटते ही आपका सम्बन्ध जो सम्पूर्णता से है, आपके मस्तिष्क से वह टूट गया। फिर आप हो गए अलग, एकाकी हो गए। इसे कहते हैं, मैलिग्नैन्ट, कैंसर आपके अन्दर हो गया। अब कुण्डलिनी क्या करती है–**जैसे कोई धागे में हम मोती पिरोते हैं उसी तरह धीरे–धीरे कुण्डलिनी हर चक्र में, बायां–दायां दोनों में गुजरते हुए सीधे उनमें से निकल जाती है, उससे वो चक्र जो हैं वो फिर प्लावित हो जाते हैं, पुष्ट हो जाते हैं, एक साथ जुड़ जाने से उनका सम्बन्ध मस्तिष्क से भी हो जाता है और परम चैतन्य से भी हो जाता है।**

– एक बार यह सम्बन्ध पूरी तरह से हो जाए तो उसके बाद कोई बीमार नहीं पड़ सकता। अगर कोई सहजयोगी है तो उसको कोई बीमारी नहीं। **आत्मसाक्षात्कार के बाद आपको अपने चक्र महसूस होते हैं और इसी को हम कहते हैं– अपना**

**ज्ञान, स्वयं का ज्ञान।**

**प.पू.श्री माताजी, २२.३.१९९३**

– जब कुण्डलिनी इन चक्रों को छेदती हुई ब्रह्मरन्ध्र तक पहुँचती है, तब उसके उत्थान से हर चक्र में न जाने कितनी ही गतिविधियाँ शुरु हो जाती हैं।

**प.पू.श्री माताजी, १६.२.१९८५**

– कुण्डलिनी जब उठती है तो सारे चक्रों में से गुज़रती है और उन्हें छूती है। चिकित्सा विज्ञान में इन केन्द्रों को 'प्लेक्सेस' के रूप में जानते हैं और इनके नीचे ही ये सूक्ष्म चक्र होते हैं, जिनके ज्योतिर्मय होते ही आप आत्मसाक्षात्कारी हो जाते हैं....... आप स्वयं सामूहिक चेतना में आ जाते हैं।........ इसके द्वारा आप मानसिक, भावात्मक एवं आध्यात्मिक सामंजस्य प्राप्त कर सकते हैं। क्योंकि **सभी केन्द्र जागृत हो उठते हैं और जीवन के चारों आयामों को प्रकाश से भर देते हैं, आपको पूर्णत्व में ले जाते हैं जिससे सामूहिक चेतना में आप अपनी पूर्णता को खोजते हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, १५.११.१९७९**

– ब्रह्मरन्ध्र का छेदन उस जगह है, जहाँ हमारा हृदय है, इसका मतलब यह है कि हमारे हृदय में जब तक परमात्मा को पाने को इच्छा नहीं होगी, तब तक यह भेदन ठीक नहीं होगा। सारा काम हृदय का है। यह समझने की बात है। आप लोगों ने बुद्धि से मेरी बात को समझ लिया। बुद्धि से समझने की बात ठीक है लेकिन जब तक यह हृदय से संचालित नहीं होगी, जब तक यह हृदय से प्लावित नहीं होगी, तब तक हमारे अंग–अंग में यह बसने वाली चीज़ नहीं है। लेकिन हृदय में है हमारी आत्मा का स्थान। इसीलिये यह समझ लेना चाहिये कि हृदय को छेदने के लिये पहले हम हृदय को खोल लें।....... जब कुण्डलिनी जाकर सहस्रार को भेदती है तो हम सब ज्ञान के अधिकारी हो जाते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १६.२.१९८५**

– यद्यपि इस कुण्डलिनी शक्ति का ज्ञान भारत में हज़ारों वर्ष पूर्व उपलब्ध था, फिर भी परम्परागत कुण्डलिनी जागृति केवल व्यक्तिगत आधार पर की गयी। एक गुरु केवल एक शिष्य को जागृति प्रदान करता था। उस जागृति के परिणाम स्वरूप व्यक्ति को आत्मसाक्षात्कार, आत्मतत्व प्राप्त हो जाता था।

**प.पू.श्री माताजी, १३.९.१९९५**

– कुण्डलिनी की यह शक्ति आपके अन्दर विद्यमान है, हमने बस इसका उपयोग करना है। आपके अहम् एवं बन्धनों ने इसे आच्छादित किया हुआ है। अपनी कुण्डलिनी को बढ़ने दें, यह आपको प्रमाणित कर दिखायेगी कि आप कितने महान एवं गरिमामय हैं। मैं कुछ नहीं कर रही। सारा कार्य आपकी कुण्डलिनी ही कर रही है।

**प.पू.श्री माताजी, २१.३.१९९४**

– 'कुम्भ' नामक एक नये युग का अब आरम्भ हुआ है। पावन आध्यात्मिक जल को ले चलना कुण्डलिनी का कार्य है और कुम्भ इस कार्य को सम्पूर्ण करने वाला घड़ा है। कुण्डलिनी की गतिविधि वृक्ष के उस रस के समान है जो ऊपर उठता है, वृक्ष के हर भाग का पोषण करता है पर पेड़ के किसी भाग विशेष से बँध नहीं जाता।

**प.पू.श्री माताजी, सहजयोग**

# अध्याय ९

# तत्व की बात

आज आपको तत्व की बात बतायेंगे। जब हम एक पेड़ की तरफ देखें और उसका उन्नतिगत होना, उसका बढ़ना देखें, तो यह समझ में आता है कि उसके अन्दर कोई न कोई ऐसी शक्ति प्रवाहित है या प्रभावित है जिसके कारण वो पेड़ बढ़ रहा है और अपनी पूरी स्थिति को पहुँच रहा है। यह शक्ति उसके अन्दर है, नहीं तो यह कार्य नहीं हो सकता। लेकिन यह शक्ति उसने कहाँ से पायी? इसका तत्व, मर्म क्या है? जो चीज़ बाह्य में दिखायी देती है, जैसे कि पेड़ दिखायी देता है, उसके फूल–फल–पत्ते सब दिखायी देते हैं, ये तो कोई तत्व नहीं। इस तत्व पर तो यह चीज़ आधारित नहीं। वो चीज़ कोई न कोई इससे सूक्ष्म है। उस सूक्ष्म को तो हम देख नहीं पाये, उसकी यदि साकार स्थिति होती तो दिख जाता लेकिन वो निराकार स्थिति में है, माने कि उसके अन्दर चलता हुआ पानी है, वो भी उसका तत्व नहीं हुआ, हालांकि वहन कर रहा है। पानी ही उस शक्ति को अपने अन्दर से वहन कर रहा है। याने अगर पानी ही तत्व है तो पत्थर में पानी डालने से, वहाँ कोई पेड़ तो नहीं निकल आते। तब तत्व में जानना चाहिये कि हर चीज़ का अपना–अपना तत्व है। पानी का अपना तत्व है, पेड़ का अपना तत्व है और पत्थर का भी अपना तत्व है।

उसी तरह मानव का भी अपना एक तत्व है, principle है, जिसके बूते पर वो चल रहा है, बड़ा हो रहा है, उससे उसकी उद्देश्य प्राप्ति होती है।

ये तत्व एक हो नहीं सकते। जैसे कि मैंने बताया कि पानी के तत्व से ही अगर पौधा निकल रहा है तो एक पत्थर से पौधा क्यों नहीं निकलता। अगर बीज, पानी के तत्व से ही बीज पनप रहा है तो वह धरती माता की शरण क्यों जाता है? अगर धरती माता की वजह से ही सारा कार्य हो रहा है तो धरती माता की वजह से यह जो पत्थर है वो क्यों नहीं पनपता? इसका मतलब यह है कि अनेक तत्वों में एक तत्व है, लेकिन तत्व अनेक हैं।

ये सब अनेक तत्व जो हैं वो एक में समाये हैं और ये जो अनेक तत्व हैं ये हमारे अन्दर भी स्थित हैं। अलग–अलग चक्रों पर इनका वास है, लेकिन एक ही शरीर में समाये हैं और एक ही ओर इनका कार्य चल रहा है, और एक ही इनका लक्ष्य

है और एक ही चीज़ को इनको पाना है।

जैसे कि मूलाधार चक्र पर गणेश तत्व है, गणेश जी का तत्व है। गणेश जी के तत्व के कारण हम आप पृथ्वी पर बैठे हुए हैं, ऐसे फेंके नहीं जा रहे। अगर हमारे अन्दर गणेश जी का तत्व नहीं होता तो इस पृथ्वी पर टिक नहीं सकते थे। इतने जोर से यह पृथ्वी घूम रही है, इस पर हम चिपके नहीं रहते। कोई कहेगा कि 'पृथ्वी के अन्दर ही यह गणेश तत्व है माँ।' यह बात भी सही है। पृथ्वी के गणेशतत्व की वजह से ही हम पृथ्वी पर जमे हुए हैं। लेकिन जो पृथ्वी के अन्दर है उसको उसका axis कहते हैं, याने इस लाइन में वो तत्व बसा हुआ है उसको कहते हैं। हालांकि axis कोई है नहीं, कोई ऐसी सलाख axis नहीं है, पर मानते हैं कि जो शक्ति है इसके तत्व की वो इस लाइन पर चलती है, उसी के ऊपर होती है उसके बीचोंबीच, सो वो तत्व हमारे अन्दर क्या बनकर रहता है इससे हमें दिशा का भान हो जाता है।

हमारे सूक्ष्मतन्त्र में वाहिकाओं तथा चक्रों पर इन शक्तियों (तत्वों) की स्थापना की गई है। इसका वर्णन आगामी पृष्ठों में है।

**प.पू.श्री माताजी, १५.२.१९८१**

# अध्याय १०अ

# वाहिकाओं पर स्थापित शक्तियाँ

## ईड़ा नाड़ी

### <u>I श्री महाकाली</u>

...... सर्वप्रथम आदिशक्ति की अभिव्यक्ति बायीं ओर को होती है। यह महाकाली की अभिव्यक्ति है। महाकाली की शक्ति हमारे (मानव शरीर) बायीं ओर ईड़ा नाड़ी से प्रवाहित होती है।

...... हमें सम्भवत: इस बात का ज्ञान नहीं है कि महाकाली क्या करती हैं। पहला कार्य जो वे करती हैं वह है हमारी रक्षा करना। आप जहाँ भी हों, आप जो भी कर रहे हों, किसी भी खतरे में आप फँसे हुए हों, महाकाली आपकी सुरक्षा करती हैं। **वे आपके अन्दर विद्यमान हैं। वे आपके जीवन की सुरक्षा करती हैं, आपके शरीर के सभी अवयवों की सुरक्षा करती हैं। उनके साम्राज्य में आप स्वयं को सुरक्षित पाते हैं।**

...... वास्तव में वे पथ प्रदर्शक शक्ति हैं, वे ही हमें हमारा अस्तित्व प्रदान करती हैं। वे हमें आराम, निद्रा और सत्य प्रदान करती हैं, वे आपको बताती हैं कि क्या सत्य है और क्या असत्य। कभी–कभी अपने अहंकार वश लोग समझ बैठते हैं कि जो मैं सोचता हूँ वही सत्य है, तब माया की सृष्टि करके वे इस बात को रोशनी में लाती हैं। एक प्रकार से ऐसे भ्रम की सृष्टि करती हैं कि आप सोचने लगते हैं कि यह क्या है, इसलिए **उन्हें भ्रान्ति नाम दिया गया है। वे आपको भ्रम में फँसा देती हैं और अन्त में इस भ्रम से आपको मुक्त भी करती हैं।** .....आप यदि अपनी सारी समस्याओं को उन पर छोड़ दे तों सारी समस्याओं का समाधान हो जाता है। इतना ही नहीं आप स्वयं को वास्तव में आशीर्वादित भी महसूस करते हैं। ये आशीर्वाद केवल शारीरिक ही नहीं, वे आपके मस्तिष्क को पूरी तरह से चिन्ताओं से मुक्त कर देती हैं। वे ही आपको जटिल रोगों से मुक्त करती हैं, वे रोग मुक्त कर सकती हैं। आपका अहं उन्हें अच्छा नहीं लगता। वे चाहती हैं कि आप अहं विहीन हों। आपके अन्तर्निहित शिशु की देखभाल करना, आपकी अबोधिता एवं सौहार्द्रता की देखभाल करना महाकाली की शक्ति का कार्य है।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, १७.१०,१९९९**

...... जब तक महाकाली प्रकट नहीं होती आपके अन्दर बसी बायीं ओर की पकड़ जा नहीं सकती। बायीं ओर की पकड़ का क्या मतलब है? सबसे पहले तो आप अपने भूतकाल के विषय में सोचते रहते हैं, दूसरी बात यह कि मेरे बाप ये थे, मेरे बाप के बाप ये थे, ये सोचते रहते हैं, ऐसे लोगों को ठीक करने के लिये श्री महाकाली स्वरूप आवश्यक है। महाकाली स्वरूप के बिना ऐसा पागलपन छूट नहीं सकता।

...... महाकाली का एक स्वरूप बड़ा भयंकर है। जो लोग भूतग्रसित हैं, जो हमेशा बुरे कार्य करते हैं और जो लोग गुरुघंटाल हैं वे लोग मुझे (महाकाली रूप में) पहचानते हैं। भूतग्रस्त आदमी तो मेरे सामने थर–थर काँपने लगता है। ये जो भूतग्रस्त लोग हैं इनके भूतों को महाकाली दिखायी देती हैं, वही रूप दिखायी देता है और वे थर–थर काँपते हैं। अहं का भूत भी यदि लग जाए तो उनको महाकाली का रूप दिखायी देता है।

...... झूठे गुरुओं की पकड़ से लोगों को मुक्त करने के लिये भी महाकाली की जरूरत है। महाकाली अति रौद्रा हैं.....रुद्रस्वरूप और वो रुद्रस्वरूप बहुत जरूरी है नहीं तो बाधायें भागने वाली नहीं। वो सिर्फ रुद्रस्वरूप से ही भागती हैं। एकादश रुद्र में जो ग्यारह रुद्र हैं वो ग्यारह ही रुद्रों में महाकाली की ही शक्ति विराजमान है।

...... **महाकाली का स्वरूप अगर कलियुग में इस्तेमाल न किया जाए तो सहजयोग का कार्य न हो सकेगा क्योंकि आसुरी शक्तियों के कारण सारे चक्र पकड़ में आ जाते हैं और चक्र ठीक किये बिना कुण्डलिनी चढ़ेगी नहीं, इसलिए महाकाली का स्वरूप बहुत वन्दनीय है और सराहनीय है।** यह किसी को शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचातीं। उनके स्वरूप से सभी बुराइयाँ भाग जाती हैं।

**प.पू.श्री माताजी, जयपुर, ११.१२.१९९४**

...... श्री महाकाली **आनन्द प्रदायिनी** हैं और अपने भक्तों को आनन्दित देखकर वे प्रसन्न होती हैं। आनन्द ही उनका गुण है और शक्ति है। विभिन्न चक्रों पर आप विभिन्न प्रकार के आनन्द अनुभव करते हैं, वह सब महाकाली की देन होती है।

**प.पू.श्री माताजी, फ्रान्स, १२.९.१९९०**

...... श्री महाकाली दो तरह से कार्य करती हैं – एक तरफ तो वे अति प्रेममयी, आनन्द एवं खुशी से परिपूर्ण हैं, दूसरी ओर वे अति क्रूर, क्रुद्ध और असुरों

का वध करने वाली हैं। जैसा कि हम जानते हैं, श्री महाकाली ने बहुत से असुरों और राक्षसों का वध किया है, लेकिन अभी बहुत से राक्षस विद्यमान हैं। अभी भी वे जीवित हैं, परन्तु मुझे विश्वास है कि वो भी समाप्त हो जाएंगे, उनमें से एक भी न बचेगा। आपको इस प्रकार से परिपक्व होना है ताकि इन आसुरी लोगों के विषय में आपको पूरी जानकारी हो। आप अपने ज्योतित चित्त से जान सकते हैं कि किस संस्था में क्या दोष है? ध्यान–धारणा करने का यह सर्वोत्तम मार्ग होगा। केवल ध्यान–धारणा करनी है और **श्री महाकाली से प्रार्थना करनी है कि उन लोगों को नष्ट करें जो विश्व को नष्ट कर रहे हैं। 'हे महाकाली, कृपा करके दुष्ट लोगों का वध करो।'** ये उनका कार्य है, ऐसा करने में उन्हें प्रसन्नता होगी, पर किसी व्यक्ति को तो उनसे प्रार्थना करनी होगी। ऐसा करना बहुत अच्छा होगा क्योंकि जब तक आप उन्हें कहेंगे नहीं ऐसे बहुत से दुष्ट लोगों पर सम्भवत: उनका चित्त न जा पाएगा। अत: सर्वोत्तम तरीका ये होगा कि सदैव उनसे व्यक्तिगत रूप से, सामूहिक या विश्व स्तर पर सहायता की याचना करें। वे सर्वव्यापी हैं। पूरे ब्रह्माण्ड में व्यापक हैं। उनकी पूजा करना, उन्हें जागृत करना, यही एकमात्र आपका कर्तव्य है।

.....वे सर्वत्र मौजूद हैं, आपके जीवन में हर स्थान पर, विशेष रूप से सहजयोगियों के तो वे हमेशा साथ होती हैं चाहे जो भी आप कर रहे हों। आपकी यदि कोई दुर्घटना होती है तो वहाँ भी आपकी देखभाल करने के लिये वे मौजूद होती हैं, देवदूत की तरह सदैव आपके पीछे होती हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, १७.१०.९९**

...... जब महाकाली अत्यन्त शान्त हो जाती हैं, तो वे गृहलक्ष्मी हो जाती हैं। महाकाली की शक्ति स्त्री में उसकी शालीनता होती है। जब तक शालीनता स्त्री में कार्यान्वित नहीं होती तब तक गृहलक्ष्मी की शक्ति उसके अन्दर प्रकटित नहीं होती है। हम फातिमा बी को मानते हैं, वो गृहलक्ष्मी के सिंहासन को सुशोभित करती हैं। महाकाली की इस शक्ति से स्त्री अपने बच्चों को ठीक रास्ते पर रखती है और अपने चरित्र को उज्वल रखती है। .............. शालीन स्त्री में हास्य रस प्रस्फुटित होना चाहिए, किस चीज़ को वो हँसकर टाल दे, और हँसकर के हजारों प्रश्न वो ठीक कर सकती है।

**प.पू.श्री माताजी, जयपुर, ११.१२.१९९४**

...... श्री महाकाली को प्रकाश पसन्द है। उनकी पूजा रात्रि में होती है, क्योंकि रात्रि में हम दीप जला सकते हैं। वे व्यक्ति को ज्योतिर्मय करना पसन्द करती

हैं, उन्हें सूर्य पसन्द है, हर ऐसी चीज़ पसन्द है जो चमकती हो।

...... आप उनकी साक्षात मूर्ति का ध्यान कर सकते हैं, उनकी प्रार्थना कर सकते हैं। उनके बच्चे उनकी पूजा करें यह उन्हें अच्छा लगता है, इसी स्तर पर वे उनसे एक हो सकती हैं और उन्हें अपनी करुणा एवं प्रेम प्रदान कर सकती हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, १७.१०.१९९९**

...... आपको ऐसे ढ़ंग से सहजयोग करना होगा जो अत्यन्त पवित्र हो, मानों एक नन्हें शिशु की तरह आप अपनी माँ की पूजा कर रहे हों। जैसे एक नन्हा शिशु अपनी माँ से प्रेम करता है। यह अत्यन्त सहज सम्बन्ध है जिसे हम सब भुला चुके हैं। किस प्रकार हम अपनी माँ से प्रेम करें, किस प्रकार उनके पथ प्रदर्शन में रहें और किस प्रकार उनकी सुरक्षा में सुरक्षित रहें? यह इतनी सीधी बात है और मैंने अपने बचपन में ही यह बात जान ली थी। आप यदि वास्तव में माँ की पूजा करना चाहते हैं तो एक बार आपमें उसी बचपन का लौट आना आवश्यक है।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, १७.१०.१९९९**

...... श्री महाकाली आपको स्थिति प्रदान करती हैं, दृढ़ीकरण की स्थिति। जब हम अपना आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करते हैं तो श्री महाकाली का प्रकटीकरण आरम्भ हो जाता है। महाकाली में शुद्धिकरण की शक्ति है और वे स्वयं आपमें पवित्र सती के रूप में रहती हैं, वही कुण्डलिनी है, वही श्री महाकाली शक्ति हैं।

**प.पू.श्री माताजी, फ्रान्स, १२.९.१९९०**

हमारे अन्दर तीन तरह की शक्तियाँ विराजतीं हैं। पहली जो शक्ति है मुख्यत: वो है इच्छा शक्ति। अगर परमात्मा की इच्छा ही नहीं होती तो संसार क्यों बनाते? उनकी इच्छा–शक्ति के अन्दर से ही बाकी की शक्तियाँ निकली हैं। इसी शक्ति को सहजयोग की भाषा में महाकाली की शक्ति कहते हैं। इसी शक्ति की वजह से आज आप भी भक्ति का रस ले रहे हैं क्योंकि अन्दर इच्छा होती है कि भक्ति में चलें, भक्ति का मज़ा आ रहा है, भक्ति में रहें, परमात्मा को याद करें, उनको बुलायें। यह मानव ही करता है। जानवर तो नहीं करता, जानवर तो भक्ति नहीं करता, मानव ही करता है।

**नई दिल्ली, १७.२.१९८१**

## II श्री भैरवनाथ

...... मेरे विचार से हमने श्री भैरवनाथ जी, जो कि ईड़ा नाड़ी पर हैं और ऊपर नीचे की ओर विचरण करते हैं, का महत्व नहीं समझा है। ईड़ा नाड़ी चंद्र नाड़ी है, अतः यह स्वयं को शांत करने का मार्ग है। उदाहरणतया अहं और जिगर की गर्मी ही हमारे क्रोध का कारण है। जब मनुष्य अत्यधिक क्रोध में होता है, तो श्री भैरवनाथ उसे दुर्बल बनाने के लिए चाल चलते हैं। वे श्री हनुमानजी की सहायता से उस क्रुद्ध मनुष्य को इस सत्य की अनुभूति कराते हैं कि क्रोध की मूर्खता में कोई अच्छाई नहीं है।

वाम प्रवृत्ति व्यक्ति सामूहिक नहीं हो सकता। उदास, अप्रसन्न तथा चिंतित व्यक्ति के लिए सामूहिकता का आनन्द ले पाना अति कठिन है जबकि क्रोधी राजसिक व्यक्ति दूसरों को सामूहिकता का आनन्द नहीं लेने देता, परन्तु स्वयं सामूहिकता में रहने का प्रयत्न करता है जिससे उसका उत्थान हो सके। ऐसा व्यक्ति केवल अपनी श्रेष्ठता को ही दिखाना चाहता है, अतः वह सामूहिकता का आनन्द नहीं ले सकता। इसके विपरीत जो व्यक्ति हर समय खिन्न है और सोचता है कि मुझे कोई प्यार नहीं करता, मेरी कोई चिंता नहीं करता और जो हर समय दूसरों से आशा रखता है, वह भी सामूहिकता का आनन्द नहीं ले सकता। इस प्रकार के वाम प्रवृत्ति व्यक्ति को हर चीज़ से उदासी ही प्राप्त होगी। हर चीज़ को अशुभ समझने की नकारात्मक प्रवृत्ति के कारण हम अपने बायें पक्ष को हानि पहुँचाते हैं।

श्री भैरवनाथ अपने हाथों में प्रकाश–दीप लिए ईड़ा–नाड़ी में ऊपर–नीचे को दौड़ते हुए आपके लिए मार्ग प्रकाशित करते हैं जिससे कि आप देख सकें कि नकारात्मकता कुछ भी नहीं । नकारात्मकता हममें कई प्रकार से आ जाती हैं । एक नकारात्मक तत्व है कि 'यह मेरा है', 'मेरा बच्चा', 'मेरा पति', 'मेरी सम्पत्ति' । इस प्रकार जब आप लिप्त हो जाते है तो आपके बच्चों में भी नकारात्मक तत्व आ जाते हैं, परन्तु यदि आप सकारात्मक होना चाहते है तो यह सुगम है। इसके लिए आपको देखना है कि आपका चित्त कहाँ हैं? हर नकारात्मकता में से सकारात्मकता का आनन्द लेना ही एक सहजयोगी की विशेषता है। नकारात्मकता का कोई अस्तित्व नहीं, यह केवल अज्ञानता है। अज्ञानता का भी कोई अस्तित्व नहीं। जब हर चीज़ केवल सर्वत्रव्याप्त शक्ति मात्र है, तो अज्ञानता का अस्तित्व कैसे हो सकता है? परन्तु यदि आप इस शक्ति की तहों में छुप जाओ और इससे दूर दौड़ जाओ तो आप कहेंगे

कि नकारात्मकता है, उसी प्रकार से जैसे आप यदि अपने आपको एक गुफा में छिपा लें और गुफा को अच्छी तरह बंद करके कहें कि 'सूर्य नहीं है'। वो लोग सामूहिक नहीं रह पाते, या तो बायीं ओर के होते है या दायीं ओर के। बायीं ओर के लोग नकारात्मकता में सामूहिक हो सकते हैं जैसे कि शराबियों का बंधुत्व, ये लोग अन्त में पागलपन तक पहुँच जाते हैं, जबकि दायीं ओर के लोग मूर्ख हो जाते हैं।

यदि एक सहजयोगी सामूहिक नहीं हो सकता तो उसे जान लेना चाहिए कि वह सहजयोगी नहीं हैं। श्री भैरवनाथ हमें अंधेरे में भी प्रकाश प्रदान करते हैं, क्योंकि वे हमारे अन्दर के भूतों और भुतही विचारों का विनाश करते हैं। श्री भैरवनाथ श्री गणेश से भी सम्बन्धित हैं। श्री गणेश मूलाधार चक्र पर विराजमान है और श्री भैरवनाथ बायीं तरफ से दायीं तरफ चले जाते हैं। **अतः हर प्रकार के बन्धन और आदतों पर श्री भैरवनाथ की सहायता से विजय पाई जा सकती है। नेपाल में श्री भैरव की एक बहुत बड़ी स्वयंभु मूर्ति है। वहाँ लोग बहुत बायीं ओर हैं, अत: वे श्री भैरव से डरते हैं। यदि किसी को चोरी करने की बुरी आदत हो तो उसे छोड़ने के लिए वह श्री भैरवनाथ के सामने दिया जलाकर उनके सम्मुख अपना अपराध स्वीकार करे तथा इस बुरी आदत से बचने में उनकी मदद ले। अनुचित तथा धूर्ततापूर्ण कार्यों से भी श्री भैरवनाथ हमारी रक्षा करते हैं। जिस कार्य को हम बहुत ही गुप्त रूप से करते हैं वह भी श्री भैरव से छिपाया नहीं जा सकता। यदि आप अपने में परिवर्तन नहीं लाते तो वे आपकी बुराइयों का भाँडा फोड़ देते हैं, इसी तरह उन्होंने सब भयानक गुरुओं का भाँडा फोड़ दिया है।**

**बाद में श्री भैरव का अवतरण इस पृथ्वी पर श्री महावीर के रूप में हुआ। वे नर्क के द्वार पर खड़े रहते हैं ताकि लोगों को नर्क में पड़ने से बचा सके, परन्तु यदि आप नर्क में जाना ही चाहें तो वे आपको रोकते नहीं।** अच्छा हो यदि हम अपनी नकारात्मकता से लड़ने का प्रयत्न करे तथा दूसरों का संग पसन्द करने वाले, दूसरों से प्रेम करने वाले तथा चुहल पसन्द लोग बन जाएं। दूसरे आपके लिए क्या कर रहे हैं, इसकी चिन्ता किए बिना आप केवल ये सोचें कि आप दूसरों का क्या भला कर सकते हैं। आओ, हम श्री भैरवनाथ से प्रार्थना करें कि वे हमें हँसी, आनन्द तथा चुहल की चेतना प्रदान करें।

**प.पू.श्री माताजी, कारलेट, इटली, ६.८.१९८९**

## पिंगला नाड़ी

## <u>I श्री महासरस्वती</u>

...... प्रेम से सभी प्रकार की सृजनात्मक गतिविधि घटित होती है। .......ज्यों–ज्यों प्रेम बढ़ेगा आपकी सृजनात्मकता विकसित होगी। तो प्रेम ही श्री सरस्वती की सृजनात्मकता का आधार है। यदि प्रेम न होता तो सृजनात्मकता न होती।

..... तो दाईं ओर की, सरस्वती की, सारी गतिविधि मूलत: प्रेम में समाप्त होनी हैं। प्रेम से ही इसका आरम्भ होता है और प्रेम में ही समाप्ति। जिस भी चीज़ का अन्त प्रेम में नहीं होता वह एकत्र होकर समाप्त हो जाती है। बस लुप्त हो जाती है।

.....अब जिस प्रेम की हम बात करते हैं, हम परमात्मा के प्रेम की बात करते हैं, निश्चित रूप से इसे हम चैतन्य लहरियों के माध्यम से जानते हैं। लोगों में चैतन्य लहरियाँ नहीं हैं, फिर भी वे अत्यन्त अचेतनता में चैतन्य लहरियाँ महसूस कर सकते हैं। विश्व की सभी महान चित्रकृतियों में चैतन्य है। विश्व के सभी महान सृजनात्मक कार्यों में चैतन्य है। जिन कृतियों में चैतन्य है केवल वही बनी रह पाईं, उनके अतिरिक्त बाकी सब नष्ट हो गईं। ......अत: वह सभी कुछ जो दीर्घायु है, पोषक है और श्रेष्ठ है, वह इस प्रेम विवेक के परिणाम स्वरूप है जो हमारे अन्दर अत्यन्त विकसित है। परन्तु यह कुछ अन्य लोगों में भी है जो अभी तक आत्मसाक्षात्कारी नहीं है। अन्तत: पूरे विश्व को यह महसूस करना होगा कि व्यक्ति को परमात्मा के परम प्रेम तक पहुँचना है अन्यथा इसका (विश्व का) कोई अर्थ नहीं।

...... पश्चिम ने, मैं कहना चाहूँगी, विशेष रूप से सरस्वती की बहुत पूजा की है – उससे भी कहीं अधिक जितनी भारत में हुई है क्योंकि वे सीखने के लिए गए और बहुत सी चीज़ें खोजने का प्रयत्न किया। परन्तु वे केवल इस बात को भूल गए कि वे देवी हैं, परमात्मा देने वाले (giver) हैं। हर चीज़ देवी से आती है। ये बात वो भूल गए और इसी कारण से सभी समस्याएं खड़ी हो गईं। आपकी शिक्षा में यदि आत्मा न हो, शिक्षा में यदि देवी का कोई स्त्रोत न हो तो शिक्षा पूर्णत: व्यर्थ है। उन्हें यदि इस बात का एहसास हो गया होता कि आत्मा कार्य कर रही है तो वे इतनी दूर न जाते। भारतीयों को भी मैं इसी चीज़ की चेतावनी दे रही थी कि आप लोग भी अब औद्योगिक क्रान्ति को अपना लक्ष्य बना रहे हैं परन्तु आपने औद्योगिक क्रान्ति की जटिलताओं से बचना है। आत्मा को जानने का प्रयत्न अवश्य करें। आत्मज्ञान प्राप्त किए बगैर आपको भी वही समस्याएं होंगी जो इन लोगों को हैं। क्योंकि वे भी मानव हैं और आप

भी। आप भी उसी मार्ग पर चलेंगे। अचानक आप दौड़ पड़ेंगे और समस्याएं होंगी, बिल्कुल वैसी ही समस्याएं जैसी पश्चिमी लोगों को हैं।

सरस्वती जी के इतने आशीर्वाद हैं कि इतने थोड़े समय में इनका वर्णन नहीं किया जा सकता और सूर्य ने हमें इतनी शक्तियाँ प्रदान की हैं कि इनके विषय में एक क्या दस प्रवचनों में भी बता पाना असम्भव है। परन्तु किस प्रकार हम सूर्य के विरोध में जाते हैं और किस प्रकार सरस्वती के विरोध में जाते हैं! सरस्वती की पूजा करते हुए अपने अन्दर यह बात हमने स्पष्ट देखनी है। उदाहरण के रूप में पश्चिमी लोग सूर्य को बहुत पसन्द करते हैं क्योंकि वहाँ पर सूर्य नहीं होता। परन्तु जैसा आप जानते हैं इस दिशा में वे अपनी सीमाएं लाँघ जाते हैं और अपने साथ सूर्य की जटिलताएं उत्पन्न कर लेते हैं।

मुख्य चीज़ जो व्यक्ति ने सूर्य के माध्यम से प्राप्त करनी होती है, वह है प्रकाशविवेक–अन्तर्प्रकाश। और यदि आज्ञा पर स्थित सूर्यचक्र पर भगवान ईसामसीह विराजमान हैं तो जीवन की पावनता, जिसे आप 'नीति' कहते हैं, और भी अधिक आवश्यक है, यही जीवन की नैतिकता है। अब पश्चिम में तो नैतिकता भी बहस का बहुत बड़ा मुद्दा बन गई है। लोगों में पूर्ण नैतिकता का विवेक ही नहीं है। निःसन्देह चैतन्य–लहरियों पर आप इस बात को जान सकते हैं परन्तु वे सब इसके विरुद्ध चले गए। जो लोग भगवान ईसामसीह के पुजारी हैं, जो सूर्य के पुजारी हैं, सरस्वती के पुजारी हैं, वे सभी विरोध में चले गए। सूर्य की शक्तियों के विरोध में, उसकी अवज्ञा करते हुए। क्योंकि आपमें यदि नैतिकता व पावनता का विवेक नहीं है तो आप सूर्य नहीं बन सकते। सभी कुछ स्पष्ट देखने के लिए सूर्य स्वयं प्रकाश प्रदान करते हैं। सूर्य में बहुत से गुण हैं। वे सभी गीली, गन्दी और मैली चीज़ों को सुखाते हैं। परजीवी जन्तु उत्पन्न करने वाले स्थानों को वे सुखाते हैं। परन्तु पश्चिम में बहुत से परजीवी जन्म लेते हैं। केवल परजीवी ही नहीं बहुत से भयानक पंथ और भयानक चीज़ें भी पश्चिम में आ गई हैं, उन देशों में जिन्हें प्रकाश से परिपूर्ण होना चाहिए था परन्तु वे उसी अन्धकार में बने हुए हैं। आत्मा के विषय में अन्धकार, अपने ज्ञान के विषय में अन्धकार और प्रेम के विषय में अन्धकार। जहाँ प्रेम का प्रकाश होना चाहिए था वहाँ इन तीनों चीज़ों का साम्राज्य है। प्रकाश का अर्थ वह नहीं है जो आप अपनी स्थूल दृष्टि से देखते हैं।

प्रकाश का अर्थ है – अन्तर्प्रकाश–प्रेम का प्रकाश। यह इतना सुखकर है, इतना मधुर है, इतना सुन्दर है, इतना आकर्षक है और इतना विपुल है कि जब तक आप इस प्रकाश को अपने अन्दर महसूस नहीं कर लेते–वह प्रकाश जो पावन प्रेम है,

पावनता है, पावन सम्बन्ध है, पावन सूझ–बूझ है, आपको चैन नहीं आ सकता है। इस प्रकार का प्रकाश यदि आप अपने अन्दर विकसित कर लें तो सभी कुछ स्वच्छ हो जाएगा। 'मुझे धो दो और मैं बर्फ से भी श्वेत हो जाऊंगा।' पूर्णत: स्वच्छ हो जाने पर आपके साथ भी ऐसा ही होता है।

प्रकृति का पावनतम रूप हमारे अन्दर निहित है–प्रकृति का पावनतम रूप। प्रकृति के पावनतम रूप से ही हमारे चक्र बनाए गए हैं। मानसिक विचारों द्वारा हमीं लोग इसे बिगाड़ रहे हैं। उसी सरस्वती शक्ति के विरुद्ध, आप साक्षात सरस्वती के विरुद्ध जा रहे हैं। प्रकृति की सारी अशुद्धियों को सरस्वती शुद्ध करती हैं, परन्तु अपनी मानसिक गतिविधियों से हम इसे बिगाड़ रहे हैं। हमारी सारी मानसिक गतिविधि पावन विवेक के विरुद्ध जाती है और यही बात व्यक्ति ने समझनी है कि अपने विचारों द्वारा हमने इस शुद्ध विवेक को नहीं बिगाड़ना। हमारे विचार हमें इतना अहंकारी, इतना अहंवादी, इतना अस्वच्छ बना देते हैं कि हम वास्तव में विषपान करते हैं और कहते हैं, 'इसमें क्या बुराई है?' सरस्वती के बिल्कुल विरुद्ध। सरस्वती यदि हमारे अन्दर हैं तो वे हमें सुबुद्धि देती हैं, विवेक देती हैं। इसी कारण से सरस्वती पूजन के लिए, सूर्य पूजन के लिए हमारे अन्दर स्पष्ट दृष्टि होनी चाहिए कि हमें क्या बनना है, हम क्या कर रहे हैं, कैसी गन्दगी में हम रह रहे हैं, हमारा मस्तिष्क कहाँ जा रहा है। आखिरकार हम यहाँ पर मोक्ष प्राप्ति के लिए हैं, अपने अहं को बढ़ावा देने तथा अपने अन्त:स्थित गन्दगी के साथ जीवनयापन करने के लिए नहीं।

...... मैं आपसे मिलूं या न मिलूं कोई फर्क नहीं पड़ता, परन्तु मैं आप सबमें व्याप्त हूँ, छोटी–छोटी चीज़ों के द्वारा भी मैं आपके साथ हूँ। अत: इस प्रकार से एक दूसरे में व्याप्त होने का प्रयत्न करें और अपने अन्दर के सौन्दर्य को देखें। अपना भरपूर आनन्द उठाएं क्योंकि यही सबसे बड़ी चीज़ है और यही सबसे बड़ी चीज़ प्राप्त करनी है। ये अहं आपको छिलके (Nutshell) की तरह से बना देता है जो व्याप्त होने के सौन्दर्य के साथ तालमेल नहीं रख सकता। देखें कि स्वर किस प्रकार एक दूसरे में घुलमिल जाते हैं।

...... ये व्याप्तिकरण केवल तभी सम्भव है जब आपका अहं चहुं ओर व्याप्त होने लगेगा और दाईं ओर की समस्याओं पर काबू पाने का भी यही उपाय है और सरस्वती की पूजा भी इसी प्रकार से करनी है। सरस्वती के हाथ में वीणा है और वीणा आदिवाद्ययन्त्र है जिसका संगीत वे बजाती हैं। वह संगीत हृदय में प्रवेश कर जाता है। आपको पता भी नहीं चलता कि किस प्रकार आपके अन्दर ये संगीत प्रवेश करता है

और किस प्रकार कार्य करता है। इसी प्रकार से सहजयोगी को भी व्याप्त हो जाना चाहिए–संगीत की तरह से। जैसे मैंने आपको बताया, बहुत से गुण हैं जिनका वर्णन एक प्रवचन में नहीं किया जा सकता है, परन्तु सरस्वती जी का एक गुण ये है वे सूक्ष्म चीज़ों में प्रवेश कर जाती हैं। जैसे पृथ्वी माँ सुगन्ध में परिवर्तित हो जाती हैं, इसी प्रकार से संगीत लय में परिवर्तित हो जाता है और जिस भी चीज़ का सृजन वे करती हैं वह और अधिक महान हो जाती है। जिस भी पदार्थ को वे उत्पन्न करती हैं वह सौन्दर्य सम्पन्न हो जाता है। सौन्दर्यविहीन पदार्थ तो स्थूल है और इसी प्रकार सभी कुछ है। अब आप कहेंगे कि जल क्या है? जल गंगा नदी बन जाता है। ये सब सूक्ष्म चीज़ें हैं। अत: पदार्थ सूक्ष्म बन जाते हैं क्योंकि इन्हें होना होता है–सर्वत्र प्रवेश करना होता है। अत: हर चीज़, चाहे जो हो– और वायु सर्वोत्तम है–वह वायु भी चैतन्य लहरियों में परिवर्तित हो जाती है।

अत: आप देख सकते हैं कि किस प्रकार पदार्थ से बनी चीज़ें–इन पाँच तत्वों से बनी हुई चीज़ें–सूक्ष्म बन जाती हैं। नि:सन्देह बायां और दायां–दोनों पक्ष इसे कार्यान्वित करते हैं। क्योंकि 'प्रेम' ने इस पर कार्य करना होता है और प्रेम जब पदार्थ पर कार्य करता है तो पदार्थ भी प्रेम बन जाता है। और इसी दृष्टि से व्यक्ति को अपने जीवन को भी देखना चाहिए–इसे प्रेम और पदार्थ का सुन्दर संयोजन बनाने के लिए।

परमात्मा आपको धन्य करें।

**प.पू.श्री माताजी, धुलिया, १४.१.१९८३**

सन्यासी वृत्ति पिंगला नाड़ी की जागृति से होती है, परन्तु ये नाड़ी सहजयोग में आत्मज्ञान प्राप्त होने के बाद जागृत होनी चाहिये, उससे पहले की जागृति ठीक नहीं हैं, वह अधूरी, मतलब एकांगी होती है, इसलिये ग़लत है। कभी–कभी मुझे लगता है कि आधे पहुँचे लोग केवल सन्यासीपन का पाखंड रचा कर घूमते रहते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, २३.९.१९७९**

सरस्वती का कार्य बड़ा महान है। महासरस्वती ने पहले सारा अंतरिक्ष बनाया। इसमें पृथ्वी तत्व विशेष है। पृथ्वी तत्व को इस प्रकार से सूर्य और चन्द्रमा के बीच में लाकर स्थिर कर दिया कि वहाँ पर कोई सी भी जीवन्त क्रिया आसानी से हो सकती है। इस जीवन्त क्रिया से धीरे–धीरे मनुष्य भी उत्पन्न हुआ। परन्तु हमें अपनी बहुत बड़ी शक्ति जान लेनी चाहिये, वो शक्ति है जिसे हम **सृजन शक्ति** कहते हैं यह शक्ति उन सरस्वतीजी का आशीर्वाद है जिनके द्वारा अनेक कलाएँ उत्पन्न हुई। कला

का प्रादुर्भाव श्री सरस्वती के आशीर्वाद से ही है।

हाथ से बनी चीज़ों में चैतन्य बहता है। हाथ से बनी चीज़ों द्वारा हृदय का आनन्द हम दूसरों को समर्पित करते हैं। कलात्मक चीज़ें हठात आपको निर्विचारिता में उतारेंगी क्योंकि सौन्दर्य देखते ही चैतन्य बहने लगता है। आत्मसाक्षात्कारी कलाकार जो भी सृजन करता है उसमें अनन्त की शक्ति समाहित होती है। अनन्त तक उसकी सौन्दर्य शक्ति प्रदर्शित होती रहती है।

**प.पू.श्री माताजी, ४.४.१९९२**

सरस्वती का कार्यक्षेत्र शरीर का दायां भाग है। स्वाधिष्ठान पर कार्य करके जब ये बायीं ओर को जाती हैं तो कला–विवेक बढ़ता है। व्यक्ति को सरस्वती तत्व से महासरस्वती तत्व की ओर जाना चाहिये। क्योंकि सरस्वती तत्व यदि बीज है तो महासरस्वती तत्व पेड़ है। बिना इस बीज को वृक्ष बनाये आप महालक्ष्मी से नहीं जुड़ सकते। सहजयोग में सरस्वती और लक्ष्मी आज्ञा चक्र पर मिलती हैं। दोनों तत्वों को उचित दृष्टि से देखे बिना हम उन्नति नहीं कर सकते। कला को लक्ष्मी से जोड़ने के लिए हममें शुद्ध दृष्टि होनी चाहिये।

आप जितना अपनी शक्तियों का उपयोग करेंगे उतना ही अधिक वे बढ़ेंगी। अब आपको सहजयोग देना है, जब आप इस कार्य में लग जाएँगे तो महासरस्वती तत्व जागृत हो जाएगा और देश की उन्नति देख आप आश्चर्य चकित रह जाएंगे।

**प.पू.श्री माताजी, ३.२.१९९२**

उसके (महाकाली शक्ति) के साथ हमारे अन्दर एक दूसरी शक्ति है वो है इच्छाशक्ति को क्रिया में लाने वाली, क्रियान्वित करने वाली शक्ति क्रिया शक्ति। उसे सहजयोग भाषा में माँ सरस्वती की शक्ति कहते हैं। मैं कोई हिन्दु धर्म सिखा रही हूँ या मुसलमान धर्म सिखा रही हूँ–वो मेरी समझ में नहीं आई। जो बात मैं सिखा रही हूँ वो तत्व की बात है–वो सब धर्म में एक है। इसलिए कोई भी यह न सोचे कि मैं माँ काली और सरस्वती की बात कर रही हूँ जिसे कि हिन्दु धर्म में लोग मानते हैं। यदि अच्छा नहीं लगता तो उसे आप क्रियाशक्ति कह लीजिए, लेकिन वो महासरस्वती की शक्ति है।

**नई दिल्ली, १७–०२–१९८१**

## **II श्री हनुमान**

**मानव** अस्तित्व में श्री हनुमान जी की महत्वपूर्ण भूमिका है। निरन्तर हमारे स्वाधिष्ठान से मस्तिष्क (पिंगला नाड़ी) तक चलते हुए वे हमारी भविष्य की योजनाओं या मानसिक गतिविधियों के लिये आवश्यक मार्गदर्शन तथा सुरक्षा प्रदान करते हैं।

........श्री हनुमान जी जैसे देवता का, जो कि बन्दर सम उन्नत शिशु हैं, निरन्तर मानव के दायें पक्ष में दौड़ते रहना अत्यन्त आश्चर्यजनक है। मानव के अंत:स्थित सूर्यतत्व को शान्त तथा कोमल बनाए रखने के लिए उनसे कहा गया। जन्म के समय ही उनसे सूर्य को नियंत्रित करने के लिये कहा गया, अतः शिशु सुलभ स्वभाव से उन्होंने सोचा कि सूर्य को खा ही क्यों न लिया जाय। यह सोचते हुए कि पेट के अन्दर सूर्य को अधिक नियंत्रित किया जा सकता है उन्होंने विराट रूप धारण करके सूर्य को निगल लिया **--- मानव की दाँयी तरफ को नियंत्रित रखने के लिये उनका बालसुलभ आचरण उनके चरित्र की सुन्दरता है।**

........मर्यादापुरुषोत्तम श्री राम को अपनी सहायता के लिए किसी सचिव की आवश्यकता थी और इस कार्य के लिए श्री हनुमान का सृजन हुआ। श्री हनुमान जी श्री राम के ऐसे सहायक और दास थे और उनके प्रति इतने समर्पित थे कि कोई अन्य सेवक अपने स्वामी के प्रति इतना समर्पित नहीं हो सकता। **उनके समर्पण के फलस्वरूप ही शारीरिक रूप से विकसित होने के पूर्व ही उन्हें नवधा सिद्धियाँ प्राप्त हो गईं। इन सिद्धियों के फलस्वरूप उन्हें सूक्ष्म या पर्वतसम विशालकाय शरीर धारण करने की क्षमता प्राप्त हो गई। अत्यन्त उग्र स्वभाव के व्यक्तियों को श्री हनुमान इन सिद्धियों से नियन्त्रित करते हैं।**

........ अपनी पूँछ को किसी भी हद तक बढ़ा कर लोगों को नियन्त्रित करना उनकी एक और सिद्धि है। वे हवा में उड़ सकते है----हवा में उड़ने की सामर्थ्य के कारण वे संदेश को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचा सकते हैं।

**आकाश की सूक्ष्मता श्री हनुमान के नियन्त्रण में है। वे इस सूक्ष्मता के स्वामी हैं और इसी के माध्यम से वे संदेश भेजते हैं। दूरदर्शन, आकाशवाणी तथा ध्वनिवर्धन उनकी इसी शक्ति की देन हैं।** बिना किसी संयोजक के आकाशमार्ग से वायवीय (Ethnic) सम्बन्ध स्थापित करना इस महान अभियन्ता का ही कार्य है। यह कार्य इतना पूर्ण है कि आप इसमें कोई त्रुटि नहीं निकाल सकते। आपके यन्त्रों में त्रुटि

हो सकती है, श्री हनुमान जी की कार्य कुशलता में नहीं––––––यहाँ तक कि हमारे **अन्दर की सूक्ष्म लहरियों का हमारी नस–नाड़ियों पर, हमारे रोम–रोम पर अनुभव होना भी श्री हनुमान जी की कृपा से है।**

श्री हनुमान को 'अणिमा' नामक एक अन्य सिद्धि भी प्राप्त है जो उन्हें अणुओं तथा परमाणुओं में प्रवेश करने की शक्ति प्रदान करती है।

विद्युत–चुम्बकीय शक्तियों का गतिशील होना श्री हनुमान जी की कृपा से ही होता है। श्री गणेश ने उनके अन्दर चुम्बकीय शक्ति भर दी है। वे स्वयं चुम्बक हैं। भौतिक सतह पर विद्युतचुम्बकीय शक्ति श्री हनुमान जी की शक्ति है परन्तु भौतिकता से वे मस्तिष्क तक जाते हैं, स्वाधिष्ठान से उठ कर मस्तिष्क तक जाते हैं। मस्तिष्क के अन्दर वे इसके भिन्न पक्षों के सह–सम्बन्धों का सजृन करते हैं। यदि श्री गणेश हमें विवेक प्रदान करते हैं तो श्री हनुमान हमें सोचने की शक्ति देते हैं।

बुरे विचारों से बचाने के लिए वे हमारी रक्षा करते हैं। श्री गणेश जी हमें विवेक देते हैं तो श्री हनुमान जी सद्–सद्–विवेक। **सद्–सद्–विवेक उनकी दी गई सूक्ष्म शक्ति है और यह हमें सत्य असत्य में भेद जानने का विवेक प्रदान करती है।**

सहजयोग में हम कहते हैं कि श्री गणेश अध्यक्ष हैं या इस विश्वविद्यालय के कुलपति हैं। वे हमें उपाधियाँ देते हैं और हमें अपनी अवस्था की गहराई जानने में सहायता करते हैं। वे हमें निर्विचार तथा निर्विकल्प समाधि और आनन्द प्रदान करते हैं। बौद्धिक सूझ–बूझ जैसे **यह अच्छा है यह हमारे हित में है,** श्री हनुमान जी की देन है और बुद्धिवादी होने के कारण वे पाश्चात्य लोगों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं **–––– मार्गदर्शन तथा सुरक्षा हमें श्री हनुमान जी की देन है।**

श्री राम का कार्य करने के लिए श्री हनुमान सदैव उत्सुक रहते हैं। विवेक यह है कि जो कुछ भी श्री राम कहते हैं हनुमान उसे कर देते हैं–––– श्री राम की सहायता जब आप लेते हैं तो श्री हनुमान जी ही आपको बताते हैं कि सर्वशक्तिमान परमात्मा या श्री राम जैसे गुरु के अतिरिक्त आपको किसी के प्रति समर्पित नहीं होना। तब आप एक स्वतन्त्र पक्षी होते हैं और पूरी नौ शक्तियाँ आपमें जागृत हो जाती हैं।

आपके अहं के साथ–साथ बहुत सी अन्य बुराइयों का भी श्री हनुमान प्रतिकार करते हैं। यह तथ्य लंकादहन कर रावण की खिल्ली उड़ाने में अत्यन्त मधुरता से प्रकट हो जाता है।

अहंकारी लोगों से आपकी रक्षा करना–––श्री हनुमान का कार्य है।

श्री हनुमान का एक अन्य गुण यह है कि वे लोगों को स्वेच्छाचारी बना देते हैं। दो अहंकारी व्यक्तियों को मिलाकर वे उनसे ऐसे हालात पैदा करवा देते हैं कि दोनों नम्र होकर मित्र बन जाते हैं।

हमारे अन्तस का हनुमान तत्व हमारे अहं का ध्यान रखने तथा हमें बाल सुलभ, विनोदशील और प्रसन्न बनाने में कार्यरत है। वे सदा नृत्य–भाव में होते हैं।

यदि श्री गणेश मेरे पीछे बैठते हैं तो श्री हनुमान मेरे चरणों में।

श्री हनुमान जी अहंकारी लोगों तक को समर्पण करना सिखाते हैं, समर्पण के लिए विवश करते हैं, भिन्न प्रकार की बाधाओं, चमत्कारों या विधियों द्वारा वे शिष्य का गुरु के प्रति समर्पण करवाते हैं।

**गुरु के प्रति व्यक्ति के समर्पण की शक्ति श्री हनुमान जी की है।** किस प्रकार से आप गुरु को प्रसन्न कर सकते हैं और उसका सामीप्य प्राप्त कर सकते हैं? सामीप्य का अर्थ शारीरिक सामीप्य नहीं। इसका अर्थ है एक प्रकार का तदात्म्य, एक प्रकार की समझ। मुझसे दूर रहकर भी सहजयोगी अपने हृदय में मेरा अनुभव कर सकते हैं। यह शक्ति हमें श्री हनुमान जी से प्राप्त करनी है।

सभी देवताओं की रक्षा श्री हनुमान जी वैसे ही करते हैं जैसे वे आपकी रक्षा करते हैं। श्री गणेश जी शक्ति प्रदान करते हैं पर रक्षा श्री हनुमान जी करते हैं।

श्री हनुमान (देवदूत 'गैब्रील') रक्षक थे। संदेशवाहक गैब्रील और उन्होंने 'इमैक्यूलेट साल्वे' अर्थात 'निर्मल साल्वे' शब्द का प्रयोग किया जो कि मेरा नाम है। जीवन पर्यन्त मारिया को श्री हनुमान की सेवा स्वीकार करनी पड़ी। मारिया महालक्ष्मी हैं।

**जो भी योजना मेरे मस्तिष्क में बनती है श्री हनुमान जी उसे कर डालते हैं क्योंकि पूरी संस्था भली–भाँति संयोजित है–––––कई घटनायें जिन्हें आप चमत्कार कहते हैं श्री हनुमान जी द्वारा की हुई होती हैं। चमत्कार करने वाले वे ही हैं।**

.........श्री हनुमान जी हमारी उतावली, जल्दबाजी तथा आक्रमणशीलता को ठीक करते हैं।

.........श्री हनुमान मूसलाधार बारिश और वेगवान तूफान की तरह जाकर विनाश कर देते हैं। अपनी विद्युत चुम्बकीय शक्ति द्वारा वे ये सारे कार्य करते हैं।

**भौतिक तत्व उनके नियन्त्रण में हैं,** वे वर्षा, धूप और हवा की सृजन आपके लिए करते हैं। पूजा या मिलन के लिए वे उचित प्रबन्ध करते हैं। बिना किसी के जाने वे सारे कार्य कर डालते हैं। हमें हर समय उनके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए।

.......श्री हनुमान एक तेजस्वी देवदूत हैं, वे सन्यासी या त्यागी नहीं हैं। सुन्दरता तथा सज्जा उन्हें बहुत प्रिय है।

.......वे एक सनातन शिशु हैं और वो भी एक बन्दर बालक।

**प.पू.श्री माताजी, फ्रैंकफर्ट, जर्मनी, ३१.८.१९९०**

.......श्री हनुमान जी के बारे में क्या कहें, वे जितने शक्तिवान थे, जितने गुणवान थे उतने ही वे श्रद्धामय और भक्तिमय थे।

.......श्री हनुमान जी एक विशेष देवता हैं, एक विशेष गुणधारी देवता, जितने वे बलवान थे उतना ही उनकी शक्ति भक्ति थी। ये सन्तुलन उन्होंने किस प्रकार पाया और उसमें कैसे रहे, एक यही समझने की बात है।

उनके अन्दर नवधा दैवी शक्तियाँ थीं। गरिमा–चाहे जितने बड़े हो सकते थे, अणिमा–छोटे बिल्कुल सूक्ष्म हो सकते थे।

उनके शरीर का अंग अंग उसी से (शक्ति और भक्ति से) भरा रहता है। उनकी इसी विशेषता के कारण आज हम बजरंग बली की देश–विदेश में भी अर्चना करते हैं।

भक्ति और शक्ति दो अलग चीज़े नहीं हैं। एक ही हैं। हम ये कहेंगे कि गर Right Hand में शक्ति है तो Left Hand में भक्ति। ये शक्ति–भक्ति का संगम, ये हनुमान जी में बहुत है।

दूसरी उनकी विशेष बात ये है कि वे अर्ध–मनुष्य थे, अर्ध–बन्दर, माने पशु और मानव का बड़ा अच्छा मिश्रण था। तो हमारे अन्दर जो कुछ भी हमने अपनी उत्क्रान्ति में अपने Evolution में पीछे छोड़ा है उसमें भी जो प्रेम और उसमें जो भी आसक्ति थी वो उन्होंने अपने साथ ले ली थी।

श्री हनुमान जी प्रेम के सागर हैं और उसी वक्त जो दुष्ट हो, जो दूसरों को सताता है, जो दूसरों को नष्ट करता हो, उसका वध करने में उनको बिल्कुल किसी तरह का संकोच नहीं होता था।

**श्री हनुमान पूजा – १९९९**

## सुषुम्ना
## <u>श्री महालक्ष्मी</u>

आदिशक्ति की जो तीसरी शक्ति है, त्रिगुणात्मिका वो महालक्ष्मी की शक्ति है। इसी शक्ति से हम धर्म को धारण करते हैं।

आज हम महालक्ष्मी की पूजा करेंगे। .......इसी तत्व के द्वारा आप उस अवस्था तक पहुँचे हैं। कुण्डलिनी के उत्थान के लिए महालक्ष्मी शक्ति ने आपकी उत्क्रान्ति के मध्यमार्ग का सृजन किया। कोल्हापुर के महालक्ष्मी मन्दिर में लोग हमेशा 'उदे, उदे अम्बे', भजन गाते हैं..... क्योंकि कुण्डलिनी ही 'अम्बा' हैं।

महालक्ष्मी के सम्बन्ध में हमें ये समझना होगा कि वे क्या करती हैं और उनकी सहायता क्या है। महालक्ष्मी वाहिका (सषुम्ना) या महालक्ष्मी की शक्तियों ने हमारे अन्दर आवश्यक सन्तुलन, आवश्यक मार्ग का सृजन किया है ताकि कुण्डलिनी उठ सके। बाएं और दाएं अनुकम्पी को सन्तुलित किया है और कुण्डलिनी के उत्थान के लिए वे ही खुला मार्ग बनातीं हैं। यह प्रेम एवं करुणा का मार्ग है करुणा और प्रेम के माध्यम से वे ये मार्ग बनातीं है क्योंकि वे जानती हैं कि यदि मार्ग खुला न होगा तो कुण्डलिनी न उठ सकेगी। अन्ततः व्यक्ति उस अवस्था तक पहुँच जाता है जहाँ जिज्ञासा का आरम्भ होता है औऱ आप लोगों में जब जिज्ञासा जागृत हुई तो आपका महालक्ष्मी तत्व जागृत हो गया....।

एक अन्य कार्य जो ये महालक्ष्मी तत्व करता है वो ये है कि यह कुण्डलिनी शक्ति को भिन्न चक्रों तक जाने का मार्ग बताता है ताकि इन चक्रों के दोष दूर हो सकें। ये अत्यन्त लचीली शक्ति है जो भिन्न चक्रों में कुण्डलिनी का पथप्रदर्शन करती है और समझती है कि किस चक्र को कुण्डलिनी की सहायता की आवश्यकता है। आपने अवश्य देखा होगा कि किसी भी बाधित चक्र पर जाकर, उसे ठीक करने के लिए ये किस प्रकार धड़कती है। यह सारा कार्य इसलिए होता है क्योंकि वे करुणा एवं प्रेम से परिपूर्ण हैं और चाहती हैं कि आप पूर्ण सत्य को प्राप्त करें।

पूर्वकर्मों के बहुत से बन्धन एवं समस्याएं हमारे उत्थान में कठिनाई उत्पन्न करते हैं। षड्रिपु हमारा अन्तर्परिवर्तन(उत्थान) असम्भव कर देते हैं। परन्तु महालक्ष्मी तत्व के प्रज्ज्वलित और जागृत हो जाने पर मानव में अन्तर्परिवर्तन होता है और वह एक भिन्न तत्व का बन जाता है–आत्मतत्व। प्रकृति के पाश से मुक्त होकर साधक परमेश्वरी लीला का साक्षी एवं अपना स्वामी (गुरु) बन जाता है।

महालक्ष्मी शक्ति जागृत एवं स्थापित होने के पश्चात व्यक्ति बात–बात पर परेशान नहीं होता, प्रेम एवं करुणा का आनन्द उठाता है। साधक को श्री कृष्ण वर्णित 'स्थितप्रज्ञ' स्थिति प्राप्त हो जाती है और उसमें 'सामूहिक चेतना' का एक नया आयाम विकसित हो जाता है। बूँद समुद्र में मिलकर 'पूर्णसमुद्र'–'परमेश्वरी प्रेम की शक्ति' बन जाती है तथा बहुत से दीप प्रज्ज्वलित करती है।

**प.पू.श्री माताजी, १० नवम्बर १९९६**

## महालक्ष्मी उत्क्रान्ति की सीढ़ी हैं

.......भारतीय शास्त्रों में शक्ति को बहुत महत्व दिया गया है....जिस व्यक्ति को आत्मा बनने की शक्ति प्राप्त नहीं हुई उसे व्यर्थ माना जाता है। अतः ये शक्ति हमारे अन्दर जागृत होनी आवश्यक है.....। सभी शक्तियों में से....महान शक्ति कुण्डलिनी हैं क्योंकि उनके बिना आपको आत्मसाक्षात्कार प्राप्त नहीं हो सकता। परन्तु हम कह सकते हैं कि उनसे भी ऊँची या उनकी सम्पूरक महालक्ष्मी शक्ति है। महालक्ष्मी के बिना आप उत्क्रान्ति नहीं प्राप्त कर सकते। यह सीढ़ी है जिसके माध्यम से कुण्डलिनी उठ सकती है। अतः दोनों ही शक्तियाँ बहुत महत्वपूर्ण हैं और परस्पर अत्यन्त सम्बन्धित। लक्ष्मीतत्व सन्तुष्ट होने पर महालक्ष्मी तत्व का आरम्भ होता है जैसे पश्चिम में लोग अधिक वैभव से तंग आ गए हैं, अतः वो सोचने लगे हैं, 'हमने क्या प्राप्त किया?' हम असन्तुलन में चले गए। तो अब हमें क्या करना चाहिए ? हमें स्वयं को सन्तुलित करना होगा। स्वयं को सन्तुलित किस प्रकार करें, हम किस प्रकार आचरण करें? हमें आत्मज्ञान प्राप्त करना होगा।....और आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए कुण्डलिनी जागृत होनी....और परमात्मा की सर्वव्यापी शक्ति से जुड़ना आवश्यक है। एक बार यदि ऐसा हो जाए.....तो आपका अन्तर्परिवर्तन हो जाता है.....तब आप अपनी सभी समस्याओं को देख सकते हैं, उन्हें ठीक कर सकते हैं।

......महालक्ष्मी अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। जब आप वैभव से तंग आ जाते है तब आपको लगता है कि अवश्य किसी चीज़ की कमी है और तब आप महालक्ष्मी तत्व की ओर बढ़ते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कोल्हापुर (भारत), २१ दिसम्बर १९९०**

## महालक्ष्मी तत्व में प्रवेश

आप महालक्ष्मी के महत्व के विषय में जानते हैं कि सुषुम्ना नाड़ी महालक्ष्मी की वाहिका है। परन्तु हमारे अन्दर महालक्ष्मी तत्व की अभिव्यक्ति लक्ष्मी तत्व सन्तुष्ट

होने के बाद ही होती है.......अतः परमेश्वरीतत्व महालक्ष्मी के माध्यम से कार्य करता है। बड़ी अजीब बात है कि लक्ष्मीतत्व सन्तुष्ट होने के बाद ही आपमें जिज्ञासा आरम्भ होती है और हमारे अन्दर यह जिज्ञासा महालक्ष्मीतत्व से आती है....।

'.........परन्तु किस प्रकार हम अपने लक्ष्मी तत्व को सन्तुष्ट करें?' 'जब हमारे पास जरूरत से ज्यादा धन आ जाता है तो हम सोचने लगते है 'इस धन का मैं क्या करूंगा?' कुछ लोग सोचते हैं, 'ठीक है, मैं एक और कार ले लूंगा, एक और घर खरीद लूंगा, एक और ये ले लूंगा, वो ले लूंगा।' परन्तु एक प्रकार का विवेक उदय होने लगता है, सन्तोष आने लगता है:– 'अब और क्या ? फिर पैसे के साथ टैक्स आदि की समस्याएं आने लगती हैं। तब लोग सोचते हैं, 'अब बहुत हो गया, और अधिक नहीं, ये सब काफी है।' तो इच्छा समाप्त हो जाती है, धन की ललक समाप्त हो जाती है। सहजयोग में आप इतने आशीर्वादित हो जाते हैं कि इच्छानुरूप आपको सब कुछ मिलना शुरु हो जाता है और एक बिन्दु पर पहुँच कर आप सोचते हैं, 'वाह, बहुत हो गया, अब और नहीं चाहिए– मेरे पास सब कुछ है।'

'लक्ष्मीतत्व सन्तुष्ट होने से पूर्व यदि आपको आत्मसाक्षात्कार मिल जाए तो भी आप जल्दी से इस स्थिति तक पहुँचने लगते हैं और इस प्रकार यदि आप पहुँच जाएं तो आप महालक्ष्मीतत्व में प्रवेश कर सकते हैं।

'परन्तु यदि आप एकदम से अमीर हो जाएं और वह अमीरी आपके सिर पर बैठने लगे, आपको अपनी कोई सीमा न दिखाई दे, तब भी आपके लिए सहजयोग में आने के अवसर हैं।' मान लो कोई अमीर आदमी बीमार हो जाता है, उसे कैंसर हो जाता है या उसके बच्चे उससे दुव्यर्वहार करने लगते हैं, या उसके सम्मान को हानि पहुँचती है, दाईं ओर से कोई सद्मा यदि उसे आता है तो यह उसे मध्य में– महालक्ष्मीतत्व में धकेल सकता है। अब लक्ष्मीतत्व–उदारता–गतिशील हो उठती है। ऐसी स्थिति में धनवान लोग अपनी उदारता की अभिव्यक्ति करने लगते हैं। परन्तु यह उदारता भी उनके सिर पर सवार होने लगती है और उससे उत्पन्न असन्तोष उन्हें 'जीवन सत्य' को प्राप्त करने के विषय में सोचने पर मजबूर करता है। सत्यजिज्ञासा, अन्ततः उन्हें अन्तःस्थित महालक्ष्मीतत्व पर ले जाती है।

**प.पू.श्रीमाताजी, कोल्हापुर (भारत) २१ दिसम्बर १९९१**

.....जब लक्ष्मी जी का पूरी तरह से उपयोग ले लिया और बहुत हो गई लक्ष्मी, जैसे बुद्ध को हुआ था, महावीर को हुआ था, उपरति (विरक्ति) आ गई और

उपरति आने के बाद वो परमात्मा को खोजने निकले। ये जो खोजने की शक्ति है ये महालक्ष्मी की शक्ति है। ये महालक्ष्मी का Temple है कोल्हापुर में, स्वयंभु है। तो वहाँ के जोगवा गाते हैं, कि 'हे अम्बे तू जाग, हे अम्बे तू जाग।' ये नामदेव ने लिखा है, १६वीं शताब्दि में। वहाँ के ब्राह्मणों से मैंने कहा कि महालक्ष्मी के मन्दिर में ये क्यों गाते हो भई? कहने लगे पता नहीं अनादि काल से यहाँ चल रहा है यही गाना। जब से नामदेव हुए हैं। तो अम्बे कौन हैं? कहने लगे देवी है कोई। मैंने कहा आपको इतना भी नहीं मालूम? मैंने कहा आपको तो मैं नहीं समझा पाऊँगी। ये बड़ी मुश्किल है। पर महालक्ष्मी के मन्दिर में भी अम्बे जागती हैं। वो वैसे। मध्यमार्ग में महालक्ष्मी है। उस मार्ग में आपकी सारी खोज लेफ्ट की, राइट की, बुद्धि की सब खत्म हो जातीहै। और आप मध्यमार्ग में आ गए। जब आपने खोजना शुरू कर दिया तब आप पर महालक्ष्मी की कृपा हो जाती है। Bible में इसे Redeemer कहा है। तीन शक्तियाँ बताई उन्होंने। पहली शक्ति को कहा है Comforter, Left side की। Right side की को कहा है Counselor और बीच वाली को Redeemer। ये Holy Ghost की तीन शक्तियाँ हैं। सो जो मध्य मार्ग में आप प्रवेश करने लगते हैं और मध्य मार्ग में आ जाते हैं तब आप एक साधक हो गए और साधक के ऊपर महालक्ष्मी उमड़ पड़ती है। महालक्ष्मी की कृपा उस पर होती है। महालक्ष्मी की शक्ति का चढ़ना बहुत मश्किल है, क्योंकि कभी मन Left को जाता है, कभी Right को जाता है। कभी Left को जाता है, कभी Right को। एक मात्र कुण्डलिनी के जागरण से ही मध्य मार्ग को प्राप्त करते हैं।

पहले तो वो एक सोपान ब्रिज बनाती हैं। Void और उससे गुज़र कर कुण्डलिनी शक्ति, मध्य मार्ग से गुज़रती हुई ब्रह्मरंध्र को छेदती हुई ब्रह्माण्ड से एकाकारिता प्राप्त करती है और जब ये घटना हो जाती है, उसके बाद त्रिगुणात्मिका मिलकर के आपकी आज्ञा चक्र को छेदकर जब आप सहस्रार में आते हैं तो यहाँ आदिशक्ति का स्वरूप महामाया का है। 'सहस्रारे महामाया, सहस्रारे महामाया।' जब सहस्रार को खोलने का काम आता हैं तो वो महामाया का स्वरूप धारण करती है......

**प.पू.श्री माताजी, जयपुर, ११.१२.१९९४**

.........महालक्ष्मी तत्व से तो मनुष्य समाधानी हो जाता है, इस तत्व से वह शक्ति को ढूँढ़ता है और ढूँढ़ते हुए असत्य को छोड़ता है। सांसारिक एवं भौतिक चीज़ों से जब हमारे अन्दर समाधान आ जाता है तभी महालक्ष्मी का तत्व हमारे अन्दर जागृत हो जाता है।

..........महालक्ष्मी तत्व से परिपूर्ण व्यक्तित्व पनप उठता है। महालक्ष्मी

तत्व ही आपको आपकी साधना के लक्ष्य तक ले जाता है, और जब आप वास्तविकता एवं सत्य को प्राप्त कर लेते हैं तब आपकी उन्नति होती है। केवल महालक्ष्मी तत्व के कारण ही आप आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करते हैं।

..........महालक्ष्मी तत्व में आप निर्लिप्त हो जाते हैं, सोचने लगते हैं कि आखिरकार यह संसार क्या है और आपमें एक प्रकार की निर्लिप्सा की भावना आ जाती है। ऐसा व्यक्ति पदार्थों के मोह में नहीं फँसा रहता है। आप सोचने लगते हैं कि संसार से बेहतर भी कुछ होगा, इससे परे भी कोई सत्य होगा। यहाँ आपके अन्दर महालक्ष्मी तत्व प्रवेश करने लगता है। यह उत्थान का दैवीतत्व है, ये देवी आपके मस्तिष्क में एक विचार उत्पन्न करती है कि इससे आगे क्या है? आपको क्या करना होगा? क्या जीवन का यही लक्ष्य है? जीवन का उद्देश्य क्या है? हम इस पृथ्वी पर क्यों अवतरित हुए हैं? ऐसा क्या विशेष है कि हम पृथ्वी पर जीवित रहें ? ऐसे बहुत से मूल प्रश्न उठते हैं और आप जिज्ञासु बन जाते हैं।

......... आप सोचते हैं, आपकी जिज्ञासा बोधगम्य होनी चाहिये, यह मस्तिष्क के माध्यम से होनी चाहिये या तर्कसंगत होनी चाहिये या वैज्ञानिक, इस प्रकार लोग सत्यसाधना करते हैं, ऐसा होना सम्भव नहीं है। महालक्ष्मी का सिद्धान्त यह है कि आपमें सत्य और केवल सत्य को जानने की महान इच्छा होनी चाहिये। सत्य के सिवाय किसी अन्य चीज़ की नहीं, तभी आपकी महालक्ष्मी शक्ति कार्य करती है।

**प.पू.श्रीमाताजी, कबेला, १७.१०.१९९९**

यह महालक्ष्मी तत्व ही आपको सत्य साधना की ओर ले जाता है, तब आप विशेष श्रेणी के लोग बन जाते हैं। महालक्ष्मीतत्व जब आता है तो मनुष्य के अन्दर नवधा– नौ शक्तियों की अभिव्यक्ति होती है।

.........महालक्ष्मी ऐसी देवी हैं जो आपको, जो भी कुछ आपके पास उपलब्ध है उसी से पूर्ण संतोष प्रदान करती है। महालक्ष्मी तत्व जब आपमें जागृत होता है तो आपको और अधिक प्राप्त करने की इच्छा नहीं रहती, आप औरों को देना चाहते हैं और अपनी उदारता का आनन्द लेना चाहते हैं।

**प.पू.श्रीमाताजी, लास एंजलिस, २९.१०.२०००**

.........महालक्ष्मी तत्व को स्थिर करने के लिए मध्य में जाने का पहला मापदंड यह है कि हमारा शरीर सामान्य होना चाहिये। हमें स्वस्थ तथा प्रसन्न रहना चाहिये। दूसरे यदि हम मध्य में हैं तो हमारा चित्त अधिकतर प्रकृति तथा इसकी कार्य

प्रणाली की ओर होता है। अपने चहुँओर की सृष्टि से हमें आनन्द लेना चाहिये। यह आनन्द विस्मयकारी रूप से गहन तथा आनन्ददायी होता है तथा हमें निर्विचार समाधि की ओर ले जाता है।

.........महालक्ष्मी तत्व हमारे अन्दर का तत्व है जो पोषण करने के साथ–साथ हमें संतुलन प्रदान करता है, यह एक पथप्रदर्शक तत्व है जो सभी कार्य करता है, जो विवेक प्रदान करके परमात्मा तथा सत्य के प्रति प्रेम देता है और इस प्रेम से आप उन्नत होते है। महालक्ष्मी तत्व का महान आशीर्वाद पूर्ण आत्मसन्तुष्टि है। अपनी आत्मा में ही आप आनन्दित रहते हैं। महालक्ष्मी तत्व जब हमारे मस्तिष्क में प्रवेश करता है तो विराट की अभिव्यक्ति होती है तथा हम अतिसुन्दर रूप से सामूहिक हो जाते हैं। तब हम यह नहीं सोचते कि हम किस देश के हैं, हमारी चमड़ी का रंग क्या है या हमारा धर्म क्या है।

.........यह आनन्द भी तभी आता है जब महालक्ष्मी तत्व आपके सहस्रार को प्रकाशित करता है। पूर्णता का भाव आ जाता है– व्यक्ति विशेष का नहीं। विराट से हम जुड़ जाते हैं। विराट का यह भाव कि हम पूर्ण के अंग–प्रत्यंग हैं, आपको पूर्ण शान्ति तथा सुरक्षा प्रदान करता है।

.........महालक्ष्मी तत्व के प्रति समर्पण का अर्थ है अपने अहं तथा बन्धनों का त्याग, इसी कारण महालक्ष्मी इतनी महत्वपूर्ण हैं।

**प.पू.श्रीमाताजी, आस्ट्रेलिया, २०.०२.१९९२**

.........सहजयोग में आपको महालक्ष्मीतत्व सम्पन्न होना होगा। ऐसे व्यक्ति को चाहे लोग धोखा दें, चाहें कष्ट दें फिर भी इनमें सभी बाधाओं को दूर करने के लिये आन्तरिक शक्तियाँ होती हैं।

..........ये बात समझनी आवश्यक है कि महालक्ष्मी और महाकाली दोनों साथ–साथ चलती हैं। महाकाली आपको देती हैं, आकर आपके साथ रहती हैं। महालक्ष्मी आगे आती हैं और निश्चित रूप से आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने तथा समस्याओं को हल करने में आपकी सहायता करती हैं। आर्थिक समस्याओं के साथ वे आपकी अन्य समस्याओं का समाधान भी करती हैं। सबसे बड़ी समस्या जिसका वे समाधान करती हैं वह है आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने की आपकी महानता इच्छा को पूर्ण करना। अतः उन दोनों में कोई स्पर्धा नहीं है।

यह तीनों ही शक्तियाँ साथ–साथ काम करती हैं और जिस चीज़ की

आवश्यकता होती है उसे ये सब कार्यान्वित करती हैं।

**प.पू.श्रीमाताजी, कबेला, १७.१०.१९९९**

........परमात्मा का विधान महालक्ष्मी के माध्यम से कार्य करता है।

**प.पू.श्रीमाताजी, कोल्हापुर, २१.१२.१९९१**

आप सब जानते हैं कि महालक्ष्मी ही मध्यमार्ग है जिससे कुण्डलिनी का जागरण होता है।

........ सुषुम्ना नाड़ी इस प्रकार बनी है जैसे कि कागज को आप साढ़े तीन मर्तबा लपेट लें तो उसकी जो सबसे सूक्ष्म, बीच की नाड़ी है उसे आप ब्रह्म नाड़ी कहते हैं। उसी नाड़ी से पहले कुण्डलिनी को जगाया जाता है और जब कुण्डलिनी एक बाल के बराबर भी उठ जाये तो वह वह ब्रह्मरन्ध्र को छेद सकती है। ब्रह्मरन्ध्र को छेदने से आत्मसाक्षात्कार की शुरुआत होती है। मध्यमार्ग की बनावट इतनी विशेष प्रकार की है कि जितनी भी बाधायें आपने इसमें डाली हों फिर भी कुण्डलिनी के जागरण के बाद यह मार्ग धीरे–धीरे प्रशस्त हो सकता है। और इसी विशेषता का आलम्बन लेकर हमने सहजयोग में पहले शिखर और फि र उसकी नींव से यह मन्दिर बनाया। पहले शिखर बनाना है और फिर उसके बाद उसकी नींव डालनी है। तो किसी तरह से यदि ब्रह्मरन्ध्र छिद जाये तो उसके बाद थोड़े से प्रकाश से भी कार्य हो सकता है.........

महालक्ष्मी जैसा मैंने आपको बताया आदर्श सिद्धांत है, पूर्ण। इसका जन्म ही पूर्ण हुआ है, यह पूर्ण रहेगा हमेशा हमेशा के लिए ताकि इसको सुधारने की आवश्यकता न पड़े।

.......महालक्ष्मी तो सार तत्व है, हर चीज़ का सार तत्व, क्योंकि यदि सृष्टि का सृजन घटित होना है, यदि यह परमात्मा की इच्छा है, परन्तु महालक्ष्मीतत्व नहीं है तो इच्छा का क्या लाभ है? यदि सृजन कर भी दिया गया तो बिना महालक्ष्मीतत्व के किस प्रकार आप इसे कार्यान्वित करेंगे? आप इसे कार्यान्वित ही नहीं कर सकते। महालक्ष्मीतत्व का होना बहुत आवश्यक है, इसके बिना सृजन अर्थ हीन है।

तो बाह्य रूप से तो महालक्ष्मीतत्व परन्तु अन्दर इसकी तीन शक्तियाँ हैं। देखने के लिए महालक्ष्मीतत्व है, परन्तु अन्दर सृजन है और सभी तत्वों का सृजन होता है। इसके अन्दर इच्छा है और इस इच्छा के अन्दर श्री गणेश हैं....मैं चाहती हूँ कि आप सबके अन्दर चित्त की एकाग्रता विकसित हो ताकि आप सभी भ्रमों से ऊपर उठें और महालक्ष्मीतत्व के माध्यम से 'शुद्ध आत्मा के साथ एकरूप हो सकें।'

**प.पू.श्रीमाताजी, कोल्हापुर, १.१.१९८३**

# अध्याय १०ब

# सूक्ष्म चक्रों पर स्थापित शक्तियाँ

## मूलाधार चक्र

### श्री गणेश

ब्रह्मचैतन्य का साकार रूप ओंकार है और उसका मूर्तस्वरूप या विग्रह श्री गणेश हैं। श्री गणेश प्रथम देवता हैं जिनका आदिशक्ति ने सृजन किया। अपनी माँ की चैतन्य लहरियों तथा पृथ्वी तत्व से उनका सृजन किया गया।

**प.पू.श्री माताजी, पुणे, २५.१२.१९९०, कबेला ७.९.१९९७**

चैतन्य लहरियाँ, जिनके विषय में आप हमेशा पूछते रहते हैं, श्री गणेश के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। **माँ और बच्चे के बीच वात्सल्य की भावना चैतन्य लहरियाँ हैं।** व्यक्ति को यही महसूस करना चाहिये कि वह अभी तक बच्चा है, और माँ भी हैं जो बच्चे का पोषण कर रही हैं, उसे सारी शक्तियाँ दे रही हैं, प्रेम कर रही हैं। बच्चे की सीमाओं को देखते हुए उसकी देखभाल कर रही हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ८.८.१९८९**

श्री गणेश जी क्या हैं, सिर्फ़ पावित्र्य, सिर्फ़ पावित्र्य। सिर्फ़ पावित्र्य पुंज हैं क्योंकि वे अनन्त के बालक हैं। उनके जैसा बालक संसार में मिलना मुश्किल है। सिर्फ पावित्र्य ही पावित्र्य है, उनका सारा प्यार ही पवित्रता है और उस पावित्र्य की वजह से आपके मूलाधार चक्र पर, चक्र पर, मूलाधार पर तो माँ बैठी हैं, उनको बिठाया है। इसका अर्थ यह है कि sex के मामले में जब आप धर्म में उतरते हैं तो उस वक्त अपने sex के प्रति विचार जैसे अबोध बालक के होते हैं, वैसे होने चाहिए। इसका अर्थ ये है। गणेश तक पहुँचना बहुत कठिन बात है, बहुत कठिन बात है क्योंकि बड़ी पवित्र आत्मा हैं। उसके अन्दर जाने के लिये हमें बहुत ही स्वच्छ होना पड़ता है तभी हम उसके अन्दर उतरते हैं। नहीं तो वो और उनकी माँ के सिवाय वहाँ कोई बैठता नहीं।

**प.पू.श्री माताजी, २५.११.१९७३, चैतन्य लहरी २००३, सितम्बर–अक्तूबर**

.....श्री गणेश का सिद्धान्त (तत्व) अत्यन्त सूक्ष्म है– सूक्ष्मातिसूक्ष्म। सभी चीज़ों में ये विद्यमान है, चैतन्य लहरियों के रूप में विद्यमान है। सभी पदार्थो में चैतन्य

लहरियाँ होती हैं और इन चैतन्य लहरियों को सभी पदार्थों के अणु–परमाणुओं में देखा जा सकता है। **अतः श्री गणेश प्रथम देवता हैं जिन्हें भौतिक पदार्थों में भी स्थापित किया जा सकता है। परिणाम स्वरूप हम देखते हैं कि यह सूर्य में, चाँद में, पूरे ब्रह्माण्ड में, पूरी सृष्टि में और मानव में विद्यमान है।** केवल मानव ही अपने कर्मों के कारण अपनी अबोधिता पर आवरण चढ़ा लेता है, अन्यथा पशु तो अबोध हैं। मानव स्वतन्त्र है, वह यदि चाहे तो अपने पावित्र्य को आच्छादित कर सकता है और श्री गणेश के लिये अपने द्वार बन्द कर सकता है। वह कह सकता है कि श्री गणेश का कोई अस्तित्व नहीं है।

**प.पू.श्री माताजी, ८.८.१९८९**

.....प्रत्येक  पदार्थ के अणु में एक शक्ति है जो कार्य करती है। सारे कार्य (परिवर्तन) सब श्री गणेश के सिद्धान्तों से नियंत्रित किये जाते हैं। कितना नन्हा बालक और कितने बड़े–बड़े काम हैं उसके! पदार्थों से लेकर सजीव पौधों में, पशुओं में और फिर मनुष्यों में सभी जगह उसकी शक्ति कार्य करती है। पदार्थों के स्तर तक हम उसे विद्युत–चुम्बकीय कह सकते हैं। .....विकास के विभिन्न स्तरों पर हमें ऊर्जा के भिन्न संस्तर मिलते हैं। मानव में वे मंगलमयता, पवित्रता तथा अबोधिता के रूप में विद्यमान हैं।

**प.पू.श्री माताजी, इटली, १९.०९.१९९३**

......श्री गणेश पूरी तरह से निष्कलंक हैं, उनकी सबसे बड़ी शक्ति है **अबोधिता**। अबोधिता ही आपमें नैतिक सूझ–बूझ और नैतिक शक्ति प्रदान करती है। अबोधिता आपका पथ प्रदर्शन करेगी। प्रतिक्रिया न करना अबोधिता की निशानी है। यह अबोधिता किसी चीज़ की आशा नहीं करती, किसी चीज़ की माँग नहीं करती, कुछ भी नहीं चाहती, सर्वत्र केवल आनन्द का प्रसार करती है।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, १६.९.२०००**

.......श्री गणेश की दूसरी बड़ी शक्ति है **पवित्रता**। श्री गणेश ही सभी को शुद्ध करते हैं। यदि आप अपनी पावनता को बिगाड़ते हैं तो श्री गणेश आपको क्षमा नहीं कर पाते। वे कहते हैं नर्क में जाओ। यह नर्क हमारे जीवन में ही है, शराब पीने वाले, धूम्रपान और वेश्यावृत्ति करने वाले लोग नारकीय हैं, और नर्क क्या होता है, यही सब नर्क है। इस नर्क से श्री गणेश आपको कभी नहीं बचायेंगे।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ७.०१.१९९७**

हमारे अन्दर जो श्री गणेश की शक्ति है, उसे जागृत करने में ये सोचना

चाहिए कि हम पवित्र हों और पवित्रता में उनका सुन्दर स्वरूप, जो भोला स्वरूप है, उसे लेना चाहिए।

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, १५.०९.१९८८**

.......श्री गणेश आपको **बुद्धि-विवेक एवं सूझ-बूझ** प्रदान करते हैं। अच्छा चित्त श्री गणेश की देन है। वे विवेक के दाता हैं, ....विवेक स्वतः कार्य करता है, यह एक महान शक्ति है। हमारे अन्दर सुजनता जिसे wisdom जिसे  कहते है, वो ये ही देते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, १५.०१.१९८४**

....... श्री गणेश सदा ही बहुत दृढ होते हैं, यह एक अवधारणा है जो आपके अन्तस में होनी चाहिये। स्वयं में विश्वास होना आवश्यक है, यह श्री गणेश के माध्यम से सम्भव है। श्री गणेश जी आपको पूर्ण **आत्मसम्मान** प्रदान करते हैं, न आप किसी के सम्मुख झुकते हैं और न ही किसी को अपने सम्मुख झुकने पर मजबूर करते हैं।

.......गुरुत्व धरा माँ से आता है, और धरा माँ से ही गणेश की रचना हुई है, अतः अति स्वाभाविक है कि यह गुरुत्व मानव में आ जाता है। यदि आप मध्य में हैं, गुरुत्व बिन्दु पर हैं तो आप किसी गलत दिशा की ओर नहीं झुक सकते।

......प्रकृति की सारी चीज़ें संतुलित हैं। संतुलन बनाये रखने का कार्य श्री गणेश ही करते हैं। वे ही आपको संतुलन प्रदान करते हैं। स्थिर होने पर ही श्री गणेश संतुलन लाते हैं, जब ये दायीं ओर जाने लगते हैं तो कोई निर्माणकारी कार्य शुरु होता है। तब ये जीवन के लिये आवश्यक सभी कार्य करते हैं, परन्तु विपरीत दिशा में चल पड़ें ते विध्वंसक हो उठते हैं। इनके संतुलन के बिना जीवन नहीं चल सकता। इनके दोनों गुणों- सृजनात्मक तथा विध्वंसक का संतुलित होना आवश्यक है।

**प.पू.श्री माताजी, फरवरी-१९९२, आस्ट्रेलिया**

......श्री गणेश का सारतत्व दृढ़तापूर्वक अपनी इच्छा को प्रकट करने की उनकी सामर्थ्य तथा अपनी इच्छा से सम्पूर्ण विश्व को विध्वंस कर सकने की उनकी शक्ति में निहित है। दायीं दिशा में चलने वाला स्वास्तिक उल्टी दिशा में होगा तो यह विनाशकारी हो सकता है।

**प.पू.श्री माताजी, २५.९.१९९९**

.......सांसारिक जीवन और आध्यात्मिक जीवन के बीच की दूरी यदि आपने पार करनी है तो श्री गणेश सर्वप्रथम देवता हैं, विश्वविद्यालय के उपकुलपति

की तरह से वे सभी चक्रों पर विराजमान हैं। वे ही आपको बताते है कि जिस प्रकार आप कार्य कर रहे हैं, वह गलत है। आप मर्यादाओं को यदि तोड़ रहे हैं तो आप श्री गणेश का अपमान कर रहे हैं।

.......शाश्वत निर्मल शिशुस्वभाव के कारण वे हमारे उन सब अपराधों को क्षमा कर देते हैं जो हमने सहजयोग में आने के पूर्व किये होते हैं, पर यदि आप श्री गणेश के गुणों के दायरे में नहीं रहते तो उन्हें सँभालना बहुत कठिन होता है। श्री गणेश के पास क्षमा नहीं है, उनसे क्षमा माँगने का प्रयत्न मत कीजिये, वे कभी क्षमा नहीं करते। श्री गणेश मेरी क्षमा (श्री माताजी) को स्वीकार कर लेते हैं परन्तु मौका मिलते ही वार कर देते हैं।

........यही कारण है कि भयंकर बीमारियाँ हो जाती हैं। यदि आप उनका सम्मान नहीं करते तो नपुंसकता, एड्स तथा अन्य गुप्त रोग हो जाते हैं। आपके मूलाधार पर आपको रोगमुक्त कर पाना बहुत कठिन कार्य है।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ७.०९.१९९७**

यदि आप श्री गणेश जी को नापसंद कार्य करते हैं तो वे पहले तो एक सीमा तक क्षमा करते हैं पर तत्पश्चात् **उनकी अरुचि पुरुषों में शारीरिक और स्त्रियों में मानसिक रोगों के रूप में प्रकट होने लगती है।**

वे प्रकति में भी समस्याएं उत्पन्न कर सकते हैं। **प्राकृतिक प्रकोप भी श्री गणेश का ही अभिशाप है।** जब सब लोग सामूहिक रूप से बुरे कार्य, दुर्व्यवहार करने लगते हैं तो उन्हें दण्ड एवं शिक्षा देने के लिये प्राकृतिक प्रकोप आते हैं। वे पृथ्वी माँ से कहते हैं कि भूचाल लाओ। जिन स्थानों पर पावित्र्य का सम्मान नहीं होता वहाँ भूचाल आते हैं।

......श्री गणेश अपनी माता के प्रति पूर्ण समर्पित हैं, और वे जानते हैं कि उनकी माता आदिशक्ति हैं, वो किसी और को नहीं जानते।

**प.पू.श्री माताजी, १९.०९.१९९३**

श्री गणेश जी की पूर्ण श्रद्धा माँ में ही है, माँ के प्रति पूर्णतया शरणागत होना उनका ध्येय है। माँ के प्रति समर्पण ही उनकी शक्ति है। श्री गणेश जी का गुण है कि वे सदा अपनी माँ को प्रसन्न करने के लिये प्रयत्नशील रहते हैं। व्यक्ति को श्री गणेश की माँ के प्रति सम्मान सीखना होगा। आप जान लें कि यदि आपको लाभ उठाना है, अन्तर्ज्ञान प्राप्त करना है, ऊँचा उठना है तो आपको श्री गणेश से सीखना पड़ेगा कि वे

माँ को प्रसन्न रखने के लिये क्या करते हैं और उनका सम्बन्ध उस माँ से कैसे है, जो पावनी, पोषक तथा फलदायक हैं, फलस्वरूप शनैः शनैः आपका उत्थान होता है।

**प.पू.श्री माताजी, जर्मनी, २७.०७.१९९३**

........बच्चे श्री गणेश को बहुत प्रिय हैं। बच्चों के प्रति श्री गणेश का दृष्टिकोण रखने के लिए आप सावधान रहें। वे सदैव बच्चों की रक्षा करने के लिये उद्यत रहते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ७.९.१९९७**

मोनालीसा का मुख अतिसौम्य है, अत्यन्त मातृत्वपूर्ण, अत्यन्त पावन। कारण ये है कि उनमें गणेश तत्व है, वे माँ हैं। मानव के लिये यह सबसे आनन्ददायी सिद्धान्त है–बच्चों को देखना, उनकी संगति का आनन्द लेना, क्यों? क्योंकि जब आप बच्चे को देखते हैं तो उसका माधुर्य आपके हृदय में उतर आता है। तुरन्त चेहरा खिल उठता है। बच्चों में गणेशतत्व जागृत होता है।

.......श्री गणेश जी के बहुत से गुणों में से एक यह है कि वे अनन्त शिशु हैं तथा अतिविनम्र हैं। वे अति विनोदशील हैं, अपने आकार के बावजूद भी वे हल्के हैं तथा एक चूहे पर बैठ सकते हैं। वे दिखावा नहीं करते। अपने मधुर एवं सर्वसाधारण कार्यकलापों से वे लोगों के जीवन को प्रभावित करते हैं । सहजयोग में हमें समझना है कि किस प्रकार लोगों को प्रभावित करें। आपके आचरण, कार्य–कलाप, उपहार तथा आपके प्रेम की सहज अभिव्यक्ति ही सबका दिल जीत सकती है।

**प.पू.श्री माताजी, २७.०७.१९९३, जर्मनी**

ये श्री गणेश हमारे अन्दर मूलाधार चक्र पर बैठे हैं। गौरी कुण्डलिनी के उत्थान में वे उनके साथ रहकर हर समय उन्हें संरक्षित रखते हैं। इतना ही नहीं चक्र पर जब कुण्डलिनी चढ़ जाती है तो चक्र के मुँह को बन्द करके वे कुण्डलिनी को रोकते हैं। श्री गणेश मूलाधार पर स्थित हमारी सभी इन्द्रियों का नियन्त्रण करते हैं।

......हर एक चक्र पर श्री गणेश कार्य करते हैं। हर चक्र पर जब तक पवित्रता–निर्मलता न आ जाए तब तक कुण्डलिनी का चढ़ना असम्भव है।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, ५.१२.१९९३**

श्री गणेश का कार्य महत्वपूर्ण है क्योंकि वही आपकी प्रगति करते हैं, आपके चक्रों को शुद्ध करते हैं, उनमें प्रकाश डाल देते हैं, और हमेशा प्रकाश की ओर अग्रसर करते हैं। जो सूक्ष्मता आपने सहजयोग में प्राप्त की है, यह गणेश जी का ही काम है।

........**जिस तरह से मैंने गणेश को बनाया है, उसी तरह आपको आत्मसाक्षात्कार देकर मैंने बनाया है,** उसमें कोई फर्क नहीं है। एक ही तरह से, एक ही ढंग से बनाया है। आपमें यदि भोलापन, सादगी, सरलता और विश्वास हो तो ऐसे निर्मल अंतःकरण से श्री गणेश की जागृति हो सकती है। सहजयोग जो करते हैं उनको याद रखना चाहिए कि हमें निराकार में उतरना है। साकार में रहते हुए आप निराकार के पूरे माध्यम बनने वाले हैं, तो सर्वप्रथम हमें अपने अन्दर गणेश को जगाना है। केवल पूजा मात्र ही नहीं, उसे अगर जगाना है तो सर्वप्रथम हमारे अन्दर शुद्धता आनी चाहिये।

..... श्री गणेश की तरह मनुष्य को अपना चित्त स्वच्छ कर लेना चाहिए। चित्त स्वच्छ करने का तरीका ये है कि चित्त कहाँ है?अगर आपका चित्त परमात्मा में है तो शुद्ध है क्योंकि चैतन्य आप में बह रहा है।

..... श्री गणेश की शक्ति अगर अपने अन्दर जागृत करनी हैं तो सबसे प्रथम जानना चाहिए कि हमें निराकार की ओर चित्त देना चाहिए, चैतन्य की ओर चित्त देना चाहिए और जो चैतन्य हमारे अन्दर बह रहा है उसको देखना चाहिए।

..... अपने अन्दर वो गांभीर्य, श्री गणेश की जो शक्ति है वो गांभीर्य, अपने अन्दर वो आनंद का गांभीर्य लायें.....हम गौरी माँ की सहायता से उसकी शक्ति के साथ उस निराकार में उतरें जहाँ हम पूर्णतया आनंद में रहें और हमारे रोम रोम में वो शक्ति ऐसी बहे कि लोग दुनिया में जाने कि सहजयोग ने क्या कमालात किये।

**प.पू.श्री माताजी, १८-९-८८, बम्बई, चै.ल.खंड ५ अंक ९-१०, १९९३**

......सहजयोगी को पूरी तरह से, हृदय से मानना पड़ेगा। इस बात को आप गाँठ बाँध कर रखिये कि श्री गणेश का स्थान है तो मूलाधार चक्र पर, पर जब वे आपके हृदय में आ जाते हैं तभी आत्मस्वरूप होकर के वे चैतन्यमय होते हैं। आत्मा जो है वही श्री गणेश है और वही हमारे हृदय में प्रकाश देता है, तो वही चैतन्य हैं। **जिसने श्री गणेश को अपने हृदय में बिठा लिया, वह तो हर समय निरानंद में डूबा रहता है, उसे और चीजों की परवाह नहीं रहती और रिद्धि-सिद्धि सब उसके पैरों के पास ....श्री गणेशतत्व आज्ञाचक्र के स्तर पर आकर सूक्ष्मातिसूक्ष्म हो जाता है। आज्ञा चक्र पर यह जाना जाता है कि अब इसका आध्यात्मिक आयाम है।**

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, १८-९-१९८८**

जैसा मैंने कहा कण–कण में श्री गणेश विद्यमान हैं, परन्तु आपको उन्हें जागृत करना होगा। उदाहरण के रूप में आपने चैतन्यित जल देखा है। **चैतन्यित का क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि जल में गणेशतत्व को जागृत किया जा रहा है। ये जल जब आपके पेट में जाता है, आँखों में जाता है, या कहीं अन्य आप इसे डालते हैं तो यह कार्य करता है। जिस चीज़ में आप इसे डालते हैं वहाँ यह गणेशतत्व को जागृत करता है।** गणेशतत्व जागृत होकर चीज़ों को समझता है, इनका आयोजन करता है, इन्हें क्रियान्वित करता है। जब आप बन्धन देते हैं तो चैतन्य को गतिशील करते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ८.८.१९८९**

.......श्री गणेश हमारे सबसे बड़े सहजयोगी हैं। उन्हें कभी योग अपनाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। वे तो सदैव योग में होते हैं, **वे हमारे महानतम योगी हैं। उनमें देवताओं का महानतम पद प्राप्त करने की योग्यता है। मैं तो कहूँगी कि वे हमारे महानतम देव हैं, और वास्तव में उनकी पूजा करनी चाहिये। उनके माध्यम से सभी देवों की पूजा हो जाती है और वे प्रसन्न होकर आशीर्वाद देने लगते हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, २५.९.१९९९**

.....इसलिए सर्वप्रथम हर स्थान पर मनुष्य को श्री गणेश को स्थापित करना होता है।

**प.पू.श्री माताजी, बैंगलोर, १३.२.१९९०**

........प्रत्येक चतुर्थी को, जो कि महीने के चौथे दिन पड़ती है, श्री गणेश का जन्म दिन मनाया जाता है। इस विशेष दिन को अंगारकी चतुर्थी अथवा कृष्णपक्ष की चतुर्थी कहते हैं। मंगलवार के दिन आयी इस चतुर्थी का विशेष महत्व होता है।

अंगारिका क्या है? श्री गणेश जलते हुए अंगारो को ठंडा कर देते हैं। कुण्डलिनी भी एक ज्वाला है, इसका उत्थान धधकती ज्वाला सम है। पृथ्वी में गुरुत्वाकर्षण है और ऊपर की ओर जाने वाली कोई भी चीज़ पृथ्वी की ओर खिंचती है, केवल अग्नि ही गुरुत्वाकर्षण के विपरीत ऊपर को जाती है। श्री गणेश दो प्रकार से आपके अन्दर की अग्नि को शान्त करते हैं, वे कुण्डलिनी को शान्त करते हैं, सभी प्रकार के अवगुणों के बावजूद भी व्यक्ति के लिये वे आत्मसाक्षात्कार की प्रार्थना कुण्डलिनी से करते हैं। **वे कुण्डलिनी के बालक हैं और आपके अन्दर वे ही शिशु**

**हैं।** इस सम्बन्ध के कारण वे कुण्डलिनी को समझा पाते हैं कि आप मेरी माँ हैं और कृपया इच्छापूर्ति में मेरी सहायता कीजिये। तब कुण्डलिनी शांत होकर सोचती है कि मेरे बच्चे की इच्छानुसार मैं ऊपर उठूँ। श्री गणेश कुण्डलिनी को बताते हैं कि आप अपने बालक को जन्म दे रही हैं और इस समय आपको क्रुद्ध नहीं होना है। ये कहकर वे कुण्डलिनी को शांत करते हैं ।

.......**कुण्डलिनी श्री गणेश की शक्ति द्वारा ही उठती है। कुण्डलिनी में जो शोले उठते हैं उन्हें शीतलता भी श्री गणेश ही प्रदान करते हैं, अतः एक प्रकार से वे आपके क्रोध को भी शान्त करते हैं।.....**

.......जब कोई राक्षस या दुष्प्रवृति मनुष्य आपको परेशान करता है तो गणों के स्वामी उनका विनाश करते हैं। आपको कुछ कहना या करना नहीं पड़ता। ये गण आपके साथ हैं।

**प.पू.श्री माताजी, गणपति पुले, महाराष्ट्र, २१.११.१९९१**

.......सहजयोगियों का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है कि उनका गणेशतत्व ठीक रहे, इसके बिना तो पूरा सहजयोग आन्दोलन लड़खड़ा सकता है। स्त्री एवं पुरुष दोनों को ही अपनी जीवल शैली में श्री गणेश को सम्माननीय स्थान देना है। यही सर्वोपरि है, हर समय हमें याद रखना है कि श्री गणेश के आशीर्वाद से ही हमें आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हुआ है।

**प.पू.श्री माताजी, २७.७.१९९३**

......अब आप विवेकपूर्ण कार्य करें क्योंकि अब आपके अन्दर श्री गणेश जागृत हैं और वे पूर्णतया विवेकशील हैं, विवेक के दाता हैं। यही कारण है कि वे असुर विनाशक है। हमारी चेतना को उन्नत करके वही हमारे सभी कष्टों को दूर करते है।

......दिशाज्ञान श्री गणेश जी की देन है। श्री गणेश ही सबके अन्दर का चुम्बक हैं। हमारे अन्तःस्थित यह चुम्बक कपटी व्यक्तियों को हमसे दूर भगा कर निष्कपट और अबोध मनुष्यों को हमारी और आकर्षित करता है। निष्कपट बनने का प्रयत्न कीजिए। चातुर्य हमारे लिये आवश्यक नहीं। चातुर्य आपका मानसिक दृष्टिकोण है तथा अबोधिता आपका अन्तर्जात गुण है जो कि सर्वव्यापी शक्ति से सम्बद्ध है।

**प.पू.श्री माताजी, आस्ट्रेलिया, २६.८.१९९०**

श्री गणेश की शक्ति आपमें निहित है, आपको उसका उपयोग करना है।

अपने ह्रदय में श्री गणेश से दया, करुणा तथा क्षमा की याचना करते हुए, विशेषतया उनकी पूजा कीजिए। आइए हम सब अपने पूर्व पाखण्डों, बंधनों, दुर्विचारों तथा दोषपूर्ण जीवन को वायुविलीन हो जाने दें तथा अपनी अबोधिता को, ......अपने अन्तस में प्रवाहित होने दें। आइए हम इन गुणों को उद्घाटित करें।

धरा माँ पर बैठकर श्री गणेश अथर्वशीर्ष पढ़ें तथा श्री गणेश का ध्यान करें। आपकी सभी समस्याओं का अन्त हो जाये़गा।

**प.पू.श्री माताजी, २६.०८.१९९०**

'यह ओंकार(ॐ) क्या है? सारे संसार का कार्य इस ओंकार की शक्ति से होता है, इसे हम लोग चैतन्य कहते हैं। ओंकार ही बह्मचैतन्य का आकार रूप है औऱ उसका मूर्त स्वरूप या विग्रह श्री गणेश हैं। श्री गणेश ही ओंकार हैं। इसी का अवतरण ईसामसीह हैं। यह ओंकार अतिपवित्र है और अनन्त का कार्य करने वाली शक्ति है। आत्मा की शक्ति भी ओंकार की ही शक्ति है।

**प.पू.श्री माताजी, गणपति पुले, २५.१२.१९९०**

# मूलाधार

## श्री गौरी (कुण्डलिनी)

गौरी श्री गणेश की माँ है और अपनी पवित्रता की रक्षा हेतु उन्होंने श्री गणेश को जन्म दिया। इसी प्रकार कुण्डलिनी ही गौरी हैं और हमारे मूलाधार चक्र पर श्री गणेश विराजमान है। मूलाधार गौरी कुण्डलिनी का निवास है और श्री गणेश कुण्डलिनी की रक्षा करते हैं। वे हमारी पवित्रता (अबोधिता) के देवता हैं। केवल श्री गणेश ही इस अवस्था में रहने के लिए समर्थ हैं क्योंकि (पैल्विक) श्रोणीय–चक्र हमारे मल–मूत्र त्याग क्रियाओं को देखता है और वातावरण की गन्दगी के प्रभाव–मुक्त, केवल श्री गणेश ही वहाँ रह सकते हैं। वे इतने शुद्ध तथा अबोध हैं। ..........कुण्डलिनी श्री गणेश की कुँआरी माँ हैं। लोग माँ मेरी के विरुद्ध बोलने लगे हैं कि उन्हें कैसे पुत्र हो सका। इसका कारण हमारी नासमझी है कि परमात्मा के साम्राज्य में सभी कुछ सम्भव है। वे इन बातों से ऊपर हैं तथा पवित्र हैं। श्री गणेश यदि दुर्बल हों तो कुण्डलिनी को सहारा नहीं दिया जा सकता। कुण्डलिनी के जागृति के समय श्री गणेश अपने सारे कार्य रोक देते हैं। मैं कभी–कभी नौ–दस घंटे एक ही स्थान पर बैठी रहती हूँ, उठती ही नहीं।

..... गौरी की शक्ति का सम्मान होना चाहिए क्योंकि वही हमारी माँ हैं, उन्हीं ने हमें पुनर्जन्म दिया है। वे हमारे विषय में सब कुछ जानती हैं, वे अत्यंत सुहृद तथा करुण हैं। उत्थान का तथा चक्रभेदन का सारा कष्ट स्वयं झेल कर वे हमें पुनर्जन्म देती हैं। क्योंकि वे सब जानती हैं, सब समझती हैं, सारी व्यवस्था करती हैं और आपके अन्तर्निहित सारे सौन्दर्य को वे सामने लाती हैं।

..... साक्षात्कार तथा ज्ञान प्रदान करने के लिए हमें उनके (गौरी) प्रति कृतज्ञ होना है तथा याद रखना है कि हर समय हमें उन्हीं को ही जागृत करना है, उनका विस्तार करना है और उन्हीं की पूजा करनी है जिससे हमारा साक्षात्कार तथा उत्थान अक्षत रह सकें। केवल उत्थान ही पूरे विश्व को परिवर्तित करेगा अतः आप गौरी से प्रार्थना करें। शुद्ध करना, आपके हृदय तथा मस्तिष्क को शुद्ध कर आपके योग को अमरत्व प्रदान करना, उन्हीं का कार्य है। ऐसा होने पर ही हम परमात्मा के प्रेम की सुन्दर शक्ति के बहाव का अनुभव अपने अन्दर कर सकते हैं। इसके लिए हर आवश्यक कार्य आप करें, पूर्णतया सामूहिकता में रहें, कुछ भी बलिदान करें और

सहजयोग के प्रचार के लिए भी प्रयत्नशील रहें, क्योंकि जब आप सहजयोग को पेड़ की तरह फैलाएंगे तो इसकी गहनता भी बढ़ेगी। यह कार्य उतनी ही सुन्दरता से होना चाहिए जितना कुण्डलिनी का जागरण। कुण्डलिनी ने आपको कोई कष्ट नहीं दिया, आपके लिए कोई समस्या नहीं बनाई, इससे हमें शिक्षा लेनी है।

..... मैं आप सबसे अनुरोध करूंगी कि अपनी कुण्डलिनी पर चित्त को रखें, उसे हर समय जागृत रखें और अपनी चैतन्य लहरियों को बनाये रखें। न केवल अपनी लहरियों को ठीक रखें बल्कि दूसरों के प्रति अपने दृष्टिकोण में भी परिवर्तन लाएं। उनकी कमियों की बात न करें, उनकी अच्छाइयों को देखें तथा यह देखें कि भला कार्य करने का कितना सामर्थ्य उनमें है। कुंआरी होते हुए भी गौरी कितनी विवेकपूर्ण हैं। इसी प्रकार हमें भी विवेक तथा संवेदनशील बनना है।

**गौरी पूजा, ऑकलैण्ड, ८.४.१९९१**

# स्वाधिष्ठान चक्र

## १. श्री सरस्वती

**श्री सरस्वती का कार्यक्षेत्र शरीर का दायां भाग है। स्वाधिष्ठान पर कार्य करके जब ये बायीं ओर को जाती हैं तो कला-विवेक बढ़ता है। .....कला परमात्मा की ज्योति है। आप इसे न देख सकें पर इसमें चैतन्य लहरियाँ हैं। सुन्दरतापूर्वक रचित तथा विश्व भर में मान्य सभी कुछ सौन्दर्य की दृष्टि से उत्तम है। यदि आप अपने हाथ इसकी ओर फैलायें तो आपको इसमें से लहरियाँ निकलती हुई महसूस होंगी, विशेषकर यदि इस कला की रचना किसी साक्षात्कारी व्यक्ति ने की हो।** ........परन्तु हमने स्वाधिष्ठान का एक ही भाग विकसित किया है, दूसरे भाग को हमने अनदेखा कर दिया है। स्वाधिष्ठान का उपयोग हम केवल पढ़ने-लिखने के क्षेत्र में ही करते हैं और इस क्षेत्र में हमने उन्नति की है।

पर इससे आगे भी एक अवस्था है जिसके विषय में हम सोचते ही नहीं, और इसी कारण यह असन्तुलन है। आप देखते हैं कि कला-साहित्य आदि बहुत है फिर भी लोग कहते हैं कि सरस्वती और लक्ष्मी का संगम नहीं है। गहनता में जाने पर हम इस असन्तुलन का कारण जानना चाहते हैं। सहजयोग में सरस्वती और लक्ष्मी आज्ञा चक्र पर मिलती हैं। आप (कलाकार) कार्य करते रहते हैं पर आपको इच्छा के अनुसार फल नहीं मिलता। आज्ञा पर आकर आप जान पाते हैं कि आपको वह अवस्था क्यों नहीं प्राप्त हुई जो बहुत से कलाकारों को प्राप्त हुई। हम गरीबी में क्यों रह रहे हैं? **दोनों तत्वों को उचित दृष्टि से देखे बिना हम उन्नति नहीं कर सकते। कला (सरस्वती) को लक्ष्मी से जोड़ने के लिए हममें शुद्ध दृष्टि होनी चाहिए।**

जिद्दीपना हमारी (कलाकार की) सबसे बड़ी कमजोरी है। इन्होंने यदि एक हाथी बनाया है तो हाथी ही बनाते चले जायेंगे। किसी एक विशेष तरह से यदि वे गाते हैं तो वैसे ही गाते चले जायेंगे। इसमें परिवर्तन करने के लिए कहें तो वे नाराज़ हो जायेंगे। आज्ञा चक्र पर यदि आप विचार करें तो आपको पता चलेगा कि जिद्दीपना आपको आज्ञा से ऊपर नहीं जाने देता। .....मैं नहीं कहती कि आप कला को बिगाड़ें, पर आप सन्तुलित ढंग से तो कला को देखिए। मैं आपको व्यवहारिकता की बात बताती हूँ कि हममें एक प्रकार का आलस्य है जो हमें जिद्दी बनाता है। कोई नई बात सीखने में

हमारे मस्तिष्क थोड़े से शिथिल हैं। इसी शिथिलता के कारण हम कुछ भी ऐसा नहीं सीख पाते हैं जिससे हम लक्ष्मी से जुड़ सकें। .....अतः सूझबूझ होनी चाहिए तभी मस्तिष्क खुलेगा। जिद्दीपने का कुप्रभाव व्यक्ति के पूरे जीवन पर पड़ता है। सहज में आने पर परिवर्तन आता है। तब सहज ही में हम लक्ष्मी से जुड़ जाते हैं। आज्ञा चक्र को ठीक करने के लिए आवश्यक है कि हम अपने अहं को ठीक करें। हिन्दु, मुसलमान, ईसाई या ब्रह्मसमाजी होने की भावना आधारहीन है। मानव मात्र के अतिरिक्त आप कुछ भी नहीं।

.....सत्य सार यह है कि हम सब एक हैं, एक विराट, एक पूर्णता। इसके विपरीत जाने से आप अकेले पड़ जाते हैं तथा सामूहिकता से अलग हो जाते हैं। यह ठीक है कि पेड़ का एक पत्ता दूसरे पत्ते जैसा नहीं होता फिर भी वे होते तो एक ही पेड़ पर हैं। वे सभी एक विराट के अंग–प्रत्यंग हैं। जब हम एक दूसरे से अलग हो जाते हैं तो हमारा सरस्वती तत्व महासरस्वती तत्व नहीं बन पाता। महासरस्वती तत्व में जब आप रहने लगते हैं तो देख सकते हैं कि आप विराट हैं। ऐसी स्थिति में जब कलाकार कोई सृजन करता है तो लोग इसे हृदय से स्वीकार करते हैं।

कला का जो भी कार्य हम करते हैं वह परमात्मा को समर्पित होना चाहिए। इस भाव से की गई सभी रचनाएं शाश्वत होंगी। परमात्मा को समर्पित सभी कविताएं, संगीत और कला कृतियां आज भी जीवित हैं। आज का फिल्म संगीत आता है और समाप्त हो जाता है परन्तु कबीर और ज्ञानेश्वर जी के भजन शाश्वत हैं। अपने आत्मसाक्षात्कार द्वारा उन्होंने महासरस्वती शक्ति से प्राप्त किया और फिर जो भी रचना उन्होंने की वह बेजोड़ थी। इन रचनाओं ने विश्व को एक सूत्र में बांधा।

तो व्यक्ति को सरस्वती तत्व से महासरस्वती तत्व की ओर जाना चाहिए क्योंकि सरस्वती तत्व यदि बीज हैं तो महासरस्वती तत्व पेड़ है। बिना इस बीज को वृक्ष बनाए आप महालक्ष्मी से नहीं जुड़ सकते। आत्मसाक्षात्कार की प्राप्ति भी महालक्ष्मी का वरदान है। महासरस्वती, महाकाली तथा महालक्ष्मी तीनों शक्तियां आज्ञा पर मिलती हैं। वहाँ पर सूक्ष्म रूप में अहं भी है। अतः व्यक्ति को अन्तर्दर्शन कर देखना चाहिए कि सीमित स्तर पर रहते हुए मैं कैसे पूरे विश्व को प्रकाशित कर सकता हूँ। मैंने बहुत बार कहा है कि अपने अन्दर झांकिए।

बहुत से लोग देवी की तरह मुझे पूजते हैं। पर इसका मुझे क्या लाभ है, मैं तो जो हूँ वो हूँ। मेरे प्रति श्रद्धा से आप ही को लाभ होता है। आप सहजयोग में आए

और सरस्वतीतत्व से महासरस्वती तत्व को प्राप्त किया। मुझ में विश्वास करने मात्र से ही आपको सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहिए। आपको स्वयं में विश्वास करना होगा तथा अपना उत्थान करना होगा।

महासरस्वती में व्यक्ति समर्थ और चुस्त होता है। महाकाली में आप इच्छा करते हैं तथा आत्मसात करते हैं। इन इच्छाओं को कार्यान्वित करना महासरस्वती का कार्य है। कुछ लोग चाहते हैं कि सहजयोग फैले। पर इस दिशा में आपने क्या कार्य किया? आपने कितने लोगों को आत्मसाक्षात्कार दिया? कितने लोगों से सहजयोग की बात की? ........अपनी इच्छाओं को कार्यान्वित कीजिए। कार्य़ शुरू होते ही इच्छाएं समाप्त हो जाएंगी। जो पूरी हो सकें ऐसी इच्छाएं आपको करनी चाहिए क्योंकि असम्भव इच्छाएं करना भयंकर है। .......यह (सरस्वती) पूजा पूरे भारत के लिए है क्योंकि आलस्य का रोग पूरे देश में है। हम बिल्कुल भी चुस्त नहीं हैं। हमारी इच्छाएं तो बहुत दृढ़ हैं पर उनकी पूर्ति के लिए हम कुछ भी नहीं करते। एकत्रित होकर सोचिए कि सहजयोग फैलाने के लिए आप क्या कर सकते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कोलकाता, ३.२.१९९२**

.......हमें सरस्वती की भी आराधना करनी चाहिए। सरस्वती का कार्य बड़ा महान है। महासरस्वती ने पहले सारा अंतरिक्ष बनाया। इसमें पृथ्वीतत्व विशेष है। पृथ्वीतत्व को इस तरह से सूर्य और चन्द्रमा के बीच में लाकर खड़ा कर दिया कि वहाँ पर कोई सी भी जीवन्त क्रिया आसानी से हो सकती है। इस जीवन्त क्रिया से धीरे–धीरे मनुष्य भी उत्पन्न हुआ। परन्तु हमें अपनी बहुत बड़ी शक्ति को जान  लेना चाहिए। वो शक्ति है जिसे हम सृजन शक्ति कहते हैं, क्रिएटिविटी (Creativity) कहते हैं। यह सृजन शक्ति सरस्वती का आशीर्वाद है जिसके द्वारा अनेक कलाएं उत्पन्न हुई। कला का प्रादुर्भाव सरस्वती के ही आशीर्वाद से है। .........हमारे बच्चे स्कूलों में विद्यार्जन कर रहें हैं। पर हमें ध्यान रखना चाहिए कि बिना आत्मा को प्राप्त किए हम जो भी विद्या पा रहे हैं वो सारी अविद्या है। बिना आत्मसाक्षात्कार प्राप्त किए आप चाहे साइंस पढ़ें या अर्थशास्त्र, उसे न तो आप पूरी तरह समझ सकते हैं और न ही उसको अपनी सृजन शक्ति में ला सकते हैं.

बच्चे दो प्रकार के होते हैं एक तो पढ़ने के शौकीन होते हैं और दूसरे जिन्हें पढ़ने का शौक नहीं होता। कुछ बच्चों के पास कम बुद्धि होती है औऱ कुछ के पास अधिक। बुद्धि भी सरस्वती की देन है लेकिन आत्मा से मनुष्य में सुबुद्धि आ जाती है।

बुद्धि से पाया हुआ ज्ञान जब तक आप सुबुद्धि पर नहीं तोलिएगा तो वह ज्ञान हानिकारक हो जाता है।.....आत्मसाक्षात्कार को पाकर जो विद्यार्जन होता है उसमें बराबर नीर–क्षीर विवेक आ जाता है। वे समझ लेते हैं कि कौन सी चीज़ अच्छी है और कौन सी बुरी है। कौन सी चीज़ सीखनी चाहिए और कौन सी चीज़ नहीं सीखनी चाहिए। उससे पहले कोई मर्यादाएं नहीं होती। मनुष्य किसी भी रास्ते पर जा सकता है और किसी भी ओर मुड़ सकता है और कोई भी बुरे काम कर सकता है। ......इन सब चीज़ों का इलाज एक ही तरीके से हो सकता है कि इनके अंदर आप आत्मा का साक्षात्कार करें। आत्मा का साक्षात्कार मिलने से ही सरस्वती की भी चमक आपकी बुद्धि में आ जाती है और जो बच्चे पढ़ने लिखने में कमजोर होते हैं वो भी बहुत अच्छा कार्य करने लग जाते हैं। इसके बाद कला की उत्पत्ति होती है। अगर आप कला को बगैर आत्मसाक्षात्कार के ही अपनाना चाहें तो वह कला अधूरी रह जाती है या वो बेमर्यादा कहीं ऐसी जगह टकराते हैं कि जहाँ उसकी कला का नामोनिशान नहीं रह जाता। तो पहले आत्मसाक्षात्कार को प्राप्त करके ही सरस्वती का पूजन करना एक बड़ी शुभ बात है।

.....आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति की कला अनन्त की शक्ति से प्लावित होती है। तो आप लोग भी आत्मसाक्षात्कारी हो गए हैं। कलात्मक चीज़ हठात आपको निर्विचारिता में उतारेगी और उसका सौन्दर्य देखते ही आपको ऐसा लगेगा कि आप निर्विचार हैं क्योंकि सौन्दर्य देखने से ही चैतन्य एकदम बहने लगता है और उस सौन्दर्य के कारण ही एकदम से आप निर्विचार हो जाते हैं। इसलिए आदिशंकराचार्य ने इसे 'सौन्दर्य लहरी' कहा।

.....कला जब पैसे पर उतर आती है तब उसकी आत्मा ही खत्म हो जाती है। कला आनंदमयी होनी चाहिए न कि उससे कितना पैसा मिले। .......शान्तिमय, ध्यानावस्था में रहे बिना कला सृजन अधूरा रह जाता है या मर्यादा विहीन। आपको कला का तंत्र तथा तकनीक मालूम होनी चाहिए । जब आपको आत्मसाक्षात्कार होता है तभी आपकी सृजन कला बढ़ जाती है।

**प.पू.श्री माताजी, यमुनानगर, ४.४.१९९२**

सरस्वती जी का एक गुण ये है कि वे सूक्ष्म चीज़ों में प्रवेश कर जाती हैं, जैसे पृथ्वी माँ सुगन्ध में परिवर्तित हो जाती हैं। इसी प्रकार से संगीत, लय में परिवर्तित हो जाता है और जिस भी चीज़ का वे सृजन करती हैं वह और अधिक महान हो जाती है,

जिस भी पदार्थ को वे उत्पन्न करती हैं वह सौन्दर्य सम्पन्न हो जाता है। ......

**प.पू.श्री माताजी, धुलिया, १४.०१.१९८३**

## २. श्री ब्रह्मदेव

ब्रह्मदेव स्वाधिष्ठान चक्र पर बैठे हैं और वे इसे शक्ति देते हैं। तो इनका पहला कार्य है कि सृजन कार्य के लिए जो शक्ति चाहिए उसे देते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, निर्मला योग, जुलाई-अगस्त, १९८५**

''ब्रह्मदेव जो हैं......उन्होंने क्रिया करके सारी सृष्टि रची, सुन्दरता से सब कुछ बनाया। पाँच महाभूतों, पंच महाभूतों को लेकर उन्होंने सारी सृष्टि रची।''

**प.पू.श्री माताजी, निर्मला योग, दिल्ली, १७.०२.१९८१**

अब चित्त जो है, ब्रह्मदेव की देन है।

**प.पू.श्री माताजी, पूना, २३-०२-१९९०**

हज़रत अली इस पृथ्वी पर अवतरित हुए, वे ब्रह्मदेव के अवतरण थे।

**प.पू.श्री माताजी, १४-०८-१९८८**

# नाभि चक्र

## १. श्री विष्णु – धर्म एवं विकास के आधार

हमारे अन्दर जो दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है वह है विष्णुतत्व। विष्णुतत्व से हमारा धर्मधारण होता है जो हमारे नाभिचक्र में प्रभावित है। नाभि में हमारे अन्दर धर्मधारणा होती है, जैसे जब आप अमीबा थे तो खाना–पीना खोजते थे, जब आप अमीबा से और ऊँचे इंसान की दशा में आ गए तब आप अपनी सत्ता खोजते हैं। उससे आगे जब आप जाते हैं, तो आप परमात्मा को खोजते हैं। आपके अन्दर ये धर्म है कि आप परमात्मा को खोजें। ये मनुष्य का धर्म है, जानवर नहीं खोज सकते और कोई भी प्राणी परमात्मा को नहीं खोज सकता। ये मनुष्य का धर्म है। इसके दस अंग हैं और ये धर्म का तत्व हमें विष्णु जी से मिलता है।

अब बहुत से लोग सोचते हैं कि विष्णु जी से हमें पैसा मिलता है और विष्णु जी से हमें लाभ होता है, लेकिन ये बात नहीं है कि उनसे सिर्फ पैसा ही मिलता है, क्योंकि ऐसी भावनाएँ हमारे अन्दर बसी हुई हैं कि विष्णुजी हमारे लिये जितना भी क्षेम है वो देते हैं और बाकी कुछ नहीं। सारे क्षेम से क्या लाभ होता है, आप ये देख लीजिये और समझ लीजिए।

अब जैसे एक मछली है, जब उसने पूरी तरह से जान लिया कि हम इस समुद्र से पूरी तरह से संतुष्ट हैं, उसने उस संतोष को पा लिया, तब उसे विचार आता है कि समुद्र को तो सब देख लिया, इसका तो धर्म जान लिया, अब हमें जानना है कि जमीन का धर्म क्या है? तो अब वह अग्रसर होती है। कोई भी मछली अवतरण जो हुआ वो सिर्फ ये हुआ कि मछली ज़समें से बाहर आयी–अब जब वो मछली बाहर आयी–एक ही मछली–वो ही अवतार–जब पहले बाहर आयी तो बहुत सारी मछलियों को अपने साथ खींच लायी, यह सीखने के लिये कि धर्म क्या है। कौन सा धर्म? इस जमीन का धर्म क्या है? पहले इस जमीन के धर्म जानो। इसलिये रेंगते हुए वे मछलियाँ बाहर आयीं।

अब दूसरा धर्म सीखने की बात आ गयी। पहले पानी का धर्म सीखा, अब जमीन का धर्म सीखने लगे। तो रेंगते–रेंगते इन्होंने देखा कि पेड़ भी हैं, इन पेड़ों से पत्ती खा सकते हैं। क्षुधा (भूख) पहली चीज़ होती है जिससे कि आदमी खोजता है, खोजने की शक्ति नाभि में है। आपको इच्छा होती है कि किसी तरह से अपनी क्षुधा को तृप्त करें। तो देखा कि पेड़ हैं, पेड़ के लिये जरूरी है कि भई जो हमारा शरीर है वह ऐसा

ही रेंगता रहे ताकि जो पेड़ पर चीज़ें हैं वो हम खा सकें।

धीरे–धीरे उसने अपनी ओर से चार–पाँच इकट्ठे कर लिये, फिर कछुआ हो गया। अब कछुआ होने के बाद उसने देखा कि ये तो ऊँचे–ऊँचे पेड़ हैं, उसको कैसा करें। फिर अपनी क्षुधा शान्त करने के लिये उसने सोचा चलिये जरा और ऊँचा हो जाएँ, इस तरह से करते–करते वह जानवर हो गया और जानवर होने के बाद उसने सोचा कि अब ज़रा गर्दन उठा कर देखें। जब उसने गर्दन उठाई फिर वह मनुष्य बना, तो वो धीरे–धीरे मनुष्य बना। अब जब मनुष्य बना तो हमारे अन्दर जो ये धर्म हैं, कि हम धर्म की धारणा करते चले गये।

**तो जैसे कि मछली का धर्म था कि वो पानी में तैरती थी, उससे बाद कछुए का धर्म था कि वह रेंगता था ज़मीन पर, उसके बाद जो जानवर थे उनका धर्म था कि वो चार पैर से चलते थे लेकिन उनकी गर्दन नीचे थी। फिर थोड़े–थोड़े जो थे उन्होंने अपनी गर्दन ऊँची कर ली, उसके बाद उन्होंने सारे शरीर को खड़ा कर लिया और दो पैरों पर खड़े हो गये। ये मनुष्य का धर्म है कि वो दो पैरों पर खड़ा है और उसकी गर्दन सीधी है।**

ये सब तो बाह्य में हुआ, बहुत ही ज्यादा जड़ तरीके से, आप समझें। लेकिन तत्व में मनुष्य ने क्या पाया, क्योंकि हर बार जब आप कोई सा भी काम करते हैं तो तत्व भी उस कार्य में उसी तरह से प्रभावित होना चाहिये।......

......**मनुष्य के अन्दर का जो तत्व है वो एक नया विकसित तत्व है और परमात्मा को खोजना है।** इसलिये मनुष्य का प्रथम तत्व है, वो है परमात्मा को खोजना। जो मनुष्य परमात्मा को नहीं खोजता है वह पशु से भी बदतर है और जब वह परमात्मा को खोजने निकला तब उसका नाभि का चक्र पूर्णतत्व हो गया और जब वह परमात्मा को खोजने लगा तब उसने देखा संसार की सारी सृष्टि बनी हुई है, हो सकता है इन तारों में, ग्रहों में और इन सब चीजों में परमात्मा हो। उसकी तरफ उसकी दृष्टि गयी। तब उसे हिरण्यगर्भ याद आया जिन्होंने वेद लिखे। अग्नि आदि पाँच तत्व हैं, उसकी ओर उसका चित्त गया, उसको जानने की उन्होंने कोशिश की, उनको जगाते हुए उन्होंने जो कुछ यज्ञ हवन आदि करने थे वो किये और ब्रह्मदेव–सरस्वती की अर्चना की।

सब कुछ करने के बाद उन्हें लगा कि सब कुछ तो हम जान गए। मानव फिर ज्ञान से विज्ञान की ओर गया और अपने लिये विनाश का सारा सामान बना लिया

और हाथ लगी निराशा और असंतोष। इससे बचने के लिए नशे और बुराईयों का सहारा लिया। कहने का मतलब यह है कि अगर तत्व में ही परमात्मा खोजना सब बात है तो आप समझ सकते हैं कि विज्ञान के रास्ते आपको परमात्मा नहीं मिलेगा। विज्ञान के रास्ते आपने जो कुछ पा लिया है, वह भारी ज्ञान पा लिया है, उससे किसी ने आनन्द को नहीं पाया।

**प.पू.श्री माताजी, १५.०२.१९८१**

.......तो अब मेरी बात समझें, मैं बता रही हूँ। श्री विष्णु जी ब्रह्माण्ड के रक्षक हैं। संसार की सृष्टि करते समय यह जरूरी था कि **एक रक्षक की भी सृष्टि की जाये नहीं तो यह संसार नष्ट हो जाता । यदि मानव को अरक्षित छोड़ दिया जाता तो स्वभाववश उसने इस संसार का कुछ भी कर दिया होता। विकास के दौरान श्री विष्णु ने भिन्न-भिन्न रूप लिये। उन्होंने अपने आस-पास कई पैगम्बरों का वातावरण उत्पन्न किया ताकि वे संसार में धर्म की रक्षा कर सकें,** अतः संरक्षण का आधार धर्म था। इस धर्म में जो कुछ भी स्थापित करना था वह संतुलन से स्थापित करना था, अति में जाना तो मानव की आदत है।

.........संतुलन स्थापित करना धर्म का पहला सिद्धान्त है, बिना संतुलन के व्यक्ति उत्थान नहीं कर सकता।

**प.पू.श्री माताजी, २५.४.१९९४**

श्री विष्णु की विकास प्रक्रिया से किस प्रकार सब कुछ विकसित हुआ, हमें इसका ज्ञान होना चाहिये। श्री विष्णु के दस अवतार हैं। श्री विष्णु बढ़कर विराट ब्रह्माण्ड रूप धारण करते हैं। **हमारे अन्दर विष्णुतत्व की स्थापना अति सुन्दर रूप में है। इसी के परिणामस्वरूप हम घर, सत्ता, प्रेम, बच्चे तथा अन्य सभी प्रकार की वस्तुएँ पाना चाहते हैं। विकास प्रक्रिया, जिसके कारण हम विकसित हुए विष्णुतत्व की सबसे बड़ी देन है।**

........देवताओं का विकास भी मानववत ही हुआ, जैसे विष्णु जी मछली, कछुआ, वामन अवतार के बाद यूनानी पौराणिक कथाओं के पुरुषोत्तम, जीज़स के रूप में विकसित हुए। फिर वे श्री राम के रूप में आये। वे अत्यंत विवेक पूर्ण, सतर्क सावधान, मर्यादित तथा सुन्दर व्यक्ति थे। अपनी सारी शक्तियों को जानते हुए भी उन्हें अपना विष्णु अवतार भूलना पड़ा, अर्थात धर्म सीमाओं में रहते हुए मानव आदर्श

उन्हें स्थापित करना पड़ा। **विकास प्रक्रिया में श्री राम ने अपने जीवन काल में ही उन सारी बातों को व्यवहारिक रूप प्रदान किया।**

.........परन्तु अभी विकास की एक और सीढ़ी की आवश्यकता थी और यह विकास श्री कृष्ण के रूप में, श्री विष्णु के सम्पूर्ण अवतार द्वारा हुआ। श्री कृष्ण का पूर्ण रूप क्या है ? उनका यह कथन कि पूरा विश्व एक लीला है और आपको चीज़ों के विषय में गम्भीर नहीं होना है, परन्तु सहजयोगियों को पहले श्री राम की तरह बनना है। श्री विष्णु को भी पहले श्री राम बनना पड़ा। हमारे लिये अभी तक श्री राम की ही अवस्था है।

........परिवार, सुख–सुविधाएँ, धन आदि सभी वरदान आपको प्राप्त हैं। इन वस्तुओं के लालच में यदि आप आ गए तो आप जाल में फँस सकते हैं। यदि श्री कृष्णसम बनना चाहते हैं तो जीवन केवल लीला या आनन्द मात्र ही नहीं है। **कंस को मारकर पारिवारिक तथा प्रजा की कठिनाइयों का अंत करने के बाद ही श्री कृष्ण ने कहा कि जीवन एक लीला है। इसी प्रकार हमें भी अपने अन्तस के कंस तथा अन्य राक्षसों का वध करना है, तभी हम जीवन को लीला कह सकेंगे। श्री कृष्ण अच्छी तरह जानते थे** कि वे विष्णु अवतार हैं और अपनी पूर्णावस्था तक पहुँच चुके हैं और अब उन्हें लीला की अवधारणा को स्थापित करना है। सहजयोगियों के लिये भी इसी प्रकार से जीवन एक लीला मात्र बन रहा है।

**प.पू.श्री माताजी, १९.०८.१९९०**

.......आज जब सहजयोग धर्म के रूप में स्थापित हो गया है तो हमें धर्म के आधार श्री विष्णु को समझना आवश्यक है। व्यक्ति को समझना है कि धर्म का आधार क्या है? भौतिक पदार्थ की आठ संयोजकताएँ होती हैं, ये नकारात्मक–सकारात्मक और तटस्थ होती हैं। पर मानव में दस संयोजकताएं हैं और हमारे अन्दर इनकी सृष्टि श्री विष्णु जी ने की है, वे ही **इसकी रक्षा, देखभाल और पोषण करते हैं। जब भी वे देखते हैं कि मानव का पतन हो रहा है, तो वे जन्म लेते हैं। विराट उनकी अन्तिम अवस्था है। इस अवस्था में विष्णुतत्व दो हिस्सों में बँट जाता है, एक विराटांगना को चला जाता है और एक विराट को, परन्तु तीसरा तत्व महाविष्णु है जो भगवान ईसा मसीह के रूप में अवतरित हुए। आज के समय में ये तीनों तत्व मुख्यतः सहस्रार में गतिशील हैं।**

विष्णुतत्व में आप देख सकते हैं कि आन्तरिक धर्म का संदेश पूरे विश्व में

फैल रहा है। विकास प्रक्रिया में इन धर्मों को स्थापित करना गुरु का कार्य था और इनकी स्थापना से मानव को धार्मिक बनाया गया था।

धर्म अन्तर्निहित है, इसलिये आपमें विष्णुतत्व का जागृत होना आवश्यक है, फिर यह तत्व तो कई ओर फैलता है **क्योंकि विष्णु ही रोग मुक्त करते हैं।** वे ही धनवन्तरी हैं, एक चिकित्सक, क्योंकि वे ही मानव के रक्षक हैं। यदि हम अपने धर्म की रक्षा करते रहें तो हम बीमार नहीं हो सकते और किसी कारण यदि बीमार हो जाते हैं तो श्री विष्णु जी रोग मुक्त करके हमारी रक्षा करते हैं।

.......**वे यम भी है। अर्थात हमारी मृत्यु के लिये भी वे ही ज़िम्मेदार हैं। निःसन्देह शिव, जीवनतत्व, आत्मा को पहले जाना होता है और तब यम शरीर को सम्भालने के लिये आते हैं। श्री विष्णु ही निर्णय करते हैं कि आपको कहाँ भेजा जाना चाहिये, आपको अधर में लटके रहना चाहिए, या नर्क में या स्वर्ग में भेजा जाना चाहिए। ये सब निर्णय महाविष्णु की सहायता से लिये जाते हैं।** मृत शरीर जब पड़ा होता है, केवल आत्मा को ले कर उचित स्थान पर रखने के समय यह कार्य किया जाता है। मान लीजिये कोई व्यक्ति अधार्मिक है तो वे उसे ले जाकर के नर्क में डाल देते हैं।

श्री विष्णु को धुम्रपान या तम्बाकू पसन्द नहीं है, उन्हें मदिरा, नशीले पदार्थ और मानवकृत बहुत सी औषधियाँ पसन्द नहीं हैं। कोई सहजयोगी यदि प्रतिजीवाणु (Antibiotic) लेता है तो उसे कै(उल्टी) हो जायेगी। जो भी मात्रा या गुण हों, हम बहुत सारी दवाइयाँ नहीं ले सकते। स्वतः ही आप ब्राह्मण की तरह से हो जाएँगे, जो इस प्रकार की चीज़ों से दूर रहता है। तब आप किसी भी ऐसे स्थान पर न तो जाएंगे और न खाना खाएंगे जहाँ लोग सहजयोग के विरुद्ध हैं या अधार्मिक हैं। मुझे बताना नहीं पड़ता कि ऐसा करो, ऐसा न करो। स्वतः ही आप न तो किसी की हत्या करेंगे और न ही कोई पाप करेंगे। परिपक्वता आने पर आप कोई ग़लत कार्य नहीं करेंगे, केवल अपने गुणों का आनन्द लेंगे। **जिन ख़ूबियों को हम गुण कहते हैं वे विष्णुतत्व हैं।**

विष्णुतत्व को स्थापित करना हमारे लिये कठिन कार्य नहीं है। हमें मात्र इसे पहचानना है। उन्नत होने पर अधर्म शनैः शनैः क्षीण हो जाता है। भूतकाल समाप्त हो गया है उसे भूल जाएं। विष्णु जी के सारे तत्व अब आपमें जागृत हो गए हैं, आप इनका उपयोग करें।

**प.पू.श्री माताजी, १३.०७.१९९४**

## २. श्रीलक्ष्मी – क्षेमप्रदायिका

## <u>लक्ष्मी तत्व</u>

आज के दिन (दिवाली) हम लक्ष्मीतत्व अर्थात अपनी नाभि की पूजा करते हैं। वे इतनी हितकर एवं करुणामय हैं कि कभी किसी पर दबाव नहीं डालतीं, जबकि प्रायः धनी व्यक्ति दूसरे लोगों पर दबाव डालने का प्रयत्न करते हैं। यहाँ तक की सहजयोग में भी यदि कोई थोड़ा सा बेहतर स्थिति में है तो वह अन्य लोगों को पीछे धकेलने, आयोजन करने और उनपर नियन्त्रण करने का प्रयत्न करता है। ऐसे लोग सोचते है कि धन से उन्हें ये शक्ति प्राप्त हुई है। परन्तु स्वयं लक्ष्मी जी तो कमल पर खड़ी हैं। उनके व्यक्तित्व का सौन्दर्य तो इस चीज़ से झलकता है कि वे फूल पर खड़ी है और किसी को कष्ट नहीं देतीं। **लक्ष्मी की पूजा करने वाले लोगों को याद रखना होगा कि उन्हें किसी पर भी न तो दबाव डालना है न किसी को धकेलना है, न किसी पर नियन्त्रण करना है और न किसी को बर्बाद करना है। लक्ष्मीजी के चरण कमल पर हैं और अपने दो हाथों में उन्होंने कमल पकड़े हुए हैं। कमल सौन्दर्य का प्रतीक है और उनका गुलाबी रंग प्रेम का प्रतीक। ये प्रतीक हैं कि जिस व्यक्ति के पास लक्ष्मी हो, धन हो, उसे कमल की तरह से उदार होना चाहिए।** कमल छोटे से भँवरे को भी अपने अन्दर सोने का स्थान देता है। अपनी पंखुड़ियों से ढककर उसे सुख पहुँचाता है और उसकी रक्षा करता है।

धनवान व्यक्ति का स्वभाव ऐसा ही होना चाहिए अन्यथा बहुत शीघ्र उसका धन चला जाएगा और या हमेशा उसके मन में पैसे की असुरक्षा बनी रहेगी। यहाँ वहाँ वह अपना धन छिपाना चाहता है। ऐसे व्यक्ति में कोई गरिमा नहीं होती, उसका घर सुखकर नहीं होता क्योंकि उसे हर समय यही चिन्ता लगी रहती है कि गलीचा खराब हो जाएगा, ये खराब हो जाएगा, वो ख़राब हो जाएगा। घर ऐसा होना चाहिए जहाँ आप स्वतन्त्रतापूर्वक रह सकें। भौतिकता की पकड़ आते ही हम लक्ष्मीतत्व से बाहर हो जाते हैं। हमारे अन्दर मौजूद वैभव–सौन्दर्य समाप्त हो जाता है.....। **लक्ष्मीतत्व को समझा जाना जाहिए कि भौतिक पदार्थ आपके प्रेम को अभिव्यक्ति करने के लिए हैं।** अन्य लोगों के लिए आप क्या कुछ कर सकते हैं, उन्हें कितना सुख दे सकते हैं? मैंने कुछ लोगों में देखा है कि गृहलक्ष्मियाँ कालीनों आदि की ही चिन्ता में लगी रहती

हैं! इतना निम्नस्तर तो मानवीय भी नहीं है। उनके लिए धन का अर्थ बैंक में पैसा होना है। **लक्ष्मीतत्व का अर्थ अपने प्रेम की अभिव्यक्ति करना है।**

उनका (श्रीलक्ष्मी) एक अन्य प्रतिकात्मक गुण ये है कि वे आपकी माँ हैं और माँ तो बस देती ही देती हैं, वे तो बस आनन्ददायिनी हैं। मैं हमेशा सोचती हूँ कि आपको क्या दूँ? मैं बहुत सी चीजें आपको देना चाहती हूँ, ऐसा करना मुझे अच्छा लगता है। आनन्द देने जैसा कुछ नहीं है....। अपने अन्तर्वलोकन में हमें महसूस करना होगा कि हम भौतिकता में बहुत अधिक फँस गए हैं, परन्तु इसका अर्थ ये भी नहीं है कि हम धनार्जन न करें, काम न करें, आलसी बन जाएं या ये कहें कि श्री माताजी ने कहा है कि कमल खाना शुरु कर दो। समझने का प्रयत्न करें कि आप जो पैसा कमा रहे हैं वह देने के लिए है, अन्यथा आपकी स्थिति बिगड़ जाएगी। धन के विषय में आप हमेशा असुरक्षित रहेंगे और सुरक्षित होने के स्थान पर धनवान लोग हमेशा काँपते रहेंगे। ऐसे धन का क्या लाभ है जिसके कारण आप घबराए रहें? इससे बेहतर तो ये है कि थोड़ा धन हो और सहजयोग का आनन्द लें।

**लक्ष्मीतत्व धनलोलुपता नहीं है।** किसी बन्दर या गधे पर यदि आप बहुत से नोट लादें तो क्या आप उसे लक्ष्मीपति कहेंगे? किसी व्यक्ति के पास कार है परन्तु यदि वह व्यक्ति हमेशा घबराया और परेशान रहता है तो क्या आप उसे लक्ष्मीपति कहेंगे? इस प्रकार के धन में कोई गरिमा नहीं होती, यह पागलपन है। इसमें न तो कोई संस्कृति है और न माधुर्य। कुछ भी नहीं है।......ऐसे घरों में मैं यदि कुछ खा लूं तो मुझे उल्टी हो जाती है। मेरी लक्ष्मी को यह सब पसन्द नहीं है। आपको सोचना चाहिए कि आप दूसरे लोगों को क्या दे सकते हैं, उनके लिए क्या कर सकते हैं। सहजयोगी की यह पहली पहचान है। मैंने सुना है कि लोग सहजयोग के लिए भी पैसा नहीं खर्चना चाहते। सहजयोग सबके उद्धार के लिए है......आप यहाँ विश्व की सहायता करने के लिए हैं, स्वयं को सजाने के लिए या सहजयोग का लाभ उठाने के लिए नहीं। **सहजयोग पहले आपको लक्ष्मी की झलक देता है और फिर आपको धन प्रदान करता है। आपको आशीर्वाद (धन) प्राप्त हो जाता है। यह पहला प्रलोभन है जिससे आप नीचे गिर सकते हैं, आपका पतन हो सकता है। इसके बाद दो अन्य प्रतीक हैं। अपने हाथों से वे देतीं हैं। आप यदि एक दरवाजा खोलेंगे तो हवा नहीं आएगी, दूसरा दरवाजा खोलना होगा। उन्हें तो देना ही है। अतः जिन लोगों का लक्ष्मीतत्व** विकसित हो चुका है वो सोचते है कि उन्हें क्या देना है, परन्तु अपनी

बेकार की चीज़ें वे किसी को नहीं देते। अपने मित्रों को यदि आप व्यर्थ की चीज़ें देते हैं तो अपनी गहराइयों को किस प्रकार छू पाएंगे? **सर्वोत्तम चीज़ें उपहार देनी चाहिएं......देने की कला यदि हम सीख लें तो यह अत्यन्त सुन्दर एवं आनन्ददायी है.....।**

परिधि रेखा पर दोनों शक्तियाँ कार्य करती हैं, एक ओर कंजूस लोग हैं तथा दूसरी ओर अनुचित लाभ उठाने वाले। आप यदि उदार बनते हैं तो अनुचित लाभ उठाने वाले लोग भी मौजूद हैं......कभी–कभी आपका शोषण भी हो जाता है, कोई बात नहीं।......आपने कोई पाप नहीं किया। शोषणकर्ता ने पाप किया है और वही कष्ट उठाएगा।......आपको जितनी हानि हुई है उससे दसगुना प्राप्त होगा। सहजयोगियों को यह बात समझनी होगी कि अब हमें परमेश्वरी शक्ति का आशीर्वाद प्राप्त है, हम अकेले नहीं है। यह शक्ति हर समय हमें आशीर्वादित कर रही है। अतः देने का अर्थ ये है कि मेरा कुछ भी नही है। 'मेरा' शब्द को जाना होगा।

सहजयोग में भी मैं यह देखकर हैरान थी कि लोग अपने बच्चों से लिप्त होते हैं, किसी और की सोचते ही नहीं। यह दूसरे प्रकार का स्वार्थ है, केवल अपने बच्चों के विषय में सोचना, किसी और के विषय में नहीं। फिर यही बच्चे असुर बनकर आपको सबक देंगे.....इन बच्चों को यदि आप सामूहिक बनाएं, दूसरे लोगों को देने का आनन्द इन्हें सिखाएं तो बचपन से ही ये अत्यन्त उदार बन जाएंगे। उदारता अवतरणों का गुण है। ऐश्वर्य, ऐश्वर्य का अर्थ केवल धन या वैभव नहीं है, उदारता है। ये धन से ऊपर की बात है और यही किसी अवतरण और सहजयोगी की पहचान है।

......**लक्ष्मीतत्व किस प्रकार आता है। लक्ष्मी जी का जन्म समुद्र से हुआ। उनका जन्म समुद्र से क्यों हुआ? समुद्र को देखें, यह सर्वत्र अपने पंख फैलाता है, पूरी तरह से तपता है ताकि बादल बनें, जाकर ऊँचे पर्वतों से टकराएं और बारिश हो और यह जल नदियों के रूप में वापिस आए। सारा नमक समुद्र अपने में संजोए रखता है। ईसामसीह ने कहा है, आप नमक हैं। नमक क्या है? आपके भोजन को स्वाद प्रदान करने वाला नमक आपका गुरुतत्व है।** यदि आप कंजूस हैं तो न तो आप गुरु बन सकते हैं न अगुआ। कल्पना करें कि आप कितने भयानक लगेंगे ! लक्ष्मीतत्व का जन्म गुरुतत्व से हुआ और इस गुरुतत्व का उदय आपमें तब होता है जब आपमें लक्ष्मीतत्व जागृत होता है। केवल धन मिलने से नहीं,

जब आप सोचने लगते हैं कि मैं दूसरे व्यक्ति को कौन सी अच्छी चीज़ दे सकता हूँ, मुझे अन्य लोगों के लिए क्या करना चाहिए, किस प्रकार अपने प्रेम की अभिव्यक्ति करनी चाहिए?

.....गुरुतत्व के बिना धर्म नहीं होता। किसी अन्य के विषय में आप नहीं सोचते–माता, पिता, सामूहिक कार्य, विश्व। अतः आप तुच्छ बनते चले जाते हैं। परन्तु जब लक्ष्मीतत्व का उदय होता है तो अन्य लोगों के लिए प्रेम की प्रथम झलक आपमें आ जाती है। मैं जानती हूँ कि आप सब मुझसे प्रेम करते हैं, परन्तु यह आप सबकी माँ (श्रीमाताजी) का पूर्ण प्रतिबिम्ब नहीं है। **आपको परस्पर प्रेम करना होगा, प्रेमपूर्वक परस्पर सभी कुछ बाँटना होगा। प्रेम का ये प्रथम प्रकाश जब आप पर मंडराने लगता है तो इस प्रकाश में चलने से आप अत्यन्त उदार बन जाते हैं और अपनी उदारता का आनन्द लेते हैं।**

आपको मध्य में आना होगा क्योंकि इस प्रेम ने प्रकट होना है और पूर्ण विनम्रता में अपनी अभिव्यक्ति करनी है। ऐसा आप अपने लिए कर रहे हैं, किसी अन्य के लिए नहीं। मैंने यदि किसी की धन से सहायता की है तो मैं अपनी सहायता कर रही हूँ क्योंकि उस व्यक्ति का कष्ट मुझसे देखा नहीं जाता। मैं इसके बारे में कोई बात नहीं करना चाहती क्योंकि मैं इसका आनन्द ले रही हूँ।

हमें समझना होगा कि क्या हम बच्चों को बढ़ने दे रहे हैं? क्या वे उदार है? क्या वे सन्त है? क्या वे सुन्दर हैं? वे अन्य लोगों से किस प्रकार बात करते हैं? क्या उनमें आत्मविश्वास है? कल उन्हें सहजयोगियों का नेतृत्व करना है।......हमें अपने बच्चों को दीपकसम बनाना होगा। दीपक अन्य लोगों के लिए जलता है, अपने लिए नहीं। दिवाली के दीप हम किसलिए जला रहे हैं?अन्य लोगों के लिए। क्या हम इन दीपकों से सीख रहे हैं? क्या हमारे बच्चे अन्य लोगों के लिए जलेंगे? आप तो उन्हें स्वार्थी बना रहे हैं। हज़ारों बच्चे जन्म लेंगे और चाहे वे जन्मजात आत्मसाक्षात्कारी ही हों, आप उन्हें बिगाड़ देते हैं.....बच्चों को तुच्छ न बनाएं।

महालक्ष्मीतत्व अन्तिम बार फातिमा के रूप में अवतरित हुआ। फातिमा गृहलक्ष्मी थीं। वे घर पर ही रहती थीं, घर रह कर उन्होंने अपने बच्चों तथा सत्य और धर्म के लिए लड़ने वाले अपने पति की देखभाल की।

**महालक्ष्मी तत्व क्या है?** सर्वप्रथम यह बलिदान है, सत्य की बेदी पर

अपने बच्चों का बलिदान। यद्यपि सहजयोग में ऐसा कुछ करने की आवश्यकता नहीं है, आप आशीर्वादित लोग हैं। परन्तु यदि आप अपने बच्चों का पालन पोषण ठीक प्रकार से नहीं करेंगे तो कल को बच्चे आपको ही इसका जिम्मेदार ठहराएंगे। बच्चे यदि जिद्दी हैं, दूसरे लोगों से अपना प्रेम नहीं बाँटते तो तुरन्त उन्हें रोकना होगा। बच्चे बहुत चतुर होते हैं, ये पता लगते ही कि उन्हें आपका प्रेम मिलना बन्द हो जाएगा, वे एकदम सुधरने लगेंगे।

महालक्ष्मी के तीन सिद्धान्त हैं और चौथा मेरा अपना है। मेरा कार्य बहुत ऊँचा और विशाल है तथा उसके लिए गहन धैर्य की आवश्यकता है। मैं यदि किसी का बलिदान करुं तो यह कार्यान्वित न होगा। मुझे स्वयं को और अपने परिवार का बलिदान करना होगा। मुझे अपनी नींद, सुखचैन तथा अन्य चीज़ों का बलिदान करना होगा। इसलिए मुझे बलिदान देना होगा कि आपके महालक्ष्मी तत्व की अभिव्यक्ति हो सके, इसकी जड़ें लग सकें ......आप यदि अपनी सुख सुविधाओं से, आलस्य, स्वार्थ आदि से चिपके रहेंगे तो इन सब चीजों के होते हुए भी आप उनका आनन्द नहीं ले सकेंगे। केवल अपने आनन्द की चिन्ता करने से बाकी सभी कुछ समाप्त हो जाता है। प्रेम की शक्ति हर चीज़ पर स्वामित्व प्रदान करती है– आपके शरीर, मन, अहंकार सभी चीज़ों पर। आप यदि किसी से निर्वाज्य प्रेम करते हैं तो यह प्रेम की शक्ति आप पर सभी चीज़ों की, सभी विचारों की वर्षा करती है, इसके आनन्द का एक एहसास मात्र। यह आनन्द उस व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं है जो शुद्ध प्रेम नहीं है। प्रेम की शक्ति ही आनन्द का स्रोत है और प्रेमविहीन हृदय को यह आनन्द से परिपूर्ण नहीं करती।

**प.पू.माताजी, इटली, २१.१०.१९९०**

भारत में लक्ष्मी को धन की देवी के रूप में मानते हैं। लक्ष्मी के इस प्रतीक का वर्णन वास्तविकता में सन्तों और पैगम्बरों ने किया परन्तु बाद में लोग न तो प्रतीक को समझ पाये औऱ न इसके पीछे छिपी वास्तविकता को। उन्होंने सोचा कि लक्ष्मी धन–दौलत, वैभव, सोना–चाँदी, हीरे तथा धन–धान्य का प्रतीक हैं। उन्होंने धन की पूजा शुरु कर दी और इस प्रकार वैभव की प्रतीक देवी को तोड़–मरोड़ कर दर्शाया गया।

**देवी लक्ष्मी का प्रतीक बिल्कुल भिन्न है। सर्वप्रथम जिसके पास लक्ष्मी है, उसे माँ होना पड़ता है।** उसमें एक माँ का प्रेम होना चाहिए। माँ पूर्ण शक्तियों का स्रोत है, उसमें धैर्य, प्रेम एवं करुणा होते हैं। तो व्यक्ति जब करुणा में नहीं होता और अपने धन को दूसरो के हित के लिये उपयोग नहीं करता, तब तक धन के होते हुए भी वह

प्रसन्न नहीं रह सकता। आज लोग अपने धन से अपना ही विनाश करने में लगे हैं। क्रोध, वासना और लोभ की अभिव्यक्ति के लिये वे अपने धन का दुरुपयोग कर रहे हैं। स्वयं को उत्कृष्ट दर्शाने के लिये आडम्बरों पर वे अपना धन बर्बाद कर रहे हैं, पथ भ्रष्ट होते जा रहे हैं।

**प.पू.माताजी, रूस, १२.११.१९९३**

मैंने बताया है कि लक्ष्मी जी कैसे बनी हैं। उनके हाथ में दो कमल हैं। गुलाबी रंग द्योतक होता है 'प्रेम' का। जिस मनुष्य के हृदय में प्रेम नहीं है वह लक्ष्मीपति नहीं हो सकता। लक्ष्मीपति का घर ऐसा होना चाहिये जैसे कमल का फूल होता है। कमल के फूल के अन्दर भौरे जैसा शुष्क जानवर भी आश्रय पाता है, लक्ष्मी जी उसे अपने अन्दर स्थान देती हैं, अपनी गोद में उसे सुलाती हैं। उसको शान्ति देती हैं। लक्ष्मी जी एक हाथ से दान देती हैं और एक हाथ से आश्रय देती हैं। **लक्ष्मीपति का अर्थ होता है कि उसका दिल बहुत बड़ा है, कंजूस आदमी लक्ष्मीपति नहीं हो सकता। बादशाहत होनी चाहिए। जिस आदमी की तबियत में बादशाहत नहीं होती उसे लक्ष्मीपति नहीं कहना चाहिये।**

......जब आदमी यह सोचता है कि 'ये मेरे ही अपने है। इनके साथ जो कुछ करना है मैं अपने साथ ही कर रहा हूँ', तब असल में लक्ष्मीतत्व जागृत हो जाता है।

कमल के जैसा उसका रहन–सहन, उसकी शक्ल होनी चाहिये। ऐसा आदमी सुरभित होना चाहिये। कमल का फूल आपने देखा है, उसमें हमेशा थोड़ी सी झुकाव रहती है। कमल कभी भी तनकर खड़ा नहीं होता। बहुत ही नम्र होना चाहिये। जो दिखाते फिरते है कि हमारे पास यह चीज़ है, वो चीज है, फलाना है, ढिकाना है, वो लक्ष्मीपति नहीं हो सकता। मातृत्व उनमें होना चाहिये, माँ का हृदय होना चाहिये। तब उसे लक्ष्मीपति कहना चाहिये।

लक्ष्मी जी दूसरे हाथ से दान देती हैं। दानत्व वाला आदमी जो होता है वो अपने लिये कु छ भी संग्रह नहीं करता, आदमी जो होता है वो अपने लिये कुछ भी संग्रह नहीं करता, दूसरों को बाँटता रहता है, देता रहता है, देने में ही उसको आनन्द आता है, लेने में नहीं.....

......यह आदमी लक्ष्मीपति है। वो यह बताता नहीं, जताता नहीं, दुनिया को दिखाता नहीं कि मैंने उनके लिये इतना कर दिया–वो कर दिया–एकदम चुपके से करता है।

परमात्मा ने लक्ष्मी को एक स्त्री स्वरूप–एक माँ स्वरूप बनाया हुआ है। एक कमल पर लक्ष्मीजी खड़ी हो जाती हैं। सोचिये कि एक कमल पर खड़ा होना माने आदमी में भी कितनी सादगी होनी चाहिये, बिल्कुल हल्का, उसमें कोई दोष नहीं।

जब आपके अन्दर लक्ष्मीतत्व जागृत हो जाता है तो पहली चीज़ आती है– संतोष। ऐसे तो किसी भी चीज़ का अंत नहीं है। आप जानते हैं कि economics में कहते हैं कि wants in general are insatiable (सामान्यतः किसी भी चाहत की तृप्ति नहीं होती) आज आपके पास ये है, कल वो चाहिये। आदमी पागल जैसा दौड़ता रहता है, उसकी कोई हद ही नहीं होती, आज यह मिला, तो वो चाहिए, वो मिला तो ये चाहिये।

लेकिन (लक्ष्मीतत्व की जागृति से) आदमी को संतोष आता है, उसे संतोष आ जाता है। **जब तक आदमी को संतोष नहीं आएगा वह किसी चीज का मज़ा नहीं ले सकता क्योंकि संतोष जो है वह वर्तमान की चीज़ है, present की, आशा जो है, भविष्य की चीज़ है, future की और निराशा जो है वो past की चीज़ है– भूतकाल की। आप जब संतोष में खड़े होते हैं तो पूर्णतया संतुष्ट, तब आप पूरा उसका आनन्द उठा रहे हैं जो आपको मिला हुआ है।**

संतुष्ट करना लक्ष्मी जी का गुण है, लक्ष्मी जी से आशीर्वादित होने का अर्थ है संतुष्ट होना। आप जान लेते है कि धन, सत्ता तथा अन्य बेकार की चीज़ों के पीछे मारे–मारे फिरना मूर्खता है। धन है तो उसका सद्उपयोग करते हैं दूसरों की मदद करने में।

**प.पू.माताजी, लक्ष्मीतत्व, चै.ल. २००४**

......**जहाँ शराब चलती है, उनके घर तो लक्ष्मी जी का सुख नहीं हो सकता। खुशहाली शराब के बिल्कुल विरोध में रहती है। शराब तो इतनी हानिकारक चीज़ है, इस तरफ से अगर बोतल आयी तो उस तरफ से लक्ष्मी जी चली गयीं**-सीधा हिसाब। आप विचारिये इस कदर गंदी चीज़ें हम लोगों ने अपना ली हैं जिसके कारण हमारा लक्ष्मीतत्व चला गया। लक्ष्मीतत्व को जागृत करना बहुत कठिन है इन आदतों के साथ...

**जब हम...तांत्रिक विद्या और मैली विद्या करते हैं तो लक्ष्मी जी दूसरे पैर से चली जाती हैं। जिस घर में तांत्रिक विद्या शुरु हो जाएगी लक्ष्मी जी दूसरे पैर से**

**चली जायेंगी।.....जितनी मैली विद्या, जितनी भूत विद्या, प्रेत विद्या श्मशान विद्या और यह दुष्ट गुरुओं का जो चक्कर चला....जब तक आप इनको हृदय से निकाल नहीं दीजिएगा... आपके समाज की गरीबी कभी हट नहीं सकती क्योंकि लक्ष्मी जी ऐसे स्थान में बसती नहीं।**

जो कुछ (आपके पास) है उसमें समाधान से परमात्मा को दृष्टि देकर के अपने लक्ष्मीतत्व को आप जागृत करें.... उस जागृति के लिए आपको बुद्धि के कोई घोड़े दौड़ाने की जरूरत नहीं कोई विशेष सोचने की जरूरत नहीं केवल कुण्डलिनी का जागरण होते ही यह कार्य हो सकता है।

तो जो पैसा लक्ष्मी स्वरूप है उस पैसे को आप प्राप्त करो।

**प.पू.माताजी, नई दिल्ली, १५.०३.१९८४**

लक्ष्मी जी अपनी नाभि में निवास करती हैं और उनके संतुष्ट होने पर ही महालक्ष्मीतत्व जागृत होता है। तभी आप आगे देखने लगते हैं।.....नाभि में ही विष्णु जी का जो स्थान है और विष्णु या लक्ष्मी जिसे हम लक्ष्मी, उनकी जो शक्ति मानते हैं, इसी में हमारी खोज शुरु होती है। जब हम अमीबा में रहते हैं तो खाना खोजते हैं, ज़रा उससे बड़े जानवर हो गए तो हम कुछ संग साथी ढूँढते हैं, उसके बाद इंसान बन गए तो हम सत्ता खोजते हैं, हम इसमें पैसा खोजते हैं। लेकिन सत्ता और पैसा पा लेने के बाद भी आदमी के अंदर वो जो है संतोष, नहीं आ पाता। किसी चीज़ में वह आनंद नहीं मिला जिसे वह समझ रहा था कि सत्ता और पैसा मिल जाने के बाद अपने आप ही मिल जायेगा। उसे वह आनन्द नहीं मिला जिसे वह वास्तव में खोज रहा था, तब आनन्द की खोज शुरु हो जाती है।

आनन्द की खोज तो नाभि चक्र से ही शुरु होती है, इसी खोज के कारण आज अमीबा से इंसान बने हैं, और इसी खोज के कारण **जिससे हम परमात्मा को खोजते हैं, हम इंसान को पहचानते हैं – इसी खोज के कारण। इसलिए लक्ष्मी बहुत ज़रूरी चीज़ हैं।**

चार कार्य–**उदारता, सुरक्षा, अतिथि सत्कार तथा करुणा** करने के पश्चात् आप एक अन्य दिशा की ओर चल पड़ते हैं....आप जिज्ञासु बन जाते है, जिज्ञासु, जिसके द्वारा आप जीवन का सच्चा संतोष प्राप्त करते हैं।

इस लक्ष्मीतत्व को एक उच्चतत्व, एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व या हम कह सकते

हैं महालक्ष्मीतत्व सम्पन्न होना होगा।

**प.पू.माताजी, ९.०३.१९७९**

....हमारे अन्दर देवी लक्ष्मी जी बसती हैं। जब हमारी कुण्डलिनी नाभि पर आ जाती है, जब हमारी कुण्डलिनी खुल जाती है तो हमारे अन्दर वो जागृति आ जाती है जिससे लक्ष्मी जी का स्वरूप हमारे अन्दर प्रकट हो जाता है।

**प.पू.श्री माताजी, ३१.०३.१९८५**

....श्री लक्ष्मी जी और सभी देवियाँ महिलाएँ है, इनकी विशेषता क्या है? अपना स्वभाव एवं गुणों का आशीर्वाद लोगों को देना। लक्ष्मी जी के वरदानों में से धन भी एक है, **धन जब आवश्यकता से अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है तो लक्ष्मीतत्व का सम्मान नहीं होता।**

**प.पू.श्री माताजी, काना जोहारी, २.०७.२०००**

## श्री माताजी द्वारा अष्टलक्ष्मियों की व्याख्या

**सर्वप्रथम आद्यलक्ष्मी** हैं। आद्य अर्थात आदि (Primordial) लक्ष्मी। जैसे मैंने आपको बताया था, वे समुद्र से निकलीं थीं। तो ऐसा ही है। जैसे ईसा–मसीह की माँ को मेरी या मरियम कहा गया क्योंकि उनकी उत्पत्ति सागर से हुई, कोई नहीं जानता कि उनको मेरी क्यों कहा गया। मेरा नाम नीरा था–अर्थात जल से उत्पन्न हुई।

**दूसरी विद्यालक्ष्मी** हैं। ये आपको परमेश्वरी शक्ति को संभालने की विधि सिखाती हैं। ये बात अच्छी तरह समझ ली जानी चाहिए कि लक्ष्मी हैं क्या? वे करुणाशीलता हैं, अतःवे आपको सिखाती हैं कि इस शक्ति का सुहृदतापूर्वक किस प्रकार उपयोग करें। अब, यही आशीर्वाद आपको प्राप्त हो रहा है कि आप आद्यलक्ष्मी की शक्ति को प्राप्त करें जिसके द्वारा आप जलसम बन जाएं। जल क्या है? जल में स्वच्छ करने की शक्ति है, जो मैं हूँ। जल के बिना हम जीवित नहीं रह सकते। अतः पहला आशीर्वाद ये है कि आपके चेहरे तेजोमय हो उठते हैं। आद्यलक्ष्मी की कृपा से स्वच्छ होकर आप सभी गम्भीर चीजों को, प्रकाश को तथा विस्मृत चीजों को देख सकते हैं।

**विद्यालक्ष्मी,** मैंने आपको बताया, ज्ञान प्रदान करती हैं। ज्ञान, कि परमेश्वरी शक्ति को सुहृदतापूर्वक किस प्रकार संभालना है। मैं एक उदाहरण दूंगी, मैंने बहुत से लोगों को बन्धन देते हुए देखा है, उनका तरीका अत्यन्त बेढबा होता है। नहीं

इस प्रकार नहीं किया जाना चाहिए। ये लक्ष्मी है। अतः यह कार्य अत्यन्त सावधानीपूर्वक करें। आप मुझें देखें, मैं कैसे बन्धन देती हूँ। मैं इस प्रकार कभी नहीं करती। कर ही नहीं सकती। सम्मानपूर्वक, गरिमापूर्वक। वे सम्मानपक्ष का प्रतिनिधित्व करती हैं और गरिमापूर्वक यह कार्य करने का ज्ञान आपको प्राप्त होता है। सभी कार्य गरिमापूर्वक किए जाने चाहिएं, ऐसे तरीके से कि गरिमामय लगें। कुछ लोग बातचीत करते हैं परन्तु उनमें गरिमा नहीं होती। सहजयोग का ज्ञान देने वाले कुछ लोगों में भी गरिमा बिल्कुल नहीं होती और वे अत्यन्त गरिमाविहीन तरीके से बात करते हैं। परमेश्वरी ज्ञान को गरिमापूर्वक किस प्रकार उपयोग करना है, यह आशीर्वाद विद्यालक्ष्मी प्रदान करती हैं।

**सौभाग्य लक्ष्मी –** वे आपको सौभाग्य प्रदान करती हैं। सौभाग्य का अर्थ पैसा नहीं है, इसका अर्थ है पैसे की गरिमा। पैसा बहुत से लोगों के पास है परन्तु यह पैसा वैसा ही है जैसे गधे के ऊपर धन का लदा होना। ऐसे व्यक्ति में आपको गरिमा बिल्कुल नहीं दिखाई देती। सौभाग्य का अर्थ केवल पैसा ही नहीं हैं। इसका अर्थ है खुशकिस्मती, हर चीज़ में अच्छा भाग्य। आशीर्वाद का अत्यन्त गरिमापूर्वक उपयोग ताकि आप भी आशीर्वादित हों और आपसे मिलने वाले लोगों को भी सौभाग्य का वह आशिष प्राप्त हो।

**अमृतलक्ष्मी –** अमृत का अर्थ है अमृत, जिसे लेने के बाद मृत्यु नहीं होती अर्थात चिरंजीवी होना। अमृतलक्ष्मी आपको अनन्त जीवन प्रदान करती हैं।

**गृहलक्ष्मी –** परिवार की देवी हैं। जरूरी नहीं कि सभी गृहणियाँ गृहलक्ष्मी हों। वे कलहणियाँ भी हो सकती हैं, भयानक महिलाएं भी हो सकती है। परिवार के देवता का निवास यदि आपके अन्दर है, केवल तभी आप गृहलक्ष्मियाँ है अन्यथा नहीं।

इसके बाद **राज्यलक्ष्मी** हैं – वे राजाओं को गरिमा प्रदान करती हैं। राजा यदि नौकर की तरह से व्यवहार करे तो उसे राजा नहीं कहा जाना चाहिए। उन्हें अत्यन्त सम्मानपूर्वक व्यवहार करना होगा। राजा की गरिमा, उसका प्रताप, राजलक्ष्मी का वरदान है। परन्तु सहजयोगी राजा नहीं होता, वह अत्यन्त शानदार तरीके से चलता है, भव्य तरीके से कार्य करता है, और अत्यन्त भव्यतापूर्वक लोगों से व्यवहार करता है। अपने सभी कार्यों में वह इतना गरिमामय होता है कि लोग सोचते हैं कि देखो राजा आ रहा है।

**सत्यलक्ष्मी –** सत्यलक्ष्मी के माध्यम से आपको सत्य की चेतना प्राप्त होती है। उसके अतिरिक्त भी सत्यचेतना विद्यमान है परन्तु इस सत्य को आप अत्यन्त भव्य तरीके से प्रस्तुत करते हैं। ये सत्य है, आप इसे स्वीकार करें, ऐसे नहीं। सत्य से आपने लोगों को चोट नहीं पहुँचानी। फूलों में रखकर आपने लोगों को सत्य देना है। ये सत्यलक्ष्मी है।

निःसन्देह ये सभी लक्ष्मीतत्व हमारे हृदय में स्थापित शक्तियाँ हैं परन्तु वास्तव में इनकी अभिव्यक्ति हमारे मस्तिष्क में होनी चाहिए। मस्तिष्क विराट है, यह विष्णु है जो विराट बनते हैं। अतः ये सभी शक्तियाँ, विशेषरूप से यह शक्ति (सत्यलक्ष्मी) मस्तिष्क में है। अतः मस्तिष्क स्वतः इस प्रकार कार्य करता है कि लोग सोचते हैं कि यह कोई विशिष्ट व्यक्तित्व है। सहजयोगी को हमेशा समझ होती है कि आनन्द किस प्रकार उठाना है। सहजयोगी कभी चिन्तित नहीं होता। आपको भी आनन्द लेने के योग्य होना चाहिए। मान लो आप कोई बेढबी, या हास्यास्पद चीज़ देखते हैं तो आपको हँसना और आनन्द लेना चाहिए। ये बहुत कठिन कार्य है। बेढबी चीज का आनन्द लेना। कोई यदि अटपटा या भद्दा हो तो उस पर गुस्सा नहीं करना चाहिए, उसे आनन्ददायक बना लेना चाहिए। ये महानतम चीज़ है, मेरे विचार से यह महानतम आशीर्वाद है जो वे आपको प्रदान करती हैं– आनन्द लेने की शक्ति। अन्यथा आप जो चाहे प्रयत्न करें, लोग किसी चीज़ का आनन्द नहीं लेते, क्योंकि वे इतने अहंवादी हो गए हैं कि उनके मस्तिष्क में कुछ घुसता ही नहीं। उन्हें तो किसी छड़ी से गुदगुदाना पड़ेगा।

**योगलक्ष्मी –** जो आपको योग प्रदान करती हैं – ये शक्ति आपके अन्दर हैं। आपके अन्तःस्थित लक्ष्मी की शक्ति अर्थात आप अन्य लोगों को योग प्रदान करते हैं। जब आप अन्य लोगों को योग की शक्ति प्रदान करते हैं, मेरा अभिप्राय है कि जब आप अपनी योग शक्ति का उपयोग करते हैं तब बन्दर, गधे या घोड़े की तरह से व्यवहार नहीं करते। गरिमापूर्वक ये कार्य करते हैं। इस प्रकार इस कार्य को करें कि यह अत्यन्त गरिमामय हो, अर्थात अत्यन्त भद्र, गरिमामय एवं भव्य तरीके से। तो यह इस प्रकार है। अब जब आपने इस प्रकार इसकी स्तुति गान किया है, इस शक्ति से आपको आशीर्वादित कर दिया गया है। अब यदि आप चाहें तो भी गरिमाविहीन आचरण नहीं कर सकते। आपको स्थिर कर दिया गया है। हार्दिक धन्यवाद!

**प.पू.माताजी, कोमो, इटली, २५.१०.१९८७**

## <u>श्री आदिगुरु – गुरुतत्व</u>

गुरु के बिना, एक सुधारक शक्ति के बिना, परमात्मा के दैवी विधान पर चलना बहुत कठिन है, क्योंकि मानवीय चेतना और परमेश्वरी चेतना के बीच बहुत बड़ी दूरी है और केवल पूर्ण गुरु ही इस दूरी को पूर्णतया समाप्त कर सकता है। **ऐसे गुरु को खोजना चाहिये जो आपको परमात्मा की बात बताये, जो आपकी आत्मा की पहचान कराये। गुरु की एक ही पहचान है, जो मालिक से मिलाये।**

**प.पू.श्री माताजी, सितम्बर १९८१, चैतन्य लहरी २००१**

.....गुरु क्या करता है? आपके अन्दर जो कुछ भी है, आपके अन्तर्निहित बहमूल्य गुण, आपके ज्ञान के लिये वह उन्हें खोजता है। वास्तव में सारा ज्ञान, सारी आध्यात्मिकता, सारा आनन्द तो आपके अन्दर विद्यमान है। **गुरु तो आपको, केवल आपके ज्ञान और आपकी आत्मा के प्रति चेतन करते हैं।** गुरु का कार्य है कि वह आपको इस बात का ज्ञान करवाए कि आप क्या हैं। यह पहला कदम है कि वह आपके अन्दर वह जागृति आरम्भ करता है जिसके द्वारा आप जान जाते हैं कि बाह्य विश्व एक भ्रम है, तब आप अन्तस में ज्योतित होने लगते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २३.०७.२०००**

..... सद्‌गुरु का स्थान अपने शरीर में है, जो हमारे शरीर में हमारी नाभि के चारों तरफ है। ...सद्‌गुरु का स्थान आपमें बहुत पहले से स्थापित है। गुरुतत्व अनादि है। आपमें अदृश्य रूप से तीन मुख्य शक्तियाँ कार्यान्वित हैं–महाकाली, महासरस्वती एवं महालक्ष्मी की शक्ति। हमारा **गुरुतत्व इन तीनों के समन्वय से बना है, यह गुरुतत्व हमारे अन्दर परमेश्वर ने बहुत ही नूतन स्वरूप में स्थापित किया है।**

श्री दत्तात्रेय हमारे आदिगुरु हैं। **श्री दत्तात्रेय में श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु, श्री महेश, इन तीनों देवताओं की शक्ति समन्वित है।** यह शक्ति आपके भवसागर में समाविष्ट है। सम्पूर्ण विराट पुरुष में भी ये शक्ति समाविष्ट है। ये शक्ति **अनेक बार जन्म लेती** है। आदिकाल से देखा जाये तो श्री आदिनाथ इसी शक्ति के अवतार हैं। तीनों शक्तियों से निर्माण होने वाली ये प्रथम शक्ति है। इस शक्ति में धर्मान्धता नहीं है। सारे धर्मों का जो सार है, या सर्वधर्मों की नूतनता या सर्वधर्मों का भोला–भाला जो रूप है

वह इस तत्व में शामिल है।

.....जग में जितने भी सद्गुरु हुए हैं उन्होंने सहजयोग का मार्ग अपनाया था। सभी गुरुओं ने समाज में रहकर लोगों की सेवा की और उन्हें धर्म सिखाने का प्रयास किया, पर उस जमाने के लोगों ने इन सभी धर्मगुरुओं की न सुनकर उन पर इतने अत्याचार किये, उन्हें मारा तक, उन्हें समाज से बाहर कर दिया। अब उन सभी को लोग पालकी में लेकर घूमते हैं, जलूस निकालते हैं। जब सद्गुरु प्रत्यक्ष जिंदा थे तब उनके साथ बुरा व्यवहार किया और उनकी मृत्यु के बाद उनकी जय जय क्यों? यह बिल्कुल सद्गुरु तत्व के विरोध में है।

**प.पू.श्री माताजी, २५.०७.१९७९**

हमारे यहाँ बहुत से सन्त हुए, बहुत से सूफ़ी हुए, ताओ लोग भी हुए, ज़ेन भी हुए। **भिन्न प्रकार के आत्मसाक्षात्कारी लोग पृथ्वी पर आए, उन सबको कष्ट उठाने पड़े. उन्हें सताया गया, किसी ने उनको नहीं समझा। परन्तु अब समय आ गया है कि आप लोग सत्य को जान लें। सत्य जो नीरस नहीं है, सत्य जो करुणा है, सत्य जो सबको अपने में समेट लेता है, सत्य जो हमारे अस्तित्व का पूरा दृश्य दर्शाता है** कि हम इस पृथ्वी पर क्यों है? हमारा उद्देश्य क्या है और हमें क्या करना चाहिए?

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ३.६.२००१**

....... बहुत पहले सद्गुरु दो-तीन शिष्य रखते थे, परन्तु जब तक यह बात सर्वशक्तिमान मनुष्य तक, सारे जनसमुदाय तक नहीं पहुँचती तब तक उसका कोई अर्थ नहीं है। अब यह ज्ञान आम जनता तक पहुँचने का समय आया है क्योंकि **आपकी अन्तर्रचना ज्ञान मिलने के लिये परिपूर्ण है,** केवल आपका कनेक्शन मेन से लग जाये बस।

......समाज में परमेश्वर प्राप्ति के लिये तथा कुण्डलिनी शक्ति जागृत करने के लिये किसी सद्गुरु रूपी माँ की कार्यपद्धति में दो प्रकार (विशेष बातें) हैं – एक सद्गुरुतत्व तथा दूसरा मातृप्रेम। ऐसी माँ का हृदय प्रेमशक्ति व परमेश्वर की करुणा से पूरा-पूरा भरा हुआ होता है, ऐसा बहता हुआ प्यार और परमेश्वर की शक्ति बच्चों को देने के लिये वह माँ उत्सुक रहती है। परन्तु इसी के साथ सद्गुरुतत्व की सारी बातों का पूरे उत्तरदायित्व के साथ पालन करना पड़ता है।

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, २५.०९.१९७९**

..... मैंने स्वयं को अत्यन्त सामान्य बनाया है क्योंकि मुझे आपके सम्मुख

इस प्रकार प्रतीत होना है कि आप दैवी विधानों को जान सकें। मेरे लिये कोई विधान नहीं है। आप ही के लिये मैं यह सब कार्य करती हूँ और आपको छोटी–छोटी चीज़ें सिखाती हूँ क्योंकि आप अभी बच्चे हैं। यह आवश्यक नहीं कि गुरु त्यागी हो और जंगलों में रहता हो। वह सामान्य गृहस्थ भी हो सकता है, वह राजा भी हो सकता है। व्यक्ति के जीवन की बाह्य अभिव्यक्तियों का कोई महत्व नहीं है। गुरु जब तक दैवी विधान को आत्मसात नहीं कर लेता उसके सांसारिक पद का कोई महत्व नहीं।

..... मैं पुन: कहती हूँ कि आपको दैवी विधान आत्मसात करने चाहिएं। आइए देखें वे दैवी विधान कौन से हैं, क्या हैं?

**१.** पहला विधान यह है कि आप किसी को **दु:ख नहीं दे सकते।** मनुष्य किसी को सुधार तो सकता है लेकिन हानि पहुँचाने का अधिकार उसको नहीं (अहिंसा का नियम)। किसी भी मनुष्य के प्रति हिंसा न करें, उसे किसी प्रकार का शारीरिक कष्ट न पहुंचाएं या कष्ट देने के लिये उसकी भावनाओं को चोट न पहुँचायें।

**२.** दूसरा विधान यह है कि आपको **अपनी टाँगों पर खड़ा होना है** और यह समझना है कि आपकी एकाकारिता सत्य से है और आप सत्य के साक्षी हैं अर्थात आपने सत्य को देखा है, आप जानते हैं कि सत्य क्या है और असत्य से आप समझौता नहीं कर सकते। –––स्वयं को परखें, ये केवल औरों को बताने की बात नहीं है, आपको सत्यनिष्ठ होना है।

**३.** गुरु बनने के लिये सहजयोगी को जो तीसरा कार्य आवश्यक है वह है अपने अन्दर **निर्लिप्सा उत्पन्न करना।** .....एक बार जब आपका चित्त आत्मा पर स्थापित हो जाएगा तो अनावश्यक चीज़ों के प्रति आपकी लिप्सा स्वत: ही घटने लगेगी। निर्लिप्तता (भाव) अवश्य विकसित होनी चाहिए। निर्लिप्तता यह है कि आप ही अपने पिता हैं, आप ही अपनी माता हैं, आप ही सभी कुछ हैं, आपके लिये आपकी आत्मा ही सभी कुछ है। आपने अपनी आत्मा का ही आनन्द लेना है।

**४.** चौथा दैवी विधान यह है कि **'चरित्रवान जीवन' बितायें।** ये आदेश गुरुओं ने दिये थे। सुकरात और उसके बाद मोजिज अब्राहम, जनक, मोहम्मद साहब और श्री साईंनाथ सभी ने कहा था कि आपको चरित्रवान जीवन जीना चाहिए। .....ईसा मसीह ने कहा था कि आपको परगमन नहीं करना (Thou shall not commit adultery) उन दिनों में यह सोचना कितनी दूर दृष्टि थी! यह आँखों की

पकड़ है–पकड़ है। यह आनन्द–विहीन व्यर्थ का आचरण है। इसके कारण चित्त विचलित हो जाता है। लोगों की ओर अत्यन्त प्रेम, सम्मान एवं गरिमा से देखें, उन्हें ताकें नहीं।

**५.** गुरु को संग्रह नहीं करना चाहिये, उसके पास अधिक संग्रहित वस्तुएं नहीं होनी चाहिए। गुरु के पास ऐसी चीजें होनी चाहिए जो उसके जीवन को प्रतीकात्मक बनाएं और यह दर्शाएं कि वह व्यक्ति अत्यन्त दार्शनिक है।

दैवी नियमों को बताने वाला गुरु पूर्ण होना चाहिए, जो अपने शिष्यों की समझ को इतना उन्नत कर सके कि वे इन नियमों को आत्मसात कर सकें।

**प.पू.श्री माताजी, सितम्बर, १९८१, चैतन्य लहरी २००१**

**..... गुरुत्व एक अवस्था है, पद नहीं, क्योंकि पद तो बाह्य है और किसी को भी दिया जा सकता है। यह एक अवस्था है अर्थात अन्तर्जात अस्तित्व का गुरुत्व स्तर तक विकसित होना, इसके बिना कैसे यह अवस्था प्राप्त की जा सकती है? सहज रूप से हम किस प्रकार इसे प्राप्त करें? कुछ गुण हमें प्रारम्भ से ही विकसित करने चाहियें।**

**१.** ध्यानावस्था में निर्विचार होना पहला गुण है। ध्यानावस्था में आप थोड़े समय के लिये निर्विचार रह सकते हैं, शनैः शनैः यह समय बढ़ता रहना चाहिए। यह एक अवस्था है। आपको निर्विचारिता का मंत्र मिला है, अब निर्विचार रहते हुए आप साक्षी बनना शुरु कर दें। साक्षी बनते ही जिस वस्तु को आप देखते हैं वह आपको पूर्ण विचार देगी–अपनी स्थूलता का भी और सूक्ष्मता का भी। देखते ही आप इसे समझ जाएंगे। सहजयोगी होने के नाते यह आपका ज्ञान बन जाता है।

**२.** गुरु शब्द का अर्थ है **गुरुत्व**। आपके गुरुपद की द्वितीय अवस्था में गुरुत्व की अभिव्यक्ति होना आवश्यक है। गुरुत्व तो आपके अन्दर है, ज्योंही आप साक्षी बनते हैं आपका गुरुत्व स्वतः ही प्रकट होने लगता है। यह क्रोध या गम्भीरता के रूप में नहीं प्रकट होता है, इसकी अभिव्यक्ति तो इस प्रकार होगी कि सभी कुछ अत्यन्त गरिमामय और तेजपूर्ण बन जाएगा।

यह गुरुत्व चुम्बक की तरह कार्य करता है। आपको चुम्बकीय स्वभाव, चरित्र और व्यक्तित्व प्राप्त हो जाता है। चुम्बकीय व्यक्तित्व तुरन्त दर्शाता है कि यह अपनी शक्ति को प्रकट कर रहा है। जब आप उस उच्चावस्था में होते हैं तो बिना कुछ

कहे मात्र एक दृष्टिपात से आप अपनी अभिव्यक्ति करते हैं। अपने गुरुत्व से हम अन्दर की गहनता को छू लेते हैं और यह हमारे अन्दर दैवी शक्ति को चलाती हैं, तथा इसकी अभिव्यक्ति करती हैं। जब तक हम अपने अन्दर की उस गहनता को छू नहीं लेते सहजयोग भी 'हरे रामा हरे कृष्णा' की तरह है।

**३. आत्मसम्मान** गुरु के लिये आवश्यक है। यह अति महत्वपूर्ण आवश्यकता है। आत्मसम्मान प्राप्त करने के लिये हमें अन्तर्दर्शन करना होगा और जानना होगा कि अब मैं पहले जैसा नहीं हूँ, मैं एक आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति हूँ। मुझमें प्रेम, करुणा, सूझ–बूझ, रचनात्मकता तथा दूसरों को साक्षात्कार देने की शक्तियाँ हैं। .... सहजयोग में हम अपने बारे में नहीं सोचते क्योंकि स्वचेतना हमें अहम् दे सकती है पर हममें आत्मसम्मान होना चाहिए–'मैं एक गुरु हूँ। मैं कोई सड़कछाप साधारण व्यक्ति नहीं हूँ। मैं सत्य के तट पर हूँ, मैंने अंधे तथा मूढ़ लोगों को बचाना है।'

.....उस समय एक शान्ति आपमें छा जाएगी। किसी भी विपत्ति के समय आप अत्यन्त शान्त हो जाएंगे। यह भी एक अवस्था है। **यदि कोई चीज़ अप्रसन्न या परेशान करती है तो मौन के उस धुरे पर पहुँचने का प्रयत्न कीजिए। यह शान्ति (मौन) आपको वास्तव में शक्तिशाली बना देगी। यह मौन केवल आपका नहीं है क्योंकि इस अवस्था में आप ब्रह्माण्डीय मौन में होते हैं, आपका सम्बन्ध ब्रह्माण्ड चलाने वाली दैवीशक्ति से होता है।**

..... यदि आप केवल **मौन** हो जाएं तो समझ लें कि आप परमात्मा से जुड़ गये, आप परमात्मा के साम्राज्य में बैठे हैं। यह मौन इस बात की निशानी है कि निःसन्देह अब आप परमात्मा से जुड़ गये, आप अब शान्त हैं क्योंकि अब परमात्मा आपके हर कार्य को सम्भालेंगे। आपको कुछ नहीं करना पड़ेगा। केवल निर्विचार रहना होगा, मजबूरन नहीं, यह भी एक अवस्था है। किसी समस्या या उथल–पुथल के आते ही एकदम आपका चित्त कूद कर मौन पर चला जाएगा और ऐसा होते ही आप सर्वव्यापक शक्ति से जुड़ जाएंगे।

..... प्रेम की यह सर्वव्यापक शक्ति क्या है? क्या यह हमारे चारों ओर प्रवाहित कोई ऊर्जा है या किसी प्रकार की नदी या आकाश? यह वास्तविकता की सम्पूर्णता है, बाकी चीज़ें असत्य हैं। वास्तविकता इतनी कार्यकुशल है कि यह कभी असफ़ल नहीं होती।

**४.** आपको अपना आत्मसम्मान तथा सन्तुलन बनाये रखना है। एक बार सन्तुलन में आने के बाद एक गुरु का कार्य दूसरों को सन्तुलन देना है। यह जलवायु, प्रकृति एवं वातावरण, मनुष्यों तथा पूरे समाज को सन्तुलित करता है, यह सन्तुलन देने के लिये ही है। यह सन्तुलन भी गुरुत्व से ही आता है। राजा हो या भिखारी पर यदि वह गुरु है तो हर हाल में यह पूर्ण सन्तुलन में होगा। कोई चीज़ उसे ललचा नहीं सकती। प्रलोभन, लालच और वासना से परे की अवस्था में जब आप पहुँचते हैं तो समस्याएं समाप्त हो जाती हैं। फिर ये तपस्विता तो आपके अन्दर है, यह अन्तर्जात है।

**५.** एक गुरु तथा सहज गुरु में अन्तर है, साधारण गुरु अति क्रोधी होते हैं पर क्रोधित होना सहजगुरु का कार्य नहीं है। यहाँ तो एक दूसरे के लिये **प्रेम तथा करुणा** है, न कोई राजनीति और न कोई स्पर्धा। किसी को कुछ भी कठोर कहने का अधिकार सहजयोगियों को नहीं है। जिस करुणा, माधुर्य और हितेच्छा से हम दूसरे लोगों से व्यवहार करते हैं, यही गुरुपद है। **आपकी माँ ने यही दिया है। हर मनुष्य के हित की चिन्ता आपको होनी चाहिए। आपको मातृसुलभ, अति मधुर, करुणामय, समझदार तथा क्षमाशील होना है।**

**६.** क्या अच्छा है इसका निर्णय आपने अपने **अनुभव** से उन्नत होकर करना है। अब आप अच्छाई, धैर्य, करुणा, धर्मपरायणता, प्रेम तथा हितकारिता के अवतार हैं। मेरे से भी अधिक आनन्द आपमें हैं क्योंकि आप मानव हैं और मनुष्यों के विषय में जानते हैं। आप हिम्मत न हारें, कार्य को करें और परिणाम देखें। आपके अतिरिक्त कोई इस कार्य को नहीं कर सकता। आत्मसम्मान तथा पूर्वानुमान होना चाहिये। यदि आप गुरु हैं तो अपनी शक्तियों को धारण कीजिए।

हम कहते है **श्री माताजी मैं स्वयं का गुरु हूँ,** आप केवल अपने ही गुरु नहीं हैं, पूरे विश्व के गुरु हैं। हमारा गुरुत्व सामूहिक है। हम से कुछ भी नहीं बच सकता। हम पूर्णतया अजेय हैं। हममें सारी शक्तियाँ हैं, अब हमें धारण करना है। एक बार जब आप उन्हें धारण करने लगेंगे तो हैरान रह जाएंगे कि एक संत, एक गुरु, एक व्यक्ति जिसे अपने गुरुत्व का आभास है, उसके सम्मुख कोई खड़ा नहीं हो सकता।

..... आपका ज्ञान अत्यन्त उच्चस्तर का, सूक्ष्म एवं महान है, इसके फलस्वरूप आप अहंग्रस्त नहीं होते। आपकी नम्रता एवं सहजता आपको एक विशेष धार

प्रदान करती है जो हर हृदय में उतर सकती है। इस प्रकार आप सत्य प्रेरक बन सकते हैं।

**७.** विश्वास रखें, आपकी एकाकारिता उस महान शक्ति के साथ है जो सर्वशक्तिमान परमात्मा है। परमात्मा के विषय में वादविवाद करने की क्या आपमें बुद्धि है? परमात्मा में आपका विश्वास अडिग होना चाहिए। जिस व्यक्ति को परमात्मा पर विश्वास है वह स्वयं परमात्मा है। **गुरु को ब्रह्मचैतन्य कहते हैं।** जब आपका विश्वास पूर्णतया स्थिर हो जाता है कि सर्वशक्तिमान परमात्मा हैं और मैं उनका दूत हूँ और जब आपमें यह विश्वास पूर्णतया दृढ़ हो जाता है **तब आप गुरुपद पर आरूढ़ हो जाते हैं।**

..... आप उस स्थिति को प्राप्त करें कि सदा गुरुपद अवस्था में रहें। जहाँ भी आप हैं, किसी भी पद पर आप हैं, आप कुछ भी करें, सर्वशक्तिमान परमात्मा का दृढ़ विश्वास तो अपनी अभिव्यक्ति करेगा और प्रकट भी होगा। यह परमात्मा की तरह कार्य करेगा। एक बात हमेशा याद रखनी है कि परमात्मा के साम्राज्य में, सर्वशक्तिमान परमात्मा की शक्तियों में हमारा पूर्ण विश्वास होना चाहिए।

**प.पू.श्री माताजी, १९.०७.१९९२**

..... देखो, गुरु शब्द का उद्‌भव चुम्बकीय आकर्षण से है। वह व्यक्ति जिसमें चुम्बकीय शक्ति हो और जो जिज्ञासुओं के चित्त को आकर्षित कर सके वही गुरु हैं। इसका अर्थ वज़नदार, या सुस्थिर व्यक्ति भी है जो कि अत्यन्त गहन हो, जिसमें ज्ञान हो और जो पृथ्वी माँ की तरह से कार्य करे। पृथ्वी माँ की आकर्षण शक्ति भी चुम्बकीय कहलाती है। ......गुरु में भी यही गुरुत्वाकर्षण होना चाहिए। गुरुत्वाकर्षण का अर्थ है अपनी और अपनी जिम्मेदारियों की गम्भीर समझ। .....अत: गुरु को अति स्थिर होना आवश्यक है।

**प.पू.श्री माताजी, गुरुपूजा, कबेला, १९९८**

..... **आपमें अपने वज़न का गुरुत्वाकर्षण होना चाहिए–अर्थात चारित्रिक वज़न, गरिमा का वज़न, आचरण का वज़न, श्रद्धा का वज़न और आपके प्रकाश का वज़न। तुच्छता और मिथ्याभिमान से आप गुरु नहीं बनते। घटियापन, अभद्र भाषा, घटिया मज़ाक, क्रोध एवं गुस्सा ये सब दुर्गुण पूरी तरह से त्याग देने चाहिए। अपनी गरिमा अपनी वाणी के माधुर्य से लोगों को प्रभावित करें।**

..... जिस प्रकार से मैं आपको प्रेम करती हूँ उसी प्रकार से आप सब को प्रेम करें। जिस प्रकार मैं आपको समझाती हूँ, आप उन्हें समझाने का प्रयत्न करें।

निश्चित रूप से मैं आपको प्रेम करती हूँ, परन्तु मैं निर्मला हूँ, मैं प्रेम से परे हूँ, यह बिल्कुल ही भिन्न अवस्था है। आप तो बहुत ही अच्छी स्थिति में हैं, क्योंकि कोई भी गुरु अभी इतनी बारीकियों में नहीं गया। इसके अतिरिक्त मैं सारी शक्तियों का स्रोत हूँ–सारी शक्तियों का। आप मुझसे ये सब शक्तियाँ प्राप्त कर सकते हैं, जिस भी शक्ति की आपको इच्छा हो।

मैं इच्छा मुक्त हूँ, परन्तु आपकी जो भी इच्छा होगी वह पूर्ण होगी, यहाँ तक कि मेरे लिये भी आपको ही इच्छा करनी होगी। यह बात देखें कि किस प्रकार मैं आपसे बँधी हूँ।

.....बात इतनी गहन है। ......इन सुन्दर स्थितियों में आपको वास्तव में पूर्ण सम्पन्नता प्राप्त कर लेनी चाहिए। गुरु बनने के लिए आपके सम्मुख कोई भी समस्या नहीं होनी चाहिए।

**प.पू.श्री माताजी, सितम्बर, १९८१**

..... आप भूल जाते हैं कि आप आत्मसाक्षात्कारी हैं। अपने चैतन्यज्ञान को अपनी रक्षा के लिये उपयोग करें, क्योंकि नकारात्मकता आपके समीप ही है। ---- नियमों तथा अनुशासन की रचना करें। आपको दूसरों से प्रेम करने का ज्ञान हो जाएगा। यही तत्व है।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ४.०७.१९९३**

नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोर पराक्रमे। महाबले महोत्साहे
महाभयविनाशिनि।।१७।।
त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्धिनि।।१८।।

महारौद्ररूप, अत्यन्त घोर पराक्रम, महान बल और चढ़े हुए उत्साह वाली हे देवि! तुम महान भय का नाश करने वाली हो, मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ। तुम्हारी ओर देखना भी कठिन है। शत्रुओं को भयभीत करने वाली हे दुर्गे! मेरी रक्षा करो।

**दुर्गा सप्तशती, देव्या कवच, १७-१८**

# अनाहत (मध्य)

## <u>शक्तिप्रदायनी श्री जगदम्बा</u>

देवी जगदम्बा सारी सृष्टि की माँ हैं। ये जगदम्बा जो हैं ये भक्तों का रक्षण करती हैं। भक्त लोग जो भगवान को खोजते हैं, उनका रक्षण करती हैं, उनके लिए उन्होंने राक्षसों का वध किया, उनका रक्त पिया, उनके भूत खा लिये, उन्होंने संहार करके इन लोगों को ठीक किया।

**प.पू.श्री माताजी, निर्मल योग, सितम्बर–अक्तूबर, १६.३.१९८४**

..... उन दिनों देवी का स्वरूप माया–स्वरूपी नहीं था। वे अपने वास्तविक स्वरूप में थीं जिससे शिष्यों में भयंकर भय उत्पन्न हो गया। उनके आत्मसाक्षात्कार का प्रश्न ही नहीं था। सर्वप्रथम उनकी रक्षा करनी थी। जिस प्रकार माँ नौ महीने तक गर्भ में रखती है और दसवें महीने जन्म देती है, इसी प्रकार **आप सबकी भी नौ युगों तक भली–भाँति रक्षा की गयी और दसवें युग में आपको जन्म दिया गया।**

**प.पू.श्री माताजी, स्विटज़रलैंड, २३.९.१९९०**

..... देवी नौ बार पृथ्वी पर आयीं। देवी ने उन सभी लोगों से युद्ध किया जो साधकों का विनाश कर रहे थे तथा उनका जीवन दूभर कर रहे थे। सताये हुये इन महात्माओं ने देवी से प्रार्थना की, उन्होंने भगवती की पूजा की और आवश्यकतानुसार वे नौ बार अवतरित हुईं। हर बार उन्हें अहंकारी तथा निरंकुश लोगों का सामना करना पड़ा।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २७.९.१९९२**

..... **देवी की शक्ति आपके हृदय में होती है, हृदय चक्र में। हृदय चक्र से मतलब है जगदम्बा का चक्र। देवी तत्व से हमारे अन्दर सुरक्षा स्थापित होती है जिससे आप सुरक्षित होते हैं। जब तक बच्चा बारह साल का होता है तब तक इसी देवी तत्व के अनुसार हमारी जो हृदय अस्थि है, ये सामने की जो हड्डी है, उस हड्डी में सैनिक तैयार होते हैं, ये सारे शरीर में चले जाते हैं और वहाँ जाकर सावधान रहते हैं कि आप पर किसी भी तरह का आक्रमण आए तो उसे रोकें।**

**प.पू.श्री माताजी, तत्व की बात, १५.१२.१९८१**

..... श्री जगदम्बा आदिशक्ति का ही अंश हैं। दो हृदयों (दायाँ–बायाँ) के

मध्य के महत्वपूर्ण बिन्दु पर उनका स्थान है। इस चक्र में सारी शक्तियाँ रखी गई हैं। आपके शरीर के आस–पास मौजूद सभी गणों में मध्यहृदय के माध्यम से उसकी सारी शक्तियों की अभिव्यक्ति होती है। यही गण आपको सुरक्षा, निद्रा, ऊर्जा एवम् आशीर्वाद प्रदान करते हैं। सभी निरन्तर कार्यरत रहते हैं। माँ जगदम्बा के प्रति ये सभी अत्यन्त समर्पित हैं, तथा सदा उनके सम्पर्क में हैं। वे ब्रह्माण्ड की माँ हैं, आप कल्पना कर सकते हैं कि पूरे ब्रह्माण्ड की देखभाल करने में उन्हें कितना व्यस्त रहना होता होगा। यह केन्द्र यदि दुर्बल हो गया तो गण भी दुर्बल हो जाते हैं और उस दुर्बलता के कारण वे अपनी शक्तियों का उपयोग नहीं कर पाते।

माँ चक्र होने के कारण यह केन्द्र अति सूक्ष्म है। माँ के प्रेम को समझ पाना असम्भव है। **........जगदम्बा की सभी शक्तियाँ सभी प्रकार की नकारात्मकता को नष्ट करने के लिये कार्य करती हैं।** अत: विश्व की, आपकी तथा सहज विरोधी, सारी नकारात्मकता को नष्ट करना जगदम्बा का सर्वोपरि स्वभाव है।

उनकी विध्वंसक शक्ति बहुत प्रकार से कार्य करती है। सर्वप्रथम हमें समझना आवश्यक है कि यदि हम देवी के प्रति अपराध करते हैं तो हममें कैन्सर, एड्स आदि मनोदैहिक रोग होने लगते हैं। परन्तु कुछ रोगों का सम्बन्ध गणपति जी से भी है। गणपति सभी गणों के स्वामी हैं और अपने बेटे गणपति के माध्यम से माँ सारे गणों का संचालन करती हैं। ये सब इतना सम्बद्ध है। **जब हम माँ के विरुद्ध अपराध करते हैं अर्थात चरित्रहीन हो जाते हैं और धर्मविहीन कार्य करने लगते हैं तो क्योंकि वो माँ हैं, आपको दण्डित करने में वे समय लगाती हैं और व्यक्ति को सुधरने के लिये तथा अपना मार्गदर्शन करने के लिये समय देती हैं।** परन्तु दण्ड जब शुरु होता है तो आपको बहुत ही भयंकर किस्म की बीमारियाँ होने लगती हैं।

..... यह सब भय के कारण होता है, जब कोई व्यक्ति आपको डराता है या आपके प्रति आक्रामक होता है तो सताये, त्रस्त एवं भयभीत व्यक्तियों का माँ के प्रति विश्वास उठना शुरु हो जाता है। ऐसे में मध्य हृदय चक्र की देखभाल होनी चाहिए। भयभीत व्यक्ति माँ से दूर बाईं ओर को जा सकता है क्योंकि वे ही आत्मविश्वास साहस एवं बहादुरी प्रदान करने वाली हैं। परन्तु आप यदि भयभीत हैं या डर के साये में हैं तो आपको बायीं ओर फेंका जा सकता है और आप भयंकर तथा असाध्य रोगों से ग्रस्त हो सकते हैं।

जब हम भयभीत होते हैं तो हृदय चक्र में हृदय अस्थि दूरस्थ नियंत्रण

(रिमोट कंट्रोल) की तरह सभी गणों को सूचना दे देती है कि आक्रमण होने वाला है। परन्तु यदि स्वेच्छा से आप वासनाओं में फँसकर बायीं ओर को जाना चाहेंगे तो यह केन्द्र चिन्ता नहीं करता, तब गण कहते हैं जो चाहे करो और जैसे चाहे आचरण करो। भिन्न प्रकार की बायीं ओर को जाने वाली ये गतिविधियाँ आपको माँ से दूर ले जाती हैं।

यदि आपको देवी में विश्वास है तो आप जान लें कि **वे बहुत शक्तिशाली हैं वे अत्यन्त विवेकशील हैं।** यदि उन्होंने आपकी रक्षा करनी है तो वे इस प्रकार से आपकी रक्षा करेंगी कि आप समझ भी नहीं पाएंगे। अनुभव से यह विश्वास विकसित किया जाना चाहिए कि किस प्रकार आपकी रक्षा की गयी और किस प्रकार आप कठिनाइयों से बच सकते हैं।

यदि वास्तव में देवी की पूजा करते हैं तो आपको किसी भी प्रकार की चिन्ता या भय नहीं होना चाहिए। जो भी **आप कर रहे हैं उसे निडरता पूर्वक करें। देवी की सभी शक्तियाँ आप में अभिव्यक्त होने लगेगी। इस प्रकार आप आत्मनिर्भर होने लगेंगे और इस आत्मविश्वास का विकसित होना भी आवश्यक है।** जब आप आत्मनिर्भर हो जाएं तो आप न केवल अपनी सहायता कर सकते हैं परन्तु अन्य लोगों की भी सहायता कर सकते हैं।

..... **माँ** की एक अन्य शक्ति यह भी है कि वे आपको **साक्षी स्थिति प्रदान कर देती हैं।** आप सभी कुछ साक्षी भाव से देखते हैं, आपमें अथाह धैर्य आ जाता है, जो भी होता रहे, ठीक है, क्रोध नामक भयानक अवगुण से आपको छुटकारा प्राप्त हो जाता है और इससे आपको अत्यन्त साक्षी अवस्था प्राप्त हो जाती है। आपका व्यक्तित्व अत्यन्त शान्तिमय हो जाता है क्योंकि आपकी माँ आपके साथ होती है, यह दृढ़ विश्वास कि वे सदा हमारे साथ हैं, हमारी रक्षा करता है।

..... ज्ञानमय विश्वास में आपकी माँ आपको एक अन्य महान शक्ति प्रदान करती हैं, यह है विवेक बुद्धि। यह शक्ति जो आपमें है, आपके अहम् को बढ़ावा नहीं देगी, यह आपको विनम्र, अत्यन्त प्रेममय और करुणामय बनायेगी। अब आप स्वयं प्रकाश हैं। प्रकाश अन्धकार से डरता नहीं, अन्धकार को दूर करता है।

आप जानते हैं, देवी की सभी बातें अत्यन्त गहन एवं सूक्ष्म होती हैं। किस प्रकार उन्होंने माँ का रूप धारण किया और किस प्रकार प्रेम से अपने भक्तों की देखभाल की, किस प्रकार राक्षसों एवं नकारात्मकता से युद्ध किया। परन्तु अब राक्षस

आपके हृदय में प्रवेश कर गये हैं। उन राक्षसों का वध भी कर दिया जाए फिर भी वे आपके मस्तिष्क पर छाये रहते हैं, वे आपके मस्तिष्क में प्रतिबिम्बित हैं। जब यह बात समाप्त हो जाएगी तभी वास्तव में उनका वध हो सकेगा। गलत लोगों का अनुसरण करने तथा गलत पुस्तकों को पढ़ने से यह नकारात्मकता आयी है।

..... आप अपनी माँ की महान ज्योति बनें। आपमें वे सारी शक्तियाँ बह रही हैं। आपमें प्रज्वलित ज्योति है जिसे आप अधिक से अधिक फैलाएं।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ९.१०.१९९४**

..... यदि आपको मध्य हृदय पर बाधा जान पड़ती है तो आप जगदम्बा का मन्त्र लेते हैं। मध्य हृदय की बाधा दूर करते हुए मुझे भी कहना पड़ता है कि **मैं ही साक्षात जगदम्बा हूँ,** तब आपमें जगदम्बा जागृत होती हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २७.९.१९९२**

..... जब हम किसी व्यवस्था या तत्व को नहीं समझते तो उसमें बड़े दोष आ जाते हैं। सहजयोग तत्व पर उतरता है। चक्रों को ठीक करता है।

– जब जगदम्बा का चक्र आपके अन्दर जागृत हो जाता है तो आपके अन्दर से भय, आशंका सब भाग जाती है, कोई किसी प्रकार की भय, आशंका नहीं रह जाती। मनुष्य शेरदिल हो जाता है, एकदम शेरदिल, क्योंकि देवी शेर पर विराजती हैं। बहुत से लोग दुर्गा जी को मानते हैं, वो इतनी प्रभावशाली हैं कि एक बार उनको प्रसन्न कर लीजिए तो दुनियाँ में किसी से डरने की बात नहीं।

**प.पू.श्री माताजी, निर्मल योग, १६.०३.१९८४**

नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोर पराक्रमे। महाबले महोत्साहे
महाभयविनाशिनि।।१७।।
त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्धिनि।।१८।।

महारौद्ररूप, अत्यन्त घोर पराक्रम, महान बल और चढ़े हुए उत्साह वाली हे देवि! तुम महान भय का नाश करने वाली हो, मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ। तुम्हारी ओर देखना भी कठिन है। शत्रुओं को भयभीत करने वाली हे दुर्गे! मेरी रक्षा करो।

**दुर्गा सप्तशती, देव्या कवच, १७–१८**

# अनाहत (दायाँ पक्ष)

## मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

श्री राम पिता तुल्य हैं। कितने धार्मिक, संकोचपूर्ण, कितने अनुकम्पा से भरे श्री राम, वो हमारे सामने आदर्श होने चाहिएं जिसे हम देखकर कहें कि ऐसे हम बनें।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १६.३.१९८४**

.....भगवान विष्णु के सातवें अवतरण श्री राम का जन्म चैत्र माह की नवमी को दिन के बारह बजे हुआ, यह दिन 'रामनवमी' कहलाती है।

..... श्री राम उच्च मर्यादायें स्थापित करना चाहते थे ताकि भावी मानव उनका अनुसरण कर सकें। सर्वविदित है कि सुकरात ने उन्हें हितैषी राजा का नाम दिया।

..... श्री राम महान देवी भक्त भी थे–शक्ति के पुजारी। लंका पार आक्रमण करने से पूर्व उन्होंने देवी पूजा की। देवी को प्रसन्न करने के लिए भिन्न कर्मकाण्ड करवाने वाले एक ब्राह्मण की उन्हें आवश्यकता थी। इस कार्य के लिए उन्होंने देवी भक्त रावण को बुलावा भेजा। रावण तुरन्त तैयार हो गया और नौ तरह के कर्मकाण्डों द्वारा देवी पूजन करने में श्री राम की सहायता की।

..... श्री राम यदि कुटिल प्रवृत्ति होते तो वहीं रावण का वध कर देते परन्तु वो तो मर्यादा पुरुषोत्तम थे, उन्होंने ऐसा अधम गैरज़िम्मेदाराना काम नहीं किया। वे दोनों यद्यपि शत्रु थे फिर भी पूजा करते हुए शत्रुता को पूर्णत: भुला दिया गया था।

..... **अपने जीवन में श्री राम ने एक प्रकार से ऐसे कार्य किये मानो किसी नाटक में भूमिका कर रहे हों, उन्होंने भुला दिया कि वे परमात्मा के अवतरण हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, नोएडा हाऊस, ५.४.१९९८**

..... श्री राम के जीवन में जितनी भी घटनाएं घटीं, जैसे अहिल्या का उद्धार, शबरी मोक्ष, वानर सम्राट बाली वध और रावण वध आदि, **धर्म का शासन स्थापित करने के लिये थीं। श्री राम वास्तव में धर्मातीत थे, वास्तव में उनसे धर्म का जन्म होता था, वे धर्म स्थित थे, धर्म के अवतार थे।**

..... **उन्होंने जो कुछ किया है इस संसार में सिर्फ एक विचार से कि मनुष्य का भला कैसे होगा। सारा नाटक खेला, दु:खदायी नाटक था। शरीर तो उनका था ही जो सहन करता था लेकिन सारा नाटक उन्होंने खेला सिर्फ यह**

**दिखाने के लिये कि एक आदर्श राजा, एक आदर्श पिता, आदर्श पुत्र कैसा होना चाहिए। नंगे पाँव वो वन में गये ताकि वहाँ की भूमि उनके चरणों से वायब्रेट (चैतन्यमय) हो जाये।**

..... मैंने आपसे बताया कि राम का राज्य इस संसार में आना चाहिए। ......श्री राम ने देश के कारण, लोगों के मत के कारण अपनी पत्नी का त्याग किया, हालांकि वो आदिशक्ति थीं, वे जानते थे कि उनको कोई हाथ नहीं लगा सकता तो भी इतनी बड़ी मिसाल उनके जीवन की हमारे सामने है।

..... हृदय चक्र के दायीं ओर श्री राम का स्थान है। आप जानते हैं कि हमारे चक्रों में श्री राम बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान लिये हुए हैं। यदि आपके कर्तव्य और प्रेम में कुछ कमी रह जाए तो ये चक्र पकड़ते हैं।

– अगर कोई भी इन्सान का दायां हृदय पकड़ता है, माने ये कि किसी भी इन्सान में कोई पिता का दोष हो–समझ लीजिए उसके पिता की मृत्यु जल्दी हो गयी, उसने पिता का सुख न देखा हो या अगर उसका अपने पिता से सम्बन्ध ही न हो या वो पिता से दुश्मनी लिये हुए है। कोई सा भी यदि पिता का तत्व खराब हो जाए तो ऐसे आदमी का दायां हृदय पकडता है और ऐसे आदमी को अस्थमा होने का अंदेशा है। इस वक्त आपको श्री राम का ध्यान करना चाहिए इससे आपका अस्थमा ठीक हो सकता है।

**प.पू.श्री माताजी, निर्मला योग, १६.३.१९८४**

..... **अवतरित होकर श्री राम ने अत्यन्त तपस्विता का जीवन अपनाया। उन्हें हितैषी राजा के महत्व को पृथ्वी पर स्थापित करना था, अयोध्या का राजा बनकर भी उन्होंने पूरा जीवन संघर्ष और त्याग को अपनाए रखा** अत: उनके अनुयायी भी अत्यन्त त्यागी बन गये। श्री राम क्योंकि वर्षो तक घास पर सोये, वे भी घास पर सोने लगे, लोग खड़ाऊँ पहनने लगे, जैसे पत्नी विछोह में श्री राम ने एक धोती पहनी थी लोग भी एक धोती पहनने लगे। राम ने तो यह सारी चीजें अपनी पत्नी से आदर्श प्रेम दर्शाने के लिये की थीं, उन्होंने एक पत्नीव्रत लिया था पर क्योंकि **श्री राम का जीवन महातपस्विता का था और अत्यन्त गम्भीर था, उसे देखते हुए लोग अत्यन्त तपस्वी एवं गम्भीर होने लगे।**

**प.पू.श्री माताजी, न्यू जर्सी, २.१०.१९९४**

.....पृथ्वी पर अवतरित होकर श्री राम ने पहला कार्य जो किया वह था एक

शूद्र को रामायण लिखने का अवसर प्रदान करना। वाल्मिकि एक साधारण मछुआरे थे। उन्होंने रामायण लिखी, इससे यह प्रमाणित होता है कि राम संसार को ये दिखाना चाहते थे कि जो व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर लेता है वही वास्तव में विद्वान है, सच्चा पंडित है, सच्चा ब्राह्मण है। स्वयं को पंडित कहने वाले लोग ब्राह्मण नहीं हैं।

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, १९९८**

..... उनका एक गुण यह भी था कि राजकारण में सबसे ऊँचा उन्होंने जनमत को रखा। पत्नी और बच्चे उनके लिये गौण थे।

......श्री राम का जीवन अत्यन्त शुद्ध और निर्मल था। पत्नी के चले जाने के बाद उन्होंने भी दुनिया के जितने आराम थे, छोड़ दिये। वे कुश पे सोते, जमीन पर सोते, नंगे पैर चलते और साधु पुरुष जैसे कपड़े पहनते। यह सब कहानियाँ नहीं हैं। यह सत्य है।

– श्री राम की स्थिति यदि हम प्राप्त कर लें तो अपने यहाँ का राजकारण ही खत्म हो जाएगा। अपने यहाँ की जितनी परेशानियाँ हैं वो सब खत्म हो जाएंगी। अपनी प्रजा का वे बिल्कुल निरपेक्ष भाव से, विदेह रूप से लालन पालन करते थे।

**प.पू.श्री माताजी, २५.३.१९९१**

.....श्री राम के माध्यम से हमारे विचार बदल सकते हैं। उन्हीं के माध्यम से हमारे विचार बदल सकते हैं। उन्हीं के माध्यम से हमारा स्वभाव बदल सकता है, क्योंकि हमारे लिये वे एक आदर्श हैं। उनके आदर्श तक पहुँचने के बाद ही आप दूसरे आदर्शों तक पहुँच सकते हैं, क्योंकि वे मनुष्य के आदर्श हैं। कितनी बड़ी चीज़ है कि स्वयं परमात्मा मनुष्य बनकर इस संसार में आए कि इन मनुष्यों के लिये हम आदर्श बन जाएं इन्होंने सब विपत्तियाँ उठाईं, आफतें उठाईं, यह दिखाने के लिये कि कोई सी भी विपत्ति और आफ़त आती है तो मनुष्य को अपना धर्म नहीं छोड़ना चाहिए।

**प.पू.श्री माताजी, २५.३.१९९१**

.....श्री राम ने संसार में आकर मानव के लिये मर्यादायें बाँधी एवं अपने जीवन से, अपने तौर तरीके से, अपने व्यवहार से कि मनुष्य जो है मर्यादा पुरुषोत्तम है। जो राजा है वह हितकारी होना चाहिए। यह कितना आवश्यक है कि जो राज्य करते हैं वो लोकमत का ध्यान रखें और अपनी मर्यादा में रहें, पर आज तो लोग बिल्कुल निर्लज्ज़ता से राज्य कर रहे हैं बिना किसी आदर्शों के। इस तरह का समाज

घातक तो होगा ही, पर सबसे ज्यादा जो विश्वबन्धुत्व है वो नष्ट हो जाएगा।

.....आज मनुष्य अपने देश में भी बहुत संकीर्ण होता जा रहा है, हम अपनी सीमाएं बाँधते जा रहे हैं। राम की मर्यादायें यदि हम अपना लें तो सबल होते जाएंगे। जो मर्यादायें हमारी शक्ति को नष्ट करती हैं उनको तो हम बहुत आसानी से बाँध लेते हैं, पर जो मर्यादायें हमारी शक्ति बढ़ाती है, हमारा हित करती हैं, हमारा प्रभुत्व बढ़ाती हैं, उनको हम नहीं मानते हैं। यही एक बड़ा दोष हमारी **सूझ–बूझ** का है, हमारे विचार का है।

**प.पू.श्री माताजी, २८.२.१९९१**

उत्क्रान्ति में प्रत्येक अवतार इस धरा पर अवतरित हुए, हमारे अन्दर एक द्वार खोलने के लिए अथवा हमारी चेतना में उजियारा (प्रकाश) करने के लिए।

**प.पू.श्री माताजी, निर्मला योग, नवम्बर–दिसम्बर, १९८५**

अवतार की जरूरत उत्क्रान्ति के लिए होती है। उत्क्रान्ति का कार्य विष्णुशक्ति से होता है इसलिए केवल विष्णुशक्ति ही अवतार लेती है।

**प.पू.श्री माताजी, २४.०९.१९७९**

# अनाहत–बायां पक्ष

## आत्मज्योति – श्री शिव

शिव जी एक परम सन्यासी हैं। वे अतुलनीय हैं, उनका वर्णन शब्दों से नहीं कर सकते। शिव सर्वदा पवित्र एवं निष्कलंक हैं। प्रेम के सिवाय शिव कुछ भी नहीं। प्रेम सुधारता है, पोषण करता है और आपके हित की कामना करता है। शिव आपके हितों का ध्यान रखते हैं। प्रेम से जब आप दूसरों के हितों का ध्यान रख रहे होते हैं तो जीवन का सारा ढाँचा ही बदल जाता है, आप वास्तव में जीवन का आनन्द उठाते हैं।

..... श्री ब्रह्मदेव द्वारा रचित तथा विष्णु द्वारा विकसित की गयी हर वस्तु को सौन्दर्य प्रदान करना शिव का गुण है। सौन्दर्य संवेदना की रचना का सूक्ष्म कार्य उन्हीं का है। भक्ति का **आनन्द** भी शिव की देन है।

**प.पू.श्री माताजी, इटली, १७.२.१९९१**

..... वो नटराज, साक्षात सारी कला का प्रादुर्भाव करने वाले अत्यन्त आनन्दी और आनन्द का स्वरूप हैं। ......श्री महादेव सभी कलाओं, संगीत तथा ताल के स्वामी हैं। ........लयबद्ध जीवन जो हमें प्राप्त है उसका अभी हमें ज्ञान नहीं है। आप देखें कि बच्चा नौ महीने और कुछ दिनों के पश्चात जन्म लेता है, यह तालबद्धता किसकी देन है। भिन्न प्रकार के पुष्प अपने अपने समय पर निकलते हैं। प्रकृति में विभिन्न ऋतुएं आती हैं, इन सारी चीजों को कौन लयबद्ध करता है? शिव जी स्वयं लय हैं और प्रकृति में तथा अन्य सभी चीजों में उसी लय को बनाए रखा जाता है, हर चीज़ में एक लय है। लयबद्ध व्यक्ति वही है जिसका हृदय बहुत विशाल है। किसी भी क्रूर तथा बुरे व्यक्ति को देखते ही यह लय बिगड़ जाता है। एक शांत सुंदर झील में तरंगे नहीं होती, केवल प्रेम होता है और जब यह लय, हृदय की यह शांति टूटती है तो श्री शिव स्थिति को अपने हाथ में ले लेते हैं।

..... मैं आपको बताना चाहूँगी कि श्री महादेव ही ज्ञान हैं, वे ही शुद्ध विद्या हैं–उच्चतम स्तर के पूर्णज्ञान। वही ज्ञान के स्रोत हैं। जो लोग विनम्र नहीं हैं, उन्हें शुद्ध विद्या प्राप्त नहीं हो सकती, जो अहंकारी हैं, अन्य लोगों से कोमलता, मधुरता एवं सुन्दरतापूर्वक आचरण नहीं करते उन्हें श्री महादेव का आशीर्वाद प्राप्त नहीं हो सकता। जीवन में वे कोई उपलब्धि प्राप्त नहीं कर सकते।

**प.पू.श्री माताजी, पुणे, २५.२.२००१**

..... शिव जी के लिये बाह्य दिखावा महत्वपूर्ण नहीं है, केवल आध्यात्मिकता ही महत्वपूर्ण हैं। ....... कोई भी बनावटी चीज़ उनके चित्त को आकर्षित नहीं करती, केवल व्यक्ति का देवत्व ही उन्हें आकर्षित करता है।

**प.पू.श्री माताजी, ऑस्ट्रेलिया, २६.२.१९९५**

..... शिव होने का मतलब यह है कि सर्वथा दुनिया भर की जो हमारे अन्दर लोलुपता है, जो हमारे अन्दर नफ़रत है, उसे छोड़ देना है।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १६.३.१९९७**

..... शिव अपने शरीर से लगाव को नहीं जानते, वे कहीं भी सो लेते हैं। वे कब्रिस्तान में जाते हैं और वहीं सो जाते हैं, क्योंकि वे लिप्त नहीं हैं। वे निर्लिप्त (detached) है। शिव जी को कोई फ़र्क नहीं पड़ता, वे कब्रिस्तान में रहें या अपने कैलाश पर या कहीं भी।

**प.पू.श्री माताजी, पंढरपुर, २९.२.१९८५**

..... शिवजी का सारा ही अलंकार पाँच तत्वों से हो जाता है। वो अपने ऊपर सर्प को पाले हैं, सर्प शीतल होते हैं माने संसार का जितना भी दुष्ट, जितना भी विपरीत है, जितना भी **संसार का दंश है, सबको अपने अन्दर समाये हैं। दुनिया भर का गरल वे पिये हुये,** आप जानते ही हैं, जो कुछ भी गरल सारे संसार में होता है, वे अपने अन्दर पीकर सारे संसार को ठण्डा रखते हैं। महाशिवरात्रि के दिन उन्होंने गरल पिया था, जो कुछ भी पाप था, जो कुछ भी दुष्टता सारे संसार में फैली हुई थी, सबको उन्होंने शोषण कर लिया था। सोचने की बात है–सारे संसार की विपत्ति, सारे संसार की आपत्ति, सारे संसार का गरल आज के महान दिवस पर उन्होंने पी लिया, इसलिये आज को महाशिवरात्रि कहते हैं। सारी रात इन्होंने पिया, रात का जितना भी अंधकार संसार का है उसको उन्होंने अपने अन्दर समा लिया है।

मनुष्य का अहंकार होता है उसे भी वे अपने अन्दर पी लेते हैं और इसी प्रकार संसार की अहंकारी लोगों से रक्षा करते हैं। गंगा जैसी गर्ववती को उन्होंने अपनी जटाओं में बाँध कर रखा है, अपने सिर पर गंगा जी का बोझा उठाया हुआ है यानी वो सबका गर्व हरण करने वाले हैं।

..... उनके अन्दर एक बहुत बडी शक्ति, एक असाधारण शक्ति है जो किसी भी देवी या देवता में नहीं है, **वह है क्षमा की शक्ति।** वे दुष्ट से दुष्ट, महादुष्ट को भी क्षमा कर सकते हैं, जिन्हें गणेश जी क्षमा नहीं कर सकते उनको भी शिव जी क्षमा कर देते

हैं। इसलिये जब भी क्षमा माँगनी होती है, उन्हीं से क्षमा माँगी जाती है।

वे क्षमा करते हैं। एक सीमा तक हमारे अपराधों को हमारी विध्वंसक गतिविधियों को और अन्य लोगों के लिये समस्याएं उत्पन्न करने वाले मस्तिष्क को वे क्षमा करते हैं परन्तु **विध्वंस उनकी महानतम शक्ति है।** उनका प्रकोप अचानक आ जाता है क्योंकि वे पंचतत्वों के स्वामी हैं, वे सभी तत्वों के शासक हैं। वे पृथ्वी माँ के शासक हैं तथा अन्य तत्वों पर भी उनकी कारणात्मकता के प्रभाव के माध्यम से वे शासन करते हैं। वे शासक हैं और जिस चीज़ में भी उन्हें कोई गडबड दिखायी देती है वे उसे नष्ट कर सकते हैं। मैं आपको बताना चाहती हूँ कि भूकम्प प्रबन्धन कार्य उन्हीं का है, मेरा नहीं। विनाश कार्यों में मेरी कोई भूमिका नहीं है। वे ही देखते हैं पृथ्वी पर क्या हो रहा है और मानव के साथ क्या घटित हो रहा है।

**प.पू.श्री माताजी, पुणे, २५.२.२००१**

..... एक ओर तो शिव अत्यन्त करुणामय, असुरों एवं राक्षसों के प्रति भी अत्यन्त दयालु हैं परन्तु दूसरी ओर वे अत्यन्त कठोर हैं। लोग यदि पतनोन्मुख हो जाएं, आध्यात्मिकता को स्वीकार न करें, उनकी पवित्रता यदि पूर्णतया समाप्त हो जाए और विश्व में समस्याएं उत्पन्न करने वाली अनुचित गतिविधियों को लोग न त्यागना चाहें तो श्री शिव पूरे ब्रह्माण्ड का विध्वंस कर सकते हैं। वे आदिशक्ति के कार्य के दृष्टा हैं, आदिशक्ति को वे सारा कार्य करने देते हैं–मानवों का सृजन करना, उन्हें आत्मसाक्षात्कार देना–परन्तु यदि उन्हें लगा कि आदिशक्ति के बच्चे, जिनकी आदिशक्ति ने रक्षा की है, दुर्व्यवहार कर रहे हैं या किसी भी प्रकार **आदिशक्ति के कार्य का नाश कर रहे हैं तो वे कुपित होकर पूरे ब्रह्माण्ड का विनाश कर सकते हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, ऑस्ट्रेलिया, २६.२.१९९५**

..... शिव जी के लिए कहा जाता है कि वे बहुत सरल हैं और एक दम भोले हैं। इसलिए उनको जानना बहुत कठिन है। कुण्डलिनी का कार्य ही देवी का कार्य है। देवी ही इस चराचर सृष्टि को बनाती हैं और अन्त में आपके अन्दर कुण्डलिनी बनकर शिव तक पहुँचा देती है। **शिव का पूजन करते वक्त याद रखना चाहिए कि शिव के गुण–धर्म हमारे अन्दर विकसित हुए या नहीं।** इसलिए सबसे पहले कुण्डलिनी की गति को समझ लेना चाहिए। जब कुण्डलिनी का जागरण होता है तो सर्वप्रथम वो आपके शरीर को स्वस्थ करती है। क्योंकि शरीर का भी स्वस्थ होना जरूरी है। इसलिए आपका चित्त पहले अपने शरीर पर जाता है। ........इसलिए पहले ये व्यवस्था

की गई थी कि शरीर की तरफ ध्यान ही नहीं देना चाहिए। उसको कष्ट देना चाहिए।

.....**अब सहजयोग में उल्टा कारोबार है। पहले तो हमने ऊपर का शिखर बना दिया। खोल दिया उसे, सहस्रार खोल दिया। सहस्रार खोलकर के कहा कि आप ही लोग अपने को ठीक करिए। लेकिन अब भी हम लोग समझ नहीं पाते। सहजयोग बहुत ही कठिन चीज़ है। जितनी सरल है उतनी ही कठिन है। शंकर जी जैसे। क्योंकि हमारे अन्दर अनेक नाड़ियाँ हैं और उन नाड़ियों को खोलने का एक ही तरीका है कि हमारा चित्त जो है वो इधर–उधर न उलझे।** तो सहजयोग में ये तो कोई नहीं बताते कि तुम खाना पीना छोड़ दो। तुम उपवास करो और जाकर हिमालय की ठण्ड में बैठो। लेकिन क्या करना चाहिए जिससे हमारी प्रगति हो? तो सबसे पहले हमें अपनी तरफ अन्तरमन करके विचार करना चाहिए कि यह मैं क्या कर रहा हूँ? जैसे कि अब आप कहीं गये, और आपने देखा कि आपको सोने की जगह नहीं मिली, तो फौरन आप शिकायत करना शुरु कर देंगे कि माँ हमें सोने की जगह नहीं मिली। उस वक्त ये सोचना चाहिए कि मैं ऐसा क्यों कह रहा हूँ? क्योंकि मैं अपनी शरीर के बारे में चिन्ता कर रहा हूँ कि मुझे सोने की जगह नहीं मिली। मुझे ठीक से जगह नहीं मिली और मैं अपना चित्त इसी में डाले जा रहा हूँ। अब उस वक्त हमें ये सोचना चाहिए कि अच्छा हुआ कि मुझे जगह नहीं मिली। अब सो जैसे सोना है। अब यहीं सो। अपने शरीर से कहिये, तू सहजयोगी है। यहीं सोना होगा।

.....मैं अपने शरीर का इतना आराम क्यों देखता हूँ? मैं तो एक विशेष हूँ। विशेष का मतलब ये कि आपमें चित्त की जो ये चंचलता है उसे रोकना है। चित्त को लीन करना है चैतन्य में। फिर चित्त अगर इधर–उधर जाता रहे तो वो चैतन्य में कैसे लीन होगा?

**१.** ..... आपके हृदय में जहाँ शिव जी का वास है वहाँ चार नाड़ियाँ हैं। **उसमें से एक नाड़ी मूलाधार तक जाती है। और उससे आगे नर्क है।** कुछ लोग यही कहते हैं कि इसमें क्या खराबी है? लेकिन आप सहजयोगी हैं, आप नर्क काहे को जा रहे हैं? अपनी ओर चित्त करके ध्यान देना चाहिए कि मुझमें ये वासना क्यों है जो मुझे नर्क की ओर ले जा रही है। मैं तो एक कदम ऊपर रखे हुए हूँ और एक कदम कब्र में रखे हूँ।

**२.....उसकी दूसरी नाड़ी हमें इच्छाओं के तरफ ले जाती है। इसलिए**

**बुद्ध ने साफ–साफ कहा था कि इच्छा करना ही हमारी मृत्यु का कारण है।** इच्छा हम में बिल्कुल खत्म हो जानी चाहिए। लेकिन वो खत्म नहीं होती। एक शुद्ध इच्छा मात्र रहनी चाहिए। वो कैसे हो? शुद्ध इच्छा इस तरह हो सकती है कि आप सोचे मुझे इसकी इच्छा क्यों हो रही है? इस इच्छा की ओर मैं क्यों दौड़ा जा रहा हूँ? ऐसी मैंने अनेक इच्छाएं की, उससे मुझे क्या फायदा हुआ। तो जो कुछ भी मिला है उसी में आनन्द पा लेना ही एक सहजयोगी का कर्तव्य है। किसी को इच्छा हुई कि मैं माँ के बिल्कुल सामने जाकर बैठूं या किसी की इच्छा हुई कि हम पहले वहाँ जाकर खडे हो जाएं। ऐसी इच्छा क्यों हुई। क्योंकि अज्ञान में यह नहीं जाना कि माँ हर जगह हैं। कहीं जाने की जरूरत क्या है? तो शुद्ध इच्छा की जब आप इच्छा रखें, **तो जब कुण्डलिनी चढ़ती है तो ये जो इच्छा की नाड़ी नीचे की तरफ मुड़ी हुई है उसकी ऊर्ध्वगति हो जाती है। उसमें शुद्ध इच्छा भर जाती है।** इच्छा मनुष्य करता है इस विचार से कि इस समय मुझे सुख मिलेगा, आनन्द मिलेगा। पर मिलता कुछ नहीं। **तो इस इच्छा को आपको आनन्द में लीन कर देना है। क्योंकि शिव का तत्व जो है, आनन्द का तत्व है। उनका स्वभाव आनन्द है।** इसलिए हर एक चीज़ में आनन्द खोजना चाहिए। तब किसी चीज़ की त्रुटि ही नहीं लगेगी। दोष देखना या हर एक चीज़ में, ये ऐसा होता तो अच्छा होता, बहुत लोगों की आदत है। वो जो आप सोच रहे हैं, ऐसा होना चाहिए, वो कार्यान्वित ही नहीं हो सकता। आपका कोई मतलब भी नहीं है उससे। .........हर एक चीज़ का ठेका लेकर बैठते हैं। और इस तरह से अपनी बुद्धि में भी पूरी तरह एक विचारों की श्रृंखला बना देते हैं। लेकिन जो कुछ आप देखते हैं वो देखना मात्र हो गया। एक कटाक्ष में भी निरीक्षण हो जाएगा और चित्त सा आपके अन्दर बन जाएगा। लेकिन वो देखना नहीं होता। उसे निरंजन देखना कहते हैं। उसमें कोई रंजना नहीं होती। उसके प्रति कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। तो **निरंजन देखना भी शिव का ही तत्व है।** शिव के स्थान पर पहुँच गए और उनके मूर्ति के दर्शन भी हो गए, किन्तु जब तक उनका प्रकाश हमारे अन्दर नहीं आया तो सब व्यर्थ ही है।

**३. अब जो तीसरी नाड़ी है उसमें प्रेम उभरता है। मेरा बेटा, मेरी बहन, मेरा भाई, मेरा बाप, मेरा पति सब दुनियाभर की रिश्तेदारी। इसमें भी बहुत लोग उलझे रहते हैं।** सहजयोग में भी, सालों तक वो छूटता ही नहीं। वही बातें। अब यह कहना है कि ये रिश्तेदारी व्यर्थ है, तो यह बात ठीक नहीं। ऐसा ममत्व कि अपने बच्चों के लिए आप किसी का खून भी कर दें। कुछ भी कर सकते हैं इस ममत्व के लिए।

पत्नी के लिए, पति के लिए, इस कदर उसमें आदमी अपने जीवन को व्यर्थ करता है। और उसके बाद देखते हैं कि जिनके लिए इतना किया वो ही आपके दुश्मन हैं। वो ही आपको सता रहे हैं। सबसे ज्यादा दु:ख वो ही दे रहे हैं और आपको और भी ज्यादा दु:ख इसलिए होता है कि इन्हीं के लिए हमने इतना किया और इन्होंने हमारे लिए क्या किया? पहले जमाने में कहते थे कि सबको त्याग दो। घर त्यागो, बच्चे त्यागो, बीबी त्यागो, सब छोड़के जंगल में जाकर एकांतवास करो। सहजयोग में ऐसा नहीं है। सहजयोग में किसी को नहीं त्यागना है। सबको अपनाना है। क्योंकि सहजयोग एक व्यक्तिगत कार्य नहीं कि आप जाके एकान्त में बैठ गए और तपस्या की, और बड़े ऊंचे हो गये। तो क्या फायदा हुआ? आप अवधूत बन गये तो क्या फायदा हुआ? एक ऐसा आदमी हो जो अच्छा भाषण दे सकता है, हो सकता है कि थोड़ी बहुत चैतन्य की भी वर्षा कर सकता है। पर उससे सारा संसार तो ठीक नहीं हो सकता। हमें तो सारे संसार को ठीक करना है। **इसलिए ये सोचना चाहिए कि मैं क्यों अपनापन सिर्फ़ थोड़े ही सीमित लोगों में रखता हूँ?** एक पेड़ में गर पानी छोड़िये तो उसका जो सत्व पेड़ की हर शाखा में, हर पत्ते में, हर फूल में, हर फल में जाता है, और लौट आता है, और नहीं लौटे तो वो उड़ जाता है। लेकिन गर वो एक फूल में ही फँस जाएं तो वो पेड़ भी मर जाएगा और फूल भी मर जाएगा। देवी निर्वाज्य प्रेम करती हैं। देवी जब किसी के लिए कुछ करती हैं तो फिर उन्हें यह नहीं ख्याल रहता कि ये कुछ किया या हुआ, और उसने ऐसे क्यों किया, नहीं करना चाहिए था। उनका मन किसी भी चीज़ में नहीं उलझता क्योंकि वह करुणामय है। करुणा के सागर में लीन हो गया। कई लोग छोटी–छोटी परेशानियाँ बताते हैं। हालांकि मैं जानती हूँ कि परेशानी में कोई अर्थ नहीं लेकिन उसे बहुत गम्भीरता से सुनती हूँ। उनके दायरे में मैं नहीं उतर पाती। अगर वो मेरे दायरे में नहीं उतर पा रहे हैं तो ये उनका दोष है। उनको उतरना चाहिए। इस **करुणा में उतरना चाहिए। करुणा, करुणा के लिए होती है। किसी काम, मतलब या रिश्ते के लिए नहीं, करुणा को धनी या भिखारी में कोई भेद नहीं। जैसे समुद्र, कहीं भी गड्ढा हो जाये, वो पानी भर देगा। कहीं भी कोई त्रुटि हो, भर देगा। करुणा तो 'स्वभाव' है। 'स्व' माने आत्मा। आत्मा का भाव।** जब वो आत्मा का भाव आपके अन्दर आ जाए, सिर्फ करुणा, फिर ये सब चीज़ टूट जाएगी कि दिल्ली रहने वाले, बम्बई रहने वाले इत्यादि। कुछ याद नहीं रहता। उसका महत्व नहीं रहता। हर आदमी क्या है वो ज़रुर आपको याद रहेगा कि ये कौन है। इसको कौन सी

तकलीफ  है। एकदम देखते ही याद आ जाएगा। नज़र आपकी कहाँ गई। नजर अगर यह ढूंढ रही है कि दिल्ली वाला कौन है, कलकत्ते वाला कौन है। गर ये नजर आपकी ढूंढ रही है कि ये करुणा कहाँ बही चली जा रही है। किसकी ओर खींच रही है। मुझे तो पता होगा कि दु:खी आदमी है। कोई साधक बहुत बडा साधक होता है। एकदम हृदय खिंच जाना चाहिए उस आदमी के तरफ। और ये **करुणा आपको सुमति भी देती है और स्मृति भी देती है। क्योंकि जितनी निकटता करुणा से आती है, उतनी किसी भी रिश्ते से नहीं आती। ऐसी विशेष चीज़ है करुणा और इस करुणा में अपने को लीन कर लेना।** इस ममत्व को लीन कर लेना। ये सहजयोग में उन्नति का मार्ग है। क्योंकि मैंने कभी नहीं कहा कि आप अपने बाल–बच्चे छोड़ दो, घर छोड़ दो। ये सहजयोग है, आप जैसे भी हों, जहाँ भी हों, अन्दर ही अन्दर बढ़ते जाओ। वो अन्दर देखे बगैर तो यह नहीं होगा। तो फिर ये सोचना है कि क्या मैं करुणामय हूँ? किसी को गर कुछ है और उसे यह कहा इस बार नहीं। नहीं हो सकता। बहुत बुरा मान जाते हैं। माने सारा ममत्व अपने ही बारे में हो। मुझे क्या मिलना है? मैं क्या पाऊंगा? मुझे क्या लाभ होगा? लेकिन ममत्व बाहर नहीं। कौन, किस दशा में, कैसा भी हो करुणा अपना रास्ता खुद ही ढूंढ लेती है, बड़ी सुन्दरता से। और बड़ा आनन्ददायी है करुणा का पाना, उसमें बहना और करुणा में अनेक तरह के कार्य होना। आनन्ददायी तो है लेकिन उस आनन्द में लोभ नहीं होता कि ये आनन्द मैं बार–बार पाऊं। उसकी प्रचीति (चेतना) नहीं होती। कर दिया, कर दिया। हो गया, हो गया। जैसे संगीत को सुन लिया, मजा आ गया, वहीं खत्म हो गया। उसी तरह से कोई काम है, कर दिया।

**४.** अब हृदय में चौथी जो हमारे अन्दर नाड़ी है वो अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वो चौथी नाड़ी कुण्डलिनी के जागरण से ही जागृत होती है और **बाईं विशुद्धि से निकल के और मस्तिष्क में जाकर के कमल को खिलाती है।** जब हमारा चित्त इन सब चीजों में लीन हो जाता है तो इस कमल में जीव आ जाता है, इसमें शक्ति आ जाती है या ऐसा समझ लीजिए जैसे किसी पौधे में पानी पड जाए तो वो जैसे अपने आप बढ़ता है इसी प्रकार ऐसा शुद्ध चित्त जिस मनुष्य का हो जाता है उसके हृदय की कली खिलती है और वो कमल रूप होकर के सहस्रार में छा जाता है। फिर उसका सौरभ, उसका सुगन्ध चारों ओर फैलता है। ऐसा मनुष्य एकदम नतमस्तक हो जाता है, एकदम नतमस्तक होकर के सबके सामने झुका रहता है। कोई अगर कहता है कि आपने बड़ा मेरा काम कर दिया, बड़ा चमत्कार कर दिया तो वो चीज़ उसे छूती नहीं।

जैसे कि आनन्द की लहरें बाहर की ओर तट पे जाकर के नाद करती हैं किंतु वापस नहीं लौटतीं, उसी प्रकार जिस मनुष्य की ये स्थिति हो जाती है उसका सारा कार्य बाहर को नाद करता है। आवाज करता है। उसका असर बाहर दिखाई देता है। तट पर। उसके अन्दर उसका कोई असर नहीं आता। ध्यान भी नहीं आता, विचार भी नहीं आता। जो भी आपके निनाद हैं वो और दूसरे तट पर जाकर छू जाएंगे। मेरे तक छूते ही नहीं, मुझे आते ही नहीं। उससे हो सकता है, अन्दर बैठे देवी देवता खुश हो जाएं और चैतन्य को बहायें या कुछ करें। पर जहाँ तक मेरा सवाल है मुझे कुछ उसका आभास भी कभी नहीं होता कि आप मेरी जय जयकार गा रहे हैं। मैं शायद वहाँ होती ही नहीं।

**जब आप स्तुति गाते हैं, खुश होते हैं, आपके अन्दर के देवता भी प्रसन्न हो जाते हैं और आपके लिए अनन्त नाड़ियों से कितने तेज पुंज जैसे प्रकाश के किरण आपके अन्दर छोड़ते हैं।** कितनी मेहनत करते हैं आपके लिए। आपके लिए भी बहुत आवश्यक है कि वो जब हमारे लिए इतनी मेहनत कर रहे हैं तो हमें भी शुद्धता को पाना चाहिए। तो पहले जिस शरीर को हम धिक्कार रहे हैं, मान नहीं रहे, वो ही शरीर एक यज्ञ हो जाता है। यज्ञ माने कि जब हमारा शरीर है, हो रही है तकलीफ, तो इसको तकलीफ होनी ही है, क्योंकि ये यज्ञ है न। अच्छी बात है। जैसे की काष्ठ का जलना यज्ञ में जरूरी है, उसी तरह इस शरीर का जलना भी यज्ञ में जरुरी है। लेकिन सहजयोग में सबसे बड़ी बात ये हैं कि ये जो कृतयुग शुरु हो गया है, आपके पूर्व पुण्य से, आपको बहुत तकलीफ तो कुछ होती ही नहीं। सब चीज़ सामने आके खड़ी हो जाती है। साक्षात्कार होते रहता है। आप कहते हैं चमत्कार हो रहा है। सब चीज़ आपको सुलभ में मिल जानी है। बहुत से काम आपके सरल-सहज हो जाते हैं शोभना-सुलभ गति। आपके शोभा व मान जीवन में अत्यन्त सुलभता से आप इसे प्राप्त कर सकते हैं। कोई भी अशोभनीय काम करने की जरूरत नहीं। या ये एक तरह की बड़ी सूक्ष्म माया भी है। **उसमें यह नहीं सोचना चाहिए कि यह सारे चमत्कार हमारे लिए इसलिए हो रहे हैं क्योंकि हम कोई बड़े भारी सहजयोगी हैं। ये सोचना चाहिए कि ये चमत्कार इसलिए हो रहे हैं कि हमारे अन्दर विश्वास-परमात्मा के प्रति, शिव के प्रति, और कुण्डलिनी के प्रति दृढ़ हो जाए। इसलिए चमत्कार हो रहे हैं। और इसको दृढ़ता से करने का कार्य यही है कि हम अपने चित्त को शुद्ध करें क्योंकि शिव चित्त स्वरूप हैं। उनके चित्त की शक्ति को चित्ती कहते हैं। वो चित्त हैं।**

**माने कि जो चैतन्य आप जानते हैं, उस चैतन्य का जो चित्त है, वो शिव का प्रसाद है। जो शिव का तत्व है।** माने सारे संसार में उनका चित्त फैला हुआ है। और जब आप कहते हैं कि चमत्कार हो गया, ये चीज़ घटित हो गई तब ये जान लेना चाहिए कि ये जो चित्त है जिसे हम चित्ती कहते हैं, उसने ये कार्य किया है। **अणु–रेणु हर चीज़ में उनका चित्त है लेकिन चित्त का मतलब ये होता है कि वो साक्षी है। देख रहे हैं और कार्यान्वित जो है वो ब्रह्म–चैतन्य है।** लेकिन जैसे कि संगीतकार गायक को देखकर के बजाता है, उसी प्रकार ब्रह्म चैतन्य उस चित्त की दृष्टि को देखकर के ही कार्यान्वित होता है। उस चित्ती को ब्रह्म–चैतन्य जानता है और वो इस कार्य को तब करता है जब उस चित्ती को देखकर वो ठीक समझता है। ब्रह्म चैतन्य देवी की शक्ति है, और वो कार्यान्वित है, उस देखने वाले को जानती है और उस शक्ति की पूरा समय यही लीला है कि उस एक देखने वाले को खुश रखना है। इसलिए **कभी–कभी आप कहते हैं कि माँ ऐसे गड़बड़ क्यों हो गया। इसलिए हो गया कि वो जो चित्ती थी उसका रुख बदल गया था।** गर आज आप शिव की पूजा कर रहे हैं तो ये मैंने जो चार नाड़ियाँ बताई हैं उसकी ओर नज़र करें और जिस तरह से मैंने आपसे बताया है कि अपने को किस तरह से चित्त को इन चार चीजों में लीन कर लेना चाहिए। यह कोई बड़ी गहन बात नहीं है, लेकिन सूक्ष्म है। और फिर आप मुझे बताइएगा कि इस तरह से अन्तरमन करके जो आपने अपने साथ विचारणा की, या तपस्या की है, या जो वार्तालाप किया है, और जो अपने चित्त को शुद्ध किया है, उससे आप एक दम शिव के सागर में पूरी तरह से डूब गये हैं। ऐसी दशा आप सब की हो, यही मेरी एक शुद्ध इच्छा है।

**प.पू.श्री माताजी, शिवपूजा, दिल्ली, ९.२.१९९१**

..... एक तरह से हृदय जो है वो प्रतिबिम्ब है महादेव का। शिव जी का स्थान तो सबसे ऊपर है, विचारों से ऊपर, ऐसे तत्व को प्राप्त करने के लिये सबसे पहले हमें इधर ध्यान देना चाहिए कि हमारा हृदय कितना साफ है। आपका हृदय गर स्वच्छ है तो आपका जो आइना है जिसमें परमात्मा का प्रतिबिम्ब पड़ने वाला है, वो साफ रहेगा।

**प.पू.श्री माताजी, १४.२.१९९९**

..... **मानव का अंतिम लक्ष्य यही है कि वो शिवतत्व को प्राप्त करे। शिवतत्व बुद्धि से परे है, उसको बुद्धि से नहीं जाना जा सकता। जब तक आप आत्मसाक्षात्कारी नहीं होते, जब तक आपने अपनी आत्मा को पहचाना नहीं, अपने को जाना नहीं, आप शिवतत्व को नहीं जान सकते। शिव जी के नाम पर**

**बहुत ज़्यादा आडम्बर, अन्धता और अन्धश्रद्धा फैली हुयी है। जो मनुष्य आत्मसाक्षात्कारी नहीं वह शिव जी को समझ ही नहीं सकता क्योंकि शिवजी की प्रकृति को समझने के लिये सबसे पहले मनुष्य को उस स्थिति में पहुँचना चाहिए जहाँ पर सारे ही महान तत्व अपने आप विराजें।**

शिव जी के लिये कहा जाता है कि वे भोले शंकर हैं। आजकल के लोग सोचते हैं कि जो आदमी भोला होता है वह बिल्कुल बेवकूफ है, लेकिन शिव जी का भोलापन ऐसा है जहाँ वो सब कुछ हैं। वे भोलेपन से सब चीज़ देखते रहते हैं। वे साक्षी स्वरूप हैं और शक्ति का कार्य देखते हैं। शक्ति ने सारी सृष्टि रचाई और शक्ति ने ही सारे देवी देवता बनाये और उनके सारे कार्य बना दिये, उनकी नियुक्ति हो गयी और अब शिवजी को क्या काम है? शिव जी को बस देखना है और फिर देखने ही में सब कुछ आ जाता है। उनके भोलेपन का असर ये है कि जिसमें भी दृष्टि पड़ जाए वो ही तर जाए, कुछ उनको करने की जरूरत ही नहीं। यह सब खेल है।

ये शिव जी का जो गुण है, सहजयोगियों में आना जरूरी है। जैसे शिव जी ने सब कुछ शक्ति पर छोड़ दिया है वैसे आप लोग भी सब कुछ शक्ति पर छोड़ सकते हैं, लेकिन वो भी फिर एक स्थिति आनी चाहिए। इस भोलेपन का अर्थ है कि किसी भी तरह की नकारात्मकता आपके अन्दर आ ही नहीं सकती। साँप लोट रहे हैं तो साँप को लोटने दो, ज़हर पीना है तो ज़हर पी लेंगे। जो बिल्कुल शुद्ध है, उसमें किसी चीज़ का असर आ ही नहीं सकता। ये शक्ति हमारे अन्दर शिवतत्व से आती है, इसे प्राप्त करने के लिये आत्मसाक्षात्कार होना चाहिए। कुण्डलिनी जो है शक्ति है और चक्र जो है वे सीढ़ियाँ। इन सब सीढ़ियों पर चढ़कर आपको प्राप्त एक ही करना है। सारे देवी देवताओं को एक ही विचार है कि आपको शिवतत्व पर पहुँचा दें। ये उनका कार्य है और वो इस कार्य में पूरी तरह से लगे हुए हैं। वो ये नहीं पूछते कि इसमें हमारा क्या होगा? हमारी स्थिति क्या है? कहाँ बैठें? मनुष्य के जैसे नहीं सोचते। वो अंग-प्रत्यंग शिव के ही हैं और मनुष्य को शिवतत्व तक पहुँचाने के लिये कार्यरत रहना उनका स्वभाव है, उनका जो काम है वो भी एक अकर्म सा है।

समझो आत्मसाक्षात्कार क्या है? देखो एक जो आप स्वयं हैं और आप अपने को शीशे में देख रहे हैं, वो प्रतिबिम्ब है और प्रतिबिम्ब को देखने की जो क्रिया है वह तीसरी चीज़ है। **इस प्रकार आप तीन दायरों में घूम रहे हैं, एक देखने वाले, एक जो आपको दिखायी दे रहा है और एक जो देखने की चीज़ है। ये तीनों चीज़ें खत्म**

**हो सकती हैं, कैसे? अगर आप ही अपना आइना बन जायें।** फिर आप अपने को देखते रहते हैं, आप अपने को जानने लगें। यही तुकाराम ने कहा–जब अपने को जान लिया फिर ज़रूरत ही क्या है? तब ये तीन रास्ते कूदकर आप स्वयं में स्थिर हो गये। यही स्थिरता जब पूरी तरह बन जाती है तब कहना चाहिए कि शिवतत्व स्थिर है, क्योंकि यह अटूट और अटल है। इस शिव तत्व में जब आप बैठ जाते हैं तो ऐसा नहीं लगता कि आप कुछ कर रहे हैं। आप अपने में ही समाये रहते हैं। लेकिन शिवयोगी होने के लिये परम विश्वास की ज़रूरत है।

शिवतत्व पर बैठा हुआ मनुष्य, उसको किसी चीज़ की इच्छा नहीं होती, इच्छारहित होता है क्योंकि अपनी आत्मा से ही उसकी आत्मा सन्तुष्ट है। शरीर की उसको कोई चिन्ता नहीं, शरीर के आराम की कोई चिन्ता नहीं।

.....शिवतत्व में जान लेंगे कि अभी आपमें क्या–क्या गलत चीज़ घुसी हुई हैं, जैसे हिन्दु मुसलमानों का झगड़ा चल रहा है, कोई हिन्दु हो जाने से शिवतत्व नहीं पाता, न ईसाई होने से और न कुछ और होने से पाता है.......लेकिन जब आपमें शिवतत्व प्राप्त होता है तो आप श्रीराम को भी मानते हैं और आप मोहम्मद साहब को भी मानते हैं, मानते ही नहीं, जैसे आप श्री राम की पूजा करते हैं, ऐसे ही आप मोहम्मद साहब की भी पूजा करते हैं। **जब तक आप शिवतत्व को प्राप्त नहीं होते, इन धर्म के आडम्बरों से आप निकल नहीं सकते। जो रहीम हैं, वो ही शिव हैं, जो रहमान हैं, जो अकबर हैं वो ही विष्णु हैं।** तब फिर ये अन्दर की जो भावनाएं हैं ऐसे विकसित हो जाएंगी कि आपके अन्दर से धर्म की सुगन्ध बहेगी। जब शिवतत्व के सागर में आप घुल जाते हैं तब आपको पता होता है कि ये सब शिव के ही अंग–प्रत्यंग हैं, वे सब अपने ही हैं, ये सब हमारे अन्दर हैं।

**आप अपने शिवतत्व पर उतरिये ताकि वो आपको सारे गुणों से अलंकृत कर दें। शिवतत्व में ऐसे गुण हैं जो सहज में ही आपके अन्दर धर्म आ जाएगा, सहज में ही आपके अन्दर सुबुद्धि आ जाएगी, सहज में ही सारा ज्ञान आपके अन्दर आ जाएगा, सहज में ही आपके अन्दर माधुर्य आ जाएगा, सहज में ही परिपक्वता आ जाएगी।** न जाने कितने ही गुण सहज में आपके अन्दर आ सकते हैं। लेकिन पहले ये जान लेना चाहिए नम्रतापूर्वक अभी हम उस तत्व पर उतरे कि नहीं? हमें उतरना है और दूसरी ये कि सारी ही शक्तियाँ सहज में हमारे से प्रस्फुटित हो रही हैं, कुछ करना नहीं पड़ेगा। आप अपने को देखो, अपने को जानो।

आज शिव जी की स्तुति गाते हुये जो आह्लाद आपमें आया, ये शक्ति शिव ने हमें दी है, इसलिए शिव को आनन्ददायक कहते हैं। आनन्द में जो निरानन्द है, सिर्फ आनन्द, उसमें आनन्द है। ये आह्लाद जो है, ये हमारी भावनाओं से जुड़ा है, भावनाओं में उभरता है, जैसे एक फूल से उसकी सुगन्ध मुखरित होती है उसी प्रकार हमारे हृदय में जो भावनाएं होती हैं–किसी चीज के प्रति अच्छी, उदार, प्रेममय, सुन्दर ऐसी भावनाएं हैं, शुद्ध भावनाएं हैं, उस भावना की जो सुगन्ध है, वही आह्लाद है। हम उसी आह्लाद में आनन्दमय होते हैं और फिर किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं रहती। इसको उभारने वाले, इसको जतन से रखने वाले और उचित समय पर इसका अनुभव लेने वाले ये शिव जी हैं क्योंकि वे स्पन्द के माध्यम से हमें देते हैं। अभी भी किसी बड़े साधु संत का नाम लो तो सारे बदन पर रोम खड़े हो जाते हैं। एकदम से स्पन्द, वे लहरियाँ दोनों बहना शुरु हो जाती हैं।

ये जो **आत्मीयता** है न, ये आप शिवतत्व से प्राप्त करते हैं। एक दूसरे की मदद करने के लिये, एक दूसरे को सँवारने के लिये आपको जो मोड़ते हैं, खींचते हैं वो शिवतत्व हैं। .....ये जो नितान्त आपस की जो खींच है, जो आत्मीयता है ये आप शिवतत्व से प्राप्त कर सकते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, १९.२.१९९३**

..... सर्वप्रथम हमें अपने शिवतत्व को स्थापित करना चाहिए। ....आनन्द, प्रेम एवं सत्य के तत्व को। इसमें बहुत सी समस्याएं भी हैं क्योंकि लोग श्री शिव के ब्रह्माण्डीय स्वभाव को नहीं समझते। उदाहरण के रूप में मैंने सुना है कि लोग शिवतत्व और विष्णुतत्व पर झगड़ते हैं। शिवतत्व तक उठने के लिये आपके पास श्री विष्णु भी हैं और उनकी शक्ति भी है। दोनों भिन्न नहीं हैं, एक दूसरे के सम्पूरक हैं। ......श्री विष्णु के बिना आप श्री शिव तक नहीं पहुँच सकते और बिना विष्णुतत्व को समझे आप शिवतत्व पर नहीं बने रह सकते। कुण्डलिनी भी सुषुम्ना मार्ग से उठती है। **वह (कुण्डलिनी) शिव का तत्व है और विकास प्रक्रिया में वह श्री विष्णु द्वारा बनाए गए मार्ग से उठती है। तो किस प्रकार आप दोनों में से एक के बिना चल सकते हैं? एक मार्ग है तो दूसरा लक्ष्य।**

**प.पू.श्री माताजी, पुणे, ५.३.२०००**

..... सहजयोग में आने के बाद, आपकी स्थिति वो हो जाती है जो आप जीवात्मा कहना चाहिए, या आपके अटेंशन जो हैं, **चित्त जो है वह शिव जी के चरणों**

**में लीन हो जाता है और शिव जी के चरणों में लीन होते ही क्या होता है कि आपके अन्दर ही पंचतत्व के जो गुण हैं वो भी बिल्कुल सूक्ष्म हो जाते हैं। सहजयोग में गर आप शिवतत्व में जागृत हो जाएं तो आपके अन्दर के जितने सूक्ष्म-सूक्ष्म, सूक्ष्मतर कहना चाहिए, जो भाव हैं, जो स्थिति है, वो जागृत हो जाती है।**

ऐसा आदमी जिसमें शिव जागृत है, उनको कौन हाथ लगा सकता है। ऐसा आदमी हमेशा संरक्षित है। अपने वैयक्तिक जीवन में सहजयोग में आपको शिव जी का ही अनुसरण करना है, क्योंकि नहीं करेंगे तो पहली चीज़ है दिल की बीमारी हो जाएगी। I like it, I do not like it इसमें दो तरह का खेल होता है एक तो अति क्रोध से हार्ट पकड़ जाता है और दूसरा अति क्रोध के बाद पश्चाताप हो तो अन्जाइना की बीमारी हो जाती है। ......आप अपना संरक्षण श्री शिव में खोजें।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १४.२.१९९९**

कभी-कभी श्री शिव जी की करुणा अत्यन्त तर्कविहीन प्रतीत होती है, परन्तु उसके पीछे बड़ा तर्क निहित होता है और वह तर्क यह है कि उनके हर कार्य से किसी बहुत बड़ी समस्या का समाधान होता है ........तीन शक्तियों की कार्यशैली की सारी लीला यह दर्शाने के लिए है कि अन्ततः सत्य की विजय होती है। सर्वप्रथम श्री शिव की करुणा एवं उनका भोलापन है, दूसरे स्थान पर श्री विष्णु की लीला है और तीसरे स्थान पर श्री ब्रह्मा की लीला है जो सारा सृजन करती है।

**प.पू.श्री माताजी, २६.२.१९९५**

# विशुद्धि चक्र

## <u>१. योगेश्वर श्रीकृष्ण</u>

**श्री विष्णु** शक्ति का पूर्ण प्रादुर्भावयुक्त अवतरण श्री कृष्ण रूप में हुआ, इसलिए उन्हें पूर्णावतार कहते हैं। इतना ही नहीं, वे विराट हैं। विराट का अर्थ है महान; महान भगवान जिसे हम अकबर भी कहते हैं। मुसलमान भी इसे स्वीकार करके कहते हैं 'अल्लाह-हो-अकबर।'

**– श्रीकृष्ण का अवतरण सम्पूर्ण रूप में हुआ। जैसे चन्द्रमा की सोलह कलायें हैं, उनकी भी सोलह पंखुड़ियाँ हैं। अत: वह सम्पूर्ण हैं, वह पूर्णिमा हैं – पूर्ण चन्द्रमा। विष्णु के अवतरण के साथ वे पूर्ण थे और यह पूर्णिमा अभिव्यक्ति हुई। राम के अवतरण में जो कुछ भी कमी रह गयी थी इन्होंने उसे दूर किया। दायें हृदय में बारह ही पंखुड़ियाँ हैं, विशुद्धि में सोलह। जिन बातों की ओर लोगों का ध्यान ही नहीं जाता, इन्होंने वह सब दर्शायीं।**

**प.पू.श्री माताजी, २८.४.१९९४**

..... श्रीकृष्ण ऐसे व्यक्ति थे, जो सत्य पर अडिग थे, वे सत्य में स्थापित थे और जो कुछ भी उन्होंने किया वह सत्य के सिद्धातों के अनुरूप था। हर असत्य चीज को उन्होंने समाप्त करने का प्रयत्न किया और सत्य के माध्यम से स्वयं को स्थापित किया। वे सत्य की प्रतिमूर्ति थे, और उन्होंने इस बात को सिद्ध किया कि किस प्रकार हर चीज़ में सत्य व्यापक हो सकता है।

कृष्ण शब्द का उद्भव कृषि शब्द से है। कृषि अर्थात खेती-उन्होंने आध्यात्मिकता के बीज बोए और उसके लिये उन्हें सोचना पड़ा कि हमारी आध्यात्मिक स्थिति क्या है? हमारी आध्यात्मिक भूमि कैसी है? श्री राम के समय उन्होंने बहुत सारी मर्यादाएं बनायी थीं, पर वे सब मात्र मानसिक बन्धन थे, वैसा करना न तो स्वाभाविक था और न सहज; परिणामस्वरूप लोग अत्यन्त गम्भीर हो गये, वे न तो ज्यादा बातचीत करते थे, न ही हँसते थे और न ही किसी चीज़ का आनन्द लेते थे। अत: श्री कृष्ण ने निर्णय किया कि सर्वप्रथम वो लोगों को बन्धनों से मुक्त करेंगे।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ५.९.१९९९**

..... **लोगों की गलत धारणाओं को तोड़ने और उनकी शक्ति जागरण की**

**बात बताने के लिये श्रीकृष्ण आए, उन्होंने लीला रची और लोगों को जागृत करने का प्रयास किया।** लोगों को सामूहिकता में लाने का प्रयास किया। राधा जी साक्षात महालक्ष्मी थीं, महालक्ष्मी तत्व से ही उत्थान होता है। वे गोपियों की नग्न पीठ पर दृष्टिपात करते कि उनकी कुण्डलिनी जागृत हो जाए, घड़ा फोड़ते थे ताकि जमुना जी का चैतन्यित जल पीठ पर बहे तो जागृति हो जाए। रास में सबको नचाकर वे राधा की शक्ति को सबमें संचारित करते थे। मुरली बजाते थे, यह भी एक तरह की कुण्डलिनी है–छ: चक्रों की भाँति बाँसुरी में भी छ: छेद होते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, २८.२.१९९१**

..... होली क्या थी? होली में यही था कि जो पानी यमुना जी में बहता था उसमें श्री राधा जी के पैर पड़ने से वो चैतन्यमय हो जाता था, उस पानी को गगरी में लेकर उसमें लाल रंग घोल करके और जब वो किसी की पीठ पर छोड़ते थे तो असल में वो उनकी कुण्डलिनी ही जागृत करते थे।

– श्रीकृष्ण ने जितनी भी पूजाएं थीं (जैसे–गोवर्धन पूजा) सबको बन्द करवा के कहा कि पूजा–वूजा मत करो तुम, और उस आत्मा की ओर बढ़ो जिसको तुम्हें पाना है, और छोटी–छोटी चीज़ों में मत खोओ। क्षुद्र चीज़ों में नहीं खोना है।

**प.पू.श्री माताजी, २९.३.१९८३**

..... जो भी कार्य उन्होंने किया उसमें **उदारता** की पराकाष्ठा है। पूर्ण **विवेक** के साथ सारे कार्य किये, वे इतने विवेकशील थे कि अपने मामा कंस का वध करने से भी नहीं चूके, उनके लिये सांसारिक सम्बन्धों का बहुत अधिक महत्व नहीं था।

**प.पू.श्री माताजी, १८.८.२००२**

..... श्रीकृष्ण इतने **चतुर** और **ज्ञानगम्य** हैं क्योंकि वो बुद्धिरूप हैं, वो विराट हैं। उनका समस्त प्रेम करुणा और सुन्दरता सभी गोप–गोपियों मात्र के लिये थी। राजा के रूप में उनका जीवन समझ से परे और रहस्यपूर्ण रहा लेकिन सहजयोगी समझ सकते हैं। जब वे राजा बने, उन्हें विवाह करना पड़ा। **उन्होंने पाँच विवाह किये, वे पाँच विवाह वास्तव में पंचतत्वों के परिणामस्वरूप थे। श्रीकृष्ण के पास सोलह हजार शक्तियाँ थीं, शक्तियों को स्त्रीरूप में अवतरित होना पड़ा, वे सोलह हज़ार राजकुमारियाँ बन गयीं** और एक राजा ने उनका हरण कर लिया और जब राजा उन नारियों को दूषित करना चाहता था, श्री कृष्ण ने आक्रमण करके सोलह

हजार राजकुमारियों को मुक्त करा दिया, उन्हें अपने साथ ले आए, **उनसे नियमानुसार विवाह किया। वास्तव में ये विवाह तो उनका अपनी शक्तियों का वरण करना था।**

श्रीकृष्ण ने उन शक्तियों का प्रयोग विभिन्न वस्तुओं के सृजन में किया। यदि श्रीकृष्ण अवतरित न हुए होते तो हमें आध्यात्मिक जीवन का ज्ञान न हुआ होता। यद्यपि सन्तों और दृष्टाओं के माध्यम से लोगों को आध्यात्मिक जीवन का ज्ञान हुआ लेकिन किसी अवतार ने इसके बारे में बात नहीं की। वामन, परशुराम अवतार आदि हुए लेकिन कोई भी आध्यात्मिक जीवन के बारे में नहीं बोला। पहली बार श्रीकृष्ण ने केवल अर्जुन को आध्यात्मिक जीवन के विषय में बताया। उन दिनों लोग आध्यात्मिकता को जानने की अवस्था में न थे।

..... ऐतिहासिक दृष्टि से हमें श्रीकृष्ण जी के प्रति कृतज्ञ होना चाहिए कि उन्होंने पहली गाँठ खोली। यही कारण है कि इसे विष्णुग्रन्थि कहते हैं। श्रीकृष्ण चाहते थे कि इसका ज्ञान धीरे-धीरे उद्‌घाटित किया जाए। वैसे उनकी जितनी भी लीलाएं थीं सब सहजयोग की थीं और उन्होंने जो कृषि की है वही आज बढ़कर के आप लोगों के रूप में मेरे सामने वो तैयार चीज़ आयी हुई है जिसके कि फल का देना मेरे लिये साध्य है, मुझे देना ही होगा।

**प.पू.श्री माताजी, १९.८.१९९०**

..... गीता समझने के लिये आपको सहजयोग में आना पड़ेगा, सिर्फ गीता पढ़-पढ़ कर कुछ भी गीता समझ में नहीं आएगी। गीता जिसने सुनायी वो श्रीकृष्ण थे, पहले उनके विषय में जान लेना चाहिए। वे बड़े होशियार ही नहीं, वो उस वक्त के राजदूत थे और डिप्लोमेसी का बिल्कुल जो अर्थ है, essence, उसको जानते थे। अब डिप्लोमेसी का essence क्या है? कि कोई ऐसी absurd बात करो जिसको करने से आदमी मुँह के बल गिरे। **कृष्ण का खेल जो है उसको समझने के लिये पहले आपको सहजयोग में उतरना चाहिए। अच्छा मैं समझाने की कोशिश करती हूँ, लेकिन आप भी समझने की कोशिश करें-**

श्रीकृष्ण ने कहा कि आपको **'ज्ञान'** होना चाहिए। ज्ञान माने क्या? ज्ञान माने आपके सेंट्रल नर्वस सिस्टम में आपको जानना चाहिए कि परम क्या है, बुद्धि से नहीं, .....जिससे आप स्थितप्रज्ञ होते हैं, साफ साफ उन्होंने गीता के दूसरे ही चैप्टर

में यह कह दिया, व्याख्या दे दी कि सहजयोगी कैसा होना चाहिए। ......सर्वप्रथम उन्होंने कहा कि आत्मानुभव प्राप्त करके स्थितप्रज्ञ हो जाओ। ........दूसरी चीज़ उन्होंने बतायी, वो बतायी बहुत मज़ेदार तरीके से कर्म की, कि बेटे तुम कार्य करते रहो और सब कार्य परमात्मा के चरणों में डाल दो; .......मतलब पहले आत्मा को प्राप्त करो फिर आगे की बात करो। आप जब पार हो जाते हैं तो क्या कहते हैं–आ रहा है, जा रहा है, हो रहा है, आप यह नहीं कहते कि 'मैं आ रहा हूँ', 'मैं ये हूँ', 'मैं कर रहा हूँ' ऐसे तो कोई नहीं कहता .....तृतीय पुरुष (थर्ड पर्सन) में आप बात करने लगते हैं–अकर्म।....

**भक्ति** के लिये कृष्ण ने कहा 'पत्रम् पुष्पम् फलम् तोयम्' जो भी पत्र, पुष्प, फल, पानी भी आप दीजियेगा हम स्वीकारेंगे, लेकिन देने के टाइम में एक शब्द में नचाया है जो लोगों की समझ में नहीं आता। कहा कि तुमको **अनन्य भक्ति** करनी होगी। अनन्य जब दूसरा नहीं रह जाता, जब आप हमारे अंग–प्रत्यंग हो जाते हैं, जब आप पराभक्ति में उतरते हैं तब हम लेंगे, उसके पहले नहीं। लेकिन अनन्य शब्द को तो हम खा गये। ........

सीधे तीन बातें आप समझ सकते हैं इसमें। उनका कर्मयोग, उनका ज्ञानयोग और उनका भक्तियोग–कि अगर परमात्मा को पाना है तो पहले उसका अंग–प्रत्यंग बनना चाहिए, अनन्य होना चाहिए। जब तक आप अनन्य नहीं हैं, योग नहीं पा सकते। अनन्य भक्ति जो है उसको प्राप्त होना चाहिए, ये कृष्ण ने साफ–साफ कह दिया है।

कृष्ण को समझने के लिये तो तीक्ष्ण दृष्टि चाहिए, क्योंकि वे बुद्धि की बिल्कुल पराकाष्ठा हैं। आप उनके सामने ठहर नहीं सकते, उनकी बुद्धि के सामने, इतने प्रकाशवान बुद्धिमान वो हैं, और वो चाहते हैं आपको जरा नचायें जिससे आप ठीक रास्ते पर आएं।

'अब मैं नाच्यो बहुत गोपाल' और ये आप उनसे कहियेगा कि भइया अब नचाना बन्द कर और मुझे तो बस अपने आत्मसाक्षात्कार में उतार ले, तब ही उतारते हैं। इसलिये उन्होंने कहा 'मुझे तू शरणागत हो जा, कृष्ण शरणागत हो जा।'

तो हमारे विशुद्धि चक्र में बसे हुए श्रीकृष्ण जो हैं इनको आपको जागृत करना पड़ेगा। जब तक ये जागृत नहीं होंगे तब तक आपको विशुद्धि चक्र की तकलीफ रहेगी।

**श्रीकृष्ण हमारे अन्त:स्थित सोलह उपकेन्द्रों का नियन्त्रण करते हैं। वे**

**हर चीज़ का नियन्त्रण करते हैं, आपके गला, नाक, आँखे और कानों का वे नियन्त्रण करते हैं।**

**अब विशुद्धि चक्र के भी तीन भाग हैं–दायाँ, बायाँ और बीच का।** जब उनका जन्म हुआ, जब उनकी बहन विष्णुमाया थीं, तब उनके बायें साइड में प्रादुर्भाव था, बालकृष्ण की तरह, और जब वो बड़े होकर राजा हो गये तो उनका दायीं साइड पर विठ्ठल वो राजा बन करके और द्वारिका में राज्य करने गए और बीचोंबीच साक्षात श्रीकृष्ण जो कि हर हालत में श्रीकृष्ण हैं।

..... जो बीच में श्रीकृष्ण हैं वो **लीलामय** हैं। उनके लिये सब सृष्टि एक लीला है। होली भी एक लीला है। उस वक्त उन्होंने संसार में आकर जितनी भी विधि थीं जिसने लोगों को ग्रसित कर दिया था, उसको अच्छे से तोड़–फोड़ के ठीक किया था। किसी भी विधि को नहीं छोड़ा। सुदामा को सिर पर चढ़ा लिया, उन्होंने जाकर के विदुर के घर साग खा लिया। उन्होंने जितनी भी विधियाँ और जितनी भी पारम्परिक बुराइयाँ थीं उन पर ऐसी तलवार उठायी कि सब चीजों को तोड़ताड़ के नष्ट कर दिया। **यह सारी सृष्टि एक लीला है, उनके लिये ये लीला है और जब सहजयोगी पार हो जाते हैं तब उनके लिये भी सारी सृष्टि जो दिखायी देती है, वो एक साक्षी है,** इसकी ओर वो साक्षी के स्वरूप से देखते हैं। वो जो कुछ भी उनको पहले हरेक चीज़ से लगाव था वो छूट करके, वो देखता है, अरे! ये तो नाटक था। ये तो नाटक टूट गया।

**ये श्रीकृष्ण की देन है। ये इन्होंने हमारी चेतना में विशेष रूप दिया है कि जब वो जागृत हो जाते हैं तो हम साक्षी स्वरूप हो जाते हैं।**

श्रीकृष्ण दूसरा एक महत्वपूर्ण कार्य करते हैं, क्योंकि लीलामय हैं, कि हमारे अन्दर जो अहंकार जिससे कि हम हमेशा डरते हैं और दूसरों से दबते हैं, दोनों को वो अपने अन्दर खींच सकते हैं, दोनों को अपने अन्दर समा सकते हैं। इसलिए किसी भी अहंकारी आदमी को आप देख लीजिए–जैसा कि आपने देखा कि दुर्योधन को बहुत अहंकार था, उसको उन्होंने ठिकाने लगा दिया। साड़ी द्रौपदी की बढ़ती गयी, दु:शासन थक गया, उसका अहंकार चकनाचूर हो गया।

जो भी अहंकारी आदमी होता है, उस पर उनकी गदा अगर चल पड़े तो वो खेल में ऐसा गच्चा देते हैं कि वो आदमी परास्त हो जाए। उसी प्रकार दब्बू आदमी है या कोई आदमी जो समाज से दबा हुआ है, जो दरिद्र है, जैसे कि सुदामा, उसका मान

करना, उसके मित्रत्व को इतना बढ़ावा देना और उसके लिये इस कदर दिल भर के, दिल खोल के सब कुछ देना, ये भी काम श्री कृष्ण का है।........

आज छ: हजार वर्ष हो गए वो यहाँ पधारे थे, उनको किसने जाना? सिर्फ गीता अर्जुन से बतायी, पर लिखायी किससे? वो सोचना चाहिये। देखिये कृष्ण की लीला हर जगह बन्धनों को किस तरह से तोड़ती है! लिखायी उससे जो पाराशर का लड़का था, लेकिन वास्तव में एक धीमरनी का लड़का था, वो भी किसी कायदे कानून का नहीं, बेकायदा। इसलिए व्यास से लिखवायी कि ऐसा ही आदमी सद्पुरुष कैसे हो सकता है? क्योंकि जाति और उनके बन्धन और ये दिखाने के लिए कि (बहुत कायदे कानून करने वाले लोगों को) कि **सद्पुरुष कहीं भी पैदा हो सकता है। सद्पुरुष की जाति, धर्म आदि कुछ नहीं पूछा जाता लेकिन यही पूछा जाता है कि सद्पुरुष कौन है?**

– हर एक को, उनकी जो चुहल थी, उस **चुहल** से हर एक को ठीक कर दिया। उनकी चुहल बड़ी प्यारी थी, उनकी चुहल बहुत गहरी थी और इतनी तीक्ष्ण थी कि उसके चक्र से कोई बच नहीं सकता।

– उनकी राधा क्या थी? आह्लाद; आदिशक्ति जो दुनिया को आह्लाद दे, जिससे मन प्रसन्न हो। ये कृष्ण की मुख्य इच्छा थी कि सबसे अपना प्रेम बाँटिए, इसलिए उन्होंने होली का पर्व प्रारम्भ किया था। चाहे जो हो, आपका जमादार हो, सबसे गले मिलिए और हम लोग जो हैं उस वक्त सबको गाली गलौच करते हैं, गन्दगी करते हैं, अपनी ज़बान खराब करते हैं। जो ज़बान श्रीकृष्ण की वजह से चल रही है, वहाँ हम लोग गाली गलौच करते हैं। **श्रीकृष्ण की मंगलमयता, उनकी मधुरता, उनकी मोहकता, वो हमारे जीवन में आनी चाहिए। हमको बहुत ही माधुर्य से एक दूसरे से बात करनी चाहिए।**

**प.पू.श्री माताजी, १६.३.१९८४**

..... **श्रीकृष्ण एक ईश्वरीय राजनीतिज्ञ थे।** ईश्वरीय राजनीति क्या है? आपको चिल्लाना नहीं है। यदि आप किसी को परिणाम विशेष तक ले जाना चाहते हैं तो सबसे पहले आपको विषय परिवर्तन करना होगा। यह बड़ा चतुराई का कार्य है। किसी व्यक्ति के साथ पूर्ण तादात्म्य करना उसके साथ खेलने जैसा है। व्यक्ति को जान लेना चाहिए कि राजनीति का निष्कर्ष परोपकारिता है। मानव मात्र के हित का

लक्ष्य तुम्हें प्राप्त करना है, यदि आप यह कार्य कर रहे हैं तो अपने या किसी व्यक्ति विशेष के स्वार्थ के लिए नहीं कर रहे हैं, अत: चीखने की कोई आवश्यकता नहीं, इसके साथ खेल करते रहें और इसे परोपकारिता तक ले जाएं।

श्रीकृष्ण ने हमें मधुरतापूर्वक सत्य बोलने को ऐसा सत्य जो परोपकार के लिए हो, माना कि आपका सत्य व्यवहार इस क्षण किसी व्यक्ति विशेष को अच्छा न लगे लेकिन यदि हित ही आपका लक्ष्य है तो भविष्य में वही व्यक्ति आपके प्रति अनुग्रहीत होगा। परोपकार के लिए यदि आपको झूठ भी बोलना पडे तो कोई बात नहीं क्योंकि विशुद्धि के शासक श्रीकृष्ण इस सत्य को जानते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, सफरौन, यू.के, १४.८.१९८९**

..... श्रीकृष्ण (कुबेर) अत्यन्त चालाक हैं, अत्यन्त छली व्यक्तित्व। हर कार्य के पीछे उनकी चालाकी होती है। धन सम्बन्धी मामलों में भी वे पहले आपको मूर्ख बनाते हैं कि धन के पीछे दौड़ो और तब आपको पता चलता है कि ऐसा करना अत्यन्त मूर्खता थी।

..... वे वैभव के देवता, महान देवता थे, वे जानते थे कि धन-दौलत का किस प्रकार उपयोग करना है और धर्मपूर्वक, अधर्म द्वारा नहीं, किस प्रकार धनार्जन करना है।

**प.पू.श्री माताजी, काना जोहारी, १८.८.२००२**

..... श्रीकृष्ण अमेरिका के शासक देव हैं।

**प.पू.श्री माताजी, २९.७.२००१**

..... श्रीकृष्ण का एक अन्य गुण है कि वे गोचर हैं अर्थात आकाश तत्व से बने हैं तथा सर्वत्र व्याप्त हो जाते हैं। अणु, रेणु, परमाणु में, सभी में वे पेंठ सकते हैं। तीनों प्रकार के अणुओं को वे आन्दोलित करते हैं क्योंकि श्रीकृष्ण हर चीज़ में प्रवेश कर सकते हैं, इसी कारण वे पदार्थ, पशु, मानव, आत्मसाक्षात्कारी व्यक्तियों में व्याप्त हो जाते हैं। पदार्थों में मात्र चैतन्य लहरियों के रूप में, पशुओं में मार्गदर्शक के रूप में होते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, न्यू जर्सी, अमरीका, २.१०.१९९४**

..... श्रीकृष्ण खाकर भी नहीं खाते, सोकर भी नहीं सोते, पत्नियाँ होते हुये भी वे ब्रह्मचारी थे। इसी कारण वे योगेश्वर हैं।

**प.पू.श्री माताजी, २.१०.१९९४**

..... योगेश्वर की पहचान है सदा मुस्कराते हुए, बिना व्यंगात्मक हुए हर चीज़ के ज्ञान से परिपूर्ण और अत्यन्त स्नेहमय।

..... यही श्रीकृष्ण का चरित्र है कि हम अपने अन्दर झाँके और देखें कि हमारे अन्दर खुद कौन–कौन सी चीज़े हैं, जो हमें दुविधा में डाल देती हैं। ––––– श्रीकृष्ण के जीवन में यह दिखाया गया कि एक छोटे लड़के जैसे वो थे, बिल्कुल जैसा शिशु होता है, बिल्कुल अज्ञानी (अबोध) वैसे वो थे। वो अपने को कुछ समझते नहीं थे। अपनी माँ के सहारे वो बढ़ना चाहते थे। इसी प्रकार आप लोगों को भी अपने अन्दर देखते वक्त ये सोचना चाहिए कि हम एक बालक हैं। **बालक यानी अबोधिता–भोलापन और उस भोलेपन से हमें अपने अन्दर देखना चाहिए और उसी से अपने को ढ़कना है।** .........अब श्रीकृष्ण जी की जो बात है वो यही है कि बचपन में तो वो एकदम भोले थे और बड़े होने पर उन्होंने गीता समझायी जो बहुत गहन है। ये कैसे हुआ कि मनुष्य उसमें बढ़ गया। **इसी प्रकार हम भी सहज में बढ़ सकते हैं।**

.....श्रीकृष्ण से बढकर कोई योगी मैं मानती नहीं हूँ, क्योंकि उन्होंने यह रास्ता बताया कि तुम अपने अन्दर की गलतियाँ देखी, अपने अन्दर के दोष देखो। अपने दोषों से परिचित होना चाहिए। बजाय इसके कि हम और लोगों के दोष देखें अपने ही दोषों को देखकर हम हैरान हो जाएं कि कितने सारे राक्षस पाल रखें हैं अपने अन्दर, कितनी गन्दी बातें हम सोचते रहते हैं। दोष देखने से हम अपनी सफाई करते हैं और उन दोषों को छोड़ देते हैं। **श्रीकृष्ण का जो सन्देश है वह यह है कि अपने अन्दर झाँको और देखो।**

**प.पू.श्री माताजी, पुणे, १०.८.२००३**

..... इस आदिपुरुष का महानतम पक्ष ये है कि वे योगेश्वर थे, वे योग के ईश्वर थे–योगेश्वर। परमात्मा से हमारे योग के वे स्वामी थे।

**प.पू.श्री माताजी, लंदन, १५.८.१९८२**

..... योगेश्वर का एक अन्य महान गुण उनकी पूर्ण सद्–सद् विवेक शक्ति थीं। वो जानते थे कि कौन राक्षस है और कौन नहीं है? कौन अच्छा है और कौन बुरा, कौन भूत बाधित है और कौन नहीं, कौन अबोध है और कौन नहीं? यह गुण उनके अन्तर्रचित था–सद्सद् विवेक की पूर्ण शक्ति।

**प.पू.श्री माताजी, जिनेवा, २८.८.१९८३**

..... **धर्म का जब पतन होता है तो उसकी पुनर्स्थापना के लिए वे (श्रीकृष्ण) आते हैं......विष्णु के स्तर पर वे हर बार धर्म की स्थापना करने के लिए पृथ्वी पर अवतरित होते हैं परन्तु श्रीकृष्ण के स्तर पर वे योगेश्वर रूप में आते हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, लंदन, १५.८.१९८२**

..... श्रीकृष्ण संहार शक्ति हैं। वे विनाशकारी शक्ति हैं। यह अच्छी बात है कि अपने सारे आयुधों के साथ वे हमारी रक्षा के लिए आते हैं परन्तु उनके पास सुदर्शन चक्र भी है। सुदर्शन–सु अर्थात शुभ, दर्शन अर्थात देखना। वे हमें शुभ दर्शन देते हैं। आप उनके साथ चालाकियाँ करें तो वे सब आपकी गर्दन पर आती हैं और तब आपको अपने शुभ दर्शन होते हैं कि अब आप कहीं हवा में लटक रहे हैं।

**प.पू.श्री माताजी, लंदन, १५.८.१९८२**

..... धर्म और कर्तव्य – इसमें जो कशमकश होती है, उस वक्त यह सोचना चाहिए कि **धर्म कर्तव्य से ऊँचा है** और उससे भी ऊँची चीज़ है 'आत्मा'। यानि जो छोटा परिधि बँधा हुआ निमित्त, जो कुछ भी हमारा वलय है, goal है उससे **जो ऊँचा goal है उसको पाना अगर है तो इस छोटे को छोड़ना पड़ेगा।** और यही श्रीकृष्ण ने शिक्षा दी। श्रीकृष्ण ने कहा कि गर आपको हित के लिये झूठ बोलना पडे तो झूठ बोलिये। –––––बड़े ध्येय के लिये ये छोटी चीज़ें हैं, उनको छोड़ना पड़ेगा। यही श्रीकृष्ण ने अपने जीवन में आकर बताया।

**प.पू.श्री माताजी, नई दिल्ली, २९.३.१९८३**

..... श्रीकृष्ण का यह कथन आधुनिक संदर्भ में पूर्ण रूप से सत्य उतरता है कि जब–जब धर्म का ह्रास होता है और जब–जब संतो को सताया जाता है, मैं संतो को बचाने, राक्षसों तथा नकारात्मक शक्तियों को समाप्त करने के लिये इस पृथ्वी पर आता हूँ। श्रीकृष्ण तत्व की यह जागृति हमारे अन्तस में होनी अत्यन्त आवश्यक है, अर्थात हमें उनके गुणों की जागृति एवं अनुगमन अपने अन्तस में करना है, तभी हमारी शक्तियाँ उचित प्रयोजन के प्रति कार्यरत होंगी।

यही श्रीकृष्ण की पूजा है।

**प.पू.श्री माताजी, १०.८.२००३**

## २. कृष्णशक्ति श्री विष्णुमाया

.....विष्णुमाया अवतरणों तथा घटनाओं की घोषणा करने वाली शक्ति हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से वो अपवित्र चीज़ों को जला भी सकती हैं।

जब आप अपनी गलतियों का सामना नहीं करना चाहते तो बायां विशुद्धि चक्र पकडा जाता है। मैंने गलतियाँ कीं, ठीक है – पर अब मैं उन्हें नहीं दोहराऊंगा। बस, सामना कीजिए, पर वे सामना करना ही नहीं चाहते। वे स्वयं को दोषी मानेंगे– दोषभाव को बायीं विशुद्धि पर डाल कर दोषभाव के काले बादल वे एकत्र कर लेंगे। तब मेघ–गर्जन, काले बादलों के मामूली घर्षण से फट पड़ने वाला विद्युत प्रवाह तथा वर्षा उत्प्रेरक विष्णुमाया ऐसे लोगों पर प्रकोप करती हैं। अचानक उन्हें सदमा लगता है। वे अति सम्वेदनशील और व्यग्र हो उठते हैं, यह अधीरता उन्हें सोचने को विवश कर देती है कि हम अधीर क्यों हैं? क्या समस्या है? उनके अपराध भाव का अनावरण विष्णुमाया शक्ति द्वारा होता है।

.....**महाभारत के समय वे द्रौपदी के रूप में अवतरित हुईं। विष्णुमाया पंचतत्वों में रहने वाली पवित्रता है।** यही पवित्रता विवाह के समय पाँचों पांडवों को दिखाई गई थी। उनकी कौमार्यता (पवित्रता) की शक्ति का उपयोग धर्मनाश करने के इच्छुक कौरवों का भंडाफोड़ करने के लिये किया गया। द्रौपदी ने पांडवों से आग्रह किया कि धर्म की रक्षा के लिये तुम्हें युद्ध करना ही होगा, परिणाम चाहे जो भी हो।

भाई के रूप में श्रीकृष्ण ने सदा उनकी सहायता की। अत: भारत में भाई– बहन सम्बन्ध अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सहजयोगियों में भी ऐसा ही होना चाहिए। हमारे यहाँ रक्षाबन्धन तथा भाई–दूज होता है जिसमें दीवाली, रक्षाबन्धन के दिन हम भाई को राखी बाँधते हैं। यह सभी विष्णुमाया की शक्ति है जो भाई की रक्षा करती है। सम आयु, एक ही सूझ–बूझ, सुरक्षा, प्रेम और पवित्रता के कारण भाई–बहन अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इस सम्बन्ध को विष्णुमाया चलाती हैं।

जब हम इसकी गहनता में जाते हैं तो स्वयं ही विशुद्धि की समस्यायें देख सकते हैं। पश्चिमी देशों के लोग स्वयं को दोषी मानते हैं तथा गलतियों से छुटकारा पाने का प्रयत्न करते हैं। छोटी–छोटी बातों पर दोष–भाव, क्योंकि पाश्चात्य समाज के कायदे कानून ही इतने कठोर हैं। दोष–भाव इतना है कि कोई भी स्वयं को सुधार नहीं सकता, बस, सदा दोष–भाव से ग्रस्त रहता है। जीवन की सूक्ष्मतायें लुप्त हैं।

**सहजयोग में लेने का अर्थ है कि आपकी पूरी बायीं तरफ पकड़ी हुई है, आप ठीक तरह से चैतन्य लहरियों का अनुभव भी नहीं कर सकते क्योंकि आपकी ग्रीवा–नाड़ी पर तो आपका दोष बैठा है। दोष–भाव ने इसे जकड़ रखा है। आप बायीं ओर को महसूस ही नहीं कर सकते।** कोई भयानक बीमारी होने तक आपकी बायीं तरफ की पकड़ बनी रहती है।

**विष्णुमाया की सूक्ष्म बात यह है कि वह सच्चाई जानती हैं, वह चमकती हैं और सब कुछ देख सकती हैं।** इसी प्रकार जब विष्णुमाया आप पर कार्य करने लगती हैं तो वह **सत्य को अनावृत करती हैं,** पर यदि आपकी बायीं विशुद्धि की पकड़ बनी रहती है तो विष्णुमाया चली जाती हैं। तब आप कुछ भी महसूस नहीं करते, आपका बायाँ पक्ष जड़वत हो जाता है।

.....अत: स्वयं को दोषी मानना अनुचित है। यह केवल मनगढ़ंत बात है। स्वयं को दोषी मानने का क्या लाभ है? ऐसा करना व्यर्थ है। आपने यदि कोई अपराध किया भी है तो इसका सामना कीजिए और निश्चय कीजिए कि इसे दुबारा नहीं करूँगा। अपराध को स्वीकार मात्र करते रहने से तो आप यह अपराध बार बार करेंगे और फिर आपको इसकी आदत हो जाएगी।

**यह विष्णुमाया अपनी शक्ति दिखाती हैं, वह ऐसे बहुत से कार्य करती हैं जिससे लोग डर जाएं, किसी भी तत्व में वे प्रवेश कर जाती हैं। यदि वे जल तत्व में प्रवेश कर जाएं तो प्रचंड तूफान की रचना कर देती हैं। वे कुछ भी कर सकती हैं। किसी भी तत्व में जब वे प्रवेश करती हैं तो उत्प्रेरक बन जाती हैं।**

..... आप सहजयोगियों में इन विष्णुमाया की शक्तियों का संचालन करने की योग्यता होनी चाहिए। उनकी पूजा करने की योग्यता भी आपमें होनी चाहिए ताकि वे आपको देख सकें, आपकी देखभाल कर सके, आपके जीवन का संचालन करें।

..... लोगों को धन की इतनी लत लगती है कि जीवन के मूल्यों का पतन होने लगता है। धन प्राप्त करने के लिए लोग सब कुछ करने लगते हैं। मानव का मूलभूत आधार 'पवित्रता' लोगों में नहीं है। जब आप विष्णुमाया की पवित्रता का अपमान करते हैं तो माया अपना खेल दिखाती है और आपको एड्स जैसे रोग हो जाते हैं, और भी बहुत से रोग हो जाते हैं जो असाध्य हैं, जिन्हें गुप्त रोग कहते हैं।

वे कुमारी 'निर्मल' हैं तथा कौमार्य का सम्मान करती हैं। कौमार्य केवल

स्त्रियों के लिये ही नहीं होता, यदि पुरुष भी अपने पतिव्रत और पवित्रता का सम्मान नहीं करते तो उन पर भी विष्णुमाया का आक्रमण होता है **––––विष्णुमाया अत्यन्त शक्तिशाली हैं और वे माया की रचना करती हैं और माया रूप में लीला करती हैं। वे माया को तोड़ती भी हैं तथा किसी भी चीज़ को जला सकती हैं।**

विष्णुमाया सुधारक हैं। जब हम अपने अपराधों को दोष स्वीकृति के नाम पर छिपाते हैं, इन अपराधों को कोई अन्य रंग या नाम देने का प्रयत्न करते हैं तो यह शक्ति व्यक्तिगत, सामूहिक, राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उन अपराधों का भंडाफोड़ करती हैं क्योंकि इनमें किसी भी चीज़ के अन्दर प्रवेश कर जाने की शक्ति है। **सारे प्राकृतिक विध्वंस विष्णुमाया ही लाती हैं।** पर लोगों को चाहिए कि इन प्रकोपों का कारण अपने अपराधों को समझें जिन्हें करने के बाद वे अपनी बायीं विशुद्धि में छिपाये रहते हैं, उनका सामना नहीं करते।

.....एक बार बायीं विशुद्धि जड़ हो जाए तो हँसा चक्र का विवेक भी आपमें समाप्त हो जाता है, तब आपको समझ में नहीं आता कि विध्वंसक क्या है तथा रचनात्मक क्या है। यदि आपकी बायीं विशुद्धि खराब है तो आप विध्वंसक चीज़ों को स्वीकारने लगते हैं। इसी के कारण हिंसा, धोखाधड़ी और भ्रष्टता प्रचलित हुई। इस भयानक अवस्था से बचने का एकमात्र उपाय सहजयोग को भली–भाँति अपनाना है। आत्मविश्वास द्वारा आप बायीं विशुद्धि से छुटकारा पा सकते हैं, पर समस्या यह है कि मैं जब आपको कुछ बताती हूँ तो आपमें दोष–भाव आ जाता है। **जो भी कुछ आपने किया है, वह पूर्णतया समाप्त हो गया है और उसके लिए आपको क्षमा कर दिया गया है** नहीं तो विष्णुमाया आपको दण्डित करतीं।

दायीं ओर के लोग (राजसिक) जो क्रोधित हो जाते हैं, दूसरों पर प्रभुता जमाते हैं तथा अन्य लोगों को वश में करते हैं, उनमें अपने दोषों को सुधारने के स्थान पर बायीं विशुद्धि में रखे रहने की विशेष शक्ति होती है। इसी कारण मैं कहती हूँ कि बायीं विशुद्धि की समस्या अहं का ही उपफल है। दोषग्रस्त होकर आप केवल अपनी ही हानि नहीं करते, दूसरों को भी नुकसान पहुँचाते हैं।

दो अन्य चीजें भी विष्णुमाया को परेशान करती हैं, इनमें से **एक हैं धूम्रपान और दूसरी चीज़ जिसे लोग नहीं जानते वह हैं मन्त्र।** श्री विष्णुमाया ही मन्त्रों को शक्ति देती हैं। यदि आप परमात्मा से योग बनाए बिना ही मन्त्रोच्चारण किए जा रहे हैं तो

आपको उस **शक्ति से जोड़ने वाले तार जल सकते हैं** तथा आपको गले की समस्यायें हो सकती हैं क्योंकि कृष्ण तथा विष्णु में कोई अन्तर नहीं। आपको विराट की समस्या भी हो सकती है।

.....**कुछ लोग उदारता दर्शाकर अपने अपराधों पर पर्दा डालना चाहते हैं। इस प्रकार का आचरण अत्यन्त छलमय है। यह विष्णुमाया पर नहीं चलता। वह आपको अच्छी तरह जानती हैं और यदि आपने उनसे चालाकी करने का प्रयत्न किया तो वे अपनी शक्तियाँ दिखायेंगी।**

हमारी बायीं ओर की सारी समस्यायें विष्णुमाया के क्रोधित होने के कारण होती हैं। वे आपको दण्डित करती हैं, आपके अपराधों का भंडाफोड़ करती हैं, आपको ज्योति प्रदान करती हैं तथा आपके दोष भी दूर करती हैं। हमें कृतज्ञ होना चाहिए कि इतनी शक्तियों से परिपूर्ण विष्णुमाया की यह विशेष पूजा हम आज कर रहे हैं।

श्री माताजी, मैं पूर्णतया निर्दोष हूँ ऐसा यदि आप कहेंगे तो विष्णुमाया अति प्रसन्न होंगी। एक बार जब आप स्वयं को दोषी मानना छोड़ देते हैं तो गलतियाँ करेंगे ही नहीं क्योंकि आप स्वयं में दोष–भाव रख ही नहीं सकते––––स्वयं को अपराधी ठहराने, अपमानित करने तथा घटिया मानने की कोई आवश्यकता नहीं। स्वयं को स्वयं से पृथक करो। आप शीशे में बात कर सकते हैं। नदी पर––––समुद्र पर जा कर कह सकते है देखो मैंने यह अपराध किया है पर अब मैं ऐसा नहीं करूँगा। सभी तत्वों से आप वायदा कर सकते हैं, विष्णुमाया पाँचों तत्वों में हैं, उन्हें आपका संदेश मिल जाएगा।

**प.पू.श्री माताजी, १९.९.१९९२**

# आज्ञा चक्र

## <u>१. भगवान ईसामसीह</u>

श्री ईसा विश्व के आधार है। इस पवित्रता, इस मंगलमयता का सृजन एक अण्डे के रूप में किया गया और फिर इसे दो भागों में तोड़ा गया। पहला भाग श्री गणेश हैं और दूसरा आधा विकसित होकर परिपक्व अवस्था में ईसामसीह बना। ईसा स्वयं ओंकार हैं तथा चैतन्य लहरियाँ भी स्वयं ही हैं। शेष सभी अवतरणों को शरीर धारण करने के लिये पृथ्वीतत्व लेना पड़ा। ईसा का शरीर पूर्णत: ओंकार है तथा श्री गणेश उनका पृथ्वीतत्व हैं। अत: हम कह सकते है कि **ईसा श्री गणेश की अवतरित शक्ति हैं।** यही कारण है कि वे जल पर चल सकते हैं। वे देवत्व का निर्मलतम रूप हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ३.४.१९९४**

..... **आरम्भ में जब श्री गणेश के रूप में उनका (श्री ईसामसीह) का सृजन किया गया......इस शिशु में केवल पृथ्वीतत्व का अंश विद्यमान था.....आज्ञा चक्र पर जिस अन्तिम तत्व में से गुज़रना पड़ा वह था प्रकाशतत्व अर्थात उन्हें दिव्य शक्ति के सच्चे रूप में आना पड़ा–ओंकार रूप में। आप यह भी कह सकते हैं कि चैतन्य लहरियों के रूप में जिसे आप नाद या शब्द ब्रह्म आदि कुछ कहते हैं। अत: उन्हें ब्रह्मतत्व बनना पड़ा और ब्रह्मतत्व बनने के लिए उन्हें अन्य सभी महातत्वों से अलग होना पड़ा। अंतिम तत्व प्रकाशतत्व था, इन्हें (श्री ईसामसीह) इसको पार करना पड़ा। तो उनके अन्दर पृथ्वीतत्व था क्योंकि उबटन के मल से उनका सृजन हुआ तथा और भी तत्व उनमें थे, परन्तु जब वे आज्ञा चक्र पर आते हैं तो बाकी सभी तत्व उन्हें छोड़ने पड़ते हैं और अपने अन्दर मौजूद इन सभी तत्वों को निकालने के लिए उन्हें (श्री ईसामसीह) मरना पड़ता है–पूर्ण, संपूर्ण पावन आत्मा बनने के लिए जो कार्य उन्होंने सूक्ष्म रूप में किया वह स्थूल रूप में कार्यान्वित होता है, इसी कार्य को करने के लिए उन्हें मरना पड़ा। उनके अन्दर जिस चीज़ की मृत्यु हुई थी वह थी उनके अन्दर का पृथ्वीतत्व तथा अन्य तत्व और उनसे 'पावन आत्मा' का उद्भव हुआ।**

उनका पुनर्जन्म हुआ, पावन आत्मा का, शुद्ध ब्रह्मतत्व का, जिसने ईसामसीह के शरीर की रचना की....उन्हें रक्षक इसलिए कहा जाता है क्योंकि मानव

को शारीरिक संवेदना से ऊपर उठाने के लिए उन्होंने यह द्वार पार किया अर्थात् उन लोगों को जो पंचमहाभूतों पर निर्भर करते हैं उन्हें आत्मा के स्तर पर लाने के लिए।

अत: पुनर्जन्म वह है जहाँ आप....अपने चित्त से आत्मा के चित्त पर छलाँग लगा लेते हैं, जहाँ आप अपने चित्त को महसूस कर पाते हैं। यही घटना आपके साथ घटित हुई है, परन्तु जब उनका पुनर्जन्म हुआ तो वे शुद्ध आत्मा, शुद्ध ब्रह्मतत्व बन गए। पुनर्जन्म, मूलाधार चक्र से पृथ्वी तत्व के रूप में आरम्भ हुई, उस दिव्य शक्ति की उत्क्रान्ति की घटना है जिसने वहाँ (मूलाधार चक्र) जन्म लिया और आज्ञा चक्र पर आई। वहाँ पर सभी तत्वों को पार करके अन्तत: सहस्रार में प्रवेश करके पूर्ण ब्रह्मतत्व बनने के लिए ईसामसीह का सृजन किया गया।

**प.पू.श्री माताजी, ११.४.१९८२**

..... ईसामसीह श्रीकृष्ण के पुत्र थे। **वे मानव के चारित्रिक आधार हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, २३.४.२००१**

.....वे एक आदर्श थे, एक आदर्श सन्त, आदर्श साक्षात्कारी व्यक्ति, एक ऐसे व्यक्ति की प्रतिमूर्ति जो हमारी रक्षा करने के लिये स्वर्ग से आए। ईसामसीह ने मृत्यु के पश्चात पुनर्जन्म लिया था। सहजयोग में हमने भी मृत्यु के पश्चात जीवन में प्रवेश किया है। यह बात समझ लेनी चाहिए कि **पुनर्जन्म हम सबके लिये, पूरे विश्व के लिये, ये सन्देश है कि हमें पुनर्जन्म प्राप्त करना है।**

.....ईसामसीह उस समय पर अवतरित हुए जब लोगों को आध्यात्मिकता का बिल्कुल भी ज्ञान न था परन्तु जैसे तैसे सभी कुछ इतनी सुन्दरतापूर्वक कार्यान्वित हुआ कि लोग समझने लगे कि पुनरुत्थान महत्वपूर्ण है। आपका भी जब पुनर्जन्म होता है तो कुण्डलिनी उठती है और आपका सम्बन्ध दिव्य शक्ति से जोड़ती है।

.....ईसामसीह एक अत्यन्त साधारण एवं गरीब व्यक्ति थे, एक बढ़ई के पुत्र। उनके लिये पैसा अधिक महत्वपूर्ण न था। बेकार था। उनके लिये आत्मा सभी कुछ था। वे अत्यन्त ही विवेकशील थे और जिस प्रकार उन्होंने गिरजाघरों में बड़े–बड़े पादरियों से धर्म की बातचीत की, वह अत्यन्त आश्चर्यजनक है कि किस प्रकार एक नन्हा बालक धर्म को इतनी गहनतापूर्वक समझता है। नि:सन्देह उस समय वे छोटे से बालक थे परन्तु वे परमात्मा के बन्दे थे, परमात्मा द्वारा सृजित। वे श्री गणेश थे, **वे ॐ**

**हैं, वे ज्ञान हैं,** सभी कुछ हैं। इसके बावजूद भी उन्हें कोई पहचान नहीं सका क्योंकि लोग सत्य को नहीं पहचान सकते।

**प.पू.श्री माताजी, टर्की, २२.४.२००१**

..... **ईसामसीह के जीवन का सबसे बड़ा उद्देश्य ये था कि आपके अन्दर जो आज्ञाचक्र है उसका भेदन करें और इसलिए उन्होंने अपने को क्रॉस पर टंगवा लिया और उसके बाद फिर से जीवित हो गए। यह चमत्कार लगता है, पर परमेश्वरी कार्य कोई चमत्कार नहीं। इस प्रकार उन्होंने दिखाया कि मनुष्य इस आज्ञाचक्र से बाहर जा सकता है।**

**प.पू.श्री माताजी, २५.१२.२०००**

..... **आज्ञाचक्र को खोलने के लिये फाँसी चढ़ने की आवश्यकता नहीं है और न ही क्रूसारोपित होने की आवश्यकता है। आवश्यकता है अहम् को क्रूसारोपित करने की।** अहं ऐसी चीज़ है जिससे जल्दी से मुक्ति नहीं प्राप्त की जा सकती।

.....ईसामसीह को अत्यन्त युवावस्था में ही क्रूसारोपित कर दिया गया। उनका क्रूसारोपित होना बताता है कि वे मृत्यु से नहीं डरते थे और जानते थे कि वे पुनर्जन्म पा लेंगे। ये कार्य उन्हें आज्ञाचक्र के माध्यम से करना पड़ा। आज्ञाचक्र बहुत ही तंग है और उन्हें इस मार्ग में से गुज़रना था और इस पर स्थापित होना था।

**प.पू.श्री माताजी, २२.४.२००१**

..... आज्ञाचक्र पर उन्होंने दो मन्त्र बताये, इन्हें हम बीजमन्त्र कहते हैं – हँ और क्षम्। क्षमा का मतलब क्षमा करो। क्षमा करना, यह सबसे बड़ा मन्त्र है, जो आदमी क्षमा करना जानता है उसका ईगो (अहं) जो है वो नष्ट हो जाता है। ......सो दो चीज़ें ईसामसीह ने बतायीं, एक तो यह **कि आप सबको क्षमा कर दो, दूसरी बात जो कही उन्होंने कि तुम आत्मा हो, इस आत्मा को जानो।** आत्मा को तो कोई छू भी नहीं सकता। उसको सता नहीं सकता।

**प.पू.श्री माताजी, २५.१२.२०००**

..... ईसामसीह ने आत्मबलिदान किया। अपने जीवन को बलिदान करने का कार्य स्वीकार करके और फिर स्वयं को पुनर्जीवित किया। आज्ञाचक्र के संकुचित मार्ग से वे गुज़रे ताकि आप लोग केवल इतना कहकर ठीक हो सको कि 'मैं सबको क्षमा करता हूँ।' क्षमा का गुण जब इतना शक्तिशाली है कि आप इसके माध्यम से मृत्यु

से भी लड़ सकते हैं तो क्यों न क्षमा कर दी जाये ?

..... हमारे आज्ञाचक्र को खोलने के लिये ईसा का पुनर्जन्म हुआ। आज्ञाचक्र अति सूक्ष्म केन्द्र है। अपने बन्धनों तथा अहं से प्राप्त विचारों के कारण लोगों की आज्ञा इतनी अवरोधित हो गयी थी कि इसमें से कुण्डलिनी का पार होना असम्भव था। ईसा क्योंकि चैतन्य का ही रूप थे, अत: पुनर्जन्म का खेल रचा गया। हमें समझना चाहिए कि ईसा की मृत्यु द्वारा ही हमें हमारा पुनर्जन्म प्राप्त हुआ है **और भूतकाल की मृत्यु हो गयी, हमारे पश्चाताप और बन्धन समाप्त हो गए।**

**प.पू.श्री माताजी, इटली, १४.४.१९९२**

..... ईसामसीह ने हमें यह शिक्षा दी कि उनके हृदय में मानव मात्र के लिये प्रेम था और वे सभी लोगों को पुनरुत्थान के लिये तैयार करना चाहते थे। वे सहजयोग के आने के पूर्व अवतरित हुए। उन्होंने यदि यह कार्य न किया होता तो मेरे लिये यह उपलब्धि प्राप्त करना कठिन होता। इस प्रकार **उन्होंने सहजयोग के लिये स्थितियाँ बनायीं** जिसके कारण आप लोगों के आज्ञाचक्र खुले और आज्ञाचक्र को पार करके कुण्डलिनी को ऊपर ले जाकर आप अपने सहस्रार को, अपने तालूअस्थि क्षेत्र खोल सकते हैं। उन्होंने सोचा कि लोगों के प्रति प्रेम का यही अंग–प्रत्यंग है, इसलिये ईसा ने यह कार्य किया और बहुत से लोगों का हित किया।

**प.पू.श्री माताजी, २२.४.२००१**

..... अगर ईसामसीह इस संसार में न आते और अपने को आज्ञा चक्र में बिठाकर तारण का मार्ग, पुनर्जीवन का मार्ग न बताते तो सहजयोग साध्य न हो सकता। उनका आना अति आवश्यक था।

**प.पू.श्री माताजी, २५.१२.१९९०**

..... **सहजयोग में ईसामसीह हमारे अत्यन्त सहायक हैं। ......ईसामसीह हमें इस बात का ज्ञान करवाते हैं कि हम अपने आज्ञा चक्र खोलें, इससे ऊपर उठें। यहाँ हम इसे तीसरी आँख कहते हैं । तीसरी आँख खुलने का अर्थ यह है कि आपके आज्ञाचक्र पर ईसामसीह जागृत हो गये हैं। यही तीसरी आँख हैं।**

ईसामसीह आपके अन्दर साक्षी भाव का सृजन करते हैं और आप पूरे नाटक के दृष्टा मात्र बन जाते हैं। पूरे नाटक को आप देखने लगते हैं और आश्चर्यचकित होते हैं कि आप कितने शान्त हैं, किस प्रकार निर्विचार चेतना में हैं और बिना प्रतिक्रिया करे किस प्रकार हर चीज़ को देखते हैं। यह वह स्थान है जहाँ हमें

ये बात माननी पड़ती है कि ईसामसीह हमारे आज्ञाचक्र पर प्रकट हुए, वहीं उनका पुनर्जन्म हुआ। ये सब हमारे अन्दर घटित हो चुका है। **मशीन के पुर्ज़ों की तरह से हमारे अन्दर सूक्ष्म तन्त्र को बनाया गया है और हमारे अन्दर भिन्न चक्र और ऊर्जा केन्द्र हैं। यह अन्तिम चक्र कठिनतम है, उसे वास्तव में ईसामसीह ने खोला।**

ईसामसीह ने ही ये कार्य करने का साहस किया और इसे इतने सुन्दर ढंग से किया कि अब हमारे अन्दर अहं को देख पाने की योग्यता है। जब आप अपने अहं को देखते हैं तो हैरान होते हैं कि जो भी कार्य आप करते हैं, जितना भी कुछ आप करते रहें, आप थकेंगे नहीं। थकते तो आप इसलिए हैं कि आपका अहं सदैव यही कहता रहता है ओह! आप इतने महान हैं, अन्य लोगों के लिये आप इतना सारा काम कर रहे हैं, आपने तो इतना कुछ प्राप्त कर लिया है, आदि–आदि। तो इसी प्रकार अहम् हर समय हमारी झूठी महानता के विषय में हमें बढावा देता रहता है और हम स्वयं को महान मान बैठते हैं।

.....इस दुष्ट अहंकार का दूसरा पक्ष बन्धन (Conditioning) है। इसका भी अत्यन्त सूक्ष्म सम्बन्ध है। ईसामसीह के प्रति हमें आभारी होना है कि उन्होंने पुनरुत्थान को कार्यान्वित किया ताकि **हर विवेक बुद्धि को प्राप्त कर सकें, परमेश्वरी विवेक को प्राप्त कर सकें। ये ऐसा संघर्ष है, ऐसा मार्ग है, जिसका सृजन उन्होंने किया ताकि अत्यन्त आसानी से हम कठिनाई को पार कर सकें जिससे हमारे अहं और बन्धनों का अन्त हो जाए।**

**प.पू.श्री माताजी, २२.४.२००१**

..... अहंकार को देखने का प्रयत्न करें और उस समय यदि आप ईसामसीह का नाम लेंगे तो अहंकार चला जाएगा। ईसामसीह का नाम लेने मात्र से आपका अहंकार दूर हो जाएगा।

हमारे उत्थान के लिये ईसामसीह अत्यन्त महत्वपूर्ण अवतरण थे। यदि वे स्वयं पुनर्जीवित न हुए होते तो हमें उत्थान प्राप्त न हो पाता। ईसा का पुनर्जीवन आपके जीवन से प्रत्यक्ष है। पहले आप क्या थे और आज क्या हैं, कितना अन्तर है, कितना कायापलट है? उनके बलिदान और पुनर्जीवन ने हम सबके लिये यह परिवर्तित अवस्था प्राप्त करने का मार्ग बनाया है।

पर यह अवस्था मानव के लिये भिन्न है तथा ईसा के लिये भिन्न। ईसा स्वयं

पवित्रता तथा विशुद्धता थे। उनका पुनर्जीवन मात्र एक शारीरिक घटना थी क्योंकि उन्हें कायापलट की कोई आवश्यकता नहीं थी, उन्हें शुद्धिकरण नहीं करना पड़ा। **मृत्यु से उनका पुनर्जीवित होना इस बात का प्रतीक है कि मानव का आध्यात्मविहीन जीवन मृत्युसम है, क्योंकि मानव पूर्णत्व, वास्तविकता तथा पूर्ण सत्य को समझे बिना ही सभी कुछ करता रहता है। उसका हर कर्म अन्ततोगत्वा उसे विनाश की ओर ले जाता है।** यहाँ तक कि इन अवतरणों द्वारा चलाये धर्म भी पतनोन्मुख हैं, इन अवतरणों के प्रतिनिधि कहलाने वाले लोगों में भी धार्मिकता का नामोनिशान नहीं मिलता।

**प.पू.श्री माताजी, इटली, ११.४.१९९३**

..... सहजयोग के द्वारा ही लोगों को पुनर्जीवित करें, उन्हें पुनरुत्थान दें, उन्हें आत्मा का प्रकाश दें। एक ऐसी अवस्था तक उन्हें लायें जहाँ वे समझ सकें कि ठीक क्या है और गलत क्या है। लोगों को आप करुणा एवं प्रेम का एहसास करने दें। ऐसा जब होने लगता है तो हमारे अन्तर्निहित तीसरी शक्ति कार्यान्वित हो जाती है।

**ईसा अपने पर तथा सर्वव्यापक शक्ति पर विश्वास तथा श्रद्धा के अवतरण थे। यही ज्योतिर्मय श्रद्धा है। इस श्रद्धा को समझा जाना चाहिए। वे जानते थे कि वे परमात्मा के बेटे हैं। इसको उन्होंने कभी चुनौती नहीं दी। श्रद्धा के मामले में सहजयोगियों को ईसा की तरह बनना होगा।**

जब ईसामसीह की मृत्यु हुई तो सारे पंचभूत डोल गये। ईसामसीह पंचभूतों के स्वामी थे, पंचभूत डोल गए, भूचाल आ गए और प्राकृतिक विपदायें आयीं। पंचभूतों ने उनकी मृत्यु को महसूस किया, स्वयं ईसामसीह ने नहीं, उन्हें लगा कि इतनी महान शक्ति नष्ट कर दी गयी है। वे नहीं जानते थे कि ईसामसीह पुनर्जीवित हो उठेंगे, इसका उन्हें ज्ञान न था, पर वे इससे बाहर आए।

उनकी मृत्यु हमें शक्ति प्रदान करती है, हमारी मृत्यु नहीं, हम पुनर्जन्म ले चुके हैं और पुनर्जीवन हमारे साथ है, परन्तु हमें इसमें स्थापित होना है। अपने सहजयोग को हमें स्थापित करना है। अपनी ध्यान–धारणा को हमें स्थापित करना है, यही महत्वपूर्ण चीज़ है।––––और आपको अन्य लोगों को पुनरुत्थान प्रदान करना है, यही महत्वपूर्णतम कार्य है।

**प.पू.श्री माताजी, २५.४.१९९९**

..... श्री ईसामसीह ने सारे ब्रह्माण्डों का सृजन किया। ब्रह्माण्ड अर्थात ग्रह। सूर्य ग्रह के अन्दर से पृथ्वी ग्रह का सृजन हुआ और उसमें से आप लोग उत्पन्न हुए और आपके चक्रों में उन्होंने एक छोटे विराट का सृजन किया, वह तुम्हारे आज्ञा चक्र में हैं। यह बलिदान अत्यन्त अत्यन्त महत्वपूर्ण है और यद्यपि यह स्थूल है फिर भी बहुत सूक्ष्म है। चेतना को आज्ञा चक्र के बीच से ऊपर ले जाने के लिए यह घटित हुआ। सूक्ष्म में जो कुछ भी घटित होना होता है उसकी अभिव्यक्ति इस प्रकार से स्थूल में भी होती है और जब ईसामसीह को क्रूसारोपित किया गया तब भी ऐसा ही हुआ। परन्तु पुन: आप ईसामसीह को क्रूसारोपित नहीं कर सकते, जैसे वर्णन किया गया है अब वे एकादश रुद्र बन गए हैं......शिव की सभी (ग्यारह रुद्रों की) शक्तियाँ उन्हें प्रदान की गई हैं। अब तक जब भी उनका जन्म हुआ श्री कृष्ण ने उन्हें अपनी शक्तियाँ प्रदान कीं और वे महाविराट बन गए। यहाँ तक कि उन्हें श्री कृष्ण से भी ऊपर (आज्ञा चक्र) में स्थान दिया गया परंतु अब यदि वे अवतरित होंगे तो उनके पास शिव की विध्वंसक शक्तियाँ होंगी–ग्यारह विध्वंसक शक्तियाँ, केवल एक शक्ति सभी ब्रह्माण्डों को समाप्त करने के लिए काफ़ी है....अब आप उन्हें क्रूसारोपित नहीं कर सकते और समय आ गया है कि हम सब उनका स्वागत करने के लिए तैयार हो जाएं......सभी मूर्खतापूर्ण चीजों को नष्ट करने के लिए वे आएंगे। अत: ये बीच का थोड़ासा समय आपकी उत्क्रान्ति और मोक्ष के लिए लगना चाहिए।

**प.पू.श्री माताजी, लन्दन आश्रम, ६.४.१९८१**

येशु–स्तुति (Lord's Prayer) आज्ञाचक्र का मन्त्र है। आज्ञा चक्र के दो पहलू हैं–हं और क्षम्। 'हं' का अर्थ है 'मैं हूँ' (अहं) और 'क्षम्' अर्थात क्षमा, 'मैं क्षमा करता हूँ (I forgive)।' आज्ञा–चक्र यदि पकड़ रहा है और आप महसूस करते हैं कि आपके अन्दर प्रतिअहं है, तो आपको कहना चाहिए 'मैं हूँ (I am, I am)।' तो 'हं' और 'क्षम्' बीजमन्त्र हैं प्रार्थना के, ये बीज हैं–येशु प्रार्थना के। 'मैं क्षमा करता हूँ (I forgive)।' हमारे अन्दर यदि अहं हो तो हमें कहना चाहिए।

**प.पू.श्री माताजी, ३०.०९.१९८१**

## २. ज्ञानमूर्ति – भगवान बुद्ध

**भगवान** बुद्ध, जैसा आप जानते हैं, गौतम थे। उनका जन्म राजपरिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने मनुष्य को तीन तरह के दु:खों से कष्ट उठाते हुए देखा और वे सन्यासी बन गए। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इच्छाओं के कारण ही ये तीनों प्रकार की समस्यायें हैं और **उन्होंने कहा कि व्यक्ति यदि इच्छायें त्याग दे तो वह सभी समस्याओं से मुक्त हो जाएगा।** उन्होंने वेद, उपनिषद् और अन्य सभी ग्रन्थ पढे। वे बहुत से सन्तों और अन्य लोगों के पास गए, परन्तु उन्हें आत्मसाक्षात्कार प्राप्त नहीं हुआ। वास्तव में वे अवतरण थे। अवतरणों को भी भिन्न प्रकार से आत्मसाक्षात्कार प्राप्ति तक पहुँचना पड़ता है, जिस प्रकार सभी सम्भाव्य शक्तियों को प्रकट होना होता है परन्तु अवतरणों में बहुत अधिक सम्भाव्य शक्ति होती है और यदि द्वार खोल दिया जाए तो वह शक्ति अपनी अभिव्यक्ति करती है।

**बुद्ध ने ये बात महसूस की कि मानव की सबसे बड़ी समस्या उसका अहं है। अपने अहं में व्यक्ति एक के बाद एक अति में चलता जाता है, इसलिए सदैव उन्होंने पिंगला नाड़ी पर कार्य किया और अहं को नियन्त्रित करने के लिए स्वयं को पिंगला नाड़ी पर स्थापित कर लिया।**

आज्ञा चक्र को यदि आप देखें तो इसके मध्य में ईसामसीह हैं, बाईं ओर बुद्ध हैं और दाईं ओर श्री महावीर। सभी को भगवान (लॉर्ड) कहा जाता है क्योंकि वे इन क्षेत्रों के शासक हैं। **आज्ञा का ये क्षेत्र तप का क्षेत्र है, तपस्या का क्षेत्र है क्योंकि इन लोगों ने हमारे लिए तपस्या की। अब हमें तपस्या करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि ये अवतरण हमारे लिए सभी प्रकार की सम्भव तपस्या कर चुके हैं।** यही कारण है कि सहजयोगियों को तपस्या नहीं करनी। अपनी सुन्दर चैतन्य लहरियों के साथ वे अत्यन्त सुन्दर स्थिति में हैं। उन्हें जंगलों में जाने की, समाज से दौड़ने की और ऐसे स्थान पर छिपने की जहाँ बिच्छू, साँप, चींटे तथा जीवन के लिए अन्य खतरे हों, कोई आवश्यकता नहीं है। तो तपस्या का कार्य समाप्त हो गया है। **भगवान बुद्ध ने अपने जीवन काल में और सदैव बताया कि त्याग की कोई आवश्यकता नहीं है। किसी भी प्रकार का त्याग अनावश्यक है।**

भगवान बुद्ध को यदि आप पढ़ें, उनकी प्रारम्भिक शिक्षाओं को यदि देखें तो

आप हैरान होंगे कि किसी भी प्रकार का त्याग अनावश्यक है। उन्होंने स्वयं तो तपस्या की परन्तु वह समय तपस्या का था। उस समय उन्हें ऐसे लोगों की आवश्यकता थी जो जी जान से उनके विचारों का प्रचार कर सकें। अत: सभी ने इस प्रकार का जीवन अपनाया, परन्तु कभी भी उनका विश्वास तपस्या में न था।

.....**सत्य ही उनके जीवन का सारतत्व है। सर्वप्रथम हमें अपने प्रति इमानदार होना पड़ता है।** ----सहजयोग में जब मैं लोगों को देखती हूँ कि वे अपने प्रति ईमानदार नहीं हैं तो उन्हें ये बात समझनी चाहिए कि अहं अत्यन्त चालाक चीज़ है। केवल इतना ही नहीं अहं आपको दूसरे लोगों के अहं का दास बना देता है ---- अहं क्या है? अहं से आपको व्यक्तित्व, चरित्र और स्वभाव मिलना चाहिए। अत: यह समझना आवश्यक है कि आपमें यदि ठीक प्रकार का अहं है तो आपका अपना व्यक्तित्व, चरित्र, सूझ-बूझ, विशेषता और स्वभाव होना चाहिए। **-----अत: अहं को नियन्त्रित करने के लिए हमें श्री बुद्ध की पूजा करनी होगी, श्री बुद्ध को पूजना होगा, परन्तु सर्वप्रथम सिद्धान्त अपनी पावनता का सम्मान करना है। श्री बुद्ध का सम्मान अर्थात अपनी पावनता का सम्मान।**

.....विश्व में तीन प्रकार के लोग हैं एक तो जिन्हें किसी अन्य की चिन्ता नहीं है, एक वो जो दूसरों की ही चिन्ता करते हैं और तीसरे प्रकार के लोग केवल अपने ही बारे में चिन्तित हैं। अत: श्री बुद्ध का पहला सन्देश स्वयं के प्रति ईमानदारी है और इस ईमानदारी का पहला क्षेत्र आपकी पावनता है। -----**मेरा चित्त पावन होना चाहिए, मेरा जीवन पावन होना चाहिए।**

.....भगवान बुद्ध ने कहा था 'बुद्ध शरणं गच्छामि' मैं आत्मसाक्षात्कारी लोगों को प्रणाम करता हूँ। 'धम्म् शरणं गच्छामि' मैं धर्म को प्रणाम करता हूँ अर्थात विश्व निर्मला धर्म को और अन्त में उन्होंने कहा 'संघम् शरणं गच्छामि' अर्थात मैं सामूहिकता को प्रणाम करता हूँ। इस तरह से आप देखें कि उन्होंने तीनों प्रकार के लोगों की समस्याओं को सुलझा दिया। सर्वप्रथम बुद्ध हैं अर्थात आत्मसाक्षात्कार, सभी आत्मसाक्षात्कारी लोगों का सम्मान किया जाना चाहिए और उनके सम्मुख समर्पित होना चाहिए----'बुद्धं शरणं गच्छामि' अर्थात मैं आत्मसाक्षात्कारी (प्रबुद्ध) सन्तों की शरण में जाता हूँ।

.....इसके बाद 'धम्मं शरणं गच्छामि' अत्यन्त महत्वपूर्ण है। हमने विश्व

निर्मला धर्म के लिए क्या किया है? विश्व निर्मला धर्म के लिए जो भी कुछ आवश्यक है, चाहे ये आपका धन हो, चाहे ये आपका घर हो, आपकी अन्य वस्तुएं हों, चाहे ये आपका परिश्रम हो, किसी भी प्रकार का परिश्रम।

.....अहं का नियन्त्रण आप बुद्ध के जीवन में देख सकते हैं। श्री बुद्ध जो प्रकाश थे, जो करुणा थे, आनन्द थे और ज्ञान की मूर्ति थे, उन्होंने कभी किसी की आलोचना नहीं की। सभी भूतों, राक्षसों और असुरों की आलोचना करने का ये भयानक कार्य उन्होंने मुझ पर छोड़ दिया था। उन्होंने सुगम मार्ग अपना लिया–इन सब लोगों से किसलिए लड़ना है। इन्हें इनके हाल पर छोड़ दें।

.....अपने जीवन द्वारा उन्होंने मुझे बहुत सी सुन्दर चीज़ें प्रदान कीं और यदि वास्तव में उनके सारे सारतत्व को अपने अन्दर आत्मसात करना है तो हमें अपने अन्दर वह निर्लिप्तता का भाव स्थापित करना होगा। –––––श्री बुद्ध ने कहा था पूजा मत करो, परमात्मा के विषय में बातचीत मत करो। उन्होंने कहा परमात्मा की बात मत करो, केवल आत्मसाक्षात्कार की बात करो। लोगों को पहले आत्मसाक्षात्कार पा लेने दो। उन्होंने कहा कि किसी भी चीज़ की पूजा मत करो, पूजा ही मत करो क्योंकि वे जानते थे कि पूजा करने के लिए कुछ भी नहीं है। ––––हमें उस कठिन समय के विषय में सोचना चाहिए जिसमें महात्मा बुद्ध अवतरित हुए थे।

उन्होंने हमारे लिए सहजयोग का सृजन किया और उनकी करुणा–वर्षा, कठोर परिश्रम उनके समर्पण और बलिदानों का आनन्द हम ले रहे हैं।

**प.पू.श्री माताजी, बार्सिलोना, स्पेन, २०.५.१९८९**

..... श्री बुद्ध को लगा कि व्यक्ति को जीवन से आगे कुछ खोजना चाहिए – –––आपमें बहुत लोगों की तरह से वे भी अपने परिवार और सुखमय जीवन को त्याग कर सत्य की खोज में चल पड़े –––––सभी कुछ त्याग कर **जब वे एक वट के वृक्ष के नीचे रह रहे थे तो आदिशक्ति ने उन्हें आत्मसाक्षात्कार प्रदान किया। वे विराट के विशिष्ट अंश बनने वालों में से एक थे, इसलिए उन्हें आत्मसाक्षात्कार की प्राप्ति हुई।**

.....सहजयोग में तपस्या का अर्थ है ध्यान–धारणा––––आपको सिर नहीं मुँडवाना, नंगे पाँव नहीं चलना, भूखे नहीं रहना और न ही गृहस्थ जीवन का त्याग करना है।

.....बुद्ध का अर्थ है बोध, अर्थात सत्य को अपने मध्यनाड़ी तन्त्र पर जानना। आप सब बिना कोई त्याग किए बुद्ध बन गए हैं क्योंकि उनका त्याग करना तो मूर्खता थी। यह सब मिथ्या था।

.....श्री बुद्ध की चार बातें आप सबको प्रात:काल कहनी चाहिए। प्रथम 'बुद्धं शरणं गच्छामि' अर्थात मैं स्वयं को अपने प्रकाशित चित्त के प्रति समर्पित करता हूँ, फिर उन्होंने कहा 'धम्मं शरणं गच्छामि' अर्थात मैं स्वयं को धर्म के प्रति समर्पित करता हूँ। यह कोई मिथ्या धर्म नहीं जो विकृत हो गए, इसका अर्थ है कि मैं स्वयं को अपने अन्तर्जात धर्म (धर्मपरायणता) के प्रति समर्पित करता हूँ। तीसरी बात जो उन्होंने कहीं 'संघं शरणं गच्छामि' मैं स्वयं को सामूहिकता के प्रति समर्पित करता हूँ। ----आप पूर्ण के अंग-प्रत्यंग हैं। लघुब्रह्माण्ड वृहत् ब्रह्माण्ड बन गया है। आप विराट के अंग-प्रत्यंग हैं, इस बात का ज्ञान आपको होना चाहिए। इस प्रकार कार्य होते हैं तथा हम नकारात्मक तथा सकारात्मक, अहंकारी तथा नम्र व्यक्तियों को पहचान सकते हैं। हम वास्तविक सहजयोगियों को तथा सहजयोगी कहलाने वाले व्यक्तियों को पहचान सकते हैं तथा मिथ्या लोगों को त्याग देते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, शुडि कैम्प, इंग्लैंड, ३१.५.१९९२**

## ३. श्री महावीर

श्री महावीर का जन्म एक ऐसे समय पर हुआ जब ब्राह्मणवाद ने अत्यन्त भ्रष्ट, स्वेच्छाचारी तथा उच्छृंखल रूप धारण कर लिया था। ......श्री कृष्ण के पश्चात लोग अति लम्पट, स्वेच्छाचारी और व्यभिचारी हो गए। लोगों को इस तरह के उग्र आचरण के बन्धनों से मुक्त करने के लिए इस समय भगवान बुद्ध तथा महावीर ने जन्म लिया।

श्री महावीर एक राजा थे जिन्होंने अपने परिवार, राज्य तथा सम्पदा का त्याग कर सन्यास ले लिया। उनके अनुयायियों को भी इसी प्रकार का त्याग करने को कहा गया। उन्हें अपना सिर मुंडवाना पड़ता था, नंगे पैर चलना पड़ता था। वे केवल तीन जोड़े कपड़े रख सकते थे। सूर्यास्त से पूर्व उन्हें खाना खा लेना पड़ता था। उन्हें केवल पांच घंटे सोने की आज्ञा थी और हर समय ध्यान में रह कर आत्मोत्थान में प्रयत्नशील होना होता था। पशुवध और मांसभक्षण उनके लिए वर्जित था क्योंकि उस समय के लोग मांसभक्षण के कारण अति आक्रामक हो गये थे।

श्री महावीर सेंट माइकल के अवतार थे। सेंट माइकल ईड़ा–नाड़ी पर निवास करते हैं तथा मूलाधार से सहस्रार तक इस नाड़ी की देखभाल करते हैं। वामपक्षी होने के कारण श्री महावीर ने लोगों को दुष्कार्य न करने की चेतावनी देने के लिए नर्क का वर्णन बहुत ही स्पष्ट रूप में किया है। **उन्होंने लोगों को कर्मकाण्ड से बचाने के लिए परमात्मा के निराकारतत्त्व के विषय में बताया।** इतने कठिन नियमों के कारण व्यक्ति के लिए आत्म साक्षात्कार की आशा करना भी दुष्कर कार्य हो गया।

श्री महावीर के अनुयायियों ने ज़ैन मत चलाया। ज़ैन का उद्‌गम 'ग्ना' अर्थात ज्ञान प्राप्ति से है। मोज़िज़ की तरह श्री महावीर के भी कठोर नियम थे। उनके सिद्धांतों को भी अति की अवस्था तक ले जाया गया।

श्री महावीर के विषय में एक किस्सा है। ध्यान अवस्था में एक दिन उनकी धोती एक झाड़ी में उलझ गयी। परिणामत: उन्हें आधी धोती फाड़ कर वहीं छोड़नी पड़ी। शेष आधी धोती में जब वे चले तो भिखारी के वेष में श्री कृष्ण उनकी परीक्षा के लिए वहाँ आ पहुँचे। श्री महावीर ने दयावश अपनी आधी धोती भी उस भिखारी को दे दी तथा स्वयं पत्तों से शरीर को ढक कर वस्त्र पहनने के लिए अपने घर वापिस चले गये। परन्तु आज उनके कुछ तथाकथित अनुयायी इस वृत्तान्त की आड़ में भारत के

गाँवों में निर्वस्त्र होकर घूमते फिरते हैं। ''मुझे विश्वास है कि आप सब उस निम्नावस्था तक न जाकर आत्मानुशासन अवश्य सीखोगे। इसके बिना पूर्ण ज्ञान, प्रेम तथा आनन्द की गहनता तक नहीं पहुँच सकते।

''नि:सन्देह आपको श्री महावीर की सीमा तक जाने की आवश्यकता नहीं हैं क्योंकि आपके सौभाग्यवश मैंने आपको आत्मसाक्षात्कार प्रदान किया है। फिर भी भौतिक वस्तुओं की ओर मत लौटिए।''

**प.पू.श्री माताजी, १६.६.१९९०**

सहजयोग में हम भगवान महावीर को श्री भैरवनाथ का अवतरण मानते हैं। वे इमाम हुसेन बन कर भी अवतरित हुए, सेंट माइकल को सेंट जार्ज (लंदन के रक्षक देवदूत) भी कहते हैं।....

हमारे व्यवहार आचरण और संस्कृति में सहजयोग की अभिव्यक्ति होनी चाहिए। बायीं ओर से भक्ति की तथा दायीं ओर से सृजन की अभिव्यक्ति की जा सकती है। हमें अपनी भक्ति को बढ़ाना है। यह भगवान महावीर का कार्य है।

**प.पू.श्री माताजी, ४.४.१९९३**

आज हम श्री महावीर का जन्मदिन मना रहे हैं। श्री महावीर भैरवनाथ के अवतार हैं। आप उन्हें सेंट माइकल भी कह सकते हैं, जबकि हनुमान पिंगला नाड़ी पर सेंट गैबरील हैं। सेंट माइकल ईड़ा नाड़ी पर हैं। महावीर को बहुत खोज करनी पड़ी। वे देवदूत थे पर मानव रूप में प्रकटे। शरीर के वाम भाग के रहस्य तथा कार्य प्रणाली को उन्होंने खोजा।

दायें भाग की अपेक्षा शरीर का बायां भाग अधिक उलझनपूर्ण है। आपने शरीर के बायें भाग में नाड़ियाँ देखीं, ये एक के बाद एक बनाई गई हैं। शास्त्रों में इनका वर्णन है और इनको नाम भी दिये गये हैं। ये सातों नाड़ियाँ हमारे भूतकाल का ध्यान रखती हैं। उदाहरणत: हर क्षण भूत बनता है, हर वर्तमान भूतकाल बनता है। हमारे वर्तमान जीवन तथा हमारे पूर्व जीवन का भी भूत है। हमारे सृजन के समय से अब तक हमारे सारे भूतकाल की रचना हमारे अन्दर है। अत: सारे मनोदैहिक रोगों को शरीर के बायीं ओर दिखाई पड़ने वाले तत्व बढ़ावा देते हैं। मान लीजिए कि किसी व्यक्ति को ज़िगर का रोग है और अचानक उस पर बायीं ओर से आक्रमण हो जाता है– विशेषत: मूलाधार या बायीं नाभि से, क्योंकि मूलाधार ही केवल एक चक्र है जिसे ईड़ा नाड़ी बायीं ओर से तथा बायें स्वाधिष्ठान से जोड़ती है। अत: मूलाधार की समस्याएं

मनुष्य के वश से परे हैं। बायीं ओर स्थित इन चक्रों में से किसी पर भी आक्रमण होता है तो मनोदैहिक रोग हो जाते हैं।

बायीं ओर की समस्या के ज्ञान से ही मनोदैहिक रोग ठीक हो सकते हैं। मैंने बायीं ओर को दुस्साध्य क्यों कहा? क्योंकि जब आप बायीं ओर को चलने लगते हैं तो नि:सन्देह यह रेखीय बन जाता है, परन्तु यह नीचे की ओर चलता है, जब कि दायीं ओर की गति ऊपर को है। अत: अधोगति होकर यह कुण्डल बना लेता है। कुण्डल आपके अन्दर चलते हैं और आप उनमें खो जाते हैं। परन्तु दूसरे (दायें) भाग की गति ऊपर होने तथा इसमें कम कुण्डल होने के कारण इनसे निकल पाना सुगम है। अत: किसी भी कारणवश (भूतकाल के विषय में बहुत सोचने से अपने लिए रोते रहना या हर समय शिकायतें करते रहने से)–जो लोग बायीं ओर को चले गये हैं उन्हें ठीक करना, दायीं ओर के (आक्रामक) लोगों की अपेक्षा कठिन है। दायीं ओर के लोग दूसरों के लिए तथा बायीं ओर के लोग अपने लिए दु:खदायी होते हैं।

**इस तरह महावीर ने बायीं ओर को अच्छी तरह खोज निकाला। नि:सन्देह वे इसके विषय में जानते थे। अत: उन्होंने विस्तृत रूप से बताया है कि जो व्यक्ति बायीं ओर को चले जाते हैं उनके साथ क्या घट सकता है। उन्होंने सात प्रकार के नर्क का भी वर्णन किया है जो कि इतना भयावह है कि मैं आपको बताना नहीं चाहती। इतना भयानक क्रूर, नीरस और घृणास्पद है कि जब आप जान जाते हैं कि अमुक गलती एवं पाप जो आपने किया था उसकी ये सजा है तो आपको अपने से घृणा हो जाती है। महावीर ने यह सब बताया। उन्होंने विस्तृत रूप से बताया कि बायीं ओर जाने का प्रयत्न करने वाले व्यक्ति को क्या दण्ड मिलना है। उन्होंने दायीं ओर जाने वाले लोगों के विषय में भी बताया पर यह उतना विस्तारपूर्वक न था जितना बायीं ओर जाने वालों का।**

पांचों तत्वों के कारणात्मक शरीरों से आत्मा का सृजन होता है। उदाहरणत: पृथ्वीतत्व की कारणात्मक आत्मा बहुत कम महसूस होती है। यह कारणात्मक पिण्डों तथा चक्रों से बनी होती हैं और सूक्ष्मतत्व (पैरासिम्पथैटिक) पर इसका प्रभुत्व होता है। बाहर की ओर से यह मेरुरज्जु (स्पाइनल कोर्ड) पर बैठ जाती है तथा सूक्ष्म नाड़ीतन्त्र को गतिमान करती है। इसका सम्बन्ध हर चक्र के साथ है। मृत्यु होने पर हमारी कुण्डलिनी सहित आत्मा तथा हमारी जीवात्मा (spirit) आकाश में चली जाती

है। यही आत्मा हमारे अस्तित्व की शेष गतिविधियों का नये अस्तित्व की ओर मार्गदर्शन करती है। इस तरह से कार्य करती है। अभी तक किए हमारे सभी कर्म आत्मा पर लिखे हुए हैं और अब खोज निकाला गया है कि किसी भी व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात् उसकी आत्मा गोल–गोल आकार की प्रतीत होती है। यह छल्ले बहुत से भी हो सकते हैं तथा एक भी। मेरे कहने पर उन्होंने इसे सूक्ष्मदर्शी यन्त्र पर देखा और पाया कि हर कोशाणु को प्रतिबिम्बित करने वाले कोशाणु पर हमारी अन्तरात्मा प्रतिबिम्बित है। कोशाणु को प्रतिबिम्बित करने वाला अंश, जो कि कोशाणु के एक ओर रखा होता है, भी इस आत्मा को प्रतिबिम्बित करता है तथा मुख्य आत्मा पीछे रहते हुए भी इस कोशाणु की देखभाल करने वाली प्रतिबिम्बित उस आत्मा को चलाती है। अब परावर्तक (रिफ्लैक्टर) पर उन्होंने पाया कि इस प्रकार के सात छल्ले हैं–सात छल्ले क्योंकि आत्मा आठ (सात चक्र तथा मूलाधार) पर बैठती है।

उसने खोज निकाला कि मृत्योपरान्त कुछ आत्माएं तो थोड़े दिनों में ही पुन: जन्म ले लेती हैं। यह अति साधारण प्रकार के लोग होते हैं। इस प्रकार वह एक प्रकार के वर्ग बना सका। वे एक प्रकार के वर्ग हैं जो थोड़े समय के लिए सामूहिक अवचेतना में बने रहने के पश्चात पुनर्जन्म लेते हैं। वे लक्ष्य–विहीन, व्यर्थ तथा साधारण प्रकार के लोग होते हैं। परन्तु मृत्योपरान्त कुछ आत्माएं हवा में लटकी रहती हैं और उस व्यक्ति को खोजने की प्रतीक्षा करती हैं जो उनकी अपूर्ण इच्छाओं की पूर्ति कर सकें। जैसे एक शराबी दूसरे जीवित शराबी का पता लगा सकता है। जीवित व्यक्ति को ज्यों ही शराब की लत लगने लगती है कुछ शराबी भूत आत्माएं उसमें प्रवेश करके उसे पक्का शराबी बना सकती हैं। मुझे एक छोटे से कद बुत की औरत की याद है जिसने आकर कहा कि वह स्वयं से परेशान है। उसके पति ने मुझे बताया कि कभी–कभी वह स्त्री एक पूरी बोतल शराब बिना पानी मिलाये पी जाती है। मैंने उसकी ओर देखा कि इतनी छोटी सी औरत कैसे इतनी शराब पी सकती है। उस पर बन्धन डालकर मैंने देखा कि विशाल नीग्रो उसके पीछे खड़ा है। अत: मैंने पूछा तुम किसी नीग्रो को जानती हो? उछलकर एकदम उसने कहा क्या आप उसे देख रही हैं? वही पीता है, मैं नहीं पीती। नि:सन्देह मैंने उसे ठीक कर दिया और उसके बाद उसने शराब पूरी तरह छोड़ दी।

**तो जब भी आप किसी आदत में फँसने लगते हैं तो आपका अपने पर नियन्त्रण समाप्त हो जाता है, कोई प्रेतात्मा आप में बैठ जाती है और आप समझ**

**नहीं पाते कि उस आदत से छुटकारा कैसे पाया जाए। सहजयोग में जब कुण्डलिनी उठती है तो ये मृत–आत्माएं आपको छोड़ देती हैं और आप ठीक हो जाते हैं। मैं तुम्हें यह कहूंगी कि महावीर ने यह सब नहीं बताया। उन्होंने केवल नर्क की ही बात कही। उन्होंने विस्तार से बताया कि जीवन में किस प्रकार के पाप के दण्डस्वरूप आपको कौन सा नर्क प्राप्त होगा। अपना हित चाहने वाले मनुष्य के लिए नर्क के लिए सोचना कितना भयावह है।**

अवतरण जब जन्म लेते हैं तो नार्कीय राक्षस भी लोगों को परेशान करने के लिए अवश्य जन्म लेते हैं। वे गुरु रूप में भी जन्म ले सकते हैं, आजकल हम देखते हैं कि किस प्रकार गुरु रूप में आकर वे हमें पथ–भ्रष्ट कर रहे हैं। हमें पूर्णतया गतिहीन करने के लिए किस प्रकार वे हमारी बायीं ओर तथा बाएं स्वाधिष्ठान का प्रयोग करते हैं। भूत बाधा ग्रस्त व्यक्ति लहरियों को अनुभव नहीं कर पाता है, हर तरह केकष्ट एवं लक्षण उस व्यक्ति में होते हैं। सहजयोग में हम महावीर का नाम लेते हैं। ईड़ा नाड़ी पर भ्रमण करते हुए वे प्रतिअहं के स्थान पर रुकते हैं। सहजयोग में आने के उपरान्त वे मनुष्य को नियन्त्रित एवं शुद्ध करने के लिए हर आवश्यक कार्य करते हैं।

**उन्हें महावीर क्यों कहा गया? वीर बहादुर व्यक्ति को कहते हैं, जो कि शूर हो, क्योंकि केवल ऐसा व्यक्ति ही भयंकर राक्षसों तथा शैतानों का नाश करने के लिए तथा हमारे अन्तस की आसुरी प्रवृत्तियों को भगाने के लिए मानव शरीर में प्रवेश कर सकता है। बिना महावीर की सहायता के हम यह कार्य नहीं कर सकते। आप उन्हें किसी भी नाम से बुला सकते हैं परन्तु मानव होने के कारण वे महावीर ही हैं। यह सब उन्हीं के कारण सम्भव है, उन्हीं की यह महान विशेषता है। नर्क की सारी धारणा, जिसका वर्णन शास्त्रों में है, सत्य है और विद्यमान है।** कभी–कभी महावीर को वस्त्रविहीन व्यक्ति के रूप में दिखाया जाता है। एक बार बायीं ओर का ज्ञान प्राप्त करने के लिए वे जंगल में ध्यान करने गये। जब वे ध्यान से उठे तो उनकी धोती एक कंटीली झाड़ी में फँसकर आधी फट गई। तभी एक दरिद्र बालक के रूप में प्रकट हो श्री कृष्ण ने उनसे कपड़ों की याचना की और कुछ न होने पर कृष्ण ने उनसे उनकी बची हुई धोती की भीख माँगी। कहते हैं कि श्री विष्णुरूपी उस बालक को महावीर ने वह धोती दे दी। केवल दो क्षणों के लिए निर्वस्त्र हो उन्होंने स्वयं को पत्तों से ढ़क लिया और अपने महल में जाकर वस्त्र धारण कर लिये। परन्तु लोग कितने अभद्र

हैं। निर्वस्त्र घूमते हैं ये जैनी लोग।

शाकाहार की यह सारी सनक अनावश्यक है, यही महावीर ने अपने जीवन में दर्शाया कि भोजन की चिन्ता व्यर्थ है। शाकाहार का सिद्धांत इतने गलत तरीके से फैला कि अब मैंने लोगों से इसे पूरी तरह से छोड़ देने को कह दिया है। अब देखिये कि वास्तव में महावीर क्या चाहते थे। प्रोटीन लिये बिना आप भूतों से नहीं लड़ सकते। जैन मत में शाकाहार सिद्धांत नेमिनाथ के द्वारा आया। नेमिनाथ के विवाह के समय इतने भेड़–बकरियों को काटा गया कि उन्हें घृणा हो आयी। इस कुण्ठा में उन्होंने कहा कि वे मांस नहीं खाएंगे तथा इस तरह जैन धर्म में शाकाहार घुस गया जो अब तक चल रहा है। ये लोग अत्यन्त नीरस प्रकार के हैं। धन के पीछे ये दौड़ते ही रहते हैं, एक विशेष प्रकार का इनका आचरण होता है। महावीर की सारी शिक्षा के बाद भी इस प्रकार के हैं उनके शिष्य। अच्छा हो सहजयोग में हम ऐसा कुछ न करें। आपको जो बताया गया है उसको समझें। कार्यप्रणाली तथा पूरे विषय का ज्ञान आपको है। किसी तर्क या विज्ञापन के सम्मुख झुक कर कोई गलत रास्ता ले लेना उचित नहीं।

मेरी बतायी बात को न तो अति तक ले जाएं और न उसे तुच्छ मानें। मैं जब आपसे यह सब बताती हूँ तो आप समझें कि आपके स्वभाव के अनुसार आपके लिए क्या उपयुक्त है। आपने वह स्वीकार करना है जो आपका पोषण करे तथा आपको सन्तुलन दे। स्वयं को सन्तुलित करने के लिए यदि आप महावीर के विषय में सोचते हैं तो आप श्री हनुमान के विषय में भी सोचिए। दोनों ही बातें आवश्यक हैं।

**प.पू.श्री माताजी, श्री महावीर पूजा, पर्थ, २८.३.१९९१**

## ४. श्री एकादश रुद्र

......तो हमें यह जानना होगा कि ये एकादशरुद्र क्या हैं? हमें यह समझना चाहिए कि हमारे अन्दर ऐसा क्या है जो प्रकृति के विकास विरोधी, उत्क्रान्ति विरोधी, सृजनात्मकता विरोधी स्वभाव को सदा के लिये नष्ट कर सके।

सभी पैगम्बरों ने एकादशरुद्र की भविष्यवाणी की है। उन्होंने कहा कि एकादश अवतार आएंगे और सारी आसुरी शक्तियों तथा परमात्मा विरोधी गतिविधियों को नष्ट करेंगे। सबसे अहम् बात यह है कि **ये एकादश केवल कलियुग में, आधुनिक काल में ही कार्य करेगा। इसके पूर्व ये गतिशील न था। अब सहजयोग के क्षेत्र में आसुरी शक्तियाँ प्रवेश नहीं कर सकती। यहाँ पर आप बहुत प्रसन्न हैं। आपके मस्तक पर चहुँ ओर इस क्षेत्र की देखभाल करने के लिये एकादशरुद्र खड़े हैं।** वे सब देख रहे हैं। वे प्रहरी हैं। कोई आपको हानि नहीं पहुँचा सकता। अत्यन्त शान से आप अपने सहस्रार में स्थापित हैं कुछ भी आपको छू नहीं सकता। कुछ भी आपको छू नहीं सकता, कोई भी आपको कलंकित नहीं कर सकता। एकादशरुद्र बहुत चुस्त हैं और उनके बहुत से पक्ष हैं। हर देवता के बहुत से पक्ष होते हैं और ये सारे पहलू इस क्षेत्र को हर समय प्रकाशमान करते रहते हैं ताकि कोई भी बाह्य शक्ति इसमें प्रवेश न कर सके।

सहस्रार के क्षेत्र में जब भी कोई बाह्य शक्ति प्रवेश करने का प्रयत्न करती है तो तुरन्त ये गतिशील हो उठते हैं और उस व्यक्ति की इतनी हानि कर सकते हैं कि आप स्वयं हैरान रह जाते हैं। परन्तु इस शक्ति को विकसित करने के लिये पूर्ण निष्ठा एवं सूझ–बूझ पूर्वक ध्यान–धारणा करना आवश्यक है।

**प.पू.श्री माताजी, ८.१०.१९८८**

..... सहस्रार में प्रवेश पाने के मार्ग में सर्वप्रथम जो रुकावट आती है वह है एकादश रुद्र। ग्यारह संहार शक्तियाँ यहाँ होती हैं, पाँच इस तरफ, पाँच उस तरफ और एक बीच में। हमारे द्वारा किये गये दो प्रकार के पापों से इन रुकावटों का निर्माण होता है। अगर हम अपना सिर गलत (मिथ्या) गुरुओं के आगे झुकाते हैं, उनके दुष्ट मार्ग को अपनाते हैं तो दाहिनी ओर की पाँच रुद्र शक्तियों में खराबी आती है। अगर आप किसी ऐसे व्यक्ति के आगे झुके हैं जो गलत किस्म का व्यक्ति है और भगवान के विरुद्ध है तो दायीं ओर समस्या उत्पन्न हो जाती है। अगर आप यह सोचते है मैं अपनी देखभाल

खुद कर सकता हूँ, मैं अपना गुरु स्वयं हूँ, मुझे कौन शिक्षा दे सकता है, मैं किसी की बात नहीं सुनना चाहता और मैं भगवान में विश्वास नहीं करता, भगवान कौन है? मैं भगवान की परवाह नहीं करता। अगर इस प्रकार की भावनाएं आपके अन्दर हैं तो आपकी दायीं ओर नहीं, बल्कि बायीं ओर खराबी आ जाती है। क्योंकि आपका दायां भाग (पार्श्व बाजू) घूम कर इधर (बायीं ओर) और बायां भाग दाहिनी तरफ आ जाते हैं। अत: ये दस चीज़ें और एक विराट विष्णु का स्थान, क्योंकि हमारे पेट (स्टमक) में भी दस गुरुओं के स्थान है और एक विष्णु का स्थान है, इन सब में खराबी आ जाती है। तब साधना में भी गलती होती है और ये दस गुरु अपना स्थान त्याग कर देते हैं। तब आपको इस एकादश रुद्र की पकड़ हो जाती है। जब इस प्रकार की चीज़ आपके अन्दर आ जाती है, जैसे कि मैंने बताया, एक इस ओर (ईड़ा) और एक उस ओर (पिंगला) तो जिन लोगों ने गलत प्रकार के व्यक्तियों के आगे सिर झुकाया है, उनका ऐसा स्वभाव या ऐसा व्यक्तित्व बन जाता है जिससे कैन्सर जैसी असाध्य (इनक्युअरेबल) बीमारियों का आक्रमण हो सकता है। जिन लोगों ने गलत व्यक्तियों के आगे सिर झुकाया है उनको कैंसर या इस प्रकार की कोई बीमारी हो सकती है।

अब जो लोग सोचते हैं कि मैं किसी और से अच्छा हूँ, मैं भगवान की परवाह नहीं करता, मुझे भगवान नहीं चाहिए, मुझे इससे कोई मतलब नहीं, ऐसे लोगों के बायीं ओर के एकादश रुद्र की पकड़ भी अत्यधिक खतरनाक होती है क्योंकि ऐसे लोगों को शारीरिक रूप में दायीं ओर (पिंगला) की तकलीफें, जैसे हृदय रोग, और दायीं ओर की अन्य प्रकार की तकलीफें हो जाती है।

**अत: कुण्डलिनी के सहस्रार में प्रवेश पाने के विरुद्ध जो सबसे बड़ी रुकावट आती है, वह एकादश रुद्र है,** जो भवसागर (void) से आता है, और जो मेधा यानी मस्तिष्क के फर्श (plate) को ढ़कता है। इस तरह यह लिम्बिक (तालू) क्षेत्र (Limbic Area) में प्रवेश नहीं कर सकती। यहाँ तक कि **वे लोग जो गलत गुरुओं के पास जा चुके हैं, अगर सही निष्कर्ष पर पहुँचें और सहजयोग के सम्मुख आत्मसमर्पण कर दें, अपनी त्रुटियों को स्वीकार करें, और कहें कि मैं स्वयं ही गुरु हूँ, तो वे ठीक हो सकते हैं।** और जो लोग यह कहते हैं कि मैं ही सबसे बड़ा हूँ, मैं भगवान में विश्वास नहीं करता, मैं किसी ईश्वर के दूत (प्रोफेट) में विश्वास नहीं करता–ईश्वर के विरुद्ध या ईश्वर के दूत के विरुद्ध होना एक ही बात है–ईश्वर विरोधी व्यक्तित्व जो इस तरह की बात करते हैं और इसलिए समस्याओं का निर्माण

करते हैं, अगर वे अपने को विनम्र बनाएं और सहजयोग को, सुपरकॉन्शस अर्थात मध्य मार्ग को, परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश पाने का एक मात्र मार्ग के रूप में स्वीकार करें तो वे भी ठीक हो सकते है।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, ४.२.१९८३**

..... यदि सहजयोग विरोधी नकारात्मक लोगों और सारी नकारात्मकता के प्रति आप में क्रोध है तो ठीक है, यह चीज़ जब परिपक्व हो जाएगी तो आप स्वयं एकादश की शक्ति बन जाएंगे। जो भी व्यक्ति आपको अपमानित करने और हानि पहुँचाने का प्रयत्न करेगा वह समाप्त हो जाएगा। व्यक्ति को ऐसा होना चाहिए कि वह स्वयं एकादश बन सके। ऐसे लोगों को कोई छू भी नहीं सकता, परन्तु ऐसे लोग करुणा और क्षमा से परिपूर्ण हो जाते हैं।

अत: हमें ज्ञान होना चाहिए कि किस प्रकार एकादश रुद्र कार्य करता है और किस प्रकार सहजयोगियों को स्वयं एकादश रुद्र बनना है। यह शक्ति स्वयं में विकसित करने के लिये व्यक्ति को अपने अन्दर **निर्लिप्सा की अगाध शक्ति** विकसित करनी होती है यानि कि नकारात्मकता से अलगाव। उदाहरण के रूप में नकारात्मकता भाई, बहन, माता–पिता, मित्र तथा अन्य नजदीकी रिश्तेदारों से आ सकती है।

.....किसी भी प्रकार का गलत तादात्म्य आपकी एकादश शक्तियों को नष्ट कर सकता है। **आपको मस्तिष्क से भी समझना होगा कि सहजयोग क्या है ताकि विवेकशीलता से आप समझ सकें कि सहजयोग वास्तव में क्या है।**

**प.पू.श्री माताजी, एकादश रुद्र पूजा, १९८४**

..... एकादश रुद्र की ग्यारह विध्वंसक शक्तियाँ हैं। हम कहते हैं कि दस दिशाएं हैं और यह ग्यारहवीं है। दस बाहर से और एक अन्दर से। इनका प्रकोप उन सभी लोगों पर पड़ सकता है जो सहजयोग की उन्नति में बाधक बनने का प्रयत्न करते हैं। कोई भी यदि आपको कष्ट देने का प्रयत्न करेगा तो यह शक्ति कार्य करेगी।

जितनी भी भयानक शक्तियाँ आज कार्यरत हैं इन्हें पूरी तरह नष्ट किया जा सकता है यदि हम अपने अन्दर एकादश रुद्र शक्ति विकसित कर लें। **एक सहजयोगी हज़ारों आसुरी शक्तियों का वध कर सकता है जब कि ये आसुरी शक्तियाँ एक भी सहजयोगी को हानि नहीं पहुँचा सकती। वास्तव में आपके सम्मुख ये शक्तिहीन हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, विएना, ८.१०.१९८८**

..... सदा याद रखें कि प्रेम की दिव्य शक्ति के सम्मुख सारा असत्य लड़खड़ा जाता है। आसुरी शक्ति कुछ समय के लिये रह सकती है परन्तु अन्ततः उनका पतन हो जाएगा। यह सब मेरा कार्य है, मुझ पर छोड़ दें।

**प.पू.श्री माताजी, ९.५.१९९५**

..... अब हमें कलियुग में नकारात्मकता को पूर्णतः नष्ट करने के लिये इन **एकादश रुद्र शक्तियों का अह्वान करना है और यह प्रार्थना भी करनी है कि यदि हमारे अन्दर कोई भी नकारात्मकता है तो यह नष्ट हो जाए, सहजयोग विरोधी कोई भी नकारात्मकता हो तो वह नष्ट हो जाए, हमारी सूझ-बूझ में यदि कोई नकारात्मकता है तो वह नष्ट हो जानी चाहिए।**

**प.पू.श्री माताजी, ८.१०.१९८८**

..... एकादश रुद्र पूर्ण विध्वंसक शक्तियाँ हैं। ये श्री गणेश की विध्वंसक शक्तियाँ हैं। श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु, श्री महेश की विध्वंसक शक्तियाँ हैं। माँ आदिशक्ति की विध्वंसक शक्तियाँ हैं। ये श्री भैरव, श्री हनुमान और श्री कार्तिकेय की भी विध्वंसक शक्तियाँ हैं। ये श्री सदाशिव और आदिशक्ति की भी शक्तियाँ हैं। इसके अतिरिक्त एकादश रुद्र **हिरण्यगर्भ** की भी विध्वंसक शक्ति है।

जब यह शक्ति गतिशील होती है तो हर अणु का विस्फोट हो जाता है। पूरी आण्विक ऊर्जा विध्वंसक शक्ति बन जाती है तो पूरी विध्वंसक शक्ति एकादश रुद्र हैं। यह अत्यन्त शक्तिशाली और विस्फोटक है परन्तु यह अंधी नहीं है। यह अत्यन्त विवेकशील है और अतिकुशलता पूर्वक गुथी हुई है। **सभी बुराइयों पर आक्रमण करती है, यह सभी अच्छाइयों को छोड़ती हुई केवल बुराइयों पर आक्रमण करती है** और उचित समय पर उचित स्थान पर सीधे ही चोट पहुँचाती है। बीच में खड़ी किसी अच्छी चीज़ को हानि नहीं पहुँचाती। उदाहरण के रूप में मान लो कि एकादश रुद्र की दृष्टि किसी व्यक्ति पर पड़ रही है, परन्तु बीच में कोई दिव्य या सकारात्मक चीज़ है तो सकारात्मक के बीच से गुजरती हुई उसे बिना कोई हानि पहुँचाए ये नकारात्मकता को हानि पहुँचाती है। कुछ लोगों को यह शीतल करती है और कुछ अन्य को जला देती है, इतनी कोमलता और सूझ-बूझ से ये कार्य करती है।

यह अत्यन्त तेज़ भी है और अत्यन्त कष्टदायी भी। झटके से गला नहीं काटती, धीरे-धीरे करके इस कार्य को करती है। भयानक कष्ट (जैसे कैंसर,

कुष्ठरोग) एकादश रुद्र की अभिव्यक्तियाँ हैं। इस प्रकार शनै: शनै: एकादश रुद्र लोगों को खा लेता है।

– एकादश रुद्र के गतिशील होने पर अन्तत: सदाशिव के क्रोध के कारण पूर्ण विनाश हो जाता है, तब पूर्ण प्रलय आ जाती है।

**प.पू.श्री माताजी, एकादश रुद्र पूजा, १९८४**

..... रुद्र शिव की प्रलय शक्ति है। क्षमा प्राप्त करके आत्मसाक्षात्कार पा लेने के बाद भी जब लोग अपराध किये जाते हैं तो शिव सम्वेदनशील तथा क्रुद्ध हो जाते हैं।

.....जब उनकी संहारक शक्तियों का बाहुल्य हो जाता है तो हम कहते हैं कि अब एकादश रुद्र कार्यान्वित हो गया है। जब स्वयं कल्कि कार्य करेंगे, अर्थात परमात्मा की कल्कि शक्ति जब पृथ्वी से नकारात्मकता का संहार करके अच्छाई की रक्षा करेगी तो एकादश रुद्र की अभिव्यक्ति होगी।

**प.पू.श्री माताजी, एकादश रुद्र पूजा, इटली, चैतन्य लहरी, १९९३**

# सहस्रार चक्र

## <u>सहस्रार स्वामिनी – महामाया–माताजी श्री निर्मला देवी</u>

.....कहा गया है कि सहस्रार पर जब देवी प्रगट होंगी तो वे महामाया होंगी। आज के विश्व में इसके अतिरिक्त किसी अन्य रूप में पृथ्वी पर आना क्या सम्भव है? किसी भी अन्य प्रकार का अवतार भयंकर कठिनाइयों में फँस जाता क्योंकि इस कलियुग में अहं पर सवार मानव ही सर्वोच्च है। वे बिल्कुल मूर्ख हैं और किसी भी दैवी व्यक्तित्व को सब प्रकार की हानि पहुँचा सकते हैं या हिंसा पर उतर सकते हैं। महामाया के अतिरिक्त किसी अन्य रूप में विश्व में अस्तित्व को बनाए रखना असम्भव है। परन्तु इनके **बहुत से पक्ष हैं और यह साधकों पर भी कार्य करती हैं।**

.....एक पहलू द्वारा यह आपके सहस्रार को आच्छादित करके रखती हैं और साधक की परीक्षा होती है। यदि आप उल्टे–सीधे लोगों से, उल्टी सीधी वेशभूषा धारण करने वालों से जो झूठ–मूठ चीज़ें दिखाते हैं, जैसा कि बहुत से कुगुरुओं ने किया है, या घटिया किस्म के लोगों से आकर्षित हैं तो आपका यह आकर्षण भी महामाया के कारण है क्योंकि महामाया ही इस प्रकार व्यक्ति की परीक्षा लेती हैं।

.....**महामाया दर्पण की तरह से हैं। आप जो कुछ भी हैं अपनी असलियत को दर्पण में देखते हैं दर्पण की कोई जिम्मेदारी नहीं होती।** यदि आप बन्दर की तरह हैं तो शीशे में बन्दर की तरह लगेंगे। यदि आप रानी जैसी हैं तो रानी जैसी ही लगेंगी। आपको गलत विचार या झूठा दिखावा देने की न तो दर्पण में शक्ति है और न ही ऐसी भावना। **सत्य, जो कुछ भी हो, को यह दर्शाएगा।** अत: यह कहना कि महामाया भ्रमित करती हैं, एक प्रकार से अनुचित है। इसके **विपरीत शीशे में आपको अपनी वास्तविकता दिखाई पड़ती है।** मान लो कि आप क्रूर व्यक्ति हों तो शीशे में भी आपका चेहरा क्रूर ही दिखाई देगा। परन्तु जब महामाया गतिशील होती हैं तब समस्या खड़ी होती है। तब आप शीशे में अपनी सूरत नहीं देखते, आप अपना मुँह घुमा लेते हैं–न तो आप देखना चाहते हैं न जानना। दर्पण में जब आपको कुछ भयंकर दिखाई पड़ता है तो मुँह घुमाकर आप सत्य को नकारते हैं। 'मैं ऐसा किस प्रकार हो सकता हूँ? मैं बहुत अच्छा हूँ, मुझमें कोई कमी नहीं, कुछ भी नहीं, मैं पूर्णतया ठीक हूँ।'

..... **महामाया का तीसरा पक्ष यह है कि एक बार फिर आप इसकी ओर**

**आकर्षित होते हैं और फिर दर्पण को देखते हैं। शीशे में आप पूरे विश्व को देखते हैं, परिणामत: आप सोचने लगते हैं कि मैं क्या कर रहा हूँ? मैं कौन हूँ? यह संसार क्या है? मैं कहाँ जन्मा हूँ? आपकी खोज की यह शुरुआत है पर इससे आपको संतुष्टि नहीं होती। अत: यह महामाया की महान सहायता है।**

..... पहली बार जब लोग मेरे पास आते हैं और यदि वे मुझे पानी पीता देख लें तो कहते हैं कि ये कैसे कोई अवतरण हो सकती है? इन्हें भी पानी की आवश्यकता पडती है और अगर वे मुझे कोका–कोला पीते देख लें तो कहेंगे – वाह! ये किस प्रकार कोका–कोला पी सकती हैं, इन्हें तो बस अमृत पीना चाहिए। **महामाया का एक और पक्ष भी है। लोग मुझे मिलने आते हैं उनमें से कुछ काँपने लगते हैं। वे समझते हैं कि उनमें महान शक्ति है जिसके कारण वे हिल रहे हैं। अत: अपनी प्रतिक्रियाओं के कारण उन्हें गलतफहमी हो जाती है कि वाह! हम वहाँ गए, हममें इतनी शक्ति आ गई, हम कुछ महान चीज़ हैं।** ......परन्तु जब उन्हें पता चलता है कि इस प्रकार कांपने वाले लोग पागल हैं तो धीरे–धीरे वे अपेक्षाकृत रूप से चीज़ों को देखने लगते हैं। **प्रासंगिक सूझ–बूझ आप पर पड़े उस पर्दे को हटाने में सहायक होती है जिसके कारण आप सत्य का सामना नहीं करना चाहते।**

.....एक बार जब आपके साथ घटित हो जाता है तो आप दूसरे लोगों के साथ अपनी तुलना करने लगते हैं, जब आप ऐसा करने लगते हैं तो आपका उत्थान होता है तथा आप सहजयोग में स्थिर होने लगते हैं।

..... **महामाया अतिमहत्वपूर्ण हैं, उसके बिना आप मेरा सामना नहीं कर सकते, आप यहाँ बैठ नहीं सकते, मुझसे बात नहीं कर सकते।** जिस गाड़ी में मैं बैठती हूँ, उसमें आप प्रवेश नहीं कर सकते और मेरी गाड़ी चला भी नहीं सकते। सभी कुछ असम्भव होता, मैं कहीं हवा में उड़ रही होती और आप सब यहाँ होते और सभी कुछ गड़बड़ होता।

..... मेरा आपके सम्मुख होना आवश्यक नहीं। निराकार रूप में भी मैं यहाँ हो सकती हूँ, पर सम्पर्क कैसे बनाया जाए और सौहार्द्र किस प्रकार बने? इसी कारण मुझे महामाया रूप में आना पड़ा ताकि न कोई भय हो, न दूरी। समीप आकर एक दूसरे को समझ सकें क्योंकि यह ज्ञान यदि देना है तो लोगों को कम से कम महामाया के सम्मुख बैठना तो पड़ेगा ही। यदि वे सब दौड़ जाएं तो सहस्रार पर इस अत्यन्त

मानवीय व्यक्तित्व की सृष्टि करने का क्या लाभ? वे महामाया रूप में आयी हैं।

..... **सहस्रार सर्वशक्तिशाली चक्र है क्योंकि यह न केवल सात चक्रों की बल्कि बहुत से अन्य चक्रों की भी पीठ है। सहस्रार पर आप कुछ भी कर सकते हैं .......परन्तु महामाया के माध्यम से चीजें सामान्य रूप से कार्यान्वित होती हैं और ऐसा ही होना चाहिए।** उदाहरणार्थ आप कह सकते हैं कि श्री माताजी, वातावरण, पर्यावरण की समस्याओं से भरा हुआ है, आप इसे शुद्ध क्यों नहीं करतीं? यदि शुद्ध हो गया तो लोग समस्यायें ही बनाते रहेंगे। यह मानव की समस्या है और यदि मैं इसे ठीक कर देती हूँ तो वे इसे अपना अधिकार मान बैठेंगे। उन्हें इन समस्याओं का सामना करना होगा और अपनी आदतें बदलनी होंगी। उन्हें समझना होगा कि वे स्वयं अपना विनाश कर रहे हैं अन्यथा यदि कोई अन्य व्यक्ति शुद्धिकरण के लिए होगा तो वे कभी भी परिवर्तित नहीं होंगे। ........उनकी समस्याओं को सुलझा देने से ही मेरा कार्य समाप्त नहीं हो जाता और न यह लक्ष्य है। **मेरा लक्ष्य तो उन्हें समर्थ बनाने का है ताकि वे स्वयं अपनी समस्याओं को सुलझा सकें। आपको अपना डॉक्टर या अपना गुरु बनना होगा परन्तु महामाया के बिना आप ऐसा नहीं कर सकते क्योंकि वही जानती हैं कि स्वतन्त्र मानव के शुद्धिकरण और नियन्त्रण में किस सीमा तक जाना है।**

..... इस प्रकार की मूर्खतापूर्ण स्वतन्त्रता सहजयोगियों की नहीं होती। उन्हें तो आत्मा की स्वतन्त्रता प्राप्त है, अत: उनकी समस्याओं को सुलझाना बिल्कुल ठीक है ताकि वे पूर्ण स्वतन्त्र हो सकें। जो लोग बिना सोचे-समझे पूरे विश्व को हानि पहुँचाने जा रहे हैं उन्हें स्वतन्त्र बनाने का क्या लाभ है? उनके लिए आवश्यक है कि सहजयोग में आएं-इसी कारण यह महामाया स्वरूप है। यदि मैं, माँ मेरी, राधा या ऐसे ही किसी अन्य रूप में आई होती तो हो सकता है सभी लोग यहाँ होते और सुन्दर भजन गा रहे होते, पर ऐसा नहीं है।

..... अब आपको परिपक्व होना है, कुछ बनाना है बनना और विकसित होना है और इसके लिए आवश्यक है कि सर्वप्रथम आप सहजयोग में आएं तब आपको सहजयोग में विकसित होना होगा, नहीं तो महामाया लीला करती रहेंगी और आपको भ्रमित करती रहेंगी। सहस्रार विराट का क्षेत्र है, विराट विष्णु हैं जो राम बने फिर कृष्ण बनें। तो यह लीला है। उसकी लीला, नाटक है और नाटक को ठीक करने के लिए उसे महामाया रूप में होना होगा।

..... बचाव के बहुत से मार्ग हैं। कभी–कभी लोग चीज़ों को सुगमता से खोज लेते हैं, उनमें से एक परम चैतन्य है। परम चैतन्य कार्य करता है, मेरे चित्र दिखाता है ......जो पहले कभी नहीं हुआ। मैं स्वयं आश्चर्यचकित हूँ। .......आपको महामाया के विषय में समझाने के लिए परम चैतन्य महामाया को प्रगट करने का प्रयत्न कर रहा है। यह स्वयं की अभिव्यक्ति कर रहा है। मैंने तो परम चैतन्य को ऐसा कोई कार्य करने को नहीं कहा। परन्तु यह सत्य है क्योंकि यह सोचता है कि **अब भी जो लोग श्री माताजी का अनुसरण कर रहे हैं उनका स्तर उतना ऊँचा नहीं जितना होना चाहिए था। .....(परम चैतन्य यह चाहता है कि) अपने विश्वास को आप दृढ़ कर लें, यह विश्वास अंधविश्वास नहीं है। सहजयोगी समझने का प्रयत्न करें कि उन्हें विकसित होना है। यह विकास भी द्विपक्षीय होना चाहिए।**

.....**पहला आपका पक्ष है कि मैं कितना समय सहजयोग के विषय में सोचने पर लगाता हूँ और कितना अपने व्यक्तिगत जीवन पर? सहजयोग में हमें परमात्मा की ओर झुकना पड़ेगा। ........आप देखें कि आपके सभी विचार सहजयोग की ओर जा रहे हैं, पूरी सोच ही सहज है। सहज में सबसे मनोरंजक बात यह है कि जो भी कार्य आप करते हैं उसे देखते हैं। सहज मार्ग के विषय में आप सोचते हैं।**

..... इस महामाया में आप मूल्यांकन किस प्रकार कर सकते हैं? सहज के विषय सोचते हुए आप कहाँ तक जा सकते हैं? इस व्यापार से मैं कितना धन कमा सकता हूँ? मैं कितना आनन्द ले सकता हूँ? कितनी शारीरिक समस्यायें सुलझ सकती हैं? आदि सभी लाभ सहजयोग में आपकी परिपक्वता के सम्मुख कुछ भी नहीं। मस्तिष्क के हाथ में बागडोर आते ही यह अत्यन्त सोच में पड़ जाता है । तुम्हारी पत्नी, बच्चे, घर आदि बहुत सी चीज़ों पर यह मँडराया रहता है पर यदि आप सहज ढंग से सोचेंगे तो कहेंगे कि मुझे कोई ऐसा कार्य करना चाहिए जिससे मेरे बच्चे सहज बनें। मुझे एक ऐसा घर चाहिए जो सहज के लिए उपयोग में आ सके। मेरा आचरण ऐसा हो जिससे लगे कि मैं सहजयोगी हूँ।

..... आप में परिपक्वता इस प्रकार बढ़े कि आप इसे महसूस कर पायें। सर्वप्रथम शांति। अशांत व्यक्ति का मस्तिष्क अस्थिर यन्त्र के सम होता है। वह ठीक प्रकार से न तो देख सकता है, न सोच सकता है और न ही समझ सकता है।

..... इस महामाया के माध्यम से हर चीज़ उलट–पुलट हो रही है। ........विश्व में जिस प्रकार संघर्ष चल रहा है यह युद्ध नहीं है, यह शीत युद्ध नहीं है यह तो एक अजीब किस्म का युद्ध–यश है जिसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। ..........परमात्मा तथा आध्यात्मिकता का व्यापार हो रहा है। आज के इस **पतित विश्व के लिए महामाया का होना आवश्यक है जिसके द्वारा दर्शा सकें कि इस जीवन में आप जो कर रहे हैं उसके लिए आपको नाकों चने चबाने पड़ेंगे। ........इस महामाया को हम रोकड़ा देवी कहते हैं अर्थात हाथों हाथ फल देने वाली, नग़द भुगतान करने वाली देवी,** आपने ऐसा किया, ठीक है आप ये ले लें। आपने यह कार्य किया ठीक है, आप इसका आनन्द लें। वास्तव में ये महामाया विशेष रूप से गतिशील हैं। जिस तरह से यह लोगों को दण्डित कर रही हैं, कभी–कभी तो मुझे भय प्रतीत होता है। पर वास्तविकता यही है। यदि आप कहें कि मुझे अन्धाधुन्ध गाड़ी चलानी अच्छी लगती है तो ठीक है, समाप्त। लँगड़ाती टाँग या टूटा हाथ आपका अंत है। **महामाया के माध्यम से दैवी कानून कार्यरत है।** आज की तरह यह कभी इतना तेज न था। ......मानव की स्वतन्त्र इच्छा पर अंकुश रखने के लिए महामाया अपनी स्वतन्त्र इच्छा का उपयोग कर रही हैं। ......यह कथित स्वतन्त्रता जिसका आनन्द लेने का हम प्रयत्न कर रहे हैं हमें हमारे अन्त तक ले आई है।

..... **लोग अपने ही शिकंजे में फँस रहे हैं। यह शिकंजा ही महामाया है।** आपसे ही वे इसकी रचना करती हैं क्योंकि आप अपना सामना नहीं करना चाहते, सत्य को जानना नहीं चाहते, सत्य से आप जी चुराना चाहते हैं। **यह महामाया का ही एक पक्ष है कि तुरन्त आप अपना सामना करने को विवश हो जाते हैं।........**

कितनी सारी घटनायें घटीं इनका विचार कीजिए। बड़े–बड़े पूँजीपति जेल में हैं। बड़े प्रसिद्ध लोग जेल में हैं। इस प्रकार की घटनायें हो रही हैं क्यों? क्योंकि यह महामाया सबक देना चाहती हैं। एक व्यक्ति को दण्डित करने से यह हज़ारों लोगों को रास्ते पर ले आती हैं।

..... इतना डरा हुआ विश्व है, इतनी असुरक्षा है। ......आज हर व्यक्ति व्यग्र है और अपना जीवन बचाने की सोच रहा है। ......आप सहजयोग में आ जाएं तो आप कष्ट से बच सकते हैं क्योंकि महामाया का एक पक्ष यह है कि वे रक्षा करती हैं। जब तक स्वयं न चाहे **कोई सहजयोगी को मार नहीं सकता। उनकी अपनी इच्छा है,**

**उन्हें कोई छू नहीं सकता। किस प्रकार यह महामाया सहजयोगियों की रक्षा करती हैं इसकी बहुत सी कहानियाँ हैं। स्वप्न में भी वे रक्षा करती हैं। ........यह चेतन मस्तिष्क है परन्तु अत्यन्त गहन सुषुप्ति की अवस्था में आप जान जाते हैं कि आपके लिए क्या ठीक है क्या गलत? किसी न किसी तरह वे जान जाते हैं कि आपके लिए क्या ठीक है क्या गलत। किसी न किसी तरह वे जान जाते हैं। यही ज्ञान अन्तर्ज्ञान है जो कि महामाया के माध्यम से आता है। केवल वे ही आपको अन्तर्ज्ञान देती हैं कि क्या करना आवश्यक है? किस प्रकार समस्या से छुटकारा पाना है? और आप छुटकारा पा लेते हैं।**

..... कोई यदि सहजयोगियों को परेशान करने का प्रयत्न करता है तो महामाया एक सीमा तक उसे ऐसा करने देती हैं और फि र अचानक गतिशील हो उठती हैं। लोग आश्चर्यचकित हो उठते हैं, सहजयोगी हैरान हो जाते हैं कि यह व्यक्ति ऐसा किस प्रकार बन गया? यह महामाया मेरी साड़ी की तरह हैं और रक्षा कर रही हैं। वह अत्यन्त सुन्दर, दयालु, ध्यान रखने वाली, करुणामय, स्नेहमय तथा कोमल हैं। वह आपकी देख–रेख करती हैं और राक्षस तथा असुर प्रवृत्ति के लोगों, जो परमात्मा के कार्य को बिगाड़ने का प्रयत्न करते हैं, पर क्रुद्ध होकर उनका संहार करती हैं।

.....महामाया का एक अन्य पक्ष यह है कि वे आपको परिवर्तित करती हैं। मानव के लिए सभी कुछ मस्तिष्क है। आप यदि कुटिल हैं तो कुटिल हैं। आप यदि दूसरों से घृणा करते हैं तो यह भी मस्तिष्क में है। आपको यदि कोई व्यसन है तो वह भी मस्तिष्क में है। मस्तिष्क के बन्धन अतिजटिल हैं। अत: नि:सन्देह सहस्रार अत्यन्त महत्वपूर्ण है परन्तु विराट तथा विराटांगना की शक्ति तभी प्रभावशाली हो सकती है जब महामाया का शासन हो और वे अपने मधुर तरीकों से सहस्रार को खोलें और आपको कुरूप, भयंकर तथा क्रोधी बनाने वाले सभी बन्धनों का निवारण करें।

.....महामाया पृथ्वी माँ की तरह हैं, यह सभी कुछ मिलने पर आपको वास्तव में अत्यन्त प्रसन्न तथा आनन्दमय बना देती हैं ताकि आप 'निरानन्द' 'केवल आनन्द' का रसपान कर सकें। आनन्द के सिवाय कुछ भी नहीं–यही सहस्रार है परन्तु यह तभी सम्भव है जब आपका ब्रह्मरंध्र खुल जाए। उसके बिना आप परमात्मा के प्रेम की सूक्ष्मता में और सदा संग रहने वाली महामाया की करुणा में प्रवेश नहीं कर सकते। बाह्य रूप से मैंने बता दिया कि महामाया कैसी हैं परन्तु अन्दर से आप इन्हें

तभी जान सकते हैं जब अपने ब्रह्मरंध्र से इसमें प्रवेश करें। तब सर्वव्यापक शक्ति की अवतरण यह महामाया एक प्रकार से बिल्कुल भिन्न हो जाती हैं। वे एक ओर तो **आपको सबक सिखाने का प्रयत्न करती हैं, विनाशकारी शक्तियों को समाप्त करती हैं और दूसरी ओर आपको प्रेम करती हैं, कोमलतापूर्वक आपकी रक्षा करती हैं और मार्गदर्शन करती हैं।**

..... उसका प्रेम निर्वाज्य है। वे प्रेम करती हैं क्योंकि इसके बिना उनसे नहीं रहा जाता, तो उस प्रेम में आप सराबोर हैं और आनन्द ले रहे हैं। हर व्यक्ति जानता है कि वह उनके बहुत करीब है, बिल्कुल करीब, जहाँ भी वो हों और जब भी वो चाहें उनसे सहायता माँग सकते हैं। सहस्रार अति महत्वपूर्ण है क्योंकि केवल इसी के माध्यम से हम प्रतिक्रिया करते हैं। जिस विश्व में हम रह रहे हैं यहाँ हमें अब उन कमलों की तरह होना है जिन पर दाग़ नहीं लगाया जा सकता और प्रचलित कोई बुराई जिन्हें प्रभावित नहीं कर सकती। **यही परीक्षा है कि इस कठिन समय पर हम खिल सकें और सुगन्ध फैला कर बहुत से अन्य लोगों को इस सुन्दर वातावरण में ला सकें।**

..... नकारात्मकता के विरुद्ध यह एक प्रकार से सुन्दर और लीलामय युद्ध है। उनकी मूर्खता क्या है? इसे कोई भी देख सकता है। अत: अपने मन को, अपनी दृष्टि को विकसित करें ताकि स्पष्ट रूप से आप सब यह समझ सकें कि आप ही लोग ज़िम्मेदार हैं। इस मस्तिष्क के सहस्रार के आप ही कोशाणु हैं और सबको ही कार्य करना है।

..... सहजयोग में आना केवल आपके निजी सीमित व्यक्तित्वों और उनकी समस्याओं के लिए ही नहीं है। एक ओर तो आपने स्वयं विकसित होना है और दूसरी ओर सबको आपके माध्यम से विकसित होना है। इस दूसरे पक्ष की देखभाल आपको करनी चाहिए−−−−−यह सुन्दर बात है कि परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश करने और स्वर्गीय आशीर्वाद का आनन्द लेने के लिए यह द्वार अब आपके लिए खुला है। मुझे विश्वास है कि बहुत बड़े स्तर पर यह कार्यान्वित होगा। पूर्ण समर्पण तथा विश्वास यदि आप पा लेंगे तो −−−−−−यह बहुत ही अच्छी तरह कार्यान्वित होगा।

**प.पू.श्री माताजी, ८.५.१९९४**

# अध्याय ११

# श्री कल्कि

आज कल्कि देवता व कुण्डलिनी शक्ति इनका क्या सम्बन्ध है ये कहने का प्रयास किया है।

कल्कि शब्द निष्कलंक से निर्मित हुआ है। निष्कलंक माने जिस पर कलंक या दाग़ न हो, इसका मतलब अत्यन्त शुद्ध एवं निर्मल है।

श्री कल्कि पुराण में श्री कल्कि अवतरण के विषय में बहुत कुछ लिखा है। उसमें यह कहा जाता है कि श्री कल्कि का अवतरण इस भूतल पर सम्भालपुर गाँव में होगा। संभाल शब्द का मतलब भाल 'कपाल' और संभाल (पुर) माने भाल प्रदेश पर स्थित। **अर्थात कल्कि देवता का स्थान हमारे कपाल पर है।** इस शक्ति को श्री महाविष्णु की हनन शक्ति भी कहते हैं।

श्री येशू का अवतरण व श्री कल्कि शक्ति का अवतरण, इस बीच की अवधि में मनुष्य को स्वयं का परिवर्तन करके परमेश्वर के साम्राज्य में प्रवेश करने का मौक़ा है। इसी को बाइबल में अन्तिम निर्णय The last judgement कहा है। **इस पृथ्वी पर हर एक मनुष्य का यह अन्तिम निर्णय होने वाला है। कौन परमेश्वर के राज्य में प्रवेश के योग्य है और कौन नहीं, इसकी छँटनी होने का समय अब आया है।**

सहजयोग से सभी का अन्तिम निर्णय होने वाला है। हो सकता है बहुत से लोगों को ये बात अजीब लगे परन्तु यह अजीब होकर भी **सत्य** है।

माँ के प्यार से कोई व्यक्ति सहज में पार होता है और इसलिये ऊपर कही गयी बात इतनी सुन्दर नाज़ुक व सूक्ष्म बनायी गई है। उसमें किसी को भी विचलित नहीं होना है। मैं आपको कहना चाहती हूँ कि **सहजयोग से ही आपका आख़िरी निर्णय होने वाला है।** आप परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करने के लायक हैं कि नहीं इसका निर्णय सहजयोग द्वारा ही होने वाला है।

बहुत से लोग अलग-अलग कारणों से सहजयोग में बढ़ते हैं, इसकी ओर आते हैं। समाज में कई लोग बहुत ही साहसी वृत्ति के, कुछ जड़ वृत्ति के या सुस्त वृत्ति के होते हैं। ये लोग ईड़ा नाड़ी पर कार्यान्वित होते हैं। इसमें कुछ लोग मदिरापान

अथवा इसी तरह का कुछ पीते हैं जिसके कारण ऐसे लोग सत्य से दूर भागते हैं। दूसरी तरह के कुछ लोग पिंगला नाड़ी पर कार्यान्वित होते हैं और बहुत ही महत्वाकांक्षी होते हैं। वो स्वतंत्रता चाहते हैं और उनकी अपेक्षाएं इतनी विशेष होती हैं कि उससे उनकी दूसरी साईड (ईड़ा नाड़ी) पूर्णतः खराब हो जाती है, उससे उनको अनेक दुष्कर रोग हो जाते हैं। परमेश्वर से जुड़े रहना उन्हें अच्छा नहीं लगता। इस तरह दोनों प्रकार के लोग आपको समाज में मिलेंगे। लोग एक तो बहुत ही तामसी वृत्ति में रहेंगे, नहीं तो बहुत ही राजसी वृत्ति में। इसमें तामसी वृत्ति के लोग तो शराब ही पिएंगे, मतलब स्वयं को जागृत स्थिति से, सचाई से परे हटाकर रखेंगे। दूसरे प्रकार के लोग जो कुछ सचाई है, सुन्दर है उसे नकारते ही रहते हैं। ऐसे लोग अहंकार से भरे हुए होते हैं। उसी प्रकार प्रति अहंकार से भरे हुए सुस्त, जड़ व लड़ाकू प्रवृत्ति के लोग दिखायी देते हैं। .....दोनों तरह के लोग सहजयोग में बड़ी कठिनाई से आ सकते हैं।

**परन्तु जो लोग सात्विक वृत्ति के हैं या मध्यम वृत्ति के हैं, ऐसे लोग सहजयोग में जल्दी आ सकते हैं।** इसी तरह जो लोग बहुत ही सीधे हैं वे भी सहजयोग को बिना मेहनत के प्राप्त होते हैं। वे पार भी सहज में होते हैं।

......इस संदर्भ में मुझे यह बात कहना जरूरी है कि सहजयोग आपको सही रास्ते पर ले जा सकता है व परमेश्वरी ज्ञान मूलतः खोलकर बता सकता है। सारे परमेश्वर को खोजने वालों को सहज ही परमेश्वरी ज्ञान खुलकर बताया जा रहा है। ये सारा सहज में ही होता है, आपको अपना आत्मसाक्षात्कार बिना कष्ट उठाये मिलता है और बिना कोई पैसा खर्च किए।

**परन्तु एक बात पक्की ध्यान रखनी चाहिये। आत्मसाक्षात्कार के बाद परमेश्वर के राज्य में प्रस्थापित होने तक बहुत बाधाएँ हैं** और श्री कल्की शक्ति का सम्बन्ध इसी से जुड़ा है। **आत्मसाक्षात्कार प्राप्त होने के बाद भी जो लोग अपनी पुरानी आदतों और प्रवृत्तियों में मग्न होते हैं उनकी स्थिति को योगभ्रष्ट स्थिति कहते हैं** उदाहरण – कोई व्यक्ति पार होने के बाद भी अहंकार वृत्ति में फँसा है या पैसे कमाने में ही मग्न है, या अपनी तानाशाही प्रस्थापित करने में अतिमग्न है, तो वह व्यक्ति कोई ग्रुप बना सकता है और ऐसे ग्रुप पर वह व्यक्ति अपना बड़प्पन स्थापित कर सकता है। परन्तु इसमें थोड़े दिनों बाद ऐसा मालूम होगा कि वह व्यक्ति परमेश्वर से, सचाई से वंचित हो गया, और अन्त में उसका सर्वनाश हो गया।

...... **हर एक चीज़ का इस संसार में बिल्कुल सही ढंग से नियमन होता है, उसी प्रकार सहजयोग में भी है। सहजयोग में आकर आप दिखावा नहीं कर सकते। किसी बात के लिये ग्रुपबाज़ी नहीं कर सकते।** सहजयोग में आने के बाद इस प्रकार के लोगों का बहुत जल्दी भंडा फूटता है क्योंकि ऐसा कृत्य करने वाले लोगों के सारे चक्रों पर ज़ोरों की पकड़ आती है और उसकी जानकारी उन व्यक्तियों को नहीं रहती है। ज़्यादा से ज़्यादा उन्हें चैतन्य लहरियों की सम्वेदना रह सकती है, परन्तु थोड़े समय में ही ऐसे लोगों का नाश होता है ......योग भ्रष्ट लोग, श्री कृष्ण जी के अनुसार, राक्षसयोनि में जाते हैं।

जो लोग सहजयोग मे आते हैं उनको इसमें जमकर टिकना पड़ेगा नहीं तो वे योग पाए बिना किसी और योनि में जा गिरेंगे। .....**श्री कल्कि देवता की शक्ति सहजयोगियों के साथ गुरुकृपा से प्रत्येक क्षण कार्यान्वित रहती है। श्री कल्कि देवता सहजयोगी की पवित्रता की रक्षा अपनी एकादश शक्ति से करते हैं। जो कोई सहजयोग के विरोध में कार्य करेगा उन सभी को बहुत परेशानी होगी।** इतिहास को देखा जाए तो लोगों ने अनेक संत पुरुषों को बहुत परेशान किया। परन्तु अब आप संतो को, साधुओं को कोई परेशान नहीं कर सकता, क्योंकि श्री कल्कि देवता की शक्ति पूर्णरूप से कार्यान्वित है। जो मनुष्य सीधा–सादा है, संत है, उसे परेशान किया तो कल्कि शक्ति उन्हें कहीं का नहीं रखेगी और उस समय आपको भागने के लिये पृथ्वी भी कम पड़ेगी।

.......औरों को मत सताओ, उनकी अच्छाईयों का फायदा मत उठाओ और अपना रुतबा बड़प्पन जताकर व्यर्थ बातें मत बनाओ क्योंकि कल्कि देवता ने आपके जीवन में संहार कार्य की शुरुआत की तो आप **क्या करें, क्या न करें** की स्थिति में आ सकते हैं।

इसी प्रकार जब आप अज्ञानता से या अनजाने में किसी दुष्ट व्यक्ति को भजते हैं या उसके सम्पर्क में होते हैं तब भी आपको इससे परेशानी उठानी पड़ती है। ......परमेश्वर के नाम से आपसे कोई पैसा निकालता है तो कितना पागलपन या अघोरीपन है? उसमें आपको लगता है कि पुजारियों को पैसा देकर आपने बहुत पुण्य कमाया। इस तरह सत्य क्या है, ये न समझकर हम अंधविश्वास से जिंदगी जीते हैं।......परमेश्वर के नाम पर एक के पीछे एक ऐसे अनेक पाप हम करते रहते हैं। पाप

क्षालन (धोना) करने के बदले पापों में वृद्धि करते हैं। ऐसे लोगों को मैं तामसी कहती हूँ।

......आपके पास जो कुछ समय मिला है, वह सब आपात्काल की तरह और महत्वपूर्ण है और इसलिये आपको स्वयं आत्मसाक्षात्कार के लिये सावधान रहना चाहिये। इसमें किसी को भी दूसरों पर निर्भर नहीं रहना है। अपने आप स्वयं साधना करके परमेश्वर के हृदय में ऊँचा स्थान प्राप्त करना चाहिए, अर्थात इसके लिये सहजयोग में आकर स्वयं पार होना जरूरी है, क्योंकि पार होने के बाद ही साधना करनी है।

**जिस समय कल्कि शक्ति का अवतरण होगा, उस समय जिन लोगों के हृदय में परमेश्वर के प्रति अनुकम्पा व प्रेम नहीं होगा या जिन्हें आत्मसाक्षात्कार नहीं चाहिए होगा, ऐसे सभी लोगों का हनन होगा। उस समय श्री कल्कि किसी पर दया नहीं करेंगे। वे ग्यारह रुद्र शक्तियों से सिद्ध हैं। उनके पास ग्यारह अति बलशाली विनाश शक्तियाँ हैं।**

इसलिये व्यर्थ की बातों में अपना समय नष्ट मत करिए। चमत्कार दिखाने वाले अगुरुओं के पीछे 'भगवान–भगवान' करते मत दौड़िये। **जो सही है उसी को अपनाइये** नहीं तो श्री कल्कि शक्ति का अपनी सारी शक्तियों के साथ संहार करने के लिये अवतार लेकर आने का समय बहुत नज़दीक आया है।

कुछ दूसरी तरह के लोग होते हैं, वे हमेशा अपनी चालाकी और बुद्धिमानी पर विचार करते हैं। उन्होंने हमेशा परमेश्वर को नकारा है। ऐसे लोग कहते हैं, परमेश्वर कहाँ है? परमेश्वर वगैरह कुछ भी नहीं। ....जो कुछ गलत है वह गलत ही है। जो कुछ हमारे धर्म के विरोध में है वह सब ग़लत ही है फिर वह कल हो या आज हो या १००० साल पहले हो, कभी भी हो  वह ग़लत है ......गलत मार्ग का अवलम्बन मत कीजिए। जो आप की उत्क्रान्ति के विरोध में है वह मत करिए। ऐसा करोगे तो एक समय ऐसा आएगा जब आपके पास किये हुए कृत्यों का पछतावा करने के लिये भी समय नहीं रहेगा......उस समय सारा काम प्रचंड होगा। हर एक व्यक्ति अलग अलग छांटा जाएगा। कोई भी कुछ नहीं कह सकेगा। आपके कर्मों के अनुसार कार्य होगा।

......आपको समझना चाहिये कि **आपकी माँ** ये सारी बातें समझती है। **अगर आपकी माँ ने कोई बात आपसे कही तो वह माननी चाहिये, इसमें वाद–विवाद नहीं करना चाहिये। क्या आपके वादविवाद से चैतन्य लहरियाँ प्राप्त होने वाली हैं ?**

......जो विशेष बात मुझे आपसे कहनी है वह है श्री कल्कि देवता की विनाश

शक्ति के बारे में। श्री कल्कि अवतरण बहुत कठोर है। पहले श्री कृष्ण जी का अवतरण हुआ, उनके पास हनन शक्ति थी। उन्होंने कंस और राक्षसों को मारा। बहुत छोटे से थे वे, तभी उन्होंने पूतना राक्षसी को कैसे मारा, ये आपको मालूम है। परन्तु श्री कृष्ण 'लीला' भी करते थे। वे करुणामय थे। उन्होंने लोगों को बहुत बार छोड़ दिया. क्षमा किया। श्री कृष्ण क्षमाशक्ति से परिपूर्ण थे। क्षमा करना श्री कृष्णस्थित गुण–धर्म है। परन्तु उस परमेश्वर की करुणा को समझने के लिये अगर हम असमर्थ साबित हुए तो इस कल्कि शक्ति का विस्फोट होगा और पूरी क्षमाशीलता आप पर संकटों की तरह आएगी। श्री कृष्ण ने स्पष्ट कहा है कि किसी समय अपने विरोध में कुछ चला लेंगे लेकिन आदिशक्ति के विरोध में एक शब्द नहीं चलेगा।

ऊपर निर्दिष्ट किया हुआ एक बहुत बड़ा अवतरण होने वाला है, ये पक्की बात है। ऐसी अवतारी शक्ति के पास श्री कृष्ण की सारी हनन शक्तियाँ, जो केवल हनन शक्ति, श्री शिव की हनन शक्ति अर्थात ताण्डव का एक हिस्सा, ऐसी सर्वप्रकार की हनन शक्तियाँ होंगी। उस अवतारी पुरुष के पास श्री भैरव का खड़ग होगा, श्री गणेश का फरसा होगा, श्री हनुमान की गदा और विनाश की सिद्धियाँ होंगी। श्री बुद्ध की क्षमाशीलता व श्री महावीर की अहिंसा शक्ति भी उलटकर गिरेंगी, ऐसी ग्यारह शक्तियुक्त श्री कल्कि देवता का अवतरण होने वाला है। उस वक्त सर्वत्र हाहाकार मचेगा और उसी समय सबका चयन होने वाला है।

उस समय सहजयोगी भी किसी को नहीं बचा सकता क्योंकि उस समय सहजयोग भी समाप्त हुआ होगा। आप सहजयोग से भी अलग किये जाओगे और प्रत्येक मनुष्य परमेश्वर को सही लगने वाला बच जाएगा बाकी के लोगों को मारा जाएगा और ये हनन ऐसा वैसा न होकर सम्पूर्ण जड़ का ही नाश होगा। पहले देवी के अनेक अवतारों ने अनेक **राक्षसों का नाश किया, पर राक्षसों ने फिर जन्म ले लिया,** परन्तु अब पूर्णतः सम्पूर्णतः नाश होने वाला है जिससे पुनः जन्म की भी आशा नहीं रह सकती।

अभी जो स्थिति है वह भिन्न है और उसे समझने की आप कोशिश कीजिए।.....केवल सहजयोग से ही मनुष्य की सफाई होगी और उसी से व्यक्ति परमेश्वर प्राप्ति के योग्य बनाया जा सकता है। **......इसीलिये आप अपना समय नष्ट न करके तुरन्त पूर्ण श्रद्धा से सहजयोग को स्वीकार कीजिये। यह अत्यन्त आवश्यक है। इससे भूतकाल में हुई गलतियाँ, पाप इन सबसे आपको मुक्ति मिलेगी।......आप बहुत सावधान और सजग रहिये। अपने आप से मत खेलिये।**

**स्वयं का नाश मत करिये। तुरन्त उठिये, जागृत हो जाइये। मेरे पास आइये मैं आपकी मदद करूँगी।**.......अपने जीवन का ज़्यादा से ज़्यादा समय सहजयोग में व्यतीत करना चाहिए। आपके लिये यह सहजयोग बहुत ही क़ीमती है, बहुत महान है। इसे प्राप्त करने के लिये और प्राप्त होने के बाद आत्मसात करने के लिये आप अपना समय उसे दीजिए।......जिस समय नये लोगों का सहजयोग की तरफ बढ़ना बिल्कुल खत्म हो जाएगा उस समय कल्कि शक्ति का अवतरण होगा।

कल्कि शक्ति का स्थान आपके कपाल के भाल प्रदेश पर है। जिस समय कल्कि चक्र पकड़ा जाता है उस समय ऐसे लोगों का पूरा सिर भारी होता है। कुण्डलिनी को अपने उस चक्र के आगे नहीं ले जा सकते। ऐसे मनुष्य में कुण्डलिनी ज़्यादा से ज़्यादा आज्ञा चक्र तक आ सकती है। परन्तु फिर से कुण्डलिनी नीचे जा गिरती है। **अगर आपने अपना सिर ग़लत लोगों या अगुरुओं के पाँव पर रखा होगा ते आपकी स्थिति भी ऐसी हो सकती है।**

...... कपाल पर अगर एक दो उठाव हों तो समझना चाहिये कि कल्कि चक्र खराब है। जिस समय कल्कि चक्र की पकड़ होगी उस समय अपने हाथ की हथेली और सभी उँगलियों पर और पूरे बदन पर साधारण से ज़्यादा गर्मी लगती है। किसी व्यक्ति के श्री कल्कि शक्ति के चक्र में पकड़ होगी तो ऐसा व्यक्ति कर्करोग (कैंसर) या महारोग इस तरह की बीमारियों से पीड़ित होगा।

......इसलिये कल्कि चक्र को साफ रखना होगा। इस चक्र में ग्यारह और चक्र हैं। यह चक्र साफ़ रखने के लिये इस चक्र के ग्यारह चक्रों में ज़्यादा से ज़्यादा चक्र साफ रखना बहुत ज़रूरी है। उनकी वजह से और छोटे-छोटे चक्र चालित कर पाते हैं। अगर पूरे के पूरे ग्यारह चक्रों की पकड़ होगी तो ऐसे व्यक्तियों को आत्मसाक्षात्कार देना बहुत ही कठिन होता है।

अब श्री कल्कि चक्र को साफ़ करने के लिये क्या करना है वह देखते हैं। सर्वप्रथम हमें परमेश्वर के प्रति अत्यन्त आदर, प्रेम औऱ उनके प्रति आदरयुक्त भय दोनों ही चाहिये। अगर आपको परमेश्वर के प्रति प्यार नहीं होगा या कोई गलती या पाप करते समय परमेश्वर का भय नहीं लग रहा है, उस समय श्री कल्कि शक्ति अपने क्षोभ से सिद्ध है, सज्ञ है। .......अगर आप पाप कर रहे हैं या गलती करते हैं तो उसमें मुझसे या और किसी से छिपाने की ज़रूरत नहीं है। अब अपने आपको यह मालूम है कि आप ये ग़लत काम कर रहे है। अगर आप पाप कर रहे हों और आपके हृदय में आपको

महसूस हो रहा है कि हम पाप कर रहे हैं तो कृपा करके ऐसा कुछ मत करिये।

जिस समय आपका परमेश्वर के प्रति आदर, भय और प्रेम रहता है उस समय आप जानते हैं कि परमेश्वर सर्वशक्तिमान है, वही हमारी देखभाल कर रहा है और वही हमारा उद्धार कर रहा है। वे उनकी शक्ति के कारण हमारे ऊपर कृपा एवं आशीर्वाद की वर्षा करते हैं। **परमेश्वर इतने करुणामय हैं कि इसकी आप कल्पना नहीं कर सकते। वे करुणा के सागर हैं, पर वे जितने करुणामय हैं उतने ही वे क्रुद्ध भी हैं, अगर उनका कोप हो गया तो बचना बड़ा मुश्किल है। फिर उन्हें कोई नहीं रोक सकता।**

**मेरे प्यार की आवाज़ भी उस समय नहीं सुनी जायेगी क्योंकि वे उस समय कह सकते हैं कि 'माँ, आपने बच्चों को छूट दे दी है और बच्चे बिगड़ गए।' इसलिए मैं आपसे कहना चाहती हूँ कि कोई भी गलत या बुरे कृत्य मत करो। उससे मेरे, माँ के नाम पर बुराई मत लाओ। आपकी माँ का हृदय इतना प्रेम से भरा, इतना नाज़ुक है कि ये सारी बातें आपको बताते हुये भी मुझे मुश्किल लगता है। मैं फिर से आपको विनती करके बताती हूँ कि अब व्यर्थ समय मत बर्बाद कीजिए क्योंकि पितामह परमेश्वर बहुत कुपित हैं। आपने अगर कोई बुरा काम किया तो वे आपको सजा देंगे। परन्तु अगर आपने उनके लिये या अपने स्वयं के आत्मसाक्षात्कार के लिये कुछ किया तब आपको परमेश्वर के राज्य में उच्च पद मिलेगा।**

आज आप करोड़पति होंगे, आप बहुत अमीर होंगे या बहुत बड़े पुजारी या वैसे ही कुछ होंगे परन्तु जो परमेश्वर को प्रिय है, जो मान्य है, उन्हीं को परमेश्वर के राज्य में उच्चतम पद पर विराजमान किया जायेगा। रईस या लखपति बनने पर आपको परमेश्वर के राज्य में प्रवेश है, ये अगर आपका विचार होगा तो वह बहुत ग़लत है। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि परमेश्वर प्राप्ति के लिये हम कहाँ हैं, यह देखकर प्रथम अपना परमेश्वर से सम्बन्ध घटित होना आवश्यक है। स्वयं की आत्मा कहाँ है? परमेश्वर से हम किस तरह सम्बन्धित हो सकते हैं, इन सब बातों का रहस्य आपको सहजयोग प्राप्त होने के बाद ही होता है। साधकों को सहजयोग में आकर अपना सर्वोपरि उत्कर्ष साधकर अपना कल्याण कर लेना चाहिये।

**प.पू.श्री माताजी, सहजयोग और कल्कि शक्ति, मराठी से अनुवाद**

**(निर्मला योग से उद्धृत)**

# अध्याय १२

# परमात्मा का अस्तित्व एवं अवतरण

## परमात्मा का अस्तित्व –

लोग प्रश्न ये करते हैं कि क्या परमात्मा हैं या नहीं? परमात्मा बिल्कुल हैं, यह सत्य है लेकिन यह सत्य जानने के लिये आपको आत्मसाक्षात्कारी होना चाहिए, क्योंकि इसके बिना आप परमात्मा को नही समझ सकते।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, ४.०४.१९९०**

...... आइये देखें ये परमात्मा हैं कौन? मैं किसके विषय में बात कर रही हूँ? आरम्भ में केवल मौन था, केवल मौन। मौन जब जागृत हुआ, मौन को जागृत किया गया था। मौन परब्रह्म कहलाता है। मौन जागृत हो गया। परब्रह्म या आप कह सकते हैं पूर्णमौन जागृत हो गया, यह अपने आप जागृत हुआ, जिस प्रकार से हम सो जाते हैं और जागृत हो जाते हैं। तत्पश्चात यह मौन सदाशिव बन गया। जब सदाशिव जागृत हुए, इनका उदय होने लगा अर्थात इनमें सृजन करने की इच्छा हुयी, उसी प्रकार जैसे सूर्योदय के माध्यम से सूर्य निकलता है, इसी प्रकार इस इच्छा की अभिव्यक्ति होने लगी। यह इच्छा उनकी शक्ति बन गयी और उनसे अलग हो गयी।

**प.पू.श्री माताजी, १५.११.१९७९**

सदाशिव और शक्ति दोनों एक ही चीज़ हैं, जैसे सूर्य और उसका प्रकाश होता है। लेकिन जब सृजन क्रिएशन करने का हुआ, **अनेक बार हुआ है क्रिएशन, एक बार नहीं अनेक बार हुआ है क्रिएशन,** तब सदाशिव और शक्ति अलग हट गए, दो अंग हो गए। यह शक्ति 'आदिशक्ति' कहलायी। इस आदिशक्ति ने एक व्यक्तित्व धारण किया तथा अस्तित्व रूप बन गयीं क्योंकि कार्य करने के लिये इन्हें साकार रूप धारण करना आवश्यक था।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, ३.०२.१९७८**

श्री सदाशिव सर्वशक्तिमान परमात्मा हैं, श्री सदाशिव आदि पिता हैं, उनको आदि माना जाता है, वे बीजस्वरूप हैं। श्री सदाशिव से स्थिति बनती है और संसार के सृजन में जब तक स्थिति नहीं बनेगी तब तक कोई भी सृजन नहीं हो सकता। पहले स्थिति बनायी जाती है–existence अस्तित्व लाना पड़ता है, किसी भी चीज़ का।

यह सदाशिव की शक्ति से ही होता है, इस कारण सृजन में उनका वही हाथ होता है जैसे किसी बड़ी हवेली में या भवन में उसकी नींव का होता है, उसकी फाउंडेशन का होता है। नींव दिखायी नहीं देती अगर उसके बग़ैर बिल्डिंग खड़ी नहीं रह सकती। उसी तरह **सदाशिव हमारे अन्दर आत्मा स्वरूप होते हैं। जब तक वे आत्मास्वरूप हमारे हृदय में स्थित होते हैं, हमारा इस संसार में जीवन चलता है। जिस दिन अपनी आँखें वे मूँद लेते हैं, उसी रोज हम खत्म हो जाते हैं, इस दुनिया से हम निकल जाते हैं और हमारी स्थिति परलोक में हो जाती है।**

.....श्री शिव जी किसी कारण से सृजन नहीं करते, यह तो उनका विलास (whim) है, वे चाहें तो करते हैं नहीं तो तोड़ देते हैं। वे अन्दर से सन्यस्थ हैं और बाहर से साक्षी। संसार में हम जो कुछ भी भोगते हैं, वह भोक्तास्वरूप जो परमात्मा का है वो उनका विष्णु स्वरूप है। विष्णु के स्वरूप में संसार में वे भोक्ता हैं और शिवजी के स्वरूप में वे सन्यस्थ हैं, ब्रह्मा के स्वरूप में वे सृजन का कार्य करने वाले कर्ता हैं।

.....आदिशक्ति ही परमात्मा के तीन रूपों को अलग–अलग प्रकाशित करती हैं, जिनको आप जानते हैं, जिनका नाम ब्रह्मा–विष्णु–महेश यानी कि शिवशंकर है। यानी एक ही तत्व के तीन पहलू आदिशक्ति धारती हैं।

**प.पू.श्री माताजी, २९.२.१९७६**

.....समझ लीजिए विराट श्री विष्णु जी का सबसे बड़ा स्वरूप है, उसके अन्दर उनका हृदय है तो उसमें श्री विष्णु जी बसे हैं और ब्रह्मदेव जो हैं वह उनकी क्रिया शक्ति को सम्भाले हुए हैं। उन्होंने ......सारी सृष्टि रची, सुन्दरता से सबकुछ बनाया।

**प.पू.श्री माताजी, १७.२.१९८१**

जब प्रलयकाल में सारी सृजन की हुई सृष्टि, सारा ही मैनीफेस्टैड संसार विसर्जित होता है, उसी परब्रह्म में लीन होता है, तब भी सदाशिव बने रहते हैं और उनका सम्बन्ध परमात्मा के उस अंग से हमेशा बना रहता है जो कभी भी प्रकटीकरण नहीं होता है, क्योंकि वो एक Non being हैं। परमात्मा की जो शक्तियाँ प्रगट होती हैं वो Being से होती हैं और जो नहीं प्रगट होती हैं, वो नानबीइंग (Nonbeing) की हमेशा बनी रहती है। इनमें सदाशिव का स्थान वैसा ही है जैसे एक हीरा टूट जाए, बिखर जाए, कितना भी मिट जाए, वह चमकता ही रहता है, कभी नष्ट नहीं होती उसकी चमक। उसी प्रकार श्री सदाशिव का स्थान है।

**प.पू.श्री माताजी, २९.२.१९७६**

.....सर्वशक्तिमान परमात्मा आदिपिता इच्छा शक्ति में अपनी इच्छा की अभिव्यक्ति 'आदिमाँ' के रूप में करते हैं। आदिमाँ अपनी अभिव्यक्ति प्रेम के रूप में करती हैं। आदिपिता और आदिमाँ दोनों के सम्बन्ध बहुत ही सूझ-बूझ से परिपूर्ण एवं गहन हैं। श्री सदाशिव की इच्छा से आदिशक्ति जो भी कुछ सृष्टि कर रही हैं, सदाशिव इसे देख रहे हैं, और इसके साक्षी हैं। पूरे ब्रह्माण्ड एवं पृथ्वी को वे साक्षी रूप में देखते हैं, साक्षी भाव उनकी शक्ति है।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १४.३.१९९४**

.....यह परमात्मा जो हैं, वो हम लोगों के निर्माता हैं, हमारे रक्षक हैं, जिनकी यह इच्छा है कि हमारा अस्तित्व बना रहे। वो जो कुछ भी चाहें हमारे साथ कर सकते हैं। वे दूसरे विश्व की संरचना भी कर सकते हैं तथा संसार का विनाश भी कर सकते हैं-ऐसा तभी होता है जब उनकी इच्छा हो। ईश्वर स्वयं हर तरह का चमत्कार करने में सक्षम हैं। परमात्मा के चमत्कारों की व्याख्या नहीं की जा सकती और न ही करनी चाहिए, वो हमारे मस्तिष्क से परे हैं। मनुष्य को भगवान के अस्तित्व का आभास कराने के लिए परमात्मा कुछ भी कर सकता है। वह तीनों आयामों में विचर सकता है और चौथे आयाम में भी। वह जो चाहे सब कर सकता है।

**प.पू.श्री माताजी, पंढरपूर, २९.२.१९८५**

..... **परम सत्य तो यह है कि सारी सृष्टि इस चराचर में सूक्ष्मता से फैले हुए ब्रह्मचैतन्य के सहारे चल रही है, यह सारा चैतन्य परमात्मा की ही इच्छा है और इस परम चैतन्य की कृपा से ही आज हम मनुष्य स्थिति में पहुँचे हैं। यह परमचैतन्य हमें वह शुद्ध ज्ञान दे सकता है जिससे हम जान सकें कि हम क्या हैं, कहाँ हैं, हमारी क्या स्थिति है और हमारा लक्ष्य क्या है। इसी शुद्ध ज्ञान से हम आत्मास्वरूप हो जाते हैं और परमात्मा एक सामूहिक अस्तित्व होने से हमें सामूहिक चेतना का प्रादुर्भाव होता है और हमें ज्ञात हो जाता है कि हम विराट के ही अंग-प्रत्यंग हैं। जब हम परमचैतन्य से एकाकारिता पा लेते हैं तो हमारा चित्त आलोकित हो जाता है, इस आलोकित चित्त से हम बहुत कुछ जान सकते हैं जो हमने पहले कभी नहीं जाना।**

चक्र, लहरियाँ तथा कुण्डलिनी का ज्ञान ही शुद्ध विद्या नहीं, सर्वशक्तिमान परमात्मा का ज्ञान ही शुद्ध विद्या है। यह ज्ञान बौद्धिक नहीं है, हृदय से शुरु होकर यह

आपके मस्तिष्क को जाता है। यह एक ऐसा ज्ञान है जो आपकी आनन्द अनुभूति से निकल आपके मस्तिष्क पर इस प्रकार छा जाता है कि आपका मस्तिष्क अब इसे नकार नहीं सकता, जैसे माँ को पाकर आप उसका प्यार जान जाते हैं। आप इसकी व्याख्या नहीं कर सकते, इसका उदय आपके हृदय से होता है।

.....परमात्मा सर्वशक्तिमान हैं, वे सब जानते हैं, सबकुछ करते हैं, सब चीजों का आनन्द लेते हैं–**यही वास्तविक और सच्चा ज्ञान है।** परमात्मा का ज्ञान कि वह प्रेम हैं, सत्य हैं, सर्वज्ञ हैं आपमें अस्तित्व की पूर्णता बन जाता है। उस प्रेम के सागर में जब आप स्वयं को पूर्ण तथा सुरक्षित महसूस करते हैं–यही सुन्दर समर्पण होता है।

प्रेम सत्य है और सत्य प्रेम है, परन्तु यह ईश्वरीय प्रेम है, इसी ने हमारे विकास की व्यवस्था की है और हमें मानव चेतना स्तर पर लाया है। **ईश्वरीय प्रेम तो शाश्वत है कुछ समय के लिए यह कम हो सकता है परन्तु हमारे उपकार और लक्ष्य प्राप्ति के लिये इसे वापिस आना पड़ता है।** परमात्मा से सम्बन्ध की कमी तथा स्थिरता का न होना हमें इस सर्वत्र विद्यमान शक्ति का अनुभव नहीं होने देता।

अब आप इसका अनुभव कर सकते हैं, सत्य को आप भी अपने मध्य–स्नायु–तन्त्र पर अनुभव कर सकते हैं। जो पूर्ण है उस सत्य को आपके मध्य नाड़ीतन्त्र पर प्रकट होना ही है। यह केवल विचार मात्र नहीं हो सकता कि 'यही सत्य है,' 'यह सत्य है।' सत्य निर्बाध है और सब इसका अनुभव कर सकते हैं। जो पूर्ण है और निर्बाध है उसके विषय में न तो वाद–विवाद किया जा सकता है और न ही उसका अनुभव भिन्न–भिन्न प्रकार का हो सकता है। यदि हम इस बात को प्रथमदृष्ट्या स्वीकार कर लें तो हम समझ पाएंगे कि इस सत्य का अनुभव करने के लिए हमें मानव चेतना से आगे जाना होगा।

**प.पू.श्री माताजी, मद्रास, १३.२.१९९०**

हम क्या सोचते हैं कि सिर्फ हम ही लोग इस दुनिया में हैं और इसके अलावा कोई है ही नहीं। आप तो अभी इस स्टेज पर आए ही नहीं, वरना आप जानते कि कितने लोग आपके आगे पीछे चलते हैं, किस तरह आपकी रक्षा होती है। **अभी तो आपने परमात्मा को जाना ही नहीं, उसका सिर्फ नाम ही लेते रहे। उसकी गलतियाँ ही निकालते रहे। उसको दोष ही देते रहे और अगर काम नहीं बना तो**

**कह दिया भगवान नहीं हैं। इससे ज्यादा तो आपने कुछ किया नहीं आज तक भगवान के लिये। आप चाहे कुछ करें, वह पिता परमात्मा, अत्यन्त प्रेममय है, आपके लिए जो कुछ करना है, करता है और करेगा और आपको चाहता है कि आप उसके साम्राज्य में आएं और अपने सिंहासन पर विराजमान हों।**

**.....यही उसका सिंहासन आपके सहस्रार में है, यहाँ आपको प्रवेश करना है और फिर ब्रह्मरन्ध्र को छेदने के बाद उसकी जो कृपा का, आशीर्वाद का, अनुभव है वह आप अपनी नसों पर जान सकेंगे, अपने चरित्र में जान सकेंगे, अपने व्यवहार में जान सकेंगे, अपने दोस्तों में जान सकेंगे, अपने समाज में जान सकेंगे, अपने देश और विश्व में उसे जान सकेंगे।**

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १६.२.१९८५**

## परमात्मा के अवतरण

मानव बनने तक विष्णुशक्ति ने इस संसार में स्वयं अवतार लिए। आपको यह मालूम है कि परमेश्वर के अवतरण हुए हैं। सर्वप्रथम आप मछली थे। उस समय अवतार मछली रूप में हुआ, बाद में कूर्म (कछुआ) रूप में हुआ है। कछुए के बाद वराह (सूअर) रूप से हुआ है। .......जैसे जैसे मनुष्य की उन्नति होती गयी वैसे वैसे परमेश्वर ने स्वयं इस संसार में जन्म लिया और आपका मार्गदर्शन किया क्योंकि उनके बगैर कौन आपका मार्गदर्शन करेगा। केवल विष्णुशक्ति ही अवतार लेती है।.....महाकाली शक्ति भी, जिसे हम शिव–शक्ति कहते हैं, कभी–कभी अवतरित होती हैं। जब–जब भक्तों पर विपत्ति आई तब–तब देवी ने स्वयं आकर अपनी छत्रछाया से भक्तों को संरक्षण दिया।

.....विष्णु का प्रादुर्भावयुक्त अवतरण श्रीकृष्ण का है।

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, २४.९.१९७९**

संसार में आप जानते हैं कि दशावतार हुए। अब हुए हैं कि नहीं इसकी सिद्धता देने के लिए हम संसार में आए हैं ये दस अवतरण हुए हैं और इन्हीं दस अवतरणों के सहारे हमारी उत्क्रान्ति हुई है ......अधिकतर श्री विष्णु जी के अवतरण हुए हैं उसकी वजह है कि श्री विष्णु जी हमारे अन्दर धर्म की संस्थापना करते हैं और उत्क्रान्ति का मार्ग बनाते हैं।

निराकार (परमात्मा) साकार होकर संसार में आया, उसको आना ही

पड़ेगा, अगर साकार नहीं आएगा तो आप कैसे जानिएगा। जैसे कि एक दीप की लौ देख रहे हैं, दिखने को तो आकार है, लेकिन सब तरफ फैली हुई है, उसी प्रकार निराकार साकार नहीं होगा तो आप निराकार को जान नहीं सकेंगे। इसलिए संसार में अनेक अवतरण हुए। साकार परमात्मा श्री राम, परशुराम, श्री कृष्ण साक्षात इस संसार में आए और उन्होंने संसार में आ करके हमें आज मनुष्य बना दिया, उनकी वजह से हम बने हैं और उन्हीं की वजह से हमने जाना है कि संसार में अवतार आते हैं।

परमात्मा तो संसार में अवतार ले रहे हैं, इसको समझ के लोगों ने भक्ति शुरु कर दी, भक्ति शुरु कर दी तो उसी में लिपट गये वो। अपने मन से मूर्तियाँ बनानी शुरु कर दीं, उसकी प्राण प्रतिष्ठा नहीं करी, उसमें जागृति नहीं दी, उसको कायदे से नहीं बिठाया और शुरु हो गये तो अटक गये। तब लोगों ने शुरु किया, बन्द करो भाई अब निराकार की बात करो। तो कभी निराकार से साकार में जाएं, साकार से निराकार में जाएं यह झगड़ा चल गया। जैसे एक ने फूल की बात की और एक ने शहद की, पर दोनों बातें ही रह गयीं, और आज तक बातें ही रह गयी हैं। तो दोनों बात सही हैं, वो भी सही है, यह भी सही है। ये आदिगुरु दत्तात्रेय जी आदिगुरु हैं वो ही अनेक बार संसार में आए और उन्होंने कहा कि भई हाँ ठीक है, अवतरण हुए हैं, मानिए उसे। लोग अवतरण को चिपक गए। राम, राम, राम, रास्ते में जा रहे हैं तो राम राम, बाजार में जाओ तो राम राम, कोई किसी को अक्ल नहीं रह गयी कि किस तरह राम का नाम लेना चाहिए। हर समय राम को आप इतना सस्ता किया दे रहे हैं। उन्होंने अपना ही इसलिए खंडन किया।

– वही संसार में राजा जनक के रूप में आए और राजा जनक ने एक नचिकेता को आत्मसाक्षात्कार दिया था।

– मोहम्मद साहब भी वही थे, कोई अन्तर नहीं और उनकी जो लड़की थी फातिमा, वो साक्षात जानकी थी।

– मोहम्मद साहब ही संसार में पुन: आए और गुरुनानक के नाम से उन्होंने कार्य किया। गुरुनानक की बहन नानकी, वो साक्षात जानकी थी।

–वो सभी निराकार की ही बात कर रहे थे क्योंकि उन्हें मालूम था कि इन्सान चिपक जाएगा। उन्होंने हमारे धर्म को हमेशा सम्भाला और आखिरी बार वो आए थे **शिरडी के साईं बाबा** बनकर। ऐसे अदिगुरु दत्तात्रेय के अनेक अवतरण हुए हैं और ये कोई इन्सान नहीं थे, ये **परमात्मा का अबोधिता का तत्व था**, उसके

अवतरण थे। उनका जीवन भी उसी तरह निर्मल और निष्पाप था। .........आपको आश्चर्य होगा, बहुत आश्चर्य की बात है कि उस वक्त जो दो बच्चे पैदा हुए वे **सीता जी के, लव और कुश** उन्हें कहते हैं, दोनों हिन्दुस्तान छोड़कर उत्तर की ओर चले गये। उसमें लव जो थे वो कोकेशियस (एशिया) की तरफ गए और जा करके उन्होंने वहाँ राज किया और कुश जो थे वे चीन की तरफ गये।

– अब जो यह बीच की धर्मव्यवस्था हमारे अन्दर बनी हुई है जिसमें अवतरण होते गए और बहुत ही गुप्त रूप से कार्य होता गया। उस वक्त यही दोनों बेटे इस संसार में बार–बार पैदा हुए, उसके बारे में हम लोगों को मालुमात नहीं है। बाद में यही दोनों बेटे बुद्ध और महावीर बनकर आये। **ये बुद्ध और महावीर जो थे वो कोई और दूसरे नहीं थे, ये श्री राम के लड़के लव और कुश थे।** कोई कहते हैं हम बुद्धधर्मी हो गए, हम जैनी हो गए, अरे वो हैं कौन? सब सनातन ही तो हैं।

जब आप कहते हैं कि हम सनातनी हैं, आपको तब सोचना भी चाहिए कि सनातन का आँचल बहुत बड़ा है, उसके नीचे सब लोग आ गए। वही बुद्ध जब आए संसार में, तब इन्होंने सिखाया कि मूर्ति पूजा नहीं करो, यह नहीं करो, वह नहीं करो। क्योंकि मूर्तिपूजा की हद कर दी थी, उन्होंने इसके लिये सिखाया, और फिर देखा कि वो चीज़ छूट कर बौद्धधर्म इतनी बुरी तरह से फैल गया है और उन्होंने इतनी बेवकूफियाँ शुरु कर दी हैं तो खुद उन्होंने ही इस संसार में जन्म लिया और वो ही हमारे हिन्दू धर्म के संस्थापक, जिन्हें हम मानते हैं, आदिशंकराचार्य जी वो ही थे। यह बुद्ध ही थे। वे फिर से आए अपना ही खंडन करने के लिये क्योंकि इन बुद्ध लोगों को कौन समझाये कि बुद्ध माने जागरूक, जिसने जान लिया, ऐसे कितने बुद्ध हैं ?

इंसान को कोई न कोई बहाना चाहिये झगड़ा करने के लिये। सबमें एक ही तत्व है, एक ही तत्व है सबमें, पर झगड़ा पता नहीं क्या। कोई न कोई झगड़े की ढूँढ ही लाते हैं। कैसे ढूँढ लेते है? आदि शंकराचार्य ने कहा था कि 'न योगे न सांख्येन' योग और सांख्य से कुछ नहीं होने वाला है, माँ की ही कृपा से ही सब कुछ होने वाला है। वो ही सब करेंगी। यह शक्ति का काम है। इसलिये हम सब शक्ति के पुजारी हैं। आज तक आप किसी भी धर्म में रहे, आप सब शक्ति के पुजारी हैं और शक्ति भी क्या शक्ति है? यह ब्रह्म की शक्ति है और ब्रह्म क्या है? यह परमात्मा की इच्छा है और परमात्मा का प्यार है। अगर परमात्मा को आपसे प्यार न होता तो यह सरदर्द को क्यों लेते? यह सारी सृष्टि बनाना भी एक बड़ा भारी दर्द है। इतनी सारी सृष्टि उन्होंने बनाई क्योंकि

उन्हें आपसे प्यार था और भी उसी प्यार में वो चाहते हैं कि आप उनके साम्राज्य में उतरें।

सबसे बड़ी सनातन बात यह है कि हम ब्रह्मशक्ति से बने हैं और हमें उसको पाना है और आपने उसे जाना नहीं तो आपने शक्ति को पाया नहीं। ब्रह्म को पाना है और उसके बाद सारी ब्रह्मविद्या आपको पूरी तरह से जान लेना है।

**प.पू.श्री माताजी, १७.०२.१९८१**

हमारे सामने इतने संतों के उदाहरण होते हुए भी हम भूल जाते हैं कि वे इस संसार में आये तो वे अपने लिये नहीं आए क्योंकि उनको क्या करना था? वो सब कुछ पाये हुए थे। वे कुछ देने के लिये हमारे पास आए और जो कुछ उन्हें देना था, वह हमारे अन्दर, हमारे शरीर के अन्तर्गत कर दिया। सिर्फ उसकी जानकारी हमें नहीं है। बाह्य से हम जरूर उनके गुण गाते हैं, उनकी प्रशंसा करते हैं, पर हम अभी भी उनसे अनभिज्ञ हैं, अभी तक हमने नहीं जाना, यह जाना ही नहीं कि वे हमारे अन्दर बसे हुए इस कार्य को करने के लिये तत्पर हैं।

......चिरंजीव, भैरव, हनुमान कुछ अन्य प्रकार के व्यक्तित्व हैं। ये सब अवतरण हैं। हनुमान जी बाद में देवदूत गैब्रील के रूप नें अवतरित हुए और भैरवनाथ संत माइकल के रूप में आए। नाम भिन्न हैं पर वे सब एक ही जैसे व्यक्तित्व हैं।

**प.पू.श्री माताजी,१५.०२.१९७७**

बड़े बड़े देवदूत और बड़े बड़े चिरंजीव खड़े हुए आपके जीवन को संभाल रहे हैं।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १०.०२.१९८१**

......बहुत से अवतरण आए परन्तु वे किसी चक्र विशेष तक ही सीमित रहे और कुछ अन्य स्वयं को आस-पास के लोगों में स्थापित करने में ही लगे रहे। उन्होंने प्रयत्न किया, इसे कार्यान्वित किया, परन्तु वास्तविकता में ये भलीभाँति कार्यान्वित न हो पाया। अतः आदिशक्ति को आना पड़ा और वे सभी अवतरण भी उनके साथ आए। वे सब हमारे साथ हैं। वो सभी आपकी सहायता करना चाहते हैं। उनकी इच्छा है कि हर अच्छा कार्य, जो आप करना चाहते हैं,के लिये ये पावन लहरियाँ आप के साथ हों।

**प.पू.श्री माताजी, २०.०६.१९९९**

.......मन्थन हो रहा है। बड़े जोरों का मन्थन हो रहा है। शायद आप इसको महसूस कर रहे हैं कि नहीं कर रहे, पता नहीं। जब हम दही को मथते हैं, तो उसका

सब मक्खन ऊपर आ जाता है, फिर हम थोड़ा सा मक्खन उसमें डाल देते हैं, यही समझ लीजिये, अवतार है, समझ लीजिए यही परमात्मा की कृपा है, और उस मक्खन से बाकी सारा लिपट जाता है औऱ सब साथ ही साथ एक जैसा चलता है।

**प.पू.श्री माताजी, १०.०२.१९८१**

जो बातें मैं कह रही हूँ उनमें से बहुत सी बातें आपको किताबों मे भी नहीं मिलेंगी, क्योंकि मैं जानती हूँ और मैं ही आपको बता रही हूँ।

मैं एक माँ हूँ, अतः मैं आपको सत्य बात ही बताऊँगी।

**प.पू.श्री माताजी, १३.०७.१९९४**

यदा –यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत: ।
अभ्युत्थानधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।। ९ ।।

परित्राणाय साधुनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे–युगे ।। ८ ।।

हे भारत! जब जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है तब तब ही मैं अपने रूप को प्रगट करता हूँ।

साधुओं का उद्धार और दुष्टों का नाश करने के लिए तथा धर्म की स्थापना के लिए युग–युग में प्रगट होता हूँ।

**श्रीमद्भगवद्गीता, चतुर्थ अध्याय**

## अध्याय १३

# आत्मसाक्षात्कार का अर्थ एवं आशीर्वाद

आत्मसाक्षात्कार कुण्डलिनी की जागृति का आशीर्वाद है।

..... आत्मसाक्षात्कार योग है। एकीकरण – लघुब्रह्माण्ड का बृहद् ब्रह्माण्ड से योग। हमारे अन्दर कुण्डलिनी शक्ति का उठना उस शक्ति को परमात्मा की सर्वव्यापी शक्ति से जोड़ना, यही आत्मसाक्षात्कार है।

**प.पू.श्री माताजी, मई १९८३**

..... आपको आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हो चुका है, इसका अर्थ यह है कि सर्वशक्तिमान परमात्मा का प्रतिबिम्ब आपके चित्त के अन्दर कार्यरत है। आत्मा की शक्ति से आपका चित्त ज्योतित हो चुका है।

**प.पू.श्री माताजी, २२.३.१९८४**

..... हमारे हृदय में जो आत्मा है, वो साक्षी स्वरूप बैठा हुआ है। कुण्डलिनी जब जागृत हो जाती है तो वो मस्तिष्क में यहाँ पर ब्रह्मरंध्र को छेदने के बाद, परमात्मा का प्रकाश उसे आलोकित करता है। परमात्मा का ही प्रतिबिम्ब हमारे हृदय में आत्मा के रूप में है, जैसे ही हमारी आत्मा जागृत हो जाती है तो इस आत्मा के चारों तरफ यह सात चक्र के मण्डल भी जागृत हो जाते हैं, इसलिये ये सात मण्डल हमारे हृदय में जागृत हो जाते हैं। ये मण्डल जागृत होने से हमारा जो मस्तिष्क है, हमारी जो नसें हैं, **वो मस्तिष्क एक तरह से अतिसूक्ष्म तरीके से खुल जाता है और उसके अन्दर शोषण करने की जो शक्ति है वो बढ़ जाती है। सत्य को शोषण करने की शक्ति के बढ़ने से ही मनुष्य खड़ा हो सकता है।**

– आज तक मनुष्य कभी सत्य पर खड़ा नहीं हुआ है, वह सत्य को सुनता है, जानता है, देखता है, पर उस पर खड़ा नहीं हो सकता है। **सत्य को आत्मसात करने के लिये, आत्मा की जागृति के लिये, वो आज सहजयोग में हो गयी।** .........आत्मा को प्राप्त होने से वो शक्ति आपके अन्दर जागृत हो गयी है, जिससे अब आप सत्य को आत्मसात कर लेते हैं। सत्य आपके अन्दर जागृत हो सकता है, माने कि दूसरा कौन है, कौन है दूसरा? सब हम ही तो हैं, हमारे अन्दर ही सब कुछ है, अब

आपको सामूहिक चेतना आ गयी है।

**प.पू.श्री माताजी, ३.११.१९८६**

...... मानव के अन्दर कुण्डलिनी की जीवन्तशक्ति के सर्वव्यापक दैवीशक्ति से एकाकारिता होने के उपरान्त वह **व्यक्ति की आध्यात्मिकता का विकास करने लगती है। अपने अन्तस में ही व्यक्ति आध्यात्मिकता को छू लेता है और एक नये आयाम, चौथे आयाम में उन्नत होता है।** इस प्रकार एक संत जैसा और बुद्धिमान व्यक्तित्व विकसित होता है। यह व्यक्तित्व ही स्वाभाविक सहज रूप से अपनी अभिव्यक्ति कर रहा है। शुद्ध विद्या के ज्ञान द्वारा सर्वव्यापक शक्ति को सम्भालना सीख कर व्यक्ति अधिक तेज़ी से इस नये आयाम में विकसित हो जाता है।

**प.पू.श्री माताजी, सहजयोग**

..... परमात्मा का साक्षात, सत्य का साक्षात, पूरी तरह से आप अपनी चैतन्य लहरियों से कर सकते हैं क्योंकि अब आपके अन्दर **एक नई चेतना जिसको वायब्रेटरी चेतना कहते हैं, एक चैतन्यमय चेतना आ गयी हैं, माने जो भी awareness है उसमें लाईट आ गयी है, उसके माध्यम से आप सिद्ध कर सकते हैं कि परमात्मा हैं या नहीं, परमात्मा की शक्ति क्या है, यह किस तरह से चलती है, हमारे अन्दर चक्र हैं या नहीं, चक्रों में देवी-देवता हैं या नहीं।** हम लोगों का किस तरह से उत्थान होता है, किस तरह से हम स्वयं को और दूसरों को ठीक कर सकते हैं, किसमें क्या बीमारी है, अनेक छोटी-छोटी बातों का निर्णय आप कर सकते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, ३.२.१९७८**

..... **अब आप कल्पना कर सकते हैं कि (आपको) कौनसी महा, महा, महा दीक्षा प्राप्त हो गयी है! पहले तो आपको दीक्षा प्राप्त होती है, जिस दिन आपकी कुण्डलिनी जागृत होती है, ये दीक्षा है। तब आपको आत्मसाक्षात्कार प्राप्त होता है।**

.....**आत्मसाक्षात्कार का अर्थ यह है कि अब आप को पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो गया है कि मन्त्र क्या है और किस चक्र के लिये कौन सा मन्त्र बनाना है। आपमें सभी चक्रों को देखने की शक्ति आ जाती है कि कौन से चक्र की सहायता की आवश्यकता है। आपमें अन्य लोगों की कुण्डलिनी उठाने की शक्ति है, कुण्डलिनी यदि नीचे की ओर आती है तो उसे उठा कर बाँधने की शक्ति है। चक्रों को बन्धन**

**देकर उन्हें स्थापित करने की शक्ति आपमें है और बन्धन द्वारा नकारात्मकता से अपनी रक्षा करने की शक्ति भी आपमें है। अपने चित्त को आप किसी भी स्थान पर ले जा सकते हैं।...**

.....आप कुण्डलिनी जागृति के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर कर सकते हैं।

.....**आप के सभी मन्त्र प्रभावशाली हैं। आप किसी देवी-देवता के नाम लें, आपके मन्त्र सिद्ध हैं और प्रभावशाली हैं।** .........किसी का कोई चक्र पकड़ रहा हो आप उस चक्र का मन्त्र कहें, वह ठीक हो जायेगा। आपको क्योंकि सभी मन्त्रों का ज्ञान है, आप जानते हैं कि यह क्या है, इसका रहस्य आप जानते हैं। आपमें सभी देवी-देवताओं का पूर्ण ज्ञान है। आप जानते हैं कि देवी-देवता क्यों नाराज़ हो जाते हैं, समस्या क्या हैं, किस बात से देवी-देवता कुपित हो जाते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, २.१२.१९७९**

- लेकिन सहजयोग का ज्ञान प्राप्त कर लेने से इसका अन्त नहीं होता, ज्ञान तो हो गया, ज्ञान होने का माने आपके नाड़ी तन्त्र पर आपने इसे जाना। जो लोग उल्टे तरीके से चलते हैं वो सोचते हैं कि ज्ञान करना माने कि बुद्धि से जानना। बुद्धि से हमें जानना माने क्या वो तो किताब पढ़कर हम जाने लेंगे या हम किसी गुरु के पास बैठकर जान लेंगे या किसी के उपदेश सुनकर हम जान लेंगे। **ज्ञान का मतलब है आपके स्नायुतन्त्र पर उसका ज्ञान हो, यही बोध है, यही बुद्ध है। (आत्मसाक्षात्कार का अनुभव प्राप्त करने के बाद) आज आप बुद्ध हैं क्योंकि आपको बोध है। ........बोध के बाद ही आपका चरित्र अपने आप बनता है।** कुण्डलिनी जागृत होने पर आपका चरित्र स्वत: बन जाएगा, कुण्डलिनी आपको सुधार लेगी। जब आप स्वयं सत्य पर खड़े हो जाएंगे तो आरम्भ में कभी-कभी कुछ कठिनाई आ जाती हैं, पर धीरे-धीरे ठीक हो जाती है। ....... आपको सोचना है कि अब हमारे पास ज्ञान प्राप्त हो गया है, हमें अब उसे अपना चरित्र बनाना है, और चरित्र बनाने के लिये हमें जो तप और ध्यान करना है वो हमें करना है किसी भी हालत में।

**प.पू.श्री माताजी, ३.११.१९८६**

...... कुण्डलिनी की जागृति के साथ व्यक्ति में दस संयोजकताओं की भी जागृति होती है। धर्म अन्तर्जात बन जाता है तथा हमारी सभी प्राथमिकताएं बदल जाती हैं। सब प्रकार के धर्मों का लक्ष्य ही सहजयोग का धर्म है। किसी धर्म विशेष

तक सीमित न होकर सभी धर्मों का सारतत्व इसमें है। **सभी वास्तविक धर्म एक ही मंजिल, एक ही लक्ष्य प्राप्ति की ओर ले जाते हैं।** वह लक्ष्य है आत्मासाक्षात्कार को प्राप्त कर पुनर्जन्म पा लेना। संस्कृत भाषा में पक्षी को द्विज कहा गया है। दुबारा जन्मा हुआ–क्योंकि पक्षी पहले अंड रूप में होता है तथा फिर दूसरा जन्म लेता है। इसी प्रकार आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर ब्रह्मज्ञान पा लेने वाले व्यक्ति को भी द्विज कहते हैं।

.....हमारे अन्दर के इस धर्म की जागृति होने पर हम जान पाते हैं कि सभी धर्मों की उत्पत्ति आध्यात्मिकता के एक ही स्रोत से हुई है। सहजयोग में किसी भी धर्म का व्यक्ति आ सकता है, वे सब जान जाते हैं कि हम सब एक ही धर्म से सम्बन्धित हैं और यही सभी धर्मों का सिद्धान्त है। अत: सहजयोगियों में कट्टरता की कोई सम्भावना नहीं, न कोई लड़ाई है न कोई झगड़ा। हर व्यक्ति स्पष्ट देख सकता है कि जिस भी धर्म का अनुसरण अब तक वह कर रहा था, वह कहाँ भटका है और क्या गलतियाँ की हैं। इन गलतियों को सुगमता से सुधारने की योग्यता भी उनमें आ जाती है।

**प.पू.श्री माताजी, सहजयोग**

...... आप निरन्तर सर्वव्यापक शक्ति से जुड़ जाते हैं, उस शक्ति का एक अंग बन जाते हैं।...... कुण्डलिनी क्षमा की सागर है, अत: भूतकाल में हुई सारी गलतियाँ क्षमा हो जाती हैं। ........ **अपने सूक्ष्म ऊर्जा केन्द्रों के प्रतिरूप अपनी उंगलियों के पोरों पर परम चैतन्य की शीतल लहरियों को अनुभव करने लगते हैं, इस प्रकार अपनी उंगलियों के पोरों पर आप सत्य जान जाते हैं।** ....... जाति, धर्म तथा अन्य मानसिक विचारों से ऊपर उठकर आप वास्तविकता को देखते, समझते हैं और महसूस करते हैं। ....... **एक अन्य चीज़ जो घटित होती है वह है आपका निर्विचार चेतना में चले जाना।** ........ ज्योंही आप निर्विचार चेतना में चले जाते हैं तो आप पूर्णतया शान्त हो जाते हैं। .......आप आन्तरिक सन्तुलन अनुभव करते हैं और अच्छे स्वास्थ्य का आनन्द लेने लगते हैं। .......आपका चित्त भी अति पवित्र हो जाता है, आप अत्यन्त शक्तिशाली हो जाते हैं। .......... आपको लगता है आप पूर्ण सुरक्षित हैं। इस प्रकार आप आत्म–विश्वस्त हो जाते हैं, परन्तु अहंकार आपको नहीं छूता।...... आपका पूर्ण व्यक्तित्व परिवर्तित हो जाता है, आप जीवन के सारे नाटक के दृष्टा बन जाते हैं। ......... अब आपके पास एक उच्च चेतना है जिसे निर्विकल्प चेतना कहते हैं, **सर्वोपरि आप आनन्द सागर में कूद पड़ते हैं। ........अब आप पूर्ण प्रकृति, सभी मानवों का आनन्द लेते हैं, ........आप परमात्मा के साम्राज्य की**

**नागरिकता पा लेते हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, १३.९.१९९५**

..... व्यक्ति को महसूस करना है कि पूर्ण सुरक्षा के शान्ति क्षेत्र में हमारा यह उत्थान किस प्रकार कार्य करता है तथा हमारे ही अपने मूल्यों तथा योगी पद का आनन्द हमें किस प्रकार लेना है। सहजयोगी कभी अहंकारी नहीं होता। अपनी अवस्था की डींग वह कभी नहीं हाँकता, इसके विपरीत वह अति विनम्र होता है, तथा सबको यह अवस्था प्राप्त करने में सहायता देता है। ऐसे व्यक्ति को पूरे विश्व–हित की चिन्ता होती है, यह चिन्ता उसमें धर्म रूप में होती है, उस पर लादी नहीं गई होती, यह अन्तर्जात होती है ताकि वह इस प्रकार कार्य कर सके। वह अपराध नहीं कर सकता क्योंकि अब उसका व्यक्तित्व ही अपराध रहित है तथा वह अपराध से घृणा करता है। इस विकास प्रक्रिया में अब उसमें अपराध तथा गलतियों के प्रति घृणा भाव विकसित हो गया है। इस प्रकार का व्यक्तित्व पूरे विश्व को परिवर्तित कर डालेगा।

.....सहजयोग व्यक्ति को आन्तरिक रूप से सच्चे और कपटी व्यक्ति को पहचानने की आध्यात्मिक सम्वेदनशीलता प्रदान करता है। यह दूसरे मनुष्यों के कष्ट तथा अपनी त्रुटियों को समझने की सम्वेदनशीलता भी व्यक्ति को देता है। मनुष्य अपना न्यायाधीश स्वयं बन जाता है, यही अन्तिम निर्णय है जहाँ व्यक्ति अपना निर्णय स्वयं करेगा, कुण्डलिनी निर्णायक बनेगी।

.....व्यक्ति को समझना है कि यह धर्म सभी धर्मों का सार है, केवल यही धर्म वह वास्तविक आन्तरिक अनुभव प्रदान करता है जो व्यक्ति को आध्यात्मिकता के प्रति सम्वेदनशील बनाता है। यह सम्वेदनशीलता असंख्य भाषणों, उपदेशों अथवा पुस्तकों से नहीं पायी जा सकती। इसलिये एक सहजयोगी सभी अवतरणों तथा संतों को जानता है तथा उनका सम्मान करता है। .......... इस दिव्य धर्म की कुछ विधियाँ उसे अन्तस में जीवित तथा कार्यशील रखती हैं, **इन्हें समझा जाना चाहिये।** कार्य प्रणाली तथा कुण्डलिनी को भली भाँति समझा जाना चाहिये । कार्य प्रणाली तथा कुण्डलिनी को भली भाँति सर्वव्यापक शक्ति से जोड़े रखने की विधियों का वर्णन किया गया है। व्यक्तित्व पोषण के लिये ध्यान विधियों तथा हर समय ध्यान–मग्न रहने की भी विधियाँ हैं। सर्वोपरि आपको ध्यान करना नहीं, निरन्तर ध्यान में रहना है।

**प.पू.श्री माताजी, सहजयोग**

# अध्याय १४

# आत्मसाक्षात्कार की स्थिरता

...... सहजयोगी वह प्रबुद्ध व्यक्ति होते हैं जिन्हें कुण्डलिनी जागृति (स्वत: सहज विधि) द्वारा आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हो जाता है। वे उन अंकुरित बीजों के समान है जिनकी आध्यात्म में जीवन्त क्रिया आरम्भ हो चुकी है। सारे जीवन्त कार्यों को करने वाली सर्वव्यापक शक्ति (ब्रह्मचैतन्य) की लहरियों का अनुभव जिन्होंने नहीं किया, वे सहजयोगी नहीं हैं।

.....अपने अन्त:स्थित सूक्ष्म तन्त्र तथा कुण्डलिनी की अवशिष्ट शक्ति के पूर्णज्ञान के बिना वे सहजयोगी नहीं हैं। अपने मध्य–नाड़ी–तन्त्र, कम से कम अपनी उंगलियों के छोरों पर (जो कि दोनों अनुकम्पी नाड़ी तन्त्रों, (सिम्पॅथेटिक) के अन्तिम सिरे होते हैं) उन्हें परमात्मा के प्रेम की सर्वव्यापक शक्ति का अनुभव करना चाहिये, तथा अपने अनुभव के कूटानुवाद (डिकोडिंग) का ज्ञान भी उन्हें होना चाहिये।

.....**सर्वव्यापक शक्ति की यह दिव्य लहरियाँ हर समय उनमें बहनी चाहिएं, परन्तु यदि यह लहरियाँ रुक जाएं तो उन्हें पुन: चालू करने और अपनी कुण्डलिनी को उठाने का उन्हें ज्ञान होना चाहिए। सर्वव्यापक शक्ति से जुड़े रहने की यही विधि है।** .....इस शक्ति के अनुभव के बाद भी व्यक्ति को समझना चाहिये कि अभी भी कुण्डलिनी पूरी तरह स्थापित नहीं हुई, सर्वसाधारण भाषा में हम कह सकते हैं कि सम्बन्ध स्थापित नहीं हुआ। इसे स्थापित करना होगा। यद्यपि बीज का अंकुरण स्वाभाविक है, पर माली को अब इस कोमल पौधे की देखभाल करनी होगी। इसी प्रकार साधक को आरम्भ में अपने आत्मसाक्षात्कार को सम्भालना होता है। कुछ लोग अत्यन्त आसानी से गहनता पा लेते हैं, पर कुछ छ: सात महीने कार्य करने पर भी पूरी तरह ठीक नहीं होते। ऐसी अवस्था में आवश्यक है कि सहजयोग की ज्ञान विधियों तथा इनके अभ्यास द्वारा व्यक्ति यह जान ले कि समस्या कहाँ पर है।

**प.पू.श्री माताजी, सहजयोग**

...... सहजयोग में प्राप्त करने के बाद आप लोग अपनी इज्ज़त करें, आप योगीजन हो, उसके प्रति अग्रसर हों, पूरा चित्त लगायें, बैठक करें। बैठक किये बिना

यह कार्य आगे नहीं हो सकता। जागृति आसान है, लेकिन इसका पेड़ बनाना आपके हाथ में है।

**प.पू.श्री माताजी, १६.२.१९८५**

..... सहजयोग में एक ही दोष है। ऐसे तो सहज है। सहज में प्राप्ति हो जाती है, प्राप्ति सहज में हो जाने पर भी उसका सम्भालना बहुत कठिन है, क्योंकि हम हिमालय में तो रह नहीं रहे हैं जहाँ आध्यात्मिक वातावरण हो। हर तरह के वातावरण में हम रह रहे हैं, उसी के साथ हमारी भी उपाधियाँ बहुत हैं जो हमें चिपकी हुई सी हैं। **तो सहजयोग में शुद्ध बनना, शुद्धता अन्दर लाना, यह कार्य हमें करना पड़ता है।** तो जैसे कि अगर पानी के नल में कोई भी चीज भरी हुई है तो उसमें से पानी नहीं गुज़र सकता, इसी प्रकार **यह चैतन्य भी जिन नसों में बहता है वह शुद्ध होनी चाहिए।** .......तो नसों की शुद्धता हमें करनी चाहिये ......... इसके लिये ध्यान करना आवश्यक है।

**प.पू.श्री माताजी, २७.११.१९९१**

## सहज ध्यान विधि

..... सवेरे के टाइम में जल्दी उठकर, नहा–धोकर ध्यान करना चाहिये। सवेरे ध्यान में बैठना चाहिये ।...... सवेरे जल्दी उठने से, सवेरे के टाइम में रेसेप्टीविटी (ग्रहण शक्ति) ज़्यादा होती है मनुष्य की, और उतना ही नहीं उस वक्त में संसार में बहुत अत्यन्त ही सुन्दर ढंग से चैतन्य भरा रहता है।

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, २५.५.१९७६**

..... अत्यन्त नम्रतापूर्वक अपने हृदय की ओर ध्यान करके नतमस्तक होकर फोटो के सामने दोनों हाथ करके शान्तिपूर्वक परमीशन लेकर बैठें। बात–बात में क्षमा माँगनी पड़ेगी, सो उस वक्त भी क्षमा माँगकर कि – ''हमसे अगर कोई **गलती हुई हो तो उसे माफ़ी कर के ध्यान में आप हमें उतारिये।''** इस तरह से प्रार्थना करके – **''जिनसे हमने बैर किया है सबको माफ़ कर देते हैं और हमने अगर किसी से बैर किया है, उसके लिये तुम हमें माफ़ कर दो।''** अत्यन्त पवित्र भावना लेकर ध्यान में जाएं। आँख बंद करके आत्मा की ओर ध्यान करें।

.....ध्यान करने से पहले जहाँ बैठ रहे हैं उस आसन में बन्धन दें, अपने शरीर को बन्धन दें, सात मर्तबा अपने शरीर को बन्धन दें, स्थान को बन्धन दें, फोटों

को बन्धन दें। ......उसके बाद मन को बन्धन दें ...... माने विशुद्धि चक्र और आज्ञा चक्र को बहुत अच्छी तरह बन्धन दें और यह विचार करें – **''प्रभु हम तेरे ही बन्धन में रहें, हम पर कोई बुरा असर न आएं''** अत्यन्त नतमस्तक होकर और उस वक्त में यह सोचकर कि हम साक्षी हैं और सब चीज़ से हम अलग हटकर कि हम उससे अछूते हैं, हम निर्मल हैं, सब चीज़ों से अपने को हटा कर आप बैठे रहें। आप ऐसा रोज करें, इसी की एक प्रकार से आदत लग जायेगी। अत्यन्त श्रद्धापूर्वक ध्यान करें।

.....ध्यान करते वक्त सिर्फ फोटो की ओर दृष्टि रखते–रखते आँखे बन्द कर लें और कोई हाथ–पैर घुमाने की जरूरत नहीं। **उस वक्त कोई सा भी चक्र खराब हो, उस चक्र की ओर दृष्टि करने से वो चक्र ठीक हो जाएगा।**

.....पहले तो अपने चक्र ठीक हो गए, शुद्ध हो गए, इसके बाद अपने आत्मतत्व पर विचार करें या अपने आप पर, आत्मा की ओर चित्त ले जाएं। .........आत्मा हृदय में होती है लेकिन उसकी सीट (पीठ) जो है वहाँ सहस्रार के ऊपर है, तो मैंने इसीलिये कहा हृदय में नतमस्तक हों और चित्त जो है सहस्रार की ओर ले जाकर आत्मा की ओर समर्पित हों। आत्मतत्व का ईसेंस (सार) क्या है? **आत्मतत्व जो है वो पवित्रता है, पूरी निर्मल पवित्रता कहिये, उसकी ओर नज़र करें, वह पूर्णतया अलिप्त है, किसी भी चीज़ में लिप्त नहीं। जो भी चीज़ आपसे लिपटी हुई है, उसी के कारण आप आत्मा से दूर हैं।** आत्मतत्व का विचार करें और यह आत्मतत्त्व प्रेम है, अनेक बार इसका विचार करें, यह बहुत बड़ा विचार है – **आत्मतत्व प्रेम है**।

.....ध्यान में कोई सा भी विशेष विचार नहीं लेने का है लेकिन आप कह सकते हैं कि ''मैं वही प्रेमतत्व हूँ, मैं वही आत्मतत्व हूँ, मैं वही प्रभु की शक्ति हूँ'', इस तरह से दो–तीन बार कहते ही आप आशीर्वादित हो जायेंगे, क्योंकि आप सत्य कह रहे हैं, आपके अन्दर से वायब्रेशन्स जोरों से चलने लगेंगे।

**प.पू.श्री माताजी, २७.५.१९७६**

...... ध्यान में जाते वक्त आप सिर्फ ये देखें कि आपका कौन सा चक्र पकड़ रहा हैं।...... उँगलियों पर आपको जान पड़ेगा, कौन सी अँगुली थोड़ी सी जल रही है। **जो भी उँगली आपकी जल रही है उस पर आप बन्धन डाल दें तो वो छुट जायेगी। अगर आपकी उँगलियाँ ज़्यादा ही जल रही हों तो हाथ झटक दीजिये, आप**

**जानते हैं, बन्धन ड़ाल दीजिये।**

.....ध्यान में अगर आपकी आँखे फड़क रही हैं तो समझ लीजिये कि आज्ञा चक्र पर चोट हो रही हैं।

.....आपका शरीर अगर हिल रहा है तो समझ लेना चाहिये कि आपके मूलाधार पर ही चोट हो गयी है।

.....आपके हाथ अगर थरथरा रहे हैं तो भी समझ लेना चाहिये कि कुछ न कुछ आपके अन्दर बहुत बड़ी खराबी हो गयी है। उसमें ज़ूता मारने का इलाज सबसे अच्छा है।

.....ध्यान में बढ़ने के लिये एक गुण बहुत ज़रूरी है, बहुत ही ज़रूरी ही, उसको कहते है इनोसेन्स–भोलापन – स्वच्छ एक छोटे बच्चे जैसा। ........ चालाक लोग, कनिंग लोग, अपने को जो बहुत होशियार समझते हैं, बस उनकी परमात्मा की तो इच्छा होती नहीं, बस अपनी होशियारी दिखाते हैं, वो नहीं पाते। पूर्णतया इनोसेन्ट होना चाहिये।

**प.पू.श्री माताजी, १.२.१९७५**

..... हमें सहज–सुखद मुद्रा में बैठना चाहिये और हमारी टाँगे अधिक कसी हुई नहीं होनी चाहिएं। टाँगे थोड़ी खुली और सहज आसन में होनी चाहिये। हाथ नीचे खुले होने चाहियें जैसे कुछ बहुमूल्य मिल रहा है।.......नमस्कार करते हुए दोनों हथेलियाँ ऊपर की ओर खुली होनी चाहिए और सहस्रार से थोड़ी दूर और यदि सम्भव हो तो माथा पृथ्वी पर टिका होना चाहिये।

**प.पू.श्री माताजी, कबैला, २१.२.१९९१**

..... **ध्यान दो तरह का होता है–अन्तर्मन और बहिर्मन। अपने अन्दर ध्यान करते हुए जब हम अपनी त्रुटियों को देखते हैं तो यह अन्तर्मन ध्यान होता है। ....... बाह्य जगत में हमें किस प्रकार रहना है, यह बहिर्मन ध्यान है।** अन्तर्मन ध्यान अति महत्वपूर्ण है। हर एक को प्रतिदिन प्रात: एवं सायं ध्यान करना चाहिये।

**प.पू.श्री माताजी, ब्रिसबेन, ६.८.१९९१**

..... सवेरे का ध्यान जो है, अपनी ओर नज़र करने का ध्यान है कि मैं क्या कर रहा हूँ? मेरे अन्दर क्या दोष हैं, मेरे अन्दर क्रोध आता है, इस क्रोध को मैं कैसे नष्ट करूँ? मुझे ऐसी कौन इच्छाएं होती हैं जो कि मेरे लिये दु:खदायी हैं, मुझे नष्ट

करेंगी, उधर मैं क्यों जाता हूँ? इस पर ध्यान देने से आपको पता लगेगा कि आपको कौन से चक्र की पकड़ है। उसे आपको साफ करना है, उसको साफ करके, ठीक-ठाक करके और फिर आप बैठें। इसको 'प्रत्याहार' कहते हैं। माने इसकी सफाई करनी चाहिये। मन की सफ़ाई करनी चाहिये।

**.....जो लोग सवेरे उठकर ध्यान नहीं करेंगे, वे सहज में कितने भी कार्यान्वित रहें, और सब कुछ करते रहें, अपनी गहराई को पा नहीं सकते।**

.....उसके बाद शाम का ध्यान है। शाम के ध्यान में समर्पण होना चाहिये ....... यानि कि इस वक्त यह सोचना चाहिये कि मैंने सहजयोग के लिये क्या किया? आज दिनभर में मैंने सहजयोग के लिये कौन सा कार्य किया? शरीर से, मन से, बुद्धि से।...... शाम का ध्यान बाहर की ओर होना है, माने औरों के लिये क्या किया? ये सब विचार आपको रखने चाहियें।

.....**एक दिन नहीं खाना खाया तो कोई बात नहीं, एक-आध दिन आराम नहीं हुआ तो कोई बात नहीं, लेकिन सहजयोगियों को ध्यान तो अवश्य करना चाहिये क्योंकि ध्यान में ही आनन्द पाया जाता है। तो सवेरे का ध्यान अगर हम कहें कि ज्ञान का है तो शाम का ध्यान भक्ति का है।**

**प.पू.श्री माताजी, २७.११.१९९१**

..... ध्यान रोज करना ही होगा, जब तक यह तपस्या नहीं की जाएगी तब तक आप पूरी तरह प्रकाशमय नहीं होंगे। **जब तक आप ध्यान नहीं करेंगे तब तक आप हमें भी नहीं समझेंगे, तब तक आप बिल्कुल हमें नही समझेंगे क्योंकि जब तक आपमें त्रुटियाँ रहेंगी तब तक आप उन त्रुटियों के झरोखे से देखेंगे।........ एक भी त्रुटि आपके अन्दर रहेगी तो उसी तरह हम आपको नजर आएंगे, हम आपको असलियत में नजर आएंगे ही नहीं।**

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, ३.११.१९८६**

..... यदि आप लोग ध्यान-धारणा नहीं करते तो मेरा आपसे कोई रिश्ता नहीं ......**यदि आप प्रात: - सायं नियम से ध्यान नहीं करते तो आप श्री माताजी की छत्रछाया में नहीं रहेंगे, क्योंकि सम्बन्ध तो केवल ध्यान के माध्यम से ही है।** आरम्भ में ध्यान कुछ समय लेता है पर एक बार जब आप ध्यान को जान जाएंगे, मेरी संगति के आनन्द को समझ जायेंगे, मुझसे एकाकारिता को जान जाएंगे तो ध्यान के

अतिरिक्त किसी अन्य माध्यम की आवश्यकता समाप्त हो जाएगी। **परमात्मा से आपको पूर्ण एकाकारिता होनी चाहिये और यह केवल ध्यान से सम्भव है। अपने सौंदर्य, गरिमा तथा महान व्यक्तित्व को प्राप्त करने के लिये आवश्यक है कि पूर्ण निष्ठा से ध्यान करें।**

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ६.६.१९९३**

..... हमारे अस्तित्व की शान्ति, सौन्दर्य एवं गरिमा हममें अन्त:र्निहित है। इसका एक महान सागर हमारे अन्दर है, इसे हम बाहर नहीं खोज सकते, इसे अपने अन्तस में खोजना होगा। ध्यान–धारणा की स्थिति में आप उसे खोजें और इसका आनन्द लें।

**प.पू.श्री माताजी, सिडनी पूजा, १४.३.१९८३**

...... आपने स्वयं अपना आकलन करना है......आप ही ने देखना है, आप ही ने महसूस करना है और फिर आप ही ने उन्नत होना है और सभी चीज़ों का ज्ञान प्राप्त करना है। परमेश्वरी विज्ञान के सभी रहस्यों को समझना है। तब आप गुरु बन जाते हैं, अपने स्वामी। आप आत्मा हैं, आपको यह स्थिति प्राप्त होनी ही चाहिये। जो आपको दिया जा रहा है आपका अपना है, मैंने इसमें कुछ नहीं करना, मैं तो मात्र उत्प्रेरक (catalyst) हूँ।

**प.पू.श्री माताजी, २२.३.१९८१**

* ध्यान–धारणा तो आपके अन्दर की शान्त स्थिति है, विचारों की शान्ति और उस सागर की गहनता में जाना जो आपके अन्त:स्थित है।

**प.पू.श्री माताजी, लास एंजिल्स, ३.११.२००२**

* यदि आप अपने अन्दर आनन्द अनुभव नहीं करते, आपमें यदि आनन्द का अभाव है तो आपके लिए सर्वोत्तम उपाय है कि आप ध्यान–धारणा करें। ध्यान–धारणा द्वारा आप जान जाएंगे कि सहजयोग का, चैतन्य लहरियों का आनन्द किस प्रकार लेना है?

**प.पू.श्री माताजी, जर्मनी, सितम्बर २००२**

# अध्याय १५

# ध्यान में गहनता एवं निर्विचार चेतना

..... प्रात:काल आप उठ जाईये और ध्यान कीजिये, सुबह ही सुबह। बातचीत बिल्कुल न करें। बैठें, ध्यान करें, क्योंकि उस समय दैवी चैतन्य किरणें आती हैं– सूर्य बाद में आता है, उसी से चिड़ियाँ जागती हैं, उसी से फूल खिलते हैं और उसी से सभी जागृत होते हैं।

.....**ध्यान में अपने विचारों को रोकने का प्रयास करें। खुली आँख से मेरा चित्र देखें और कोशिश करें कि विचार उठना बंद हो जाए। अपने विचार को रोकना चाहिए।** विचारों को रोकने के लिए सहज तरीका है–'जीसस की प्रार्थना' (Lord's Prayer) क्योंकि वह आज्ञा चक्र की स्थिति है, **अत: प्रात:काल जीसस की प्रार्थना या श्री गणेशजी का मन्त्र स्मरण करें।** दोनों एक ही हैं, या आप यह भी कह सकते हैं–**मैं क्षमा करता हूँ।** आप श्री गणेश जी के मन्त्र से प्रारम्भ कर सकते हैं फिर जीसस की प्रार्थना करें, तत्पश्चात कहें–''**मैं क्षमा करता हूँ।**'' यह कार्य करेगा। तब आप निर्विचार चेतना में हैं। अब आप ध्यान करें। इसके पूर्व कोई ध्यान नहीं है।

.....जब विचार उठते हैं – मुझे चाय पीना है, 'मैं क्या करूँगा', 'मुझे क्या करना है', 'यह कौन है', 'वह कौन है', ये सभी विचार वहाँ होंगे। अत: पहले आप निर्विचार चेतना में आएँ। निर्विचार अवस्था के बाद ही आध्यात्मिक स्थिति (spirituality) प्रारम्भ होती है। इसके पहले नहीं, इसको जानना चाहिये। **तर्क व युक्ति के आधार पर आप सहजयोग में उठ नहीं सकते, अत: प्रथमत: आप निर्विचार अवस्था में स्थित हों।** आप महसूस करेंगे कि अभी भी यहाँ रुकावटें हैं इसको भूल जाएँ, आप इसको केवल भूल जाएँ।

.....अब अपना समर्पण शुरु कर दें। अब यदि कोई चक्र पकड़ रहा है तो आपको कहना चाहिये ''माँ मैं इसे आपको समर्पण करता हूँ।'' अन्य चीज़ों को करने के स्थान पर सिर्फ यह कह सकते हैं। यदि आप फिर भी तर्क–वितर्क या चिन्ता करते हैं कि इसको कहने की क्या जरूरत है, तो यह कभी कारगर नहीं होगा। समर्पण को युक्ति, तर्क आदि के स्तर पर नहीं उतारना चाहिये। यदि सच्चा प्रेम और हृदय की पवित्रता आप में है तो यह सर्वोत्तम बात है। यह करना ही समर्पण है। **अपनी सभी**

**चिन्ताएँ अपनी माँ पर छोड़ दें, सब कुछ अपनी माँ के ऊपर।**......... समर्पण करें, यदि कोई विचार आपमें उठते हों या कोई चक्र पकड़ रहा है तो समर्पण करें और आप पाएँगे कि वह चक्र साफ हो गया। प्रात:काल ऐसा–वैसा न करें, बिल्कुल नहीं, प्रात:काल अपने हाथ को हिलाएँ–डुलाएँ नहीं। आप पाएंगे कि ध्यानावस्था में अधिकांश चक्र स्वत: ही साफ हो गए।

.....अपने हृदय को प्रेममय बनाने की कोशिश करें, अपने हृदय में ऐसा प्रयास करें व अपने गुरु को (माँ को) उसके अन्तरंग में बिठायें। **हृदय में बिठाने के पश्चात हमें पूर्ण भक्ति व समर्पण के साथ उनके प्रति नमन करना चाहिये। आत्मसाक्षात्कार के बाद अब आप जो कुछ भी अपने मस्तिष्क से करते हैं– वह केवल कल्पनामात्र नहीं है– क्योंकि अब आपका मस्तिष्क, आपकी कल्पनायें स्व प्रकाशित हैं। आप अपने को ऐसे प्रस्तुत करें जैसे अपने गुरु, अपनी माँ के चरणोंपर नम्रतापूर्वक समर्पित हो रहे हों।** आप ध्यान के लिये आवश्यक वातावरण की विनती करें। **ध्यान तब है जब आप ईश्वर के साथ एकरूप हो जायें।**

.....तो अब यदि अन्दर विचार आ रहे हों तो पहले आपको पहला मन्त्र बोलना चाहिये और तत्पश्चात् अन्दर की ओर देखें। आपको श्री गणेश जी का मन्त्र बोलना चाहिये – कुछ लोगों को इससे मदद मिलेगी। उसके बाद अन्दर देखें। आप अपने को ही देखें कि हमारे अन्दर कौन सी सबसे बड़ी बाधा है। पहली है विचार, उसके लिये निर्विचार का मन्त्र पढ़ें–''**ओम त्वमेव साक्षात श्री निर्विचार साक्षात श्री आदिशक्ति माताजी श्री निर्मला देव्यै नमो नम: ।।**''

.....इसके बाद अपने अहंकार रूपी बाधा पर आएँ। नि:सन्देह आप देखेंगे कि विचार आना तो रुक गया है लेकिन अब भी सिर में दबाव आ रहा है, अत: आपको कहना चाहिये – ''**ओम त्वमेव साक्षात श्री महत् अहंकार साक्षात श्री आदिशक्ति माताजी श्री निर्मला देव्यै नमो नम: ।।**''

महत् का अर्थ है बड़ा, अहंकार यानी ईगो। आप इसे तीन बार कहें।

..... यदि अब भी आप को अहंकार विद्यमान लगता है। तो बाएं भाग को आप ऊपर उठाएँ जिससे यह बाएं से दाहिने तरफ धकेला जाए। इसे हाथों द्वारा करें–एक हाथ चित्र की तरफ़ रहना चाहिये। **बायें भाग को ऊपर उठाइये दायें भाग को नीचे, जिससे अहंकार व प्रति अहंकार संतुलनावस्था में आ जाएँ।** इसको सात बार करें। आप देखें

आप अन्दर की तरफ कैसा महसूस कर रहे हैं, इसको देखने की कोशिश करें।

.....इस प्रकार जब एक बार आप अपने को संतुलित कर लेते हैं– तब सबसे उत्तम यह होगा कि आप अपना चित्त, अपनी मनोभावना पर लगाएँ– मन:शक्ति पर। उनको देखें। अपनी माँ का विचार करते हुए अपनी मनोभावना को प्रकाशित कर सकते हैं। ठीक? उसको आलोकित करें। मन में जो कुछ भी समस्याएँ हैं, वो आपकी सभी समस्याएँ सुलझाती हैं। अत: जब आप अपनी भावनाओं से सम्बन्धित हो जाते हैं और ध्यानावस्था में उस पर ध्यान देना शुरु कर देते हैं, तब आप पाएंगे कि यह **भावनाएं आपके अन्दर उठती हैं और यदि इनको आप अपनी माँ के सुपुर्द करें, श्री माताजी के चरण कमलों में अर्पित करें, तो ये भावनाएं विलीन होना शुरु हो जायेंगी व फैलने सी लगेंगी। आप उनको इस तरह विस्तृत करें कि आपको लगने लगेगा कि वे अब आपके नियन्त्रण में हैं। उन भावनाओं को नियन्त्रित करने से आपकी भावनाएं और विकसित, प्रकाशित एवं प्रभावशाली होती हैं।**

.....अब आप ऐसा करें कि अपनी श्वास को देखना शुरु करें। .........देखें....... अपनी श्वास को धीमी करने का प्रयास करें, इसको कम करें। **इसका तात्पर्य यह है कि आप श्वास बाहर निकालें– कुछ क्षण के लिये रुकें–तब श्वास अंदर लें, लम्बे समय तक। तब पुन: श्वास बाहर करें।** इस प्रकार एक मिनट के अन्तर्गत आपकी श्वास साधारण तौर पर पहले से कम हो जायेगी। ठीक! इसका अभ्यास करें, अपना ध्यान भावनाओं पर रखें। देखा आपने ! किस प्रकार सम्बन्ध स्थापित हो गया।

.....अच्छा! देखिये कि कुण्डलिनी ऊपर उठती है? अब जब आप श्वास ले रहे हैं तो आप पायेंगे कि श्वास लेने व छोड़ने के बीच में थोड़ा समय (विलम्ब) है, उसे आप रिक्त (खाली) रहने दें। श्वास अन्दर लें, उसको वहाँ रोके रखें, अब श्वास बाहर निकालें और श्वास बाहर निकालते रहें। फिर श्वास अन्दर लें। अब इस तरह श्वास लेना जारी रखें कि वास्तव में श्वास धीमी हो जाये। आपका चित्त (ध्यान) आपके हृदय पर होना चाहिये अथवा अपनी मनोभावना पर। यह अच्छा होगा कि कुछ समय तक श्वास अन्दर रखें। रोके रहें। इसको बाहर करें। बाहर रोके रहें। तब कुछ समय के लिये बाहर ही रोके रखें। पुन: ऐसा ही करें। इसके बाद आप पाएंगे कि कुछ समय तक आपका श्वास लेना बंद हो गया।

.....**बहुत अच्छा! देखें, अब आप स्थिर हो गए हैं, आपके प्राण व मन के**

**बीच 'लय' घटित हो गयी है। दोनों शक्तियाँ मिलकर एक हो जाती हैं।**

.....अब आप अपनी कुण्डलिनी को उठायें सहस्रार के ऊपर और उसको वहाँ बाँध दे। पुन: कुण्डलिनी को उठायें सिर के ऊपर और उसको बाँध दें (दो बार)। पुन: कुण्डलिनी को ऊपर उठायें व उसको तीन बार बाँधें।

.....अब आप सहस्रार के ऊपर सहस्रार का मन्त्र तीन बार उच्चारण करें।

**'ओम त्वमेव साक्षात श्री कल्कि साक्षात श्री सहस्रार स्वामिनी, मोक्ष प्रदायिनी माताजी श्री निर्मला देव्यै नमो नम:।।'**

.....यदि आप देखें तो यह सहस्रार अब खुला मिलेगा। इस प्रकार आप सहस्रार को पुन: खोल सकते हैं।

.....आप देखेंगे कि वहाँ आप जम गए हैं। एक बार ऐसा हो गया तब आप ध्यान में उतरिये..

.....श्वास धीमी रखना अच्छा होगा। आप अपनी श्वास धीमा करें जैसे कि इसे रोक रहे हों, परन्तु इसके प्रति श्रम नहीं करें।

**प.पू.श्री माताजी, निर्मला योग, जनवरी–फरवरी १९८४**

.....आप मेरे साथ हैं और मैं आपको साथ हूँ, ध्यान–धारणा में बने रहें, ध्यान धारणा में रहें........ यहाँ पर आप अत्यन्त शांत रहें, पूर्णत: शांत रहें और महसूस करें। न कोई वाद–विवाद करें, न कोई बात करें और न अपने मस्तिष्क का उपयोग करें।

.....स्वयं से कहें '**'शान्त हो जाओ, मेरे मस्तिष्क शान्त हो जाओ,** स्थिर हो जाओ।' यह बात अपने मस्तिष्क से कहते रहें और आप आश्चर्यचकित हो जायेंगे कि वह सब आपके अन्दर है। जितना हो सके स्वयं को इस अवस्था में डुबोने का प्रयत्न करें। ध्यान की स्थिति में आप अतिचेतना (supra-conscious) की स्थिति में भी जा सकते हैं, यह बड़ी भयानक स्थिति हैं। ..........**मस्तिष्क को शांत कर लें, यह स्थिरता स्थापित करनी होगी। मैं चाहती हूँ आप यही स्थिरता स्थापित कर लें।** समर्पित हो जाएँ। मुझे वहाँ स्थापित कर लें, केवल तभी आपके सहस्रार खुलेंगे।

**.....आप सब मेरे बच्चे हैं, मेरे बेटे–बेटियाँ हैं। यह सब श्री गणेश की तरह से हैं। हम सब पैगम्बरों की तरह से हैं।**

**''क्या हमारे अन्दर पैगम्बरों की शक्तियाँ हैं ?''**

**'' श्री माताजी, क्या हम वास्तव में साक्षात्कारी लोग हैं?''**

**'' क्या हम मानव सभ्यता का सारतत्व हैं?''**

**'' क्या हम लोग परमात्मा की कृपा का निष्कर्ष हैं?''**

**ये प्रश्न पूछें और यह शक्तियाँ अपने अन्दर विकसित करें।**

**प.पू.श्री माताजी, १४.१.१९८३**

* आपको कोई सी भी, जरा सी भी तकलीफ हो जाये, आप फौरन वहाँ हाथ रखें – इस प्रकार अपनी तबियत ठीक कर सकते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, मुंबई, २७.५.१९७६**

* सप्तमी और नवमी दो दिन विशेषकर आपके ऊपर हमारा आशीर्वाद रहता है। सप्तमी और नवमी के दिन ज़रूर ऐसा आयोजन करना जिसमें आप अपना पूरा ध्यान करें। सामूहिक ध्यान उसी जगह करना जहाँ मेरा पैर पड़ा हुआ है, जो चीज़ शुद्ध हो चुकी है।

* अमावस्या की रात या पूर्णिमा की रात को बहुत जल्दी सो जाना चाहिये, चित्त सहस्रार में डालकर, बंधन डालकर सो जाना चाहिये।

* अमावस्या के दिन आपको शिव जी का ध्यान करना चाहिए। शिव जी का ध्यान करके, उनके हवाले अपने को करके सोना चाहिये। आत्मतत्व पर।

* पूर्णिमा के दिन आपको श्री रामचन्द्र जी का ध्यान करना चाहिये, उनके ऊपर अपनी नैया छोड़कर, रामचन्द्र जी का मतलब है क्रिएटीविटी, अपनी जो क्रिएटिव पावर है उनको पूर्णतया समर्पित करके आपको रहना चाहिए।

* सहजयोगियों के लिये सोने से पहले पाँच मिनट पानी में बैठना आवश्यक है।....... फोटो के सामने दीप जलाकर, कुमकुम वगैरह लगाकर, अपने दोनों हाथ सामने फैलाकर, दोनों पैर पानी में रखकर सब सहजयोगियों को बैठना चाहिये। आपकी आधे से ज्यादा समस्याएँ दूर हो जायेंगी।

* जब कभी भी आप बाहर जायें, कहीं भी घर से बाहर जायें, तो अपने को पूर्णतया बन्धन में रखें। बन्धन में रखें। हर समय स्वयं को बन्धन में रखें।

* स्वयं को बन्धन दें। मैं भी (आपकी माँ) स्वयं को बन्धन दूँगी ताकि सभी को बन्धन लग जाये। इस सारी तकनीक का ज्ञान पा लें। दिन में कम से कम पाँच बार

बन्धन लेना चाहिये। पाँच बार की नमाज़ अदा करें।

सहजयोग की मूल बात है जब भी आपकी इच्छा करे बन्धन ले लें।

'बन्धन' स्वयं द्वारा स्वयं को दी जाने वाली सुरक्षा है।

**प.पू.श्री माताजी, २७.५.१९७६**

## गहन ध्यान–धारणा–आध्यात्मिक विकास का एकमात्र मार्ग :

.....**ध्यान–धारणा** परमात्मा से एकरूप होने का सुन्दर उपाय है।

.....ध्यान–धारणा तो आपके अन्दर की शान्त स्थिति है, विचारों की शांति और उस सागर की गहनता में जाना जो आपके अन्त:स्थित है। परमात्मा की शक्ति को निरन्तर प्रवाहित करने के लिये ध्यान–धारणा है। ...... ध्यान–धारणा तो दीपक में तेल डालने जैसा है।

..... ध्यान–धारणा आपको वास्तविक तथा परमात्मा से पूर्ण योग प्रदान करती है। सभी नकारात्मक विचारों को दूर करती है, निराशा करने वाली सभी चीज़ों को निकाल फेंकती है। आपको सुरक्षा प्रदान करती है, आपके अन्दर चिड़चिड़ेपन को खत्म कर देती है। ध्यान धारणा करने वाले लोग अत्यन्त गहनता में पहुँच जाते हैं और अत्यन्त विकसित होते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, लॉस एंजलिस, ३.१०.२००२**

.....जब आप ध्यान धारणा करते हैं तो परमात्मा की ओर यह व्यक्तिगत यात्रा होती है। लक्ष्य पर पहुँचने के बाद आप सामूहिक हो जाते हैं, इससे पूर्व यह पूर्णतया व्यक्तिगत आन्तरिक यात्रा है। आपमें यह देखने की योग्यता होनी चाहिये कि इस यात्रा में कोई आपका सम्बन्धी, भाई या मित्र नहीं है। आप पूर्णतया अकेले हैं **'पूर्णतया अकेले'।** आपको अपने अन्तस में अकेले यात्रा करनी होगी। ......एक बार उस सागर में जब आप उतर जाते हैं, पूरा विश्व आपका परिवार बन जाता है। पूरा विश्व आपकी अभिव्यक्ति है।...... यह सारा विस्तार तभी घटित होता है जब आप अपनी आत्मा में प्रवेश कर जाते हैं और आत्मचक्षुओं से देखने लग जाते हैं। तब आप अत्यन्त शान्त हो जाते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, सिडनी, १४.३.१९८३**

..... **सर्वप्रथम ध्यान है, दूसरे धारणा, फिर समाधि।** साधना जब आपमें जागृत होती है तो आप अपना चित्त अपने इष्ट पर डालते है– यह 'ध्यान' है। आपने निरन्तर अपना चित्त अपने इष्ट देवता पर रखना है, तब आपमें वह स्थिति विकसित

होती है जो धारणा कहलाती है जिसमें आपके चित्त का एकीकरण इष्ट देवता के साथ हो जाता है। यह स्थिति परिपक्व होने के पश्चात तीसरी अवस्था समाधि का उदय होता है। यह कौन सी अवस्था है? **आपके मस्तिष्क में वह स्थिति बन जाती है तो कुछ भी आप कहते हैं, जिस इष्ट की पूजा आप करते हैं, अपने कार्य में भी आप उसी इष्ट को देखते हैं, आपको लगता है वही इष्ट आपका पथ-प्रदर्शन कर रहा है। .......अब जो अवस्था अन्दर जागृत हुई है यह मस्तिष्क की एक नई अवस्था है- 'ऋतम्भरा प्रज्ञा' जिसमें आपकी एकाकारिता प्रकृति से है और प्रकृति की एकाकारिता आपसे**। तो परमात्मा भिन्न घटनाओं, कार्यों तथा आपके प्रति परमेश्वरी चिन्ता द्वारा स्वयं प्रकृति के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति कर रहे हैं। यह घटित होता है- यही समाधि की अवस्था है।

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, १९.१.१९८४**

.....सहजयोग एक नया रास्ता है, नया आयाम है, डायमेन्शन है, नई चीज़ है जिसमें आप कूद पड़े हैं। अपने अचेतन मन में उस महान सागर में आप उतर गए हैं......... इसकी गहराई में अगर उतरना है तो आपको ध्यान में उतरना पड़ेगा..... जैसे एक गागर है जितनी गहरी होगी उतना पानी उसमें समा जायेगा। अब अगर वो नहीं है तो उसमें पानी डालने से क्या फायदा, वो तो सब पानी निकल जाएगा। **अपनी गहराई आप ध्यान से बढ़ाते हैं। ध्यान पर स्थित होईये, ध्यान में जो विचार आ रहे है, उनकी ओर देखते ही आप निर्विचार हो जाएंगे। निर्विचार होते ही आप उस अचेतन मन में - अचेतन (unconscious) सुप्तचेतन (subconscious) नहीं, अचेतन मन में अपनी चेतना सहित आप जायेंगे, आपकी चेतना खत्म नहीं होती, वहाँ आप चेतन को जानेंगे।**

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, १.२.१९७५**

.....हम या तो भविष्य की सोचते हैं या भूत की। मैं आपको वर्तमान में खड़ा होने के लिये कहती हूँ। दो विचारों के मध्य थोड़ा सा अन्तराल है जो विलम्ब कहलाता है ...... यह इतना छोटा है कि हम इसे पकड़ नहीं पाते...... हम तो कभी भूतकाल में और कभी भविष्य में डोलते रहते हैं। **वर्तमान** में हम कभी नहीं होते, **और वर्तमान ही वास्तविकता है, भूत और भविष्य का कोई अस्तित्व नहीं हैं।** अपने लक्ष्य पर किस प्रकार आएं? जब कुण्डलिनी उठती है तो इन विचारों को धकेल देती है और विलम्ब को अधिक बड़ा कर देती है- **अत: पहली अवस्था जो आपको प्राप्त**

**होती है वह है ''निर्विचार समाधि'' आप पूर्णतया चेतन होते हैं पर आपमें कोई विचार नहीं होता – यही ध्यान है।**

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, २२.३.१९७९**

– हम ध्यान कर नहीं सकते, ध्यान में हो सकते हैं, हमें ध्यान में होना पड़ेगा। हमारा यह कहना कि हम ध्यान करेंगे अर्थहीन है, हमें ध्यान में होना पड़ेगा। आप या तो घर के अन्दर हो सकते हैं या घर के बाहर। घर के अन्दर होते हुए आप यह नहीं कह सकते कि मैं घर से बाहर हूँ, या यदि आप घर से बाहर हैं तब आप यह नहीं कह सकते कि मैं घर के अन्दर हूँ। इसी प्रकार **आप जीवन के तीन आयामों में चल रहे हैं– भावनात्मक, शारीरिक और मानसिक, आप अपने अन्दर नहीं हैं। आप यदि अपने अन्दर हैं तो इसका यह मतलब है कि आप निर्विचार चेतना में हैं। ऐसी परिस्थिति में जब आप होते हैं तो आप सर्वत्र विद्यमान होते हैं क्योंकि यह वह बिन्दु है, वह स्थान है जहाँ आप वास्तव में सार्वभौमिक होते हैं। वहाँ से आप स्रोत से, शक्ति से जुड़े होते हैं, उस शक्ति से जो हर पदार्थ के ज़र्रे–ज़र्रेमें, हर भावनात्मक विचार में, हर योजना में और विश्व के हर विचार में प्रवेश कर सकती है।** इस सुन्दर पृथ्वी का सृजन करने वाले सभी तत्वों में आप प्रवेश कर सकते हैं, व्याप्त हो सकते हैं, आप आकाश और तेज में प्रवेश कर सकते हैं, ध्वनि में प्रवेश कर सकते हैं, परन्तु आपकी गति बहुत धीमी होती है।

.....जब आप कहते हैं कि मैं ध्यान कर रहा हूँ तो इसका अर्थ यह है कि आप सर्वव्यापी शक्ति (universal being) से क्रम परिवर्तन करते हुए चल रहे हैं परन्तु आप स्वयं गतिमान नहीं है। आप स्वयं को उन चीज़ों से मुक्त कर रहे हैं जो आपकी गति में बाधक हैं। जब आप ध्यान करते हैं तो स्वयं को निर्विचार चेतना में रहने दें। **उस स्थिति में, अचेतन स्वयं चैतन्य,आपका दायित्व सम्भाल लेगा और आप चैतन्य की शक्ति से चलने लगेंगे।** अचेतन कार्यान्वित होगा और आपको वहाँ ले जाएगा जहाँ आपको जाना चाहिये। हर समय आप निर्विचार चेतना में बने रहें। निर्विचार चेतना की स्थिति में बने रहने का प्रयत्न करें, इस बात को समझें कि अब आप परमात्मा के साम्राज्य में हैं और उसकी गति, उसका प्रबन्ध, उसकी चेतना आपकी देखभाल करेगी।

.....सभी बाधाएँ जो आपमें प्रवेश करती हैं, जो भौतिक समस्याएँ आपके

सम्मुख आती हैं वो तो केवल तभी आती हैं जब आप उन तीन आयामों में होते हैं। सहजयोग के माध्यम से आपने अपने अस्तित्व के द्वार खोल दिए हैं।

**प.पू.श्री माताजी, देहली, १९७६**

..... जब आपमें कोई विचार नहीं होता, पूर्णत: निर्विचार होते हैं तो परमात्मा की सृष्टि का पूरा आनन्द लेने लगते हैं, बीच में कोई बाधा नहीं रहती।

.....ये विचार ही हमारे और हमारे सृजनकर्ता (परमात्मा) के बीच की बाधा हैं।

**प.पू.श्री माताजी, न्यूयार्क, ३०.९.१९८१**

.....कभी भी आप किसी चीज़ को ओर दृष्टि करते हैं, जब उसके बीच में विचार खड़ा हो जाये तो आप सोचिए उसकी आनन्ददायिनी शक्ति खत्म हो गयी। उसमें कोई आह्लाद नहीं रहता...... जैसे ही सामने विचार आ जाए, आप समझ लीजिये विचार से एकदम अन्धियारा सा छा जाता है, लेकिन निर्विचार में आप किसी चीज़ को देखें तो उसमें बसा हुआ सत्य जो निराकार स्वरूप है, वह आपके अन्दर ऐसा बहेगा कि जैसे पूरी की पूरी शक्ति प्रेम की आपके अन्दर प्लावित होकर आपको महसूस होगी। जिससे ऐसा लगेगा कि सारी दुश्चिंता पता नहीं कहाँ चली गयी। ......सहस्रार में स्थित होकर जब आप वर्तमान में विराजते हैं न तो आप भविष्य में न तो आप भूतकाल में, आप वर्तमान में होते हैं और **हर वर्तमान का क्षण अपना एक आयाम, एक डायमेन्शन, एक अपना दर्पण रखता है और उसमें इतनी घटायें हैं, फिर उसका मज़ा देंखे, अगर हम चाहें तो उसका मजा उठाएँ।**

**प.पू.श्री माताजी, देहली, १६.२.१९८५**

.....जब आप किसी सुन्दर दृश्य को देखेंगे, परमात्मा की रचना की ओर दृष्टि करेंगे, आप निर्विचार हो जाएंगे और **निर्विचार होते ही उसके अन्दर की जो आनन्द की शक्ति है वह आपके अन्दर पूरी प्रतिबिम्बित होगी, इतना ही नहीं आपने उसमें पूरी तरह से तादात्म्य पा लिया है।** इसी तरह से अनेकविध परमात्मा ने आपके लिये शृंगार सजाए हैं, अत्यन्त सौन्दर्य चारों ओर फैला हुआ है, सौन्दर्य सूत्र में उतरने से आपके अन्दर आनन्द की उत्पत्ति हो जाती है। इस आनन्द को देखने के लिये ही आप पैदा हुए हैं, अपने को बेकार में दुखी बनाने के लिये नहीं।

**प.पू.श्री माताजी, २५.११.१९७३**

.....हर एक काम करते समय आप निर्विचार हो सकते हैं, और निर्विचार होते ही उस काम की सुन्दरता, उसका सम्पूर्ण ज्ञान और उसका सारा आनन्द

आपको मिलने लग जाता है।

**प.पू.श्री माताजी, १.२.१९७५**

.....**कोई भी निर्णय लेने से पहले निर्विचारिता में जाओ, अब जो निर्णय सामने आ जाए, वह करिये, कभी गलत हो ही नहीं सकता, निर्णय निर्विचारिता में स्पोंटेनियस होगा और विचार में आपने गर लिये तो वे बायस्ड (baised) होगा क्योंकि उसमें आपका ईगो और सुपर ईगो दोनों काम करते हैं।** आपका जो कुछ भी संसार है, आपने जो कुछ भी लौकिक कमाया है, वह आपके पीछे खड़ा होगा लेकिन निर्विचारिता में करिएगा तो कभी न होएगा, अलौकिक होगा, चमत्कारिक होगा। ........आप ऐसे निर्णय लेंगे जो बड़े–बड़े लोगों के वश नहीं, डायनेमिक, एब्सोल्यूटली डायनेमिक।

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, २०.१.१९७५**

.....**आप का जो किला है, आप का जो fortress है वो है निर्विचारिता। निर्विचारिता में जानो, वहीं जान जाओगे सब कुछ, कोई भी काम करना हो निर्विचारिता मे जाओ। सारा सांसारिक काम निर्विचारिता में करते ही साथ में आप जानिएगा कि कहाँ से कहाँ डायनैमिक हो गया मामला।** फूलों को खिलते हुए किसने देखा है, फलों को लगते हुए किसने देखा है? संसार का सारा जीवन्त कार्य होते हुए किसने देखा है? हो रहा है उसी डाइनॅमिज़्म में, उसी लिविंग चीज़ में आपको उतरना है। वो निर्विचारिता से आ रहा है ना। उस स्थापन पर आप बैठे हैं जहाँ ये सारा संसार फीका है, निर्विचारिता में ही, उसकी आदत लगाऐं हर समय निर्विचार रहने का ही प्रयत्न करें। **........निर्विचारिता में रहना चाहिये। यही आपका स्थान, है, यही आपका धन है, यही आपका बल है, शक्ति है, यही आपका स्वरूप है, यही आपका सौन्दर्य है और यही आपका जीवन है।** निर्विचार होते ही बाकी का जो, बाहर का यंत्र है वह पूरा का पूरा आपके हाथ में घूमने लग जाता है। निर्विचारिता में रहिये, वहाँ पर न समय है, न दिशा है, न कोई छू सकता है, सिर्फ जीवंतता का दर्शन होता है। उस जगह से देखिये जहाँ से जीवन की धारा बहती है।

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, २५.११.१९७५**

.....अगर कोई आप पर अत्याचार करे, कोई भी आपसे बुराई से बोले, कोई आपको सताये तो आपमें एक विशेष स्थिति है जिसमें आप निर्विचार हो जाएँ...... सारी चीज़ को आप साक्षी रूप में देखना शुरु कर दें। एक नाटक के रूप में। उसके

लिये सिर्फ आपको आपका जो किला है, वो निर्विचारिता में जाना चाहिये। निर्विचारिता में जाते ही आपकी जो कुछ भी संजोने वाली शक्तियाँ हैं, आनन्द देने वाली शक्तियाँ हैं, वो सब समेटकर आपके अन्दर आ जायेंगी।

.....**निर्विचार अवस्था में आप परमात्मा की शक्ति के साथ एक रूप हो जाते हैं अर्थात बूँद (आप स्वयं) समुद्र अर्थात परमात्मा में आकर मिल जाती है तब परमात्मा की शक्ति भी आपके अन्दर आ जाती है।**

**प.पू.श्री माताजी, देहली, १९७६**

..... एक बार जब आप निर्विचारिता का स्वाद लेते हैं तो आपकी समस्त प्रेरणायें, समस्त शक्तियाँ और अन्य सर्वस्व प्राप्त होने लगता है। **निर्विचार अवस्था में जो भी घटित होता है वह प्रबुद्ध, प्रकाशमान होता है।** आप अपने सहारे पर खड़े होना जैसे ही शुरु कर देंगे एकदम प्रकाशमान हो जायेंगे। .........**निर्विचारिता में आपके मन में जो विचार आता है वह एक अन्त:प्रेरणा (inspiration) होती है।**

.....निर्विचारिता एक प्राचीन कम्प्यूटर है और इसकी शक्ति से विपुल परिणाम में कार्य किया गया है। यदि आप निर्विचार अवस्था में हैं तो परमात्मा आपको सर्वत्र ले जाते हैं मानों अपने हाथों पर उठाकर ऐसी सरलतापूर्वक वह सब प्रबन्ध कर देते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ३.९.१९८१**

.....''आज दीवाली के दिन मैं कहना चाहूँगी कि स्वयं को निर्विचार समाधि से ज्योतिर्मय बनायें। यह कार्य कठिन नहीं हैं। यह स्थिति आपके अन्दर है क्योंकि विचार या तो इधर से आते हैं या उधर से। ये आपके मस्तिष्क की लहरियाँ नहीं है। ये तो आपकी प्रतिक्रियायें हैं परन्तु वास्तविकता में आप ध्यान–धारणा करते हैं तो आप निर्विचार चेतना में चले जाते हैं–यही स्थिति प्राप्त करना आवश्यक है और तब आपके मस्तिष्क में आने वाले मूर्खतापूर्ण विचार एवं व्यर्थ विचार समाप्त हो जाते हैं। इन विचारों के समाप्त होने पर ही आपका उत्थान सम्भव है केवल तभी आप उन्नत होते हैं।''

**प.पू.श्री माताजी, लॉस एंजिल्स, ३.११.२००२**

## अध्याय १६

# अन्तर्वलोकन

**अन्तर्वलोकन** द्वारा अपने अन्दर झाँकने का प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अपनी चेतना को बेहतर बनाने का यह सर्वोत्तम उपाय है।

..... अगर आपका ध्यान नहीं लगता तो कुछ न कुछ खराबी हममें आ गयी है, कोई न कोई गड़बड़ी हमारे अन्दर आ गयी है, कोई न कोई अशुद्ध विचार हमारे अन्दर आ गये हैं, उनको देखना चाहिये, जानना चाहिये, समझना चाहिये और सफ़ाई करनी चाहिये, इसी को अन्तर्दर्शन कहते हैं।

.....किस प्रकार हम अपना पूर्ण विश्लेषण करते हैं, हम कौन से चक्रों पर पकड़ रहे हैं? क्या हमें चैतन्य लहरियाँ आ रही हैं, मैं ठीक से ध्यान करता हूँ या नहीं? क्या मैं वास्तव में ध्यान महसूस करता हूँ या नहीं? ये सारी चीज़ें पूरी निष्ठा से पूरी तरह सच्चाई से क्रियान्वित की जानी चाहिये।

.....अन्तर्दर्शन में अपनी कमियों को ढूँढ निकालें।

.....अपनी ओर नज़र रखें, हमारा उद्देश्य अपने अन्दर की वास्तविकता को देख पाना होना चाहिये।

..... हमारा पूरा चित्त अपनी दुर्बलताओं पर होना चाहिये, अपनी उपलब्धियों पर नहीं। हमें इस बात का ज्ञान हो कि हमारी दुर्बलताएँ क्या हैं तो बेहतर होगा......... आप सबको सावधान रहना है।

.....आपको अपने अहं को जीतना है। अहं को देखने का प्रयत्न करें कि किस प्रकार यह आपको पथभ्रष्ट कर रहा है।

.....आपको स्वयं देखना है। स्वयं देखना चाहिये कि आपके अन्दर क्या समस्या है।

**प.पू.श्री माताजी, २७.११.१९९१**

**.....दूसरों के दोष देखने की जो हमारी दृष्टि है, उसको बदल दें, क्योंकि वही दोष** हमारे अन्दर भी हैं। तो दूसरों के दोष देखने से पहले हमारे अन्दर क्या दोष हैं यह देखना चाहिये। अगर यह देखना हमें आ जाए तो बहुत कुछ अपने

आप ठीक हो जाएगा। .........हमारे पास ऐसे साधन हैं जैसे श्री कृष्ण का ध्यान करना। श्री कृष्ण का ध्यान करने से हमारे अन्दर की सफ़ाई हो जाती है ........ ध्यान में आप अपने ऊपर ध्यान करतें हैं, अपने को ही देखना है कि आपका दिमाग कहाँ चल रहा है? अब कहाँ घूम रहा है? धीरे–धीरे सफ़ाई हो जायेगी।

**प.पू.श्री माताजी, श्री कृष्ण पूजा १०.८.२००३**

..... सबसे पहले हृदय चक्र को ठीक करिये। हमारा हृदय साफ़ है या नहीं? हमारे मन में किसी के प्रति क्रोध है क्या? हमारे मन में किसी के प्रति कोई आशंका है क्या? अपने हृदय से पूछें, सबसे बड़ी चीज़ है क्योंकि, हृदय कन्ट्रोल करता है ब्रेन को और हृदय से ही सारा काम हम करते हैं और हृदय से ही सम्बन्ध है तुम्हारा मेरा। इसलिये हृदय चक्र को पूर्णतया साफ़ करें आप लोग। **...........आप अपनी ओर देखिये कि मैं कुछ बदला कि नहीं, मुझमें कुछ अन्तर आया कि नहीं? मेरे अन्दर क्या हुआ?**

..... संत के सारे लक्षण अपने अन्दर से दिखने चाहियें।

.....ठण्डापन, संजीदापन, ठण्डेपन को अन्दर आने दो। **धर्म ठण्डा है एब्सोल्यूट ज़ीरो पर धर्म बसता है, एब्सोल्यूट ज़ीरो पर। लोग हिमायल पर जाते थे इसीलिये, पर तुम्हें हिमालय की ज़रूरत नहीं है, आप लोग अपना एयर कन्डीशनर खोल दीजिए....... अपनी ओर सचेत रहें, अपने दोषों को देखें, चक्रों को देखें।**

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई, २०.१.१९७५**

..... हर समय हमें अन्तर्दर्शन करना होगा। पहला अन्तर्दर्शन यह है कि क्या मैं नम्र हूँ? क्या मैं दूसरों के सम्मुख स्वयं को नम्र बना सकता हूँ? यह बहुत महत्वपूर्ण है। क्रोध बहुत बड़ा अवगुण है।........ यह सोचना आवश्यक है कि किन–किन बातों पर आपको क्रोध आता है। समझने का प्रयत्न करें कि आपको क्रोध क्यों आता है? इसका कारण क्या है? जो दुर्गुण आप अन्य लोगों में पसन्द नहीं करते वो आपके अन्दर विद्यमान हैं। कुछ न कुछ कमी है अत: सहजयोग में शुद्धिकरण महत्वपूर्ण है। ........आपका आज्ञाचक्र तर्कबुद्धि से घिरा हुआ है, आप हर बात में तर्क कर सकते हैं। किसी की हत्या भी यदि आप कर दें तो उसे भी तर्कसंगत ठहरा सकते हैं। अत: अगन्य चक्र को यदि हम पूर्णत: खुला नहीं रखते तो यह भी हमारा दुश्मन है क्योंकि इसके माध्यम से हम स्वयं को न्यायसंगत सिद्ध कर सकते हैं। हम कह सकते हैं कि ''मैं क्या कर सकता हूँ, यह घटना इसी प्रकार घटी।' एक बार जब आप अपने पीछे

पड़ जाते हैं तो ये सारे दुर्गुण भाग जाते हैं। तो शीशे के सम्मुख खड़े होकर स्वयं पर क्रोध करने का प्रयत्न करें।

.....फिर मोह है। मोह अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं। .........किसी व्यक्ति विशेष से आपको लिप्त नहीं होना। किसी व्यक्ति विशेष की चिन्ता करना आपका कार्य नहीं, यह परमात्मा का कार्य है। इसे परमात्मा पर छोड़ दें और देखें कि आपके बच्चे, आपके सम्बन्ध तथा अन्य सभी चीज़ें सुधर जाएंगी। लिप्सायें और भी हैं जैसे धन-लिप्सा आदि..... सतर्क रहें।

**प.पू.श्री माताजी, २७.१२.१९९४**

.....आपको अपने विषय में पता लगाना चाहिये कि आपमें क्या कमी है? किधर से पकड़ रहे हैं, दाएं से या बाएं से? ध्यान-धारणा द्वारा (अन्तर्दर्शन से) आप पता लगते सकते हैं। क्या आप धन, व्यापार, परिवार या देश से लिप्त हैं। ध्यान-धारणा द्वारा इनसे निर्लिप्त होने का प्रयत्न करें। आप जानते हैं कि दाएं और बाएं की पकड़ से किस प्रकार छुटकारा पाना हैं। यह लिप्सायें आपको अँगुलियों के सिरों पर पता लग जायेंगी और आपने स्वयं देखना है कि आपके कौन से चक्र पकड़ रहे हैं, तब साधारण से सहज उपचार द्वारा आप इन्हें ठीक कर सकते है।

**प.पू.श्री माताजी, आस्ट्रेलिया २६.२.१९९५**

.....**स्वयं को तुच्छ व्यक्ति न बनायें, अपनी कल्पना को विस्तृत करें, अपने विचारों को विशाल बनाएँ क्योंकि अब आपका सम्बन्ध बहुत विशाल चीज़ से है, विशालतम से, आद्या (primordial) से। आप यदि अपने महत्व को महसूस करें तो इसे क्रियान्वित कर लेंगे।** ........आपको स्वयं को सुधारना होगा, ऊपर उठना होगा, यही आवश्यक बात है। ..........जब आप स्वयं को देखते हैं तो यह पूर्ण अवस्था होती है। किसी के प्रति न तो आप आक्रामक बनें और न ही कोई आपके प्रति, आप तो मात्र स्वयं को स्पष्ट देखें, यही कार्य आपने करना है। .......शनैः शनैः आप अपने चक्रों को देखने लगते हैं, बाधाओं को देखने लगते हैं और जान जाते हैं कि किस प्रकार से समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

**प.पू.श्री माताजी, डॉलिस हिल १८.११.१९७९**

.....अपने चक्रों को सम्भालना पड़ता है, अपने को गहराई में उतारना पड़ता है, अपना जीवन गहरा बनाना पड़ता है।

.....माँ के नाते मैं विनती करती हूँ और शक्ति के नाते आगाह करती हूँ कि अपनी गहराई को पाईये, अपनी गहराई में उतरिये। अपने समय को इस महान शक्ति के

लिये रखिये। इसमें आप पाइये और दूसरों को दीजिये, बहुत बड़ा कार्य करने का है।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली ३.३.१९७८**

.....अपने बारे में पूरी कल्पना होनी चाहिये कि आप हैं क्या? आपको पूरा ज्ञान होना चाहिए कि आप क्या हैं? इस बात की आपको पूरी समझ होनी चाहिये कि किस लक्ष्य को लेने के लिये आप चले हैं और इसकी प्राप्ति के लिये आपने क्या किया?........ आपको विशाल हृदय, महान व्यक्तित्व होना होगा। आप सब द्विज हैं जो एक बार पुन: महान है। .......हमें स्वयं के लिये पूजनीय होना चाहिये। जो कुछ भी हम कर रहे हैं उसमें संतों की गरिमा, सौन्दर्य, प्रेम तथा महानता होनी चाहिये, महान संतों की, साधारण लोगों की नहीं।

**प.पू.श्री माताजी, गौरी पूजा, बोर्डी, १२.२.१९८४**

.....**पहली चीज़ हमें ध्यान में लानी चाहिये कि क्या हम genuine हैं? अपनी ओर नजर करें, दूसरों की ओर नहीं, अपनी ओर नजर करें कि क्या हम जेन्विन हैं?** .......अपने से प्रेम करो। जब अपने से प्रेम होगा तभी अपना दोष दिखेगा। .....आपको जिस चीज़ से प्रेम होता है, उसको आप ठीक कर देते हैं, और जिस चीज़ से आपको प्रेम नहीं होता उसको आप छोड़ देते हैं। हमने आपसे इतना प्रेम किया, आपने अपने से कब प्रेम किया? अपने प्रति प्रेम करें। ......प्रेम का संसार हमारे अन्दर है, इस सागर में हमें स्वयं को डुबोना मात्र है।

**प.पू.श्री माताजी, बम्बई २१.१२.१९७५**

.....आप लोगों को स्वयं को देखते वक्त सोचना चाहिये कि हम एक शिशु बालक है, बालक यानी अबोधिता–भोलापन और उस भोलेपन से हमें अपने अन्दर देखना चाहिये।

**प.पू.श्री माताजी, १०.८.२००३**

* अपने को दृढ़ रखने के लिए पहला कार्य है–अन्तर्दर्शन। प्रकाश को अन्तस में प्रतिबिम्बित करके स्वयं को देखना ही अन्तर्दर्शन है। ......आत्मा के प्रकाश में हम स्पष्ट देख सकते हैं कि हममें क्या दोष आ गए हैं। .......एक मापदण्ड यह होना चाहिए कि मैंने सहजयोग के लिए क्या किया? मैंने श्री माताजी के लिए क्या किया? परमात्मा के लिए कार्य करना ही महानतम कार्य है। यही सबसे महत्वपूर्ण, सर्वोच्च उद्यम है जिसको करने का अवसर मानव को प्राप्त हुआ है। आपको पता लगाना है कि मुझे सहजयोग के लिए क्यों चुना गया? अन्तर्दर्शन का यह दूसरा विषय है।

**प.पू.श्री माताजी, शुडी कैम्प, इंग्लैंड, ६.८.१९८८**

## अध्याय १७

# सामूहिकता एवं सामूहिक चेतना

**जागृति** का अर्थ है–हमारा जो जागृत स्वभाव है या जो सामूहिक चेतना है उसे प्राप्त होना– जिसे अलख कहते हैं या जो परोक्ष है–वह हमारे चित्त में जागृत होता है– उसे ही जागृति कहते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, २४.९.१९७९**

...... बचपन में तालूअस्थि क्षेत्र में बच्चे का तालू होता है जो सदैव धड़कता रहता है। यह इसलिये धड़कता है कि आत्मा ने उस क्षेत्र से प्रवेश किया था, जब यह बन्द होता है तो आत्मा हृदय में स्थापित हो जाती है, तब आप आत्माभिमुखी व्यक्ति हो गए ........ **कुण्डलिनी आज्ञा का भेदन करके सहस्रार को पार करती है। .....इस व्यष्टि (व्यक्ति) को समष्टि (सामूहिकता) में समा देती है, जिस दिन यह हो जाता है उस दिन हमारे अन्दर सामूहिक चेतना जागृत हो जाती है।**

**प.पू.श्री माताजी, २३.५.२००२**

.....आज का सहजयोग एक दो आदमियों का नहीं, सामूहिक चेतना का कार्य है।

.....विशुद्धि चक्र पर आप सामूहिकता में आ जाते हैं।

.....सबसे बड़ी बात आपको याद रखनी चाहिये कि **हर समय हमें सामूहिक होना चाहिये। सामूहिकता में ही सहजयोग के आशीर्वाद हैं। अकेले – अकेले individualistic बिल्कुल नहीं, बिल्कुल भी नहीं, आप खो दीजियेगा सब कुछ।**

**प.पू.श्री माताजी, १०.२.१९८१**

.....आप सब एक ही विराट के अंश हैं, जैसे उँगली मेरे हाथ का एक अंश है उसी प्रकार आप उस विराट के अंग–प्रत्यंग हैं, और आप जागृत हो गए हैं। अब भी आपके अन्दर अगर सामूहिकता भाव न आए तो इसका मतलब है कि आप अधूरे जागृत हैं।

**प.पू.श्री माताजी, नई दिल्ली, ७.५.१९८३**

..... सामूहिक होना गहनता प्राप्त करने का एकमात्र उपाय है, इसके सिवाय कोई कोई अन्य उपाय नहीं। लोग यदि ये सोचें कि आश्रमों से दूर कहीं अकेले रहकर वे बहुत अधिक प्राप्त कर लेंगे तो सहजयोग में ऐसा नहीं होता। **यहाँ पर आध्यात्मिक उत्थान का प्रश्न नहीं है, सामूहिक उत्थान का प्रश्न है। इस प्रकार आप एक ऐसे**

**व्यक्ति बन जाते हैं जो सामूहिक है, सामूहिकता का आनन्द लेता है, सामूहिकता के साथ कार्य करता है और सामूहिकता में रहता है। ऐसे व्यक्ति में नयी प्रकार की शक्तियाँ विकसित हो जाती हैं। बिना सामूहिक हुए आप वे ऊँचाईयाँ नहीं प्राप्त कर सकते जो आज सहजयोग के लिये आवश्यक हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, कबैला १९७७**

.....सहजयोग की सामूहिकता लोग समझ नहीं पाते हैं, इसलिये बहुत गड़बड़ होता है माने **'माँ मैं घर में बैठे करके ध्यान करता हूँ, रोज पूजा करता हूँ, मेरे वायब्रेशन बंद हो गये!''** होंगे ही। आपको सामूहिकता में आना पड़ेगा। आपको केंद्र पर (Center) आना पड़ेगा। एक दिन हफ्ते में कम से कम सेंटर में आकर आपको देखना पड़ेगा कि आपकी वाइब्रेशन ठीक है या नहीं? दूसरों पर मेहनत करनी पड़ेगी। आप दीप इसलिये बनाये गये कि आपको दूसरों को देना होगा, इसलिये नहीं बनाये गये कि आप अपने ही घर बनाते रहिये। **ये दीप सामूहिकता में ही जल सकता है।**

**प.पू.श्री माताजी, १०.२.१९८१**

.....सामूहिक रूप से ध्यान –धारणा करनी होगी। आप हैरान होंगे कि वहाँ पर (सेन्टर में) परमेश्वरी शक्ति बहती है, चैतन्य लहरियाँ बहती हैं....... मैं स्वयं वहाँ पर होती हूँ। ऐसा नहीं है कि महज़ कर्मकाण्ड के लिये आप वहाँ जाते हैं ......... नियमित रूप से यदि आप सामूहिक ध्यान–धारणा में जाएं तो आपकी सभी समस्याओं का समाधान हो जाता हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कलवे, ३१.१२.२०००**

.....सामूहिकता हमारे उत्थान का मूलाधार है। यदि आप ध्यान–केंद्र पर नहीं जाते हैं, यदि आप परस्पर मिलते –जुलते नहीं, तो आप अंगुली से कटे नाखून की तरह हैं और परमात्मा को आपसे कुछ नहीं लेना देना। पेड़ से गिरे फूल की तरह जो थोड़ी देर में मर जाते हैं, वही अवस्था आपकी है। **सामूहिकता स्थापित न होने की अवस्था में सहजयोग समाप्त हो जायेगा। जिस तरह शरीर का मस्तिष्क से सम्बन्ध आवश्यक है उसी प्रकार सामूहिकता बगैर सहजयोगी जीवित नहीं रह सकते। अन्दर बाहर सामूहिकता स्थापित होनी चाहिये।** अन्तस में जो है वही बाहर प्रगट होता है। .......आप ज्योंही किसी सें मिलें तो देखें कि उसमें कौन सा गुण है और इसे मैं कैसे ग्रहण कर सकता हूँ? आप यहाँ अपनी आध्यात्मिक उन्नति के लिये हैं, आपको सोचना चाहिये कि दूसरों की अच्छाई को अपने अन्दर कैसे उतारें?

......आप सामूहिकता को समझें–आपको **करुणा** तथा **प्रेममय आचरण** करना है। परस्पर एक दूसरे को प्रसन्न करने का प्रयत्न करें... .....दूसरों को प्रसन्न करने का निर्णय लेते ही आपकी वाणी परिवर्तित होती है, मधुर बन जाती है। तीसरे स्थान पर धैर्य है। प्रेम धैर्य प्रदान करता है, यही प्रेम आपका पोषण करता है। .........आपको आलोचना नहीं करनी, आलोचना का स्थान सराहना को ले लेना चाहिये। ........... आक्रामकता सामूहिकता का सबसे बड़ा शत्रु है। नम्र बनने का प्रयत्न कीजिये। सहजयोग परिवार में आपको एक दूसरे के ...... साथ समझौता करना चाहिये, आपमें परस्पर अति गहन सम्बन्ध होने चाहियें।

.....हम कहते रहते हैं कि सबको क्षमा करना है पर हम इस प्रकार का आचरण नहीं करते, लोग छोटी–छोटी बातें याद रखते हैं। पन्द्रह साल पहले की बात याद रख कर लोग कहते हैं कि फलाँ व्यक्ति ने मुझे चोट पहुँचाई थी, पर वे भूल जाते हैं कि उन्होंने लोगों को कैसे–कैसे कष्ट दिये। **मानव मस्तिष्क में अहं होने के कारण बिना किसी दोष के यह दूसरों को कष्ट देता चला जाता है और प्रतिअहं दूसरों द्वारा दिये कष्ट अपने में समेट कर सदा इनके विषय में शिकायत करता रहता है। आपने यह स्पष्ट करना है कि इस तरह के आचरण से आप सामूहिकता को तोड़ रहे हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, १०.४.१९९१**

.....जो लोग सामूहिक नहीं होते वो निकलते जाते हैं, सहजयोग से। ये तो ऐसा है जैसे अपकेन्द्रीय बल (centrifugal force) है वो घूमता है, घूमता है और अगर उसे ज़रा सा छोड़ा कि गया वो स्पर्श रेखा (Tangent) से बाहर। तो वह रहता नहीं, फिर टिकता नहीं, इसलिए उससे चिपक कर रहना चाहिये।......... इसके जो नियम हैं उनको समझना चाहिये, जानना चाहिये। ............सामूहिकता की गहनता आपको समझनी चाहिये कि सारा एक ही है। हम सब अंग–प्रत्यंग हैं और जब अंग–प्रत्यंग हैं तो एक आदमी ज़्यादा नहीं बढ़ सकता और एक आदमी कम नहीं हो सकता। जिसने यह सोच लिया कि हम ऊँचे हो गये वो सोचना कि हम पतन की ओर जा रहे हैं।........ एक आदमी उठकर के कोई कहे कि मैं विशेष कर रहा हूँ, **एक आदमी सोचे कि मुझे करने का है, एक आदमी सोच ले कि मैं माँ के बहुत नज़दीक हूँ, तो वो दूर चला जायेगा ......।** सब एक हैं, एक ही दिशा में हैं। अगर एक उंगली सोच ले कि मैं बड़ी हो जाऊँ, नाक मेरी सोच ले कि मैं बड़ी हो जाऊँ, तो कैसी दिखेगी शक्ल? यह तो malignancy है, यही तो कैंसर होता है। **कैंसर में एक अपने को**

**बड़ा समझकर बाकी सैल्स (cells) को खाने लग जाता है। मेरा ही कुछ विशेष हो जाये वो आदमी तो कैंन्सरस हो गया सोसायटी के लिए........** सहजयोग एक बड़ी भारी क्रांति है और जो पवित्र क्रांति है, वो प्रेम से होती है, वो अन्दर से होती है। उसमें सबसे पहले जानना चाहिये कि हम उस विराट के अंग–प्रत्यंग हैं, हम अलग नहीं हैं... जो आत्मा से पैदा हो तो आत्मज होते हैं, जिसका आत्मा से सम्बन्ध हो गया वह नितान्त सम्बन्ध होता है – सब आपस में खड़े हो जाते हैं (सामूहिक हो जाते हैं) और सारी की सारी दुनिया जब खड़ी होगी तो सोचिये क्या होगा? इतनी सुरक्षा की भावना हमारे अन्दर आ जायेगी कि सब हमारे भाई–बहन हैं। सामूहिकता बहुत महत्वूपर्ण है। सबसे बड़ा आशीर्वाद सामूहिकता में आता है। ..........आप कौन देश के हैं? परमात्मा के देश के। आप किसके साम्राज्य के है? परमात्मा के। परमात्मा ने थोड़ा ऐसा बनाया था कि आप यहाँ के, आप वहाँ के। भई, परमात्मा तो हर जगह वैरायटी बनाते ही हैं, ये विविधता तो सौन्दर्य का लक्षण है।

**प.पू.श्री माताजी, १०.२.१९८१**

.....अत: अब बिना सामूहिक हुए कोई भी आध्यात्मिक रूप से विकसित नहीं हो सकता। यह मानसिक सूझबूझ नहीं है, सहजयोग में व्यक्ति के अन्दर चेतना के नये आयाम के रूप में सामूहिक चेतना का विकास होता है। इसका अभ्यास तथा सत्यापन भी सामूहिकता में ही होता है।

.....दिव्य प्रेम तथा सम्मान ही सामूहिकता का आधार है।

**प.पू.श्री माताजी, सहजयोग**

* सामूहिकता में होना पहली आवश्यकता है। सदा सामूहिकता को तोड़ना, समस्यायें खड़ी करना और नेताओं की अवहेलना करना कुछ लोगों के दुर्भाग्यपूर्ण विचार हैं। ऐसे लोग गुट बनाते हैं अत: उनसे सावधान रहें......गुट बनाने वाले लोगों का साथ न दें।

**प.पू.श्री माताजी, अथेना पूजा, यूनान १९९३**

* सामूहिक चेतना विकसित होने पर सहजयोगी को स्पष्ट रूप से अपने साथी मनुष्यों की अन्धता का ज्ञान हो जाता है। अपने देश की तथा विस्तृत रूप में पूरे विश्व की समस्याओं का वास्तविक रूप वह समझ जाता है। अपनी विवेक बुद्धि द्वारा वह अपने साथी मनुष्यों, अपने राष्ट्र तथा पूरे विश्व की विध्वंसक हास्यास्पद मूर्खताओं तथा आक्रामक अत्याचारों को समझ जाता है तथा प्रेम की अपनी दिव्य शक्ति द्वारा इन्हें ठीक करने के लिए कार्य करता है। **सहजयोग, पृ.३८**

## अध्याय १८

# निर्वाज्य प्रेम

...... **पहले अपने को प्रेम से भर लो।** नफ़रत से कितनी शक्तिशाली है प्यार की बात, बहुत शक्तिशाली है, समुद्र की जैसी होती है प्रेम की थाह, समुद्र कितना भी बढ़ जाए उसकी थाह बढ़ती ही रहती है, ऐसी है। कितनी भी नफ़रत बढ़ जाए संसार की पर प्यार जो है उससे भी ज़्यादा बढ़ता रहेगा।

**प.पू.श्री माताजी, २१.१०.२००१**

.....प्रेम वही शक्ति है जो आपके हाथों से बह रही है, वही चैतन्य है जो आपके अन्दर बह रहा है। .......ये वाइब्रेशन्स सिर्फ प्रेम है, **जिस दिन आपकी प्रेम की धारा टूट जाती है वाइब्रेशन रुक जाते हैं। प्रेम का पल्ला पकड़े रहें, सिर्फ प्रेम के वाइब्रेशन बहते रहेंगे क्योंकि ये तो परमात्मा का ही प्रेम है जो बहे जा रहा है,** वही बह रहा है। आपके अन्दर से शुद्ध प्रेम ही बह सकता है जो स्वयं साक्षात चैतन्य है...... वही सत्य है और वही सौन्दर्य भी है। सत्य में सबसे बड़ी शक्ति प्रेम की है। ........प्रेम का मतलब है अहंकार रहित, बिना किसी अपेक्षा के, बगैर किसी भी आशा के प्रेम का साम्राज्य फैलाना। ........सत्य और प्रेम दोनों चीज़ एक हैं .........अगर आप चाहें कि प्रेम को हटा दें तो सत्य बुझ जायेगा, सत्य रह नहीं सकता क्योंकि सत्य की जो शिखा है, उसकी दीप्ति है वो प्रेम के तेल पर चलती है।

**प.पू.श्री माताजी, ३.१२.१९९५**

– प्रेम का मतलब यह नहीं है कि भई, मैं तो अपनी लड़की से प्यार करता हूँ, अपने लड़के से प्यार करता हूँ, मैं भाई से प्यार करता हूँ, ये प्यार नहीं– इसके लिये एक शब्द है – **'निर्वाज्य' निर्लेप माने अलिप्त**। आप लोग कहेंगे कि माँ अगर प्रेम निर्लेप हो जाए तो बहुत सी बातें छूट जायेंगी, पर ऐसा नहीं है। एक पेड़ को देखिये – उसके प्रेम की धारा, उसका रस सारे पेड़ में चढ़ता है, हर जगह उसके मूल में जाता है, पत्तों मे जाता है, उसकी शाखाओं में जाता है, लेकिन रुकता नहीं, वह किसी जगह रुकता नहीं। ........ग़र वो रुक जाये तो समझ लीजिए जैसे उसे एक फल पसन्द आ गया या फूल बड़ा पसन्द आ गया तो पेड़ ही मर जाएगा, बाकी फल–फूल सभी मर जायेंगे। इसीलिये जिसको जो देना है उसको वो देना चाहिये, **जिसको जो**

**रस देना है वो अपने घर में, गृहस्थी में, समाज में, अपने देश में और सारे विश्व में जिसको जो देना है वो दीजिए लेकिन उसमें लिपट न जाइये। उसको लिपटना जो है वो एक तरह से कहना चाहिए जिसे अंग्रेजी में obsession कहते है–चिपकना– अब वो कोई सी भी चीज़ हो उससे प्रेम की शक्ति क्षीण हो जाती है, बढ़ेगी नहीं।** कहते है 'उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्' सारी वसुधा ही, सारी धरा ही उसकी कुटुम्ब है–ये प्रेम की महिमा है–इस प्रेम की महिमा को अगर आपने जान लिया तो आपको आश्चर्य होगा कि आत्मा के दर्शन से ये घटित होता है।

**प.पू.श्री माताजी, ९.११.२००३**

......यह मेरा–मेरा आसानी से छूटने वाला नहीं, उसे छुड़वाने के लिये आपकी कुण्डलिनी उठनी चाहिए, वह उठने के बाद–आप पार होने के बाद (मेरा–मेरा की जगह) तुम्हारा–तुम्हारा की शुरुआत होती है.....एक बार जब कुण्डलिनी जागृत होती है तब लगता है सब कुछ तुम्हारा है...... **निर्वाज्य प्रेम कुण्डलिनी की जागृति से आता है।** मानव के प्रेम का अर्थ है (Possession) नियन्त्रण करना–परन्तु मेरा मात्र प्रेम है, ये आपको शान्त करता है और एक नवचेतना की स्थिति में आपको ले जाता है।

**प.पू.श्री माताजी, २९.११.१९८४**

.....प्रेम पूर्ण उपहार है, दूसरों की भावनाओं को महसूस करने का पूर्ण उपहार, न इसमें कोई बातचीत है न बहस मोबाहिसा, आप तो बस प्रेम को महसूस करते है........प्रेम का अनुभव अन्दर होता है, यह तो अन्त:स्थित है, इसलिए आप इसे पा सकते है........यह तो बस मौजूद है, इस प्रेम को महसूस किया जा सकता है। ......**दूसरे लोग आपसे प्रेम करते है या नहीं इसको कोई फर्क नहीं पड़ता, यह एहसास तो आपके अन्दर मौजूद है, आपके अन्दर यह गहनता है और आप इसका आनन्द लेते है। प्रेम का स्रोत शाश्वत है और इसका वर्णन शब्दो में करना आसान नहीं, यह सभी मानवीय अभिव्यक्तियों से परे है।** किसी व्यक्ति में यदि यह प्रेम है तो यह फैलेगा ही। व्यक्ति को यह सीखना है कि प्रेम का सागर हमारे अन्दर है, इस सागर में हमें स्वयं को डुबोना मात्र है। इस प्रेम सागर में यदि हम खो गए तो हर चीज़ हमारी अपनी होगी, बिना किसी वाद–विवाद के, बिना किसी प्रश्न के हम सारी व्यवस्था कर सकेंगे–यही सहज होना है।

**प.पू.श्री माताजी, ४.७.२००४**

.....मानव जीवन के भयानक तौर–तरीकों को समाप्त करने के लिये हमें अपने हृदयों में प्रेम की शक्ति विकसित करनी होगी। प्यार की पहचान यह है कि वो कभी किसी का अहित सोच ही नहीं सकता, जो कुछ भी होगा हितकारी होगा।

**प.पू.श्री माताजी, २१.१०.२००१**

.....सबसे बड़ी चीज़ प्रेम है। मनुष्य की जो मशीन है वो प्रेम से ठीक होती है। उसको बहुत जख्मी पाया है, बहुत जख्म हैं उसके अन्दर में, बहुत दु:खी है मानव, उसके जख्मों को प्रेम की दवा से ठीक करना है।

**प.पू.श्री माताजी, १.२.१९७५**

.....अबोधिता प्रेम का स्रोत है, पावित्र्य का सम्मान किये बगैर आप कभी प्रेममय नहीं हो सकते। घृणा को केवल प्रेम से धोया जा सकता है। अपने प्रेम को उन्नत करें और किसी चीज़ को नहीं। .....प्रेम का तो अपना पारितोषिक है **.....हमारा प्रेम और आनन्द उधार लिया हुआ नहीं है, इसका उद्गम स्रोत से है और यह बह रहा है, बह रहा है, बह रहा है, अत: उसको जागृत किया जाना आवश्यक है ताकि वह प्रेम बहता रहे और ईर्ष्या, प्रतिद्वन्दभाव आदि हमारे तुच्छ दुर्गुण इस प्रेम के प्रवाह में बह जाएँ।**

.....ध्यान–धारणा से इस (प्रेम) शक्ति को आप विकसित कर सकते हैं। सबसे बड़ी चीज़ है प्रेम को अपने अन्दर से दर्शित करना। जो कुछ भी आपने परमात्मा से पाया उस प्रेम को परमात्मा के प्रति समर्पित करते हुए याद रखना चाहिये कि सबके प्रति प्रेममय हों।

**प.पू.श्री माताजी, ९.११.२००३**

.....मैं फिर वही कह रही हूँ कि दिल को हम कैसे प्रेम में ला सकते हैं? यही सोचना चाहिये कि सारी चीज़ मैं प्रेम से कर रहा हूँ। यह सब कुछ करना–धरना क्या प्रेम में हो रहा है? किसी को मारपीट भी सकते हैं आप प्रेम में। **देवी ने इतने राक्षसों को मारा वो भी प्रेम में मारा, उनसे भी प्रेम किया कि वो उससे ज़्यादा और महाराक्षस न बन जायें और अपने भक्तों को प्रेम की वजह से उनको बचाने के लिये उनको मारा। उस अनन्त शक्ति में प्रेम का ही भाव है। जिसमें उनका हित हो, वही प्रेम है।** तो क्या आप इस तरह का प्रेम कर रहे हैं, जिससे उनका हित हो? यही सोचना है। स्वयं देखें कि हमारे मस्तिष्क की क्या भूमिका है– घृणा करना या प्रेम करना।

**प.पू.श्री माताजी, २१.१०.२००१**

.....प्रेम की शक्ति का आनन्द लेना चाहिए ताकि लोग **अपने रक्षक के रूप में देख सके, रोब जमाने वाले व्यक्ति के रूप में नहीं।** जिस आदमें भी अहंकार हो वह उसे कम करे और उसकी जगह प्यार से भरे तो जीवन सुखमय हो जायेगा। पहले अपने हृदय के दरवाज़े खोलें, स्थिति ऐसी होनी चाहिये कि हमसे मिलकर अन्य लोगों को प्रसन्नता हो। सभी के प्रति अपना प्रचुर प्रेम दर्शाना ही सर्वोत्तम है। उस प्रेम में भी आपने दया का प्रदर्शन न करके शुद्ध प्रेम दर्शाना है जो कि आल्हाददायी है। आपको सभी से प्रेम करने, दूसरों को क्षमा करने और उनकी सराहना करने तथा उन्हें आनन्द प्रदान करने का अभ्यास करना है।

**प.पू.श्री माताजी, ९.११.२००३**

.....विचार यह होना चाहिए कि मैं अन्य लोगों से उतना प्रेम क्यों नहीं कर सकता जितना स्वयं से करता हूँ? शाश्वत **प्रेम आपको आत्मविश्वास तथा उच्चपद प्रदान करेगा। ईसा और मोहम्मद ने आपके लिये क्यों कष्ट झेले, उन्हें क्या मिला? अपने शाश्वत प्रेम की अभिव्यक्ति का संतोष। आप क्यों नहीं ऐसा करते!**

**प.पू.श्री माताजी, ३०.१२.१९९२**

.....क्रोध करना, नाराज होना, झगड़ा करना, दूसरों के दोष देखना–उसमें अपना समय बर्बाद करने की जगह देखना चाहिए कि उन्होंने किस तरह मुझे प्यार किया? हमारे सहजयोग में प्यार बहुत शुद्ध है, **इसमें कोई गंदगी नहीं होनी चाहिए। इस प्यार में गंदगी आ जाये तो सहजयोग का प्यार नहीं। बिल्कुल देने वाला, इसको 'निर्व्याज्य' कहा गया है, निर्वाज्य माने जिसमें ब्याज भी नहीं माँगा जाता।** जब आप सोचेंगे कि मैं इतना प्यार करता रहता हूँ, प्यार करता हूँ तो बड़ा आनन्द आएगा। .....आनन्द तभी आता है जब हम ये सोचते हैं कि ये प्यार का आन्दोलन चल रहा है। बड़ी सुन्दर भावना मन में उठती है, उसका वर्णन करना मुश्किल है परन्तु उसकी झलक चेहरे पर दिखायी देती है, आपके शरीर में दिखाई देती है–वास्तव में वातावरण में दिखाई देती है, सारे ही समाज में दिखाई देती है।

**प.पू.श्री माताजी, २७.११.१९९१**

.....मुझे आपसे बताना है कि आप सब इस प्रेम की शक्ति को विकसित करें, केवल यही शक्ति इन आसुरी शक्तियों का मुकाबला करने का क्षेम सृजन करेगी।

.....आप सब मेरे हृदय में है, मैं आपसे बहुत प्रेम करती हूँ, ये मेरी हार्दिक

इच्छा है कि आप सब लोग प्रेम एवम् शान्ति के सच्चे सिपाही बनें।

**प.पू.श्री माताजी, २१.१०.२००१**

....मेरी प्रार्थना है स्वयं को तैयार करें। सोचें क्या आप सभी से प्रेम करते हैं? क्या आप प्रेममय हैं? क्या आप दूसरों से प्रेम करते हैं? **दूसरों से प्रेम करने की सोच ही अत्यन्त महान है।** आप जानते हैं कि कभी–कभी किस प्रकार से लोग मुझसे व्यवहार करते हैं–भयंकर! फिर भी मैं उनसे प्रेम करती हूँ। इसी प्रकार आपने भी प्रेम करना है और प्रेम ही वह चीज़ है जो कमल की तरह से आपके सम्मुख सुन्दरतापूर्वक खिल उठेगी। कमल की पंखुरियाँ जब खिलती हैं तो अत्यन्त सुन्दर सुगन्ध बहने लगती है। इसी प्रकार से आपके हृदय खुल जायेंगे और प्रेम की सुगन्ध पूरे विश्व में फैल जायेगी और आप भी इससे सुरभित हो उठेंगे।

**प.पू.श्री माताजी, १८.११.१९७९**

..... पावित्र्य का दूसरा नाम निर्वाज्य प्रेम है जो सतत बहता है और कुछ नहीं चाहता, उसकी तृप्ति इसी में है कि वह बह रहा है।

**प.पू.श्री माताजी, ३०.३.१९९०**

..... प्रेम मानव का अन्तर्जात गुण है, उनकी अन्तर्जात सम्पदा है। मनुष्यों को प्रेम की सामर्थ्य दी गयी है।

..... आदिशक्ति (देवी) का पूर्ण शरीर, उनका पूरा व्यक्तित्व ही करुणा एवं प्रेम से बना हुआ है। उनके सभी कार्य उनकी करुणा एंव प्रेम के माध्यम से होते हैं। .......देवी की यह शक्ति (जो आपने अपने अन्दर प्राप्त कर ली है) प्रेम की शुद्ध इच्छा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।....... प्रेम की यह शक्ति आपको उसी प्रकार दी गयी है जिस प्रकार श्री गणेश को दी गयी थी। एक बार आप इसे धारण कर लेंगे तो व्यक्तिगत रूप में या सामूहिक रूप में आप इसे प्रतिपादित कर सकेंगे। किसी व्यक्ति को यदि आप जीतना चाहें तो अपने हृदय में आप कहें 'देवी माँ कृपा करके इस व्यक्ति पर कार्य करें, मेरा पवित्र प्रेम इस व्यक्ति पर कार्य करे' और आप हैरान होंगे कि आप किस प्रकार उस व्यक्ति के हृदय को जीत लेते हैं। ९९ प्रतिशत लोग इस पावन प्रेम के पूर्ण नियन्त्रण में आ जायेंगे। इतना ही नहीं यह पवित्र प्रेम उन सभी नकारात्मक शक्तियों को नष्ट करता है जो आपको हानि पहुँचाने का प्रयत्न कर रही हैं।

प्रेम आपको सिखाता है कि वास्तविकता की पूरी तस्वीर को किस प्रकार समझना है क्योंकि ये तो ऐसा प्रकाश है जो सारे अंधकार को ज्योतिर्मय करता है–

आपके अन्दर और बाहर दोनों प्रकार के अन्धकार को। आपमें जब यह प्रेम आ जाता है तो आप अपने अन्दर अत्यन्त शान्त हो जाते हैं और आपकी शांति अभिव्यक्त होती है।

**प.पू.श्री माताजी, मास्को १७.९.१९९५**

.....प्रेम अत्यन्त महत्वपूर्ण अत्यन्त मूल्यवान गुण है। परन्तु यह प्रेम पूर्णत: स्वच्छ प्रेम होना चाहिये। इसमें कामुकता और लोभ को कोई स्थान नहीं है.... प्रेम तो बस प्रेम के लिये होता है। प्रेम के लिए आपको कृत्रिमता (sophistication) की आवश्यकता नहीं है। आपमें यदि सच्चा प्रेम है तो आप अत्यन्त भद्र एवं मधुर बन जाते है। प्रेम तो देवी का महानतम आशिष है। प्रेम व्यक्ति को पागल नहीं बनाता..... प्रेम तो इतना पावन है कि यह अत्यन्त शक्तिशाली है और कार्य करता है.....। ये अत्यन्त सुन्दर ढंग से कार्य करता है। प्रेम अत्यन्त विवेकशील भी है, ये आपको समाधान सुझाता है। ये बात पूरी तरह से सत्य है क्योंकि यह अपनी अभिव्यक्ति करना चाहता है। प्रेम किसी को हानि नहीं पहुँचाता, किसी को कष्ट नही देता..... आपको चाहिए कि परस्पर प्रेम करें, एक दूसरे का सम्मान करें। केवल तभी मुझे ये महसूस होगा कि प्रेम की इस शक्ति की अभिव्यक्ति हुई है।

**प.पू.श्री माताजी, मास्को, १७.९.१९९५, चैतन्य लहरी, जनवरी –फरवरी २००२**

.....'प्रेम को केवल महसूस किया जा सकता है। इसके विषय में आप बातचीत नहीं कर सकते, दिखावा नहीं कर सकते यह तो अन्त:स्थित है। इसे महसूस कर सकते हैं। आपमें परमेश्वरी प्रेम है। क्योंकि यह अन्दर मौजूद है इसलिए आप इसे पा सकते हैं। कोई अन्य न आपको यह प्रेम दे सकता है, न ही कोई इसे बेच सकता है, न कोई इसे बाँट सकता है–यह तो बस मौजूद है। इस प्रेम को महसूस किया जा सकता और बाँटा भी जा सकता है। किसी अन्य से इसका कुछ लेना देना नहीं। दूसरे लोग आपसे प्रेम करते हैं कि नहीं इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

**प.पू.श्री माताजी, ४.७.२००४, चैतन्य लहरी, सितम्बर–अक्टूबर २००४**

* मेरा प्रेम मात्र प्रेम है, ये आपको शान्त करता है और एक नवचेतना की स्थिति में आपको ले जाता है....अत: एक बात आपको याद रखनी है कि यहाँ कोई भी चीज़ बिक नहीं रही, आपको इसके लिए कुछ देना नहीं है। यह तो निरन्तर बहने वाली चीज़ है जिसके विषय में वास्तव में विश्व का कोई व्यक्ति नहीं जानता। निरन्तर बहने वाली–अत्यन्त सुन्दर!

**प.पू.श्री माताजी, ब्रिटेन, १५.११.१९७९**

## अध्याय १९

# योग पथ में अन्तर्निहित बाधाएं

...... उत्थान प्रक्रिया में अमीबा से मानवावस्था प्राप्त कर लेने के बाद भी मानव अपने पूर्व संस्कारों से तब तक पूर्णत: मुक्त नहीं हो पाता जब तक आत्मसाक्षात्कार द्वारा उत्क्रान्ति पाकर मनुष्य परमात्मा से एकरूप न हो जाए। मानव की भी तीन श्रेणियाँ होती हैं :–

मेरी समझ में नहीं आ रहा कि मैं किस प्रकार से यह बात शुरु करूं ताकि आपको सदमा न पहुंचे। एक तो हमारे जैसे मनुष्य हैं। इसे **'नर योनि'** कहा जाता है।

दूसरी श्रेणी **'देव योनि'** है – वो लोग जो जन्मजात साधक हैं या आत्मसाक्षात्कारी हैं।

और तीसरी श्रेणी के लोग **'राक्षस'** हैं। इन्हें गण भी कहा जाता है। परन्तु हम कह सकते हैं कि मनुष्यों का एक वर्ग राक्षस है, ऐसे लोग जो असुर हैं। **अत: संसार में असुर लोग भी हैं, श्रेष्ठ लोग भी हैं और इन दोनों के मध्य के लोग भी हैं।** श्रेष्ठ लोग बहुत कम हैं। ऐसे लोग जन्म से आत्मसाक्षात्कारी होते हैं। मेरे सम्मुख उनकी समस्या अधिक नहीं है। परन्तु हमें उन लोगों को सम्भालना है जो मध्य में हैं। वो अच्छाई की ओर बढ़ना चाहते हैं परन्तु कोई बाधा उन्हें पकड़े हुए है। ऐसे लोगों की कुण्डलिनी में अन्तर्निहित कुछ दोष होते हैं। जिन्हें समझ लेना हमारे लिए आवश्यक है।

**१. सर्वप्रथम अस्वस्थ शरीर –** (शारीरिक रूप से अस्वस्थ होना है)। .......देश विशेष–स्थान विशेष के अनुसार ये समस्याएं हैं.....हर देश में कुछ विशेषता है जिसके कारण व्यक्ति को स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं आती हैं। अत: सहजयोगी होने के नाते व्यक्ति को समझना चाहिए कि स्वास्थ्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह शरीर परमात्मा का मन्दिर है। अत: आपको अपने स्वास्थ्य की देखभाल करनी होगी।

.....आप यह भी जानते हैं कि **जब कुण्डलिनी उठती है तो पहली घटित होने वाली घटना आपके स्वास्थ्य का ठीक हो जाना है। क्योंकि आपका पराअनुकम्पी (पैरासिम्पॅथेटिक) तन्त्र कार्यान्वित हो जाता है। पराअनुकम्पी, व्यक्ति को ज्योति प्रदान करता है जिसका प्रवाह अनुकम्पी तन्त्र (सिम्पथटिक) में**

**होता है तथा व्यक्ति का स्वास्थ्य अच्छा हो जाता है।** .......कुण्डलिनी अधिकतर रोगों को ठीक करने में सहायक होती है। सिवाय उन रोगों के जिन्हें मानवीय तत्व बढ़ावा देते हैं–जैसे किडनी रोग। गुर्दा रोग के एक रोगी का इलाज भी सहजयोग द्वारा हो चुका है। नि:सन्देह हम गुर्दा रोग का इलाज कर सकते हैं परन्तु व्यक्ति यदि एक बार मशीन (डायलिसिस) पर चला जाए तो कोशिश करने के बाद भी उसे रोगमुक्त नहीं किया जा सकता। उसका जीवन बढ़ाया जा सकता है परन्तु पूरी तरह से रोगमुक्त नहीं किया जा सकता है।

**परन्तु रोग दूर करना किसी भी प्रकार से आपका कार्य नहीं है, यह बात आपको याद रखनी है। कोई भी सहजयोगी लोगों के रोग ठीक करने में न लग जाए। रोगी मेरे फोटो का उपयोग कर सकते हैं।** परन्तु आपको रोग दूर करने के कार्य में नहीं लग जाना है क्योंकि इसका अर्थ यह है कि आप स्वयं को बहुत बड़ा परोपकारी मान बैठे हैं। मैंने देखा है कि जो भी सहजयोगी रोग दूर करने के कार्य में लग गए उनके लिए यह कार्य पागलपन बन गया और वो लोग भूल गए कि उन्हें भी कोई पकड़ हो गई तथा कुछ कष्ट हो गया है। वो स्वयं को ठीक नहीं करते और अन्तत: मैं देखती हूँ, कि ऐसे लोग सहज से बाहर चले जाते हैं। **परन्तु मेरे फोटो से आप लोगों को ठीक कर सकते हैं।** .......मैं ऐसे लोगों को जानती हूँ जो रोगमुक्त करने की शक्ति के कारण पगला गए और नियमपूर्वक अस्पतालों में जाने लगे तथा अस्पतालों में ही उनका अन्त हो गया। उन्होंने कार्यक्रमों में भी आना छोड़ दिया। वो मुझे मिलने भी नहीं आते।

.....व्याधियों में से एक है शारीरिक रोग। शारीरिक रोग के कारण भी आपको इतना नीचे नहीं गिर जाना चाहिए। आपको यदि कोई समस्या है भी तो उसे भूल जाएं। शनै: शनै: आप ठीक हो जाएंगे। कुछ लोगों को ठीक होने में समय लगता है। **मुख्य बात तो अपनी आत्मा को प्राप्त करना है। अत: हमेशा यही न कहते रहें, ''श्री माताजी, मुझे ठीक कर दीजिए, मुझे ठीक कर दीजिए, मुझे ठीक कर दीजिए।'' आप मात्र इतना कहें, ''श्री माताजी, मुझे आध्यात्मिक जीवन में बनाए रखिए।'' आप स्वत: ही ठीक हो जाएंगे।** हो सकता है कुछ लोगों को ठीक होने में समय लगे। परन्तु आप तो जीवन भर बीमार रहे, तो ठीक होने में भी यदि कुछ समय लग जाए तो कोई बात नहीं। भिन्न रोगों को ठीक करने की विधियाँ जो हमने बताई हैं उनके अनुसार कार्य करें।

.......**'स्वास्थ्य महत्वपूर्ण है, परन्तु आपका चित्त आत्मा पर होना चाहिए। चित्त आपकी आत्मा पर होना चाहिए क्योंकि चित्त ही भिन्न दिशाओं में दौड़ता है और उलझ जाता है। आप इसे कार्यान्वित होने दें और यह कार्यान्वित हो जाएगा।'**

**२. <u>अकर्मण्यता</u> –**

दूसरी बाधा जो मैं महसूस करती हूँ उसे अकर्मण्यता कहा जाता है, अर्थात् व्यक्ति के अन्दर कार्यान्वित करने की इच्छा का अभाव होना। नि:सन्देह जो लोग बेकार हैं और जो आत्मसाक्षात्कार नहीं पाना चाहते उन्हें भूल जाएं। आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् भी लोगों के अन्दर एक समस्या है कि वो इसे कार्यान्वित नहीं करना चाहते। सहज रूप से यदि कहा जाए तो वे आलसी हैं। ......परन्तु सहजयोग में हमें बहुत ही सावधान रहना होगा। लोग जब सहजयोग में आते हैं तो क्या होता है? उन्हें आत्मसाक्षात्कार मिल जाता है, शीतल चैतन्य लहरियाँ प्राप्त हो जाती हैं जो बाद में समाप्त हो जाती हैं। इसका कारण यह है कि वो इसे कार्यान्वित ही नहीं करना चाहते। अकर्मन्यता एक अन्य खतरा है।

.....कुण्डलिनी आपकी आँखें खोलना चाहती है, इसमें कोई सन्देह नहीं, परन्तु आप पुन: अपनी आँखें बन्द कर लेते हैं। तो अकर्मण्यता के सम्मुख झुक जाने के लिए आप स्वतन्त्र हैं। अब यह सामूहिक भी हो सकती है। मैं आपको इतना बता सकती हूँ कि यह बहुत बड़ी बीमारी है जो फैलती है।

**३. <u>संशय</u> –**

यह तीसरा खतरा है अर्थात् सन्देह करना। मेरी समझ में नहीं आता कि सन्देह रूपी पागलपन का वर्णन किस प्रकार किया जाए। उदाहरण के लिए, यहाँ पर आए हुए आप लोगों का न जाने कितना प्रतिशत अगले दिन इस वक्तव्य के साथ नहीं आया कि, 'अभी मुझे सन्देह है।' क्या यह विवेक का चिन्ह है? आप किस चीज़ पर सन्देह कर रहे हैं? अब तक आपने क्या प्राप्त कर लिया है? यह सन्देह कहाँ से आता है? यह आपके 'श्रीमान अहम्' की देन है। .......अब आप शक करना चाहते हैं। किस पर शक? आप का सन्देह क्या है? आपको शीतल चैतन्य लहरियाँ महसूस होती हैं तो ठीक है, बैठ जाइए। .......वे कुण्डलिनी को उठते हुए देखेंगे, अपनी आँखों से वे कुण्डलिनी को उठते हुए, धड़कते हुए और सहस्रार तोड़ते हुए देखेंगे। फिर भी वो बैठ

जाएंगे और कहेंगे कि, 'मुझे सन्देह है।' अब आप हैं कौन? आप कहाँ तक पहुँचे हैं? क्यों आप सन्देह कर रहे हैं? किस चीज़ पर आप सन्देह कर रहे हैं? अपने विषय में आपने क्या जाना है? इस बिन्दु पर आकर आप विनम्र हो जाएं। अपने हृदय में विनम्र हो कर कहें, ''मैंने स्वयं को नहीं जाना है, मुझे स्वयं का ज्ञान प्राप्त करना है, अभी तक मुझे स्वयं का ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ है। मुझे पूर्ण प्राप्त नहीं हुआ है, कौन से उपकरण (शरीरतन्त्र) से मैं सन्देह कर रहा हूँ?'' **कुण्डलिनी जागृति में यही सबसे बड़ी बाधा है कि जागृति के बाद भी 'संशय' बना रहता है।**

**४. <u>प्रमाद</u> –**

चौथी बाधा को हम प्रमाद कह सकते हैं। इसके कारण हम हर समय लड़खड़ाते रहते हैं। हर समय बेवकूफी भरे प्रश्न करते हैं। .......तो प्रमादरूपी दुर्गुण का उदय इसलिए होता है क्योंकि यहाँ पर आने वाले सभी लोगों के लिए कुण्डलिनी की जागृति निःशुल्क है, सभी लोगों के लिए, चाहे नरक में रहे हों या स्वर्ग में, या चाहे उन्होंने दुनिया के सभी दुष्कर्म किए हों। परन्तु हम सहजयोग को दोष देते हैं अपने अन्दर स्वतः घटित होने वाली इस घटना को हम दोष देते हैं, कभी स्वयं को दोष नहीं देते कि, 'नहीं, मैंने ही यह गलती की होगी।' ठीक है, कोई बात नहीं। मैं यदि गलती करता हूँ तो इन्हें ठीक भी करूंगा, ठीक है। निःसन्देह श्री माताजी क्षमा करती हैं। परन्तु कई बार मेरी क्षमा भी बेकार होती है, क्योंकि **जब तक आप अपने अन्दर यह महसूस नहीं करते कि मैंने यह गलती की तब तक आप इस मार्ग पर जाने के स्थान पर दूसरे मार्ग पर जाने लगते हैं।** आप उस मार्ग पर चले गए हैं तो सड़क पर चलने का नियम भी समझना होगा। अतः प्रमाद रूपी बाधा होने के पश्चात् हमारे अन्दर एक अन्य अंतर्निहित समस्या खड़ी हो जाती है जिसे कहते हैं :

**५. <u>भ्रमदर्शन</u> –**

भ्रमदर्शन अर्थात दृष्टि भ्रम। हमें भ्रमदर्शन होने लगता है, विशेष रूप से उन लोगों को जो एलएसडी तथा अन्य इस प्रकार के नशे लेते हैं। वो मुझे नहीं देखते। कभी–कभी तो उन्हें केवल प्रकाश दिखाई देता है या इसी प्रकार का भूत या भविष्य, या कोई भ्रम। वे इसी प्रकार कोई अन्य भ्रम देख सकते हैं। आप यदि मुझे स्वप्न में देखते हैं तो ठीक है या स्वप्न में यदि किसी और चीज़ को देखते हैं तो ठीक है। परन्तु यदि आप भ्रमदर्शन करना शुरु कर देते हैं तो आपमें भ्रम विकसित हो जाता है। **इसकी**

**सबसे बड़ी कमी यह है कि लोग इसके बारे में झूठ बोलने लगते हैं।** मैं सभी के विषय में जानती हूँ। भ्रमदर्शन यदि शुरु हो जाता है तो यह चैतन्य लहरियों के लिए बहुत भयानक होता है।

कुछ लोगों को स्वयं पर पूर्ण विश्वास है, यह बात मैं देखती हूँ। वो पूरे विश्व को बताते हैं और यह कहते हुए कि 'इस चीज़ का चैतन्य ठीक नहीं है, उस चीज़ का चैतन्य ठीक नहीं है।' सभी पर रौब ड़ालते हैं जबकि वास्तव में उन्हें चैतन्य लहरियों पर स्वामित्व नहीं होता। अब मुझे सावधान होना पड़ेगा। किसी गुरु की तरह से मैं बात नहीं कर सकती। इसलिए मैं कहती हूँ कि ठीक है आप स्वयं को बन्धन दे लें और अपने हाथ मेरी ओर करके देखें। किसी तरह से यदि उन्हें पता चल जाए कि मैं जान गई हूँ कि वो झूठ बोल रहे हैं तो बस वो तो समाप्त हो गया। अत: उनका झूठ भी मुझे स्वयं तक रखना पड़ता है। इस बारे में मैं बहुत सावधान हूँ क्योंकि मैं जानती हूँ कि वो लोग भयानक फिसलन पर खड़े हुए हैं। किसी चीज़ को कहने की मेरी शैली चाहे रूखी ना हो फिर भी वो चीज़ घटित हो सकती है। **अत: व्यक्ति को यह बात समझ लेनी है कि सत्य पर डटे रहने में ही हमारा हित है।** अपने विषय में हमारे जो विचार हैं उनसे हमें बहकना नहीं चाहिए।

**६. <u>विषयचित्त</u> –**

एक अन्य बाधा जो व्यक्ति में आ जाती है वह है 'विषयचित्त'। इस स्थिति में हमारा चित्त उन पदार्थो की ओर आकर्षित होता है जो आत्मसाक्षात्कार से पूर्व हमें रुचिकर थे, जिन पर पहले हमारा चित्त होता था। मान लो, आपका चित्त क्रिकेट की ओर आकर्षित था। ठीक है, परन्तु आपको यह रोग नहीं होना चाहिए। मेरा कहने से अभिप्राय यह है कि क्रिकेट का अर्थ यह नहीं है कि आप क्रिकेट का बल्ला ही बन जाएं। तथा क्या आप किसी अन्य चीज़ के लिए बिल्कुल बेकार हैं, सभी व्यवहारिक कार्यो के लिए क्या आप मर चुके हैं। किसी भी चीज़ के प्रति पागल आकर्षण आपके चित्त को अत्यन्त गलत अवस्था में ले जाता है। अत: यह सहजयोगियों के लिए ठीक नहीं है।

..... इन कठिनाईयों के अतिरिक्त **दो अन्य बहुत बड़े खतरे,** जिन के कारण हम कष्ट उठाते हैं, वो निम्नलिखित हैं। एक तो लोग **<u>भूतबाधित</u>** हो जाते हैं और उनके मस्तिष्क से बहुत सी धारणाएं भर जाती हैं। वो भजन गाने लगते हैं आदि–आदि। यह

चीज़ें मुझे उलझन में डाल देती हैं, मेरी समझ में नहीं आता कि क्या कहा जाए। उनके माध्यम से बोलता हुआ असुर मुझे दिखाई देता है।

..... दो अन्य स्थितियाँ हैं जिनमें कुण्डलिनी ऊपर को उठती है और फिर नीचे गिर जाती है। मनुष्य के अन्दर यह **अन्तर्निहित भय** है। बहुत से लोगों ने मुझसे पूछा, ''श्री माताजी, आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर लेने के पश्चात् क्या यह स्थिति बनी रहती है?'' यह स्थिति बनी रहती है। इसका कुछ अंश बना रहता है। कभी तो इसका बहुत थोड़ा हिस्सा बना रहता है और कभी पूरी की पूरी कुण्डलिनी वापिस खिंच जाती है। यह वापिस खिंच जाती है। जब ऐसा होता है तब आप कहेंगे, 'हमें सन्देह होने लगा है।' यह कहाँ लिखा हुआ है कि आपका उत्थान होगा और आप उस उच्च स्थिति में स्थायी रूप से स्थापित हो जाएंगे चाहे आपके अन्दर कोई भी कमियाँ रही हों? क्या यह सम्भव है? कुछ लोगों के साथ ऐसा होता है कि उनकी कुण्डलिनी नीचे को गिर जाती है। यह बहुत ही भयानक चिन्ह है। **यह समस्या गलत गुरुओं के कारण गलत स्थानों पर जाने के कारण, मृत आत्माओं तक पहुँचने तथा काला जादू करने के कारण होती है। जो लोग अवतरण नहीं हैं उनके सम्मुख सिर झुकाने से, गलत प्रकार के देवताओं की पूजा करने से गलत प्रकार के कर्मकाण्ड करने से, गलत समय पर व्रत रखने से, व्रत, कर्मकाण्डों तथा चक्रों का मतलब न समझने से और पूर्ण सहजयोग की सम्यकता को न समझ पाने के कारण यह समस्या होती है।** कुछ लोगों में, आपने देखा है कि कुण्डलिनी उठती है और तुरन्त गिर जाती है। यह अत्यन्त भयानक बात है। वास्तव में यह कष्टकर भी है।

**अन्तिम खतरा** जिसका ज्ञान आपको होना चाहिए, यह है कि **आपको लगने लगता है कि आप परमात्मा बन गए या किसी अवतरण सम बन गए।** यह बहुत बड़ा खतरा है। तब आप कानून को अपने हाथों में लेने लगते हैं, दूसरे लोगों पर हुक्म चलाने लगते हैं तथा बहुत ही स्वेच्छा से कार्य करने लगते हैं तथा अपने आपसे अत्यन्त संतुष्ट हो जाते है। यह बहुत बड़ा खतरा है।

विनम्रता एक मात्र मार्ग है जिससे आप जान सकते हैं कि आपके सम्मुख विशाल सागर है। ठीक है कि आप नाव पर सवार हो गए हैं परन्तु आपने बहुत कुछ सीखना है, बहुत कुछ समझना है तथा अभी आपने अपने चित्त की ओर ध्यान देना है, अपनी चेतना की ओर ध्यान देना है। अभी आपने इस प्रकार से कार्य करना है कि

आप वास्तव में स्वयं को पूर्ण सहजयोगी के रूप में स्थापित कर सकें, जिससे की सामूहिकता आपके अस्तित्व का अंग–प्रत्यंग बन जाए और आपमें किसी भी प्रकार के संशय न रह जाएं। जब तक आपमें यह घटित नहीं हो जाता–यह मेरी जिम्मेदारी नहीं है, **यह तो एक अवस्था है जिसमें आपके हाथों के इशारे से कुण्डलिनी उठेगी। जब तक आप इस अवस्था को प्राप्त नहीं कर लेते तब तक कृपा करके इसे कार्यान्वित करने में लगे रहें, आलसी न बनें।** आपको अपने चहुँ ओर देखना है। लोगों से मिलना है, उनसे बातचीत करनी है। जितना अधिक आप इसके बारे में बतायेंगे, जितना अधिक आप इसे करेंगे, जितना अधिक आप इसे देंगे उतना ही अधिक यह प्रवाहित होगा। जितना अधिक आप अपने घर पर बैठकर सोचेंगे, यह 'ओह! मैं घर पर पूजा कर रहा हूँ' तो कुछ नहीं होगा। यह निष्क्रिय होता चला जाएगा। आपको इसे अन्य लोगों को देना होगा। अधिक से अधिक लोगों को आत्मसाक्षात्कार देना होगा, हज़ारों लोग इसे प्राप्त करेंगे। अत: यह समझ लेना आवश्यक है कि आपको इस बात से धोखा नहीं खाना कि ब्रह्माण्ड की सभी शक्तियाँ आपमें प्रकट हो गई हैं। इन शक्तियों की अभिव्यक्ति जब आपमें होगी तब आप इनके विषय में जान पायेंगे।

अब आपमें से कुछ लोग तो परिधि रेखा (किनारे पर) खड़े हैं। उन्हें हम किनारे पर रखते हैं, यह बात आप अच्छी तरह से जानते हैं। कुछ लोग मध्य में आ जाते हैं और कुछ बहुत थोड़े से, अन्दर वाले वृत्त में (मध्यबिन्दु) पर हैं। **सभी लोग ऐसी स्थिति में हैं जहाँ से परिधि रेखा से उन्हें बाहर किया जा सकता है।** तब आपकी समझ में नहीं आता कि सहजयोगी ने ऐसा व्यवहार क्यों किया। किसी सहजयोगी को यदि आप ऐसा व्यवहार करते हुए देखें, परिधि की बाह्य रेखा पर जाते हुए देखें तो समझ लें कि आप भी ऐसा ही कर सकते हैं। अत: आप सावधान रहें। सावधान रहें।

**प.पू.श्री माताजी, १०.१२.१९७९**

# अध्याय २०

# सहजयोग में परिपक्वता

...... **आपमें** परिपक्वता होनी आवश्यक है। सर्वप्रथम अपने लक्षण सुधारिये और यह सुधार निष्कपट आत्मनिरीक्षण और हर क्षण स्वयं को तथा अपने आचरण को साक्षी भाव से देखने पर ही सम्भव है।

**प.पू.श्री माताजी, २४.७.१९९४**

**१. क्षमा भाव –**

सहज धर्म में क्षमा पहली आवश्यक चीज़ है, आपमें जितनी क्षमा की शक्ति होगी उतने ही आप शक्तिशाली होंगे। सबको क्षमा कर दें। .......कलियुग में क्षमा के सिवाय कोई भी बड़ा साधन नहीं है।

**प.पू.श्री माताजी, २०.११.१९७५**

.....हर समय हम सोचते रहते हैं कि किसने क्या दु:ख दिया, किसने क्या तकलीफ दी। उसकी जगह **यह सोचना चाहिये कि हमें क्षमा करना है। उसको हमने क्षमा कर दिया और क्षमा करने से एकदम से आपको हैरानी होगी कि, आपकी कुण्डलिनी झट से ऊपर चढ़ जायेगी।**

**प.पू.श्री माताजी, १४.१.२००४**

.....एक मन्त्र है, बहुत बड़ा मन्त्र है– सबको माफ़ करो (तीन बार कहो क्षम–क्षम–क्षम) इसके बगैर उन्नति नहीं। हमें माँ से मतलब है, सहजयोग से मतलब है, कोई अगर कुछ गलत कहे भी तो उसे सुबुद्धि से जानो, उनको बकवास करने दो। हमारा ख्याल इस तरफ होना चाहिये कि इस गलत बात को सुनकर हमारे अन्दर कोई गलत बात तो नहीं जा रही।

.....ईसा मसीह ने एक ही चीज़ बतायी थी–सबको क्षमा करना चाहिये। क्षमा करना ज़रूरी है। प्रेम पूर्वक ईसा मसीह ने उन लोगों के लिये प्रार्थना की थी जिन्होंने उन्हें क्रूसारोपित किया था।

**प.पू.श्री माताजी, २१.४.२०००**

.....क्षमा –किस प्रकार क्षमा आती है? भूतकाल को भूल जाने से यह

आती है। ........जो हो गया जो बीत गया...... छोड़ो जो गत है – भूत है – उसे भूल जाओ....... अब वर्तमान में तुम खड़े हो। सहजयोग में योग्यता पाने के लिये आपको अपने भूतकाल से मुक्त होना पड़ेगा। अपराध स्वीकार करने की कोई आवश्यकता नहीं–क्षमा होनी चाहिये, क्षमा यदि है तो आप भारमुक्त हो जाएँगे। जो क्षमा नहीं कर सकता वह सहजयोगी नहीं हो सकता।

**प.पू.श्री माताजी, २३.८.१९९७**

.....ग़र क्षमा करना नहीं सीखेंगे, ग़र हमारे अन्दर क्षमाशीलता नहीं आएगी तो हमारे अन्दर एक दिन बहुत ज्यादा नष्ट करने की शक्ति आ जाएगी। हम ही अपने लोगों को नष्ट करेंगे।

**प.पू.श्री माताजी, १६.२.१९८१**

.....''क्षमा के लिए जरुरी है कि सबको क्षमनस्य होना चाहिए और सोचना चाहिए कि जिसे जो करना था वो भोगेगा हमको क्या करना है। जिसने जो कहा था वो खुद उसको इस्तेमाल होगा, हमको इसमें क्यों पड़ना है? इस तरह से निरीक्षता आ जाए और आप क्षमा कर दें सबको तो आज्ञा चक्र ठीक हो जाएगा।

**प.पू.श्री माताजी, १४.१.२००४**

.....ठीक है किसी ने गलती कर भी दी उसे माफ कर दीजिए किसी ने कुछ ऐसा काम भी कर दिया जो नहीं करना चाहिए, उसे भी माफ़ कर दीजिए क्योंकि कल आप ऐसा काम करें–आप करें तो आप किसकी सज़ा लेंगे? कौन आपको सज़ा देगा? इसलिए ये ही समझ लीजिए कि हम सहजयोगियों को बिल्कुल भी अधिकार नहीं है कि हम किसी को सज़ा दें और उनको शिक्षा दें।

**प.पू.श्री माताजी, १४.१.२००४**

.....आपको यह बात समझनी होगी की स्थिति के अनुसार आप अन्य लोगों से ऊँचे उठ चुके हैं, केवल तभी आप उनके सभी अपराधों को क्षमा कर सकेंगे। क्षमा वही कर सकता है जो बड़ा होता है, छोटा आदमी क्या क्षमा करेगा? बड़ी तबीयत के जो लोग होते हैं वो क्षमा करते हैं, उनकी क्षमाशीलता बहुत जबर्दस्त होती है।

**प.पू.श्री माताजी**

**२. अहंकारमुक्ति –**

..... मानव की सबसे बड़ी समस्या अहं है। अहं का अर्थ है कि आप केवल

स्वयं से प्रेम करते हैं और अपना कोई अन्त नहीं देखते।

**प.पू.श्री माताजी, २४.४.२००१**

.....अहं **हर समय** हमारी झूठी महानता के विषय में हमें बढ़ावा देता रहता है और हम स्वयं को महान मान बैठते हैं।

..... मानव के लिये अहं अति सूक्ष्म है। कुछ लोगों में यह इतना सूक्ष्म होता है कि ज़रा सी बात से यह आसमान छूने लगता है। छोटी-छोटी बातों के लिये वे नाराज़ हो जाते हैं या कोई ऐसा व्यक्ति खोज लेते हैं जिस पर वे शासन कर सकें। जब आप अहं को देखने लगे हैं तो इस पर हँसे और सोचे कि मुझमें क्या कमी है? अहं, बन्धन जैसा नहीं है क्योंकि बन्धन बाहर से आते हैं और **अहं आन्तरिक** है, किसी भी चीज़ से यह आ सकता है। मानव को सब प्रकार की मूर्खतापूर्ण बातों का अहं हैं। ........व्यक्ति को देखना है कि किस प्रकार उसमें अहं कार्यरत है और उसके पतन का कारण है।

..... अहं को ठीक करने के लिये हमें क्या करना चाहिये? मुख्य चीज़ अपने अहं को देखना और उसका साक्षी होना है। ........साक्षी अवस्था में यह देखा जाना चाहिये कि किस प्रकार ये हमें अच्छे मार्ग पर चलने से रोकता है? .......अहं भाव जब भी बढ़ने लगे **तो स्वयं से कहें कि ''श्रीमान! आप यह कार्य नहीं कर रहे हैं, ये कार्य आप नहीं कर रहे'' यह बात यदि आप स्वयं को सुझाते रहेंगे तो आपमें अहं नहीं बैठेगा।**

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १४.३.१९९४**

..... अहंकार एक दीर्घकाय समस्या है। इसका समाधान दूसरों को क्षमा करना है। आपको क्षमा करना सीखना चाहिये। प्रात:काल से संध्या तक क्षमाप्रार्थी बने रहें और **अपने दोनों कानों को खीचें और कहें कि 'हे परमात्मा हमें क्षमा करें',** प्रात:काल से सायंकाल उसका स्मरण करते रहें, सदा याद करने से ही श्री जीसस क्राइस्ट आपके अहंकार को नीचे ले आयेंगे।

..... मनुष्य के अन्दर परमात्मा ने ही खासकर अहंकार का वरदान दिया है जिससे हम सीख जायें, लेकिन अहंकार को मारने से ये मरता नहीं, इसलिये अपने आप छूट जाए वही तरीका सहजयोग का है।

**प.पू.श्री माताजी, निर्मला योग, १९८४**

..... **'मुझे पसन्द है', 'मुझे यह पसन्द नहीं है' - ये शब्द उपयोग नहीं**

**किये जाने चाहियें। अहं को जीतने के लिये भाषा एवं शैली को परिवर्तित करना होगा। तृतीय पुरुष में (Third Person)** बात करें, ये बहुत अच्छा तरीका है। हर समय आप (सहजयोगी) कहते हैं यह हो रहा है, यह घटित हो रहा है, स्वयं को आप तृतीय पुरुष की तरह देखने लगते हैं।

..... सेवा में एक बहुत सूक्ष्म मूर्खतापूर्ण अहंकार होता है। किस पर आप उपकार करने जा रहे हैं? ये सब आपके अंग-प्रत्यंग हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ३.२.१९७८**

..... 'उपवास करना, जप, तप करना आदि सब चीज़ों से अहंकार बढ़ता है। हवन से भी अहंकार बढ़ता है क्योंकि अग्नि जो है वो दायें तरफ है। जो कुछ भी हम कर्मकाण्ड करते हैं उससे अहंकार बढ़ता है।

अब इस अहंकार का इलाज क्या है-वो सोचना चाहिए। उसका इलाज ईसा मसीह थे और उन्होंने सिखाया है कि आप सबसे प्रेम करें, अपने दुश्मनों से भी प्यार करें। इसका इलाज उन्होंने प्यार बताया है, प्यार के अलावा कोई इलाज नहीं-ये प्यार परम चैतन्य का प्यार है।

**प.पू.श्री माताजी, २५.१२.१९९७**

..... अहं आपका शत्रु है। जिसका सृजन स्वयं आपने किया है। अहं बहुत ही शक्तिशाली, बहुत ही सशक्त है। पहला कार्य जो अहं करता है वह व्यक्ति को मूर्ख बनाना, अहं ही सारी मूर्खतापूर्ण बद्‌मिज़ाज़ियाँ सिखाता है। वह क्रोध को जन्म देता है। अहं व्यक्ति को सिरजोर बनाता है। लोग यह देखना भी नहीं चाहते कि उनमें क्या कमी है। उन्हें क्या पाना है। और क्या पाने की योग्यता उनमें है। अनियंत्रित अहं के कारण आप परमात्मा तक को चुनौती देते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ५.५.२००२**

.....'उत्थान मार्ग में अहं सबसे बड़ी बाधा है। आप देखें अहं उस स्थान पर है जिसे पार करके आपने सहस्रार में जाना है ......आपमें एक हज़ार शक्तियाँ हैं, परन्तु अहंकार के कारण आप उनका उपयोग नहीं कर पाते हैं....अहं में कोई विवेक नहीं है, यह हमारे मार्ग की बाधा है।'

.....'सहजयोगी का अर्थ है कि आप अहंकार नहीं कर सकते। अहं रूपी यह दुर्गुण भिन्न स्रोतों से आया है परन्तु इसका शुद्धीकरण होना चाहिए।'

**प.पू.श्री माताजी, ५.५.२००२**

.....'मैं हमेशा कहती रही हूँ कि अहं की समस्या के कारण हम अत्यन्त विघटित (disintegrated) हैं, परमात्मा से हमारा योग ठीक प्रकार से स्थापित नहीं है......छोटी–छोटी तुच्छ चीज़ों के विषय में यदि आपने अपना समय व्यर्थ करना है तो आपका विघटन बढ़ जाएगा, आप अकेले पड़ जाएंगे क्योंकि इस प्रकार के सभी निर्णय अहं के माध्यम से ही होते हैं। ये मुझे पसन्द नहीं–मैं ऐसा नहीं करता–ऐसा मुझे दिखाई नहीं देता, आदि–आदि। किसी प्रकार से यदि आप अपने अहं की कार्यशैली को देखते रहें तो इससे मुक्ति पा सकते हैं। यही कार्य आपने करना है। अहं से लड़ाई नहीं करनी–मैं यह कभी नहीं कहती कि अहं से लड़ाई करो, मैं कहती हूँ कि समर्पण करो–यही एकमात्र उपाय है जिससे आपका अहं दूर हो सकता है।'

**प.पू.श्री माताजी, ३.२.१९७८**

**३. समर्पण –**

.....आधुनिक सहजयोग की केवल एक शर्त है कि वास्तविकता में आपको समर्पण करना होगा। ......समर्पण के अभाव में परमात्मा के साम्राज्य में स्थापित होना असम्भव है। **समर्पण का अर्थ यह नहीं कि आप अपने बच्चों और घर का त्याग करें, इसका अर्थ है आप अपने अहं एवं बन्धनों का त्याग करें।**

**......समर्पण से आपके अन्दर एक ऐसी स्थिति विकसित होती जाती है जो आन्तरिक रूप से सन्यासी बना देती है, इसका अर्थ यह है कि कोई भी चीज़ आप पर प्रबल नहीं होती। सन्यासी व्यक्ति सभी चीज़ों से ऊपर होता है।**

समर्पण का अर्थ यह नहीं कि बाह्य वस्तुओं का समर्पण कर दें। समर्पण का अर्थ है स्वयं को पूर्णतया शुद्ध करें, पूर्णतया निर्लिप्त हो जायें। निर्लिप्सा उत्थान का एकमात्र मार्ग है।

**समर्पण का एक अन्य पहलू भी है, यह मान लेना कि मैं एक सहजयोगी हूँ और सारी शक्तियों को मैं अपने अन्दर आत्मसात कर सकता हूँ।** .......एक बार आत्मसात के पश्चात आपको चाहिये कि उन शक्तियों को आप अपने अन्दर बनाये रखे, ग्रहण करें और विश्वस्त हों कि आपके अन्दर ये शक्तियाँ हैं।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १४.३.१९९४**

.....आपका सर्वव्यापक शक्ति से सम्बन्ध सच्चा, दृढ़ और निष्कपट होना चाहिये तथा अपने मस्तिष्क में हर समय आपको यह ज्ञान होना चाहिये कि आप जुड़े

हुए हैं। **परमात्मा  से अपनी एकाकरिता का आभास यदि हर समय आपको है तो यह अवस्था प्राप्त करना अत्यन्त सहज है।** ......जितना आप उन्नत होना चाहेंगे, आपकी ही शक्ति आपको उतनी सामर्थ्य देगी.....

......आपमें शक्तियाँ हैं, मैं बार-बार यह आपको बता रही हूँ कि आपमें वह शक्तियाँ हैं जिनसे आप आत्मनिरीक्षण कर सकते हैं और साक्षीभाव से स्वयं को देखते हुए समर्पण कर सकते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २४.७.१९९४**

.....'समर्पण का अर्थ है कि आप अपनी माँ से (श्री माताजी से) सहजयोग से और जिस सत्य को आपने प्राप्त किया है उससे, दृढ़तापूर्वक जुड़े हुए हैं। समर्पण के विषय में पहली बात जो हमें समझनी है वह यह है कि आप पूर्णत: समर्पित हैं, किसी का भय आपको नहीं है, अपनी हानियों की भी आपको चिंता नहीं है....... समर्पण से आपको कोई और अर्थ नहीं लगाना चाहिए सिवाय इसके कि यह प्रकाश है जो चमकता है, जो सुधारता है और अन्य लोगों का पथ-प्रदर्शन करता है....समर्पण से आप गतिशील (डायनेमिक) बन जाते हैं-आप वास्तविक शक्ति बन जाते हैं, विनाश की नहीं, सृजनात्मकता की।'

**प.पू.श्री माताजी, लन्दन, ६.८.१९८२**

**४. निर्विचार समाधि -**

निर्विचार ध्यान-धारणा परिपक्वता प्रदान करती है। उत्थान पाने के लिये निर्विचार समाधि में होना आवश्यक है, इसके बिना उत्थान नहीं हो सकता।

.........निर्विचारिता में ही सहज कार्यान्वित होता है, इसके बिना नहीं होता, नहीं होता इसके बिना। आप जो चाहे योजना बनाएँ और जो चाहें करें, यह कार्यान्वित न होगा। इसे यदि सहज पर छोड़ देंगे तो कार्य हो जाएगा। परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं कि आप कार्य के प्रति आलसी या अव्यवस्थित हो जाएँ। आपको अत्यन्त चुस्त होना होगा, चुस्त हुए बिना आप न देख पाएँगे कि सहजयोग आपकी किस प्रकार सहायता कर रहा है।

**प.पू.श्री माताजी, २७.७.१९९४**

........निर्विचार समाधि वह सुन्दर अवस्था है जो आपको प्राप्त करनी है। जीवन को नाटक मानकर भिन्न प्रकार के लोगों को साक्षीभाव से देखते हुए उनका

आनन्द लेने के लिये, यह आपको शान्ति एवं साक्षीभाव प्रदान करेगी।

**५. दोषभाव मुक्ति –**

दोष भाव अनावश्यक है। आपने कोई बुराई नहीं की। स्वयं को दोषी न समझें। आपको पता होना चाहिये कि आप मानव हैं...... **आप परमात्मा तो हैं नहीं, आप त्रुटियाँ कर सकते हैं। तो ठीक है , स्वयं को दोषी समझने की ज़रूरत नहीं, इसका सामना करें और इसे समाप्त करे दें।** पर आप हर समय इस दोष भाव को अपने बाईं ओर लिये घूमते हैं और परिणामत: हृदय–शूल **(Angina)** के शिकार हो जाते हैं। दोष–भाव की हँसुली सभी लोग पहने हुए हैं, उन्हें यदि हम बताते हैं तो इस पर विश्वास नहीं करते, परन्तु यह सच्चाई है।

**प.पू.श्री माताजी, गोआ, १६.२.१९९४**

.....हम सभी सहजयोगी हैं, आखिरकार हम सभी एक आत्मा हैं। आत्मा कभी अपराध नहीं करती। अपराध से हम साक्षी भाव खो देते हैं। हम नहीं सोच सकते कि गलत क्या है और हम अपनी भूलों और गलतियों का सामना नहीं करना चाहते। उदाहरणार्थ कोई आदमी या औरत स्वभाव से बहुत निर्दयी है, वह समझ जाता है कि वह निर्दयी था और वह अपनी निर्दयता को बुरा मान कर त्याग देता है, परन्तु वह इस भावना का सामना नहीं करता। **सामना करने का मतलब है कि वह जाने कि वह निर्दयी क्यों था और उसे निर्दयी नहीं होना चाहिये था और अब वह निर्दयी नहीं बनेगा।** .......आप कभी दोषभाव के शिकार न हों। कोई आपमें दोषभाव भरे, कोई व्यक्ति आपको बुरा कहे तो भी। .......कभी भी अपने को दोषी मत समझें।

**प.पू.श्री माताजी, कबैला, इटली, १५.८.१९९३**

**६. उदारता –**

.....परिपक्व बनने के लिये एक अन्य आवश्यकता है–उदारता द्वारा भौतिक, चीज़ों के मोह से छुटकारा पाना। किसी को कुछ दे देना अच्छी बात है। उदारता आनन्द के लिये है। एक बार जब आप उदारता का आनन्द लेने लगेंगे तो आप जान जायेंगे कि प्रेम और करुणा आपसे दूसरों तक बहने लगे हैं। यह प्रेम और करुणा सभी लोगों तक फैलने चाहियें।

.....आत्म निरीक्षण द्वारा आप नि:सन्देह उदार बन सकते हैं, यह उदारता बहने लगी है। उदार विवेक आपमें तभी आएगा जब आप अपने जीने का लक्ष्य जान

जाएंगे और यह जान जाएंगे कि यहाँ आप किसलिये हैं? मात्र स्वयं को सहजयोग से परिपूर्ण करने के लिये या बिना किसी कर्ताभाव के सहजयोग के लिये कुछ करने की योग्यता पाने के लिये।

**प.पू.श्री माताजी, २४.७.१९९४**

.....'अत्यन्त उदार हो जाना प्रतिसन्तुलन (counter balance) करने का एकमात्र उपाय है। आप यदि अत्यन्त उदार होंगे तो लालच दौड़ जाएगा......अत: आपको उदार होना है, बस, उदार होना है–स्वयं के प्रति नहीं, अन्य लोगों के प्रति। जहाँ तक सम्भव हो उदार बनें। उदारता प्रेमप्रदायक है, यह आपके प्रेम की अभिव्यक्ति है।

**प.पू.श्री माताजी, काना जोहारी, १८.८.२००२**

**७. सहजयोग प्रचार–प्रसार –**

अपनी जागृति एवं आध्यात्मिकता को उन्नत करना और सहजयोग के इस स्वचालित आन्दोलन को पूर्ण सहयोग एवं समर्पण देना अब आवश्यक है। .......आपमें आत्मविश्वास होना चाहिये ताकि निर्भय होकर आप सहजयोग का प्रचार कर सकें।

**प.पू.श्री माताजी, २४.७.१९९४**

**आपको स्वयं पर तथा अपने सभी साथियों, सहजयोगियों पर विश्वास करना होगा। मैंने आपको बताया कि व्यक्तिगत स्तर पर सहजयोग कार्यान्वित नहीं होगा, कोई यदि स्वयं को अन्य लोगों से महान मानता है तो उसका पतन अवश्यम्भावी है।** किसी भी व्यक्ति को केवल अपने लिये सहजयोग का उपयोग नहीं करना चाहिये, सामूहिक रूप से सभी लोगों के लिये आपको कार्य करना चाहिये। ......तभी आप आगे बढ़ेंगे और तभी आपकी शक्ति बढ़ेगी। आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करना ही अन्तिम उद्देश्य नहीं है, इससे बहुत आगे जाना है। .....आपको अब आत्मसाक्षात्कार देना चाहिये। ......ये समझ लेना हम सब लोगों के लिये महत्वपूर्ण है कि हमें सहजयोग को कार्यान्वित करना है और आत्मसाक्षात्कार को अपने अन्दर विकसित होने देना है......इसी प्रकार परिपक्वता अपने अंदर आएगी।

**प.पू.श्री माताजी, १५.१०.१९७९**

.....परिपक्व होने के लिये सर्वप्रथम आपको समझना है कि आप सहजयोगी हैं और यदि आप परमात्मा की शक्ति से जुड़े हुए हैं तो हर समय पूरी स्थिति

को सम्भाल सकते हैं। **.....आपका सर्वव्यापक शक्ति से सम्बन्ध सच्चा, दृढ़ और निष्कपट होना चाहिये तथा अपने मस्तिष्क में हर समय आपको यह ज्ञान होना चाहिये कि आप जुड़े हैं। परमात्मा से अपनी एकाकारिता का आभास यदि हर समय आपको है तो उच्चावस्था प्राप्त करना अत्यन्त साधारण है।**

.....परिपक्वता ये है कि **आपको अपनी शक्तियों का ज्ञान हो।** अपनी शक्तियों को आप सुरक्षित रख सकें। पूर्ण शान्ति में आप उन्नत हो सकें और जब लोगों से मिलें तो अपने अन्दर शक्तियों को धारण कर सकें। एक बार यदि आप सहजयोगी बन गए तो बन गए। तब आपको अपनी गरिमा दिखानी होगी, दुर्बलताओं को ले कर नहीं घूमना होगा।

**प.पू.श्री माताजी, २४.७.१९९४**

परिपक्वता आने पर पूरा व्यक्तित्व और स्वभाव परिवर्तित हो जाता है। पूरी मुखाकृति एवं गतिविधि परिवर्तित हो जाती है। बातचीत करने की शैली स्वत: ही ऐसे परिवर्तित हो जाती है जैसे अन्दर की पूरी मशीनरी ही परिवर्तित हो गयी हो ! आपमें एक वास्तविक सहजयोगी के गुण विकसित हो जाते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ९.१०.१९७४**

# अध्याय २१

# अन्तिम निर्णय

...... **आत्मसाक्षात्कारी** व्यक्ति जब अपने आत्मसाक्षात्कार का मूल्य समझता है, इसमें उन्नत होता है, तब उसकी रक्षा होती है। आप आत्मसाक्षात्कारी हैं, आप सहजयोगी हैं, पूरी तरह से आपकी रक्षा की जाती है। कौन करता है यह रक्षा? आप कह सकते हैं ''आदिशक्ति''। ठीक है। पर इस विश्व में **एक विध्वंसक शक्ति भी कार्यरत है। आसुरी नहीं परन्तु शिव की दिव्य विनाशात्मक शक्ति।** जब वे देखते हैं कि आदिशक्ति का कार्य भली–भाँति चल रहा है तो वे प्रसन्न होते हैं, परन्तु दूर बैठकर हर व्यक्ति को वे देख रहे हैं, सहजयोगियों के सभी कार्यों को वे देख रहे हैं। यदि उन्हें लगता है कि वास्तव में कुछ गड़बड़ है तो मैं उन्हें **नियंत्रित नहीं कर सकती।** वे नष्ट कर देते हैं। वे केवल एक नहीं हज़ारों को नष्ट कर सकते हैं।

.....कहीं भी यदि कोई प्राकृतिक विपत्तियाँ, विपदाएँ हैं जैसे भूचाल, भूकम्प या तूफान आदि, तो हम कह सकते हैं कि यह श्री महादेव का कार्य है। ऐसी स्थिति में मैं आपकी कोई सहायता नहीं कर सकती, परन्तु आप यदि वास्तव में **लोगों कों आत्मसाक्षात्कार दें तो ये चीज़ टाली जा सकती है।**

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ३.६.२००१**

.....मैं आपको बता रही हूँ कि **यह अन्तिम निर्णय है,** और यह अन्तिम निर्णय वास्तव में इस बात का फैसला करेगा कि **किनकी रक्षा की जानी चाहिये और किनको पूर्णतया नष्ट हो जाना चाहिये।** यह अत्यन्त गम्भीर चीज़ है। जिन लोगों को इसके बारे में ज्ञान है उन्हें इसके विषय में सोचना चाहिये। यहाँ–वहाँ थोड़ी बहुत जोड़ा–जाड़ी से काम न होगा। जब तक आप मानव का हृदय परिवर्तन नहीं करते, इसे बचाया नहीं जा सकता।

..... ये आपात स्थितियाँ हैं, आप आपात स्थितियों में रह रहे हैं। इस बात को समझने का प्रयत्न करें और **मैं आपको चेतावनी देना चाहती हूँ–यदि आप अपने अन्तस में गहन नहीं उतरते और ये नहीं देखते कि आप क्या हैं और आप अपने परिवर्तन को नहीं अपनाते तो कुछ भी घटित हो सकता है।**

**प.पू.श्री माताजी, लन्दन, १४.७.२००१**

.....हम अभी तक भी नहीं जानते कि मानव के इतिहास में यह अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा भयानक समय है। अन्तिम निर्णय आरम्भ हो चुका है। आज हम अन्तिम निर्णय का सामना कर रहे हैं। इस बात का हमें ज्ञान नहीं है कि सभी शैतानी शक्तियाँ, **भेड़ की खाल पहने भेड़िये** आपको भ्रमित करने के लिये अवतरित हो गए हैं। आपको चाहिये कि बैठकर केवल सच्चाई को पहचानें।

..... परमात्मा अत्यंत करुणामय हैं, प्रेममय हैं और दयालु हैं–उन्होंने हमें स्वयं का ज्ञान प्राप्त करने की स्वतन्त्रता दी है। ........परमात्मा ने हमें अमीबा से इस मानव स्थिति तक विकसित किया है, चहुँ ओर इतने सुन्दर विश्व का सृजन किया है, ये सभी कार्य किये हैं। **परन्तु उनके निर्णय का अब हमें सामना करना होगा।**

..... आइये परमात्मा के दृष्टिकोण से देखते हैं कि किस प्रकार वे आपका आकलन करेंगे। ये कहना बहुत आसान है कि हम परमात्मा पर विश्वास नहीं करते, परन्तु यदि आप कोई गलत काम करें तो आपको दंड मिलता है और आपको एहसास हो जाता है कि सरकार (परमात्मा) कार्यरत है।

..... **परमात्मा का निर्णय ऐसा नहीं जिस प्रकार हम समझते हैं कि वह एक न्यायाधीश की तरह से बैठा हुआ है, बारी–बारी आपको बुलाता है, वहाँ पर आपका एक वकील है। परमात्मा ने तो आपके अन्दर निर्णायक शक्तियाँ स्थापित कर दी हैं।** मानव की विकास प्रक्रिया में उन्होंने यह सब कार्यान्वित किया है। कितनी सुन्दरता से मानव को अमीबा से मानव अवस्था तक विकसित करते हुए उन्होंने यह कार्य किया। बहुत से पशुओं को विकास प्रक्रिया से निकाल फेंका गया।

..... बहुत ज़्यादा आक्रामक मनुष्यों की नस्लें भी समाप्त होती चली गयीं। इतिहास को आप देख सकते हैं। .......हिटलर जैसा व्यक्ति आया, वह समाप्त हो गया, जो भी दूसरों पर सत्ता जमाने या नियंत्रित करने के लिये आया वह समाप्त हो गया।

..... **तो वास्तव में आकलन शुरु हो चुका है और आपका आकलन करने के लिये परमात्मा ने न्यायाधीशों का एक समूह आपके अन्दर बैठा दिया है।** सभी न्यायाधीश वहाँ बैठे हुए हैं...... आपके मेरुरज्जु तथा आपके मस्तिष्क में बनाए गए चक्रों में ये विद्यमान हैं।

..... इस सबका स्थान दण्डाधिकारियों की तरह है, ये लोग आपके मस्तिष्क में विराजित हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ११.६.१९८०**

## गहनता के आधार पर कुण्डलिनी आपका आकलन करेगी –

.....तो अब आप यह जान लें कि यह आकलन कुण्डलिनी से ही होने वाला है, और क्या? भगवान आपको तराज़ू में डालकर नहीं तोलने वाला, कुण्डलिनी को जागृत करके ही आप का जजमैंट (निर्णय) होना है। वो लास्ट जजमैंट शुरु हो गया है, जो इसमें (सहजयोग में) रुक जायेंगे, उनके लिये कल्कि अवतरण में काँट–छाँट होगी। कोई आपको भाषण नहीं देगा, कोई बात नहीं करेगा। बस एक टुकड़ा इधर या एक टुकड़ा उधर!

**प.पू.श्री माताजी, १०.२.१९८१**

.....परमात्मा आपका आकलन करेंगे, ये आकलन वे आपकी कुण्डलिनी जागृति के माध्यम से करेंगे, अन्यथा वे किस प्रकार आपको जाँच सकते हैं? ......सतही रूप से ये आकलन नहीं होता। (सहजयोग में आपने कितनी गहनता प्राप्त की है, आकलन इसी आधार पर होगा।)

..... आइये देखें कि इस **गहनता में** कहाँ तक जा सकते हैं, ज़्यादा से ज़्यादा उस बिन्दु तक पहुँचते हैं जहाँ पर हम एक बार फिर धारणा बन जाते हैं। अत: जो भी **गहनता हमें प्राप्त हुई है वह केवल तार्किकता तक ही पहुँचती है**, धारणा के बिन्दु तक, उससे आगे हम नहीं जा सकते। तो किस प्रकार हमारा आकलन किया जाये? अब आपकी आध्यात्मिकता (आपकी प्रगति के आधार पर) जाँची जाएगी।

.....एक बीज को किस प्रकार जाँचा जाता है? इसके अंकुरण द्वारा। बीज का जब आप अंकुरण करते हैं और उसकी अंकुरण शक्ति को देखते हैं तब आप जान पाते हैं कि बीज अच्छा है या बुरा। इसी प्रकार जिस तरह से आपका अंकुरण होता है, जिस प्रकार आपको आत्मसाक्षात्कार प्राप्त होता है, जिस प्रकार आप इसे बनाये रखते हैं और इसका सम्मान करते हैं, उसी से आपको जाँचा जाता है। आपको जाँचने का यही तरीका हैं।

.....किस प्रकार के आपने कपड़े पहने हैं, आप कौन से पदों पर आरूढ़ हैं, किस प्रकार के घर आपने बनवाएं हैं या किस प्रकार के नोबल पुरस्कार आपने जीते

हैं, इससे आपका आकलन नहीं किया जाता। लोकहित में आपने कौन से कार्य किये, कितना धन आपने दान दिया है इससे भी नहीं। आपने यदि बहुत अधिक दान दिया है तो किसी न किसी प्रकार से आपके अहम् का कद बढ़ जायेगा और यह आपको आपके स्तर से नीचे ले जाएगा। व्यक्तित्व आकलन का यह बिल्कुल भिन्न तरीका है।

**प.पू.श्री माताजी, १०.१२.१९७९**

.....तो अब आप जान गये हैं कि कुण्डलिनी जागरण ही एक मात्र वह मार्ग है जिसके द्वारा आपको जाँचा जाएगा। अत: हमें कठोर परिश्रम करना है, हमें कार्य करना है। इसको बनाए रखने के लिये, उच्च स्तर पर ले जाने के लिये हमें सत्यनिष्ठा पूर्वक **इसे कार्यान्वित करना होगा।** इसे अधिक से अधिक प्राप्त करने के लिये और अपने अन्दर इसे आत्मसात करने का यही विनम्र दृष्टिकोण है। **अपने मस्तिष्क पर इसे इस प्रकार छा जाने दें कि मस्तिष्क पूर्णतया आच्छादित हो जाए, ढक जाए इस शाश्वत आशीर्वाद को अपने अन्दर आने दे, इसके लिये मैं पूरी तरह उत्सुक हूँ।**

**प.पू.श्री माताजी, जनवरी, १९८४**

.....सहजयोग उत्थान के लिये वरदान है। ऊँचाई की जिस सीमा तक आप पहुँचते हैं, उसका लाभ आपको होना चाहिये, क्योंकि ऊँचाई से यदि आप गिरे तो बहुत गहरे गर्त में जायेंगे। आपको सब आशीर्वाद मिल रहे हैं–सौन्दर्य, प्रेम, आनन्द, ज्ञान, मित्र तथा सब सुविधा। **यदि आप चालाकी कर रहे हैं तो यह सब नहीं रहेगा। आपको फौरन बाहर फेंक दिया जायेगा। हमें समझना है कि देवता अत्यन्त चुस्त हैं, वे आप सबको देख रहे हैं, उन्हें आपकी रक्षा, देखभाल तथा सहायता करनी है।** उन्हें आपका हर कार्य करना है। वही आपके लिये फूलों की रचना करते हैं, आपके लिये सभी अच्छे कार्य वही करेंगे। परन्तु वे मुझसे जुड़े हैं, आपसे नहीं। आप **क्योंकि मेरे बच्चे हैं इसीलिये वे आपकी देखभाल कर रहे हैं, पर ज्योंही आपने दुराचरण किया, आप समाप्त। परन्तु आपकी माँ की करुणा इतनी महान है कि वे सदा क्षमा करने और आपको अवसर प्रदान करने के लिये प्रयत्नशील रहती हैं।** वे सदा इन देवताओं को शान्त रहने के लिये कहती हैं और नि:सन्देह देवता लोग एक सीमा तक **माँ की आज्ञा मानते हैं,** पर यदि आप घिनौने, क्रूर, अपराधी बनकर भी सहजयोग में रहना चाहें तो ऐसा नहीं हो सकता। **सहजयोग दूसरे धर्मों की तरह नहीं है जहाँ आप गलतियाँ करते चले जाते हैं, मनमर्जी करते हैं, हत्या करते हैं और**

**धोखा देते हैं। यहाँ आपको वास्तविकता में सहजयोगी होना पड़ेगा।**

**प.पू.श्री माताजी, जिनेवा, २३.३.१९९०**

..... आपके हृदय में यदि सहजयोग के लिये प्रेम नहीं है, आपके हृदय में यदि **अपनी माँ के लिये प्रेम नहीं है** और आप अपने अन्दर गड़बड़ियाँ करते हैं, व्यर्थ की चीज़ों के पीछे भागते हैं, यदि आप स्वयं को नष्ट करना चाहते हैं तो किसी अन्य क्षेत्र में चले जायें, सहजयोग में न आएँ। सहजयोग में आपको यह जानना होगा कि वास्तव में आपको **समर्पित एवं ईमानदार होना पड़ेगा।**

..... **ये वर्ष अनावरण का है,** अत: बहुत सावधान रहें। इस वर्ष किसी को भी क्षमा नहीं किया जायेगा। .......आप जानते हैं कि कुछ शक्तियाँ भिन्न–भिन्न वर्षों में संचालित होती हैं, **इस बार पोल खोलने वाली शक्ति संचरित होगी। आप चाहे अगुआ हों, न हों, किसी भी प्रकार की बेईमानी यदि आप कर रहे हैं तो आपकी पोल खुल जायेगी और आपको उचित दंड मिलेगा। सहजयोग चाहे आपको दण्डित न करे परन्तु फिर भी बहुत से तरीके हैं जिनके माध्यम से ये शक्ति कार्य करेगी।**

इस शक्ति के कार्य करने का पहला तरीका 'अलक्ष्मी' कहलाता है। अलक्ष्मी अर्थात जब आपको दण्ड मिलेगा तो, आप हैरान होंगे, आप दिवालये हो जाएंगे , आपके पास धन बिल्कुल न रह जाएगा।

..... आप अशुभ कभी न बनें। आप अनावृत हो जाएंगे, हो सकता है कि जेल जाना पड़े ।

..... कहीं आपने यहाँ पर केवल व्यापार आदि जैसा तो नहीं शुरु कर दिया? अत्यन्त खेदजनक बात है।

..... क्या अभी भी आपमें कामुकता एवं लालच है?

..... क्या अभी आपने पुराने प्रलोभन नहीं त्यागे...... क्या अभी भी आप मूर्खतापूर्ण चीज़ों के पीछे भाग रहे हैं?

..... भ्रष्टाचार सहजयोग में भी प्रवेश कर गया है। भ्रष्टाचार यदि सहजयोग में प्रवेश करेगा तो भ्रष्टाचारी एकदम से खोज लिये जायेंगे और दण्डित होंगे। मै उन्हें दण्डित नहीं करूँगी, **उनकी अपनी कुण्डलिनी ही उन्हें दण्डित करेगी।**

..... **हम यहाँ अपराध करने नहीं आए हैं, अपराधियों के रूप में हम अपनी अभिव्यक्ति नहीं करेंगे। हम तो यहाँ यह प्रमाणित करने के लिये हैं कि हम पूर्ण हैं।**

..... **पूर्व संस्कारों के अनुसार हमें नहीं चलना है, अब हम नए साम्राज्य में पहुँच गये हैं, ये एक नया क्षेत्र है जिसमें हम पहुँचे हैं और इसका हमें आनन्द लेना चाहिये।**

..... मैं उन लोगों के लिये चिन्तित हूँ जिन्होंने इस सहजयोग को पतन की ओर खींचा है। उन्हें समझ लेना चाहिये कि मैं सब कुछ जानती हूँ, जब उन्हें हानि पहुँचे तो मुझे दोष न दें। ये बात स्पष्ट है कि वे तो सहजयोग के समीप भी नहीं हैं। सहजयोग तो दिन–प्रतिदिन आपको पावन करता है।

..... आप संसार की दलदल में मत फँसें जहाँ बहुत से लोग खो गए हैं।

**प.पू.श्री माताजी, देहली, २१.३.२००१**

## अपने पतन का कारण आप स्वयं हैं –

**वास्तव** में परमात्मा स्वयं नहीं जानते कि उन्होंने किस प्रकार के मानव की रचना की। मैं आपको बताती हूँ कि जो मूर्खताऐं आपने अपने चहुँ ओर बना ली हैं, उनका ज्ञान परमात्मा को भी नहीं है। अपने अज्ञान्धकार से आपने सभी प्रकार की मूर्खताओं का सृजन कर लिया है। अपने अहंकार से अपने चयन की स्वतन्त्रता से आपने यह सब कर लिया है। .......आप लोग इस अंधकार से इतने एकरूप हैं, ये तो चिपकी हुई मोहर (स्टाम्प) की तरह है जो छूटना ही नहीं चाहती। आत्मसाक्षात्कार के बाद आपने जो कुछ भी ज्ञान पाया वह अपनी चेतना के माध्यम से पाया और अपनी चेतना में ही आपको और भी जानना है परन्तु यह चेतना पूर्ण रूप से ज्योतिर्मय होनी चाहिये। ये बात आप नहीं जानते कि आपको प्राप्त इस चेतना को अभी और उन्नत होना है। **मानवीय चेतना को अभी और भी उन्नत होना है। आत्मसाक्षात्कार के बाद भी उन्नत होने के लिये इस चेतना को बहुत लम्बी यात्रा करनी पड़ती है।**

**प.पू.श्री माताजी, चैतन्य लहरी २००२**

..... लेकिन आप बीच में अटक जाते हैं।

.....अब जब आप चैतन्य लहरियाँ प्राप्त कर लेते हैं तब क्या करते हैं? लोगों की अलग–अलग प्रतिक्रिया होती हैं–

* कुछ लोग इन लहरियों का मूल्य तक नहीं समझते।

* कुछ लोग सीखने की कोशिश करते हैं कि इसका क्या अर्थ है?

* और कुछ लोग तुरन्त सोचने लगते हैं, ''अब तो हम आत्मसाक्षात्कारी हो गये हैं और इसको–उसको आत्मसाक्षात्कार दे सकते हैं।'' **वे अहंकार की सवारी करने लगते हैं और असफल होकर उन्हें वहीं वापस आना पड़ता है जहाँ से शुरु किया था।**

**यहाँ साँप और सीढ़ी के खेल की तरह होता है।** तो चैतन्य लहरियों के प्रति आपकी बहुत ही विनम्र, ग्राही और आदरपूर्ण प्रतिक्रिया होनी चाहिये।

..... बाह्य रूप में, जैसा मैंने आपको बताया, मस्तिष्क में पिता 'सदाशिव' का स्थान है, इसलिए अगर आप पिताके विरुद्ध कोई पाप करते हैं, तो **आगामी नए आयाम** खुलने में समय लगता है। फिर हम पुस्तक पढ़ते हैं और यद्यपि बताया गया है कि **पहले पुस्तक की चैतन्य लहरियाँ देखो, फिर पढ़ो। लेकिन आप कहते हैं हमें अन्य पुस्तकें भी पढ़नी चाहियें तो जैसा मैंने आपको बताया, आप साँप–सीढ़ी के खेल में नीचे गिर जाते हैं। यह भी एक साँप है। आप सोचने लगते हैं–''ध्यान की क्या आवश्यकता हैं?'' मेरे पास समय नहीं है, मुझे यह करना है, वह करना हैं।'' परिणामत: आपकी उन्नति नहीं होती।**

..... एक बात जो आपको जाननी है, जरूर जाननी चाहिये, वह यह है कि इसमें, सहजयोग में–ईमानदार, बहुत ही ईमानदार रहना पड़ेगा।

..... पैसे के मामले में सहजयोग के प्रति आपके कैसे आचरण हैं, यह भी बहुत महत्वपूर्ण बात है, यद्यपि वह बहुत ही स्थूल प्रतीत होती है, लेकिन यह आपकी उन्नति में बहुत समस्या उत्पन्न कर सकती है क्योंकि उसमें नाभि खराब हो जाती है। और जैसा कि आप जानते हैं, अगर नाभि खराब हो गयी तो यह खराबी सारे भवसागर पर व्याप्त हो जाती है और अगर भवसागर खराब हो गया तो एकादश रुद्र की संहार शक्तियाँ, जो भवसागर में हैं, पकड़ी जाती हैं।

..... अगर आप चालाकियाँ करते हैं, या करने की कोशिश भी करते हैं तो आपका नाभि–चक्र क्षतिग्रस्त होता है और आप अपनी चेतना खो बैठते हैं। इसलिये आपको सतर्क रहना है।

..... **देखो! आप जानते हैं कि सहस्रार में ब्रह्मरन्ध्र एक ऐसे बिन्दु पर है जहाँ हृदय चक्र है, अत: यह जानना भी आपके लिये आवश्यक है कि ब्रह्मरन्ध्र का आपके हृदय से सीधा सम्बन्ध है। अगर आप सहजयोग को हृदय से न करके बाह्य रूप में ही करेंगे, तो आप बहुत ऊँचे नहीं उठ सकते। मुख्य बात यह है कि इसमें आपको पूर्ण हृदय देना है।**

..... जैसे कुछ लोग सहजयोग में आते हैं और पीछे बुड़बुड़ाते रहते हैं– ''यह ऐसा होना चाहिये था, वह ऐसा होना चाहिये था''– वगैरह–वगैरह, ऐसे लोगों को ईसा मसीह ने बुड़बुड़ाने वाली जीवात्माएं (Murmuring Souls) कहा है। ऐसे लोग बहुत दुख उठा सकते हैं क्योंकि वे **दोहरा छल कर रहे हैं। प्रभु के साम्राज्य में जब आप प्रवेश करते हैं तो यह दोहरा छल बहुत ही खतरनाक होता है। किसी भी राज्य के, अगर आप नागरिक हैं और आप उसके प्रति विश्वासघात करते हैं, तो आपको दण्ड मिलता है।**

लेकिन प्रभु के साम्राज्य में, यह (आपकी स्थिति) इतनी आनन्दमय है, पूर्णतया आनन्दमय। पूर्ण आशीर्वाद आप पर न्यौछावर कर दिये जाते हैं, पूर्णतया हर सम्पदा–स्वास्थ्य, धन, मानसिक, भावनात्मक सभी प्रकार की सम्पदा आपको सहजयोग में प्राप्त होती है। जब आप इतने आशीर्वादित (लश्रशीीशव) किये जाते हैं तो आपको क्षमा भी प्रदान की जाती है, अनेक बार क्षमा प्रदान की जाती है और आपको बहुत लम्बा अवसर भी प्रदान किया जाता है। किन्तु यदि आप नहीं सम्भलते तो आपका विनाश होता है। **पूर्ण विनाश, आधा नहीं।**

अत: वे लोग जो सोचते हैं कि वे सहजयोग से बेईमानी कर सकते हैं, बहुत सतर्क रहें। कृपया ऐसा न करें – **यह तो आप स्वयं के साथ ही बेईमानी कर रहे हैं !** ......अगर आप अपने प्रति ईमानदार नहीं हैं, या सहजयोग के साथ कपट करते हैं तो आप कष्ट तो भोगते ही हैं, आप अजीब तरह से हास्यास्पद (funny) लगने लगते हैं। ......**इस प्रकार आपकी हास्यास्पद हरकतों से हमें, यानी सहजयोग को बदनामी मिलेगी कि ऐसा कैसे हुआ?** .....भगवान आपकी प्रत्येक बात में रक्षा करते हैं और पूरे चित्त से, पूरी सावधानी से आपकी देखभाल करते हैं।

वे इतना प्रेम करते हैं कि उनकी दया का बखान शब्दों में नहीं किया जा सकता। उसकी केवल अनुभूति ही की जा सकती है और उसे समझा जा सकता है।

अब समस्या यह है कि जो लोग बेईमान होते हैं वे अपने वातावरण एवं पृष्ठभूमि (background) की वजह से, कभी–कभी अपनी शिक्षा की वजह से, अपने पालन–पोषण की वजह से या कायरता की वजह से ऐसा करते हैं। **एक और चीज़ जो आपको बेईमान बना सकती है, वह है आपके पूर्वजन्म के संस्कार और उसी के अनुसार आप जन्म लेते हैं और उसी के अनुसार आपकी कुण्डलिनी की अवस्था होती है।**

लेकिन आत्मसाक्षात्कार के बाद जो लोग महान पुरुषार्थी और संकल्प वाले होते हैं, वे इतनी गति से ऊँचे उठते हैं कि **तारों, ग्रहों, नक्षत्रों आदि की सारी समस्याएँ लुप्त हो जाती हैं और आप 'सहजयोगी' बन जाते हैं। अर्थात एक नवजात, बिल्कुल भिन्न व्यक्तित्व** जिसका अपने विगत जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं होता, जिस प्रकार एक अंडे का सुन्दर पक्षी बन जाना है।

स्वार्थी लोग अपने आपको नुकसान पहुँचा रहे हैं, सहजयोग को नहीं। सहजयोग तो प्रस्थापित होगा ही। उस नौका में यदि दस आदमी ही हों, तो भी ईश्वर को परवाह नहीं। माँ होने की वजह से मैं चाहती हूँ कि इस नौका में अधिकतम लोग आएं। लेकिन एक बार नौका में सवार होने के बाद बेईमानी के काम करके वापस कूदने की कोशिश न करें।

.....तो बहुत सारी छोटी–छोटी बातों से आप सतर्क रहें। इस कृतयुग में आत्मसाक्षात्कार का चरम लक्ष्य प्राप्त करना बहुत ही आसान है........बस सचेत रहें।

**प.पू.श्री माताजी, देहली, ४.२.१९८३**

## हमें साक्षीभाव विकसित करना है –

**......**यह सब खेल है अर्थात हमें इस नाटक का दर्शक बनना है, माया में हमें खो नहीं जाना। आप यदि दर्शक हैं तो माया और इसकी कार्यशैली को देख सकते हैं।

.........साक्षी स्वरूप होकर जब आप चीज़ों को देखते हैं तो लगता हैं कि आप नाटक देख रहे हैं, उस समय आपको लगेगा कि आप अभिनय कर रहे हैं। कुछ समय पश्चात जब खेल समाप्त होगा तो आपको पता चलेगा कि यह खेल है। हमारे मस्तिष्क को चाहिये कि साक्षी बनकर सारी लीला को देखे। इसलिये यह स्थिति प्राप्त करने के लिये तुम्हें निर्विचार समाधि में होना होगा। यह मस्तिष्क तो सोचता चला जाता है, माया की सृष्टि करता है और इसी माया में फँसा रह जाता है। आपको केवल

साक्षी बनना है।

......**हमें साक्षीभाव विकसित करना है। प्रतिक्रिया करने की बुरी आदत हमें पड़ गयी है और ऐसा करना हम अपना अधिकार मान बैठे हैं। आपका यह अधिकार आत्मघातक है। प्रतिक्रिया करना गलत है। साक्षी रूप में आप सभी कुछ देखिए। एक बार जब आप साक्षी रूप से देखने लगेंगे तो आप हैरान होंगे कि आप माया का खेल देखने लगे हैं और इसमें अपना स्थान भी आप देख पायेंगे। वास्तव में हम प्रतिक्रिया तब करते हैं जब हमारी निर्णय शक्ति पूर्णतया नष्ट हो जाती हैं** और हमें मालूम नहीं होता कि इस प्रकार की प्रतिक्रिया करने से क्या खो रहे हैं और क्या पा रहे हैं। इस प्रकार की प्रतिक्रिया हमें पूर्णतया नष्ट कर डालेगी। **अपनी इस शक्ति को अन्तर्मुखी बना लीजिये और स्वयं की आलोचना कीजिये।** प्रतिक्रिया करने के लिये अपने को चेतावनी दीजिये, तभी आप देखेंगे कि आपका अहंकार धीरे–धीरे खत्म होता जा रहा है।

..... कोई प्रतिक्रिया न करते हुए हमें बस चीज़ों को एक नाटक के रूप में देखना है। अपने मन को उलझने मत दीजिये। **जिसे आप मन कहते हैं वह आपकी दृक–तंत्रिका के मध्य भाग में स्थित आज्ञा चक्र है। आप देखते हैं कि यही चक्र आपके मस्तिष्क को बहुत सूक्ष्म रूप से प्रभावित करता है और किस प्रकार आपके अन्दर दूषित चित्र निर्मित करता है। जिन लोगों में बन्धन होते हैं वे लोग मानसिक तौर पर परेशान व भ्रष्ट होते हैं।**

.....मनुष्य प्रतिक्रिया तभी करता है जब उसका परमात्मा से सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है। परमात्मा से जुड़े व्यक्ति को सांसारिक कार्य–कलाप नाटक सम लगते हैं और (वह) सभी कुछ परमात्मा पर छोड़ देता है। आपको प्रतिक्रिया करने की कोई आवश्यकता नहीं।...... यह परम चैतन्य बहुत कार्यकुशल, तीक्ष्ण तथा सर्वव्यापक है– यह आपके पास आता है, आपका मान करता है क्योंकि आप सहजयोगी हैं। **यह प्रतिक्रिया विहीन दृष्टिकोण आपकी संतुलित आज्ञा से आना चाहिये, क्रोध या मौन से नहीं।**

**प.पू.श्री माताजी, न्यू जर्सी, २.४.१९९४**

हर चीज़ को आप लीला रूप में देखें। साक्षी भाव से जब आप हर चीज़ को देखेंगे तो हर समस्या को बड़े सुन्दर ढंग से सुलझा पायेंगे। बिना बोले, बिना कुछ

कहे, **साक्षी अवस्था में आप अति शक्तिशाली हो जाते हैं।** मेरे कहने का अभिप्राय है कि साक्षी अवस्था में आप सहज ही विभिन्न समस्याओं को हल कर सकते हैं।

**प.पू.श्री माताजी, २३.२.१९९२**

– निर्विचार समाधि प्राप्त करके ध्यान–धारणा द्वारा ही साक्षी अवस्था प्राप्त करना सम्भव है। ये दोनों स्थितियाँ एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं। साक्षी अवस्था में व्यक्ति प्रतिक्रिया नहीं करता। प्रतिक्रिया करते ही समस्या आरम्भ हो जाती है। ये समझना अत्यन्त सुगम है कि अहं या बन्धनों के कारण हम प्रतिक्रिया करते हैं। ......एक प्रतिक्रिया से दूसरी प्रतिक्रिया की ओर हम बढ़ते चले जाते हैं। .......ये बन्धन भी हमारे अन्तर्रचित हैं और इनके कारण आई हुई समस्याएं वास्तव में भयावह हैं....... पर आप तो मानव हैं, आपमें मानवीय गुण भी (अन्तर्जात) हैं, यह (गुण उभरना) तभी सम्भव है जब आप, प्रतिक्रिया किये बिना, केवल साक्षी बन जायें।

**..... साक्षी अवस्था मानसिक स्थिति नहीं है, यह तो आध्यात्मिक उत्थान की अवस्था है जिसमें आप साक्षी बन जाते हैं।**

..... साक्षी अवस्था में बने रहने का सर्वोत्तम तरीका ये है कि आप किसी की आलोचना बिल्कुल न करें। .....किसी अन्य व्यक्ति या चीज़ की आलोचना करना आपका अधिकार नहीं है। परन्तु कुछ लोग समझते हैं कि यदि वे आलोचना नहीं करेंगे तो चीज़ें ऐसे ही चलती रहेंगी, कभी सुधरेंगी नहीं। वास्तविकता ये नहीं है।

**आपका चित्त अब प्रकाशित है , प्रकाशित चित्त से जब आप चीज़ों को देखेंगे तो सभी बुराईयों में सुधार होगा। .......साक्षी भाव से चीज़ों को उनकी वास्तविक स्थिति में देखने भर से आपमें एक उच्च स्थिति विकसित हो जाती है।**

साक्षी अवस्था में रहने वाले ऐसे सब लोगों में बहुत दिलचस्प परिवर्तन होते हैं। उनकी स्मरण शक्ति का ह्रास बहुत कम हो जाता है क्योंकि जो भी चीज़ वो देखते हैं उसकी तस्वीर उनके मस्तिष्क में बन जाती है। वे आपको हर देखी हुई चीज़ का रंग और उसकी बारीकियाँ बता सकते हैं। ........सहजयोगी होने के नाते हमें क्या करना चाहिये? हमें बिल्कुल भी प्रतिक्रिया नहीं करनी चाहिये। कोई गलत चीज़ भी यदि आपको दिखाई दे तो ठीक है, आप बस इस पर ध्यान करें। कोई गलत कार्य होता हुआ यदि आप देखें तो इस पर चित्त दें। **कोई यदि आपकेप्रति क्रूर हो तो उस क्षण प्रतिक्रिया न करें,** जब वह शांत हो जाए तब आप उसे बतायें। शनै:शनै: आप उसे

उसकी गलती का अहसास करवा पायेंगे और उनका हृदय जीत सकेंगे। ........किसी भी चीज़ के प्रति प्रतिक्रिया करना मूर्खता है और आत्मघातक भी ।

..... व्यक्ति को स्वीकार करना चाहिये कि जैसे भी आप हैं ठीक हैं। आप दूसरे व्यक्ति सम क्यों लगना चाहते हैं? इस प्रकार की प्रतिक्रिया बिल्कुल मूर्खतापूर्ण है। ........एक बार जब आप बाह्य चीज़ों के प्रति प्रतिक्रिया करना बंद कर देंगे तो अन्तस में प्रतिक्रिया होगी और इससे अन्तर्दर्शन आरम्भ होगा।

..... व्यक्ति को ये चिंता भी नहीं करनी चाहिये कि लोगों की प्रतिक्रिया क्या है? वे उसके विषय में क्या सोचते हैं और क्या कहते हैं? अन्तर्दर्शन द्वारा स्वयं आपको ये सब देखना चाहिये, कुछ समय बाद आपको अन्तर्दर्शन की भी आवश्यकता नहीं रहेगी।

..... अत: साक्षित्व की ये शक्ति आपको अपने अन्दर विकसित करना चाहिये, इसे विकसित करें। किसी चीज़ के लिये जब आप प्रतिक्रिया करने लगें तो प्रतिक्रिया को रोक लें। सभी प्रकार की प्रतिक्रिया समाप्त कर दें तथा तब आप हैरान होंगे, स्वयं को बहुत शक्तिशाली पायेंगे क्योंकि **आप में न तो आकांक्षाएं होंगी, और न ही कोई विशेष लगाव। कुछ भी नहीं, साक्षी रूप से आप नाटक देख रहे होंगे।**

साक्षी रूप से देखना भी अत्यन्त दिलचस्प है, तब आप हर चीज़ के पीछे विनोद एवं मूर्खता को देख सकेंगे, आप समझ सकेंगे कि लोग किस प्रकार उग्र हैं और आप उन पर हँसेगे। बिना परेशान हुए, बिना उत्तेजित हुए इस नाटक पर आप हँसेगे।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, १६.८.१९९८**

– प्रतिक्रिया करना मानवीय स्वभाव है, पूर्णतया मानवीय, परन्तु आपने यदि अति मानवीय बनना है तो आपको प्रतिक्रिया नहीं करनी चाहिये। प्रतिक्रिया न करने से आप उन्नत होंगे, निश्चित रूप से उन्नत होंगे, परन्तु यदि आप प्रतिक्रिया करते हैं तो उन्नत नहीं हो सकते क्योंकि आप किसी ऐसी चीज़ के दबाव में कार्य कर रहे होते हैं जो आपकी आत्मा नहीं हो सकती।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २७.९.१९९८**

## सन्तुलन की आवश्यकता –

हमने सहज में शक्ति प्राप्त की लेकिन अब हमें किस तरह बढ़ना चाहिये? बहुत से लोग सहजयोग के प्रचार के लिये बहुत कार्य करते हैं जिसे हम कहें पृथ्वी से

समानान्तर चारों ओर फैलता हुआ। वे लोग अपनी ओर नज़र नहीं करते, वे उत्थान की गति को नहीं प्राप्त करते। बाह्य में वे बहुत काम करेंगे, कार्यान्वित होंगे, लेकिन अन्दर की शक्ति को नहीं बढ़ाते। बहुत से लोग हैं जो अन्दर की शक्ति की ओर बहुत ध्यान देते हैं लेकिन बाह्य शक्ति की ओर नहीं। अत: उनमें सन्तुलन नहीं आ पाता। **जब लोग बाह्य की शक्ति की ओर बढ़ने लग जाते हैं तो अन्दर की शक्ति क्षीण हो जाती है। शक्ति क्षीण होने के कारण वे ऐसे कगार पर पहुँच जाते हैं कि फौरन अहंकार में ही डूबने लगते हैं।**

..... ऐसे आदमी एक तरफ़ को ही जाते हैं, वो दूसरों से सम्बन्ध नहीं रख पाते, उनका सम्बन्ध केवल इतना ही होता है कि हम किस तरह से रोब झाड़ें दूसरों पर। अपना ही महत्व, अपनी ही डींग मारना, हम इतने बड़े हैं, हमने ये किया, हम ये करेंगे। तब फिर चैतन्य कहता है कि अच्छा तुझे जो करना है कर, तुझे अपने को मिटाना है तो मिटा ले, वो आपको रोकेगा नहीं, क्योंकि वो आपकी स्वतन्त्रता को मानता है। **आप स्वर्ग जाना चाहें तो उसकी भी व्यवस्था है और नर्क जाना चाहें तो उसकी भी व्यवस्था है।**

..... हम सब एक सामूहिक विराट शक्ति हैं। हम अकेले–अकेले नहीं हैं, सब एक ही शरीर के अंग–प्रत्यंग हैं लेकिन अपने को ही विशेष समझना, अपने को ही महत्व देना, आप एक नाखून की तरह कट कर फिक जायेंगे।

..... अब दूसरे लोग भी हैं जो सिर्फ अपनी ही प्रगति की सोचते हैं कि हमें दूसरों से क्या मतलब। हम अपने कमरे में बैठकर माँ की पूजा करते हैं, और चाहते हैं हमारी उन्नति हो जाये, हमें दुनियाँ से कोई मतलब नहीं........ ऐसे लोग भी बढ़ नहीं सकते क्योंकि आप एक ही शरीर के अंग–प्रत्यंग हैं। समझ लीजिये एक उँगली ने अपने आप को बाँध लिया और कहे कि नहीं अन्य किसी से कोई मतलब नहीं मेरा, मैं अलग से रहूँगी। ये तो उँगली मर जायेगी क्योंकि इसमें नस कैसे चलेगी, इसमें चेतना का संचार कैसे होगा? ये तो कटी हुई रहेगी।

.....आप एक बार उँगली को पाँच दिन बाँधे रखिये, किसी काम की नहीं रह जायेगी, फिर आप कहेंगे ''माँ, मैं तो तेरी इतनी पूजा करता हूँ, मैं तो इतने मन्त्र बोलता हूँ, मैं तो इतना कार्य करता हूँ फिर मेरा ऐसा हाल क्यों?'' क्योंकि आप विघटित हैं, उस सामूहिक शक्ति से जहाँ आप हट गए वहीं आप अलग हो गए। **सो दोनों ही चीज़ की तरफ ध्यान देना है कि हम अपनी शक्ति को भी सम्भालें और**

**सामूहिकता में रचते जायें, तभी आपके अन्दर पूरा सन्तुलन आएगा।**

**प.पू.श्री माताजी, ३०.९.१९९०**

..... हर समय आपको सन्तुलन बनाये रखना है, इसके लिये यह समझ लेना आवश्यक है कि आप चीज़ों की अति में न जायें। अति में जाना मानवीय गुण है, उदाहरण के लिये यदि आप तर्कसंगत हैं तो हर चीज़ को तर्कसंगत ठहराते चले जाते हैं – मैं ऐसा नहीं कर सकता, मैं वैसा नहीं कर सकता'' ये ही होता रहता है। इसका दूसरा पक्ष ये है कि आप इतने भावुक हो जाते हैं कि भावनात्मकता के नाम पर गलत काम करने लगते हैं। स्वयं पर दृष्टि रखें। आप यदि अति में जाते हैं तो कुछ भी कार्यान्वित न होगा। ..........सन्तुलन में रहें ........मध्य में रहें।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला १.८.१९९८**

.....कोई अति (Extreme) करने की ज़रूरत नहीं है। मध्य में आने की कोशिश कीजिये जहाँ से (मध्य बिन्दु से) आप पूरी परिधि पर देख सकते हैं। अगर आप मध्य बिन्दु से हटकर दाँये या बाँये चले गये तो सारा ही बैलेंस खत्म हो जायेगा। .........समझ लीजिये कोई आदमी बहुत सोचता है, वह राइट साइड है तो थोड़ा अपने को लेफ्ट साइड में ले जाना चाहिये। लेफ्ट साइड यानी आप भावुकता में बढ़ गये तो उसे चाहिये कि अपने को सन्तुलन में रखें।

**प.पू.श्री माताजी, देहली ७.५.१९८३**

..... हमें स्वयं पर नियन्त्रण नहीं है, जिस तरह से हमारा मस्तिष्क बताता है हम वही बात मान लेते हैं। न हमारे अन्दर मानसिक सन्तुलन है और न ही हमारी शारीरिक आवश्यकतायें सन्तुलित है। किसी भी प्रकार का सन्तुलन नहीं है। जैसा हम ठीक समझते हैं बिना सोचे समझे किए चले जाते हैं। यह विवेकशीलता नहीं है।

**प.पू.श्री माताजी, २२.४.२००१**

..... सन्तुलन में रहना ही एकमेव तरीका है वृद्धि का, अन्य कोई तरीका है ही नहीं। सहजयोग ऐसी प्रणाली है जिसमें आने से सारे दोष जो हैं वो खत्म होने लग जाते हैं और जब वो खत्म होने लग जाते हैं, जब आपके दोष खत्म होने लग जायें तो समझ लेना चाहिये कि आपने बड़ी भारी चीज़ हासिल कर ली। जब तक आपके अन्दर वही दोष बने हुए हैं और आप उन्हीं चीज़ों में उसी प्रकार लगे हुए हैं, दूसरों से झगड़ रहे हैं, जूझ रहे हैं, तो आपको समझ लेना चाहिये कि आप मध्य में नहीं हैं, आप सन्तुलन में नहीं हैं, क्योंकि आप जब मध्य में आ जायेंगे (बीचोंबीच सन्तुलन में) तो

आप किसी भी एक चीज़ में लिपट नहीं सकते, आप सब में समाये रहते हैं, जब तक आप एक चीज़ में लिपटे हैं तो समझ लेना चाहिये आप मध्य में नहीं हैं। आपमें सन्तुलन नहीं है।

..... हम लोगों में पकड़ इसीलिये आती है कि हम अति (extremes) पर चले जाते हैं और अपनी आदतें नहीं बदलते। हर बार हम अति पर चले जाते हैं या किसी न किसी extremes पर रहते हैं। **अति अक्लमंद किसी काम का नहीं, मन्दबुद्धि भी किसी काम का नहीं है। बीचोंबीच (सन्तुलन में) रहना चाहिये। परमात्मा की जो बुद्धि है, वो बीचोबीच है, उसी की बुद्धि में समाकर रहना चाहिये।**

..... सहजयोग में जमने के लिये हमें हमेशा मध्यमार्ग में रहना चाहिये। एक पेड़ की जो मध्य शाखा है, या मध्य में जो चीज़ चलती है, जो उसका पानी का प्रवाह है, जिसको sap कहना चाहिये, वो बीचोंबीच चलता है। एक तरफ ज़्यादा झुकता नहीं, न दूसरी तरफ झुकता हैं। अगर उसने झुकना शुरु कर दिया तो उसकी ठीक से बढ़ोतरी (ग्रोथ) नहीं होती, वह बढ़ नहीं सकता, पनप नहीं सकता। इसीलिये ये जरूरी है कि इन्सान को जहाँ तक हो सके मध्य में रहना चाहिये। ........सन्तुलन में रहना चाहिये।

**प.पू.श्री माताजी, नई दिल्ली, १७.४.१९८१**

..... हमें देखना है कि हमारे साथ अहं और प्रतिअहं की समस्याएँ हैं। प्रतिअहं, बायीं ओर की बाधाओं से ग्रस्त लोगों को सन्तुलन में आने के लिये भविष्य के बारे में सोचना चाहिये। आलसी व्यक्ति को चाहिये कि काम करने की आदत डाले। अपने मस्तिष्क को भविष्य की योजनाओं को बनाने में लगा दे कि क्या करूँ? इस प्रकार बाईं ओर के खिंचाव से बचकर शनै:शनै: आप स्वयं को सन्तुलित कर पायेंगे।

.....किसी व्यक्ति की दायीं ओर यदि अधिक गतिशील हो उठे तो तामसिकता द्वारा सन्तुलन नहीं करना चाहिये, मध्य का इस्तेमाल करना चाहिये। ........अत: बायीं ओर की समस्याओं का समाधान दायीं ओर को गतिशील करके होता है और दायीं ओर की समस्याओं का समाधान मध्य में स्थापित होने से। बायीं ओर तमोगुण है, दायीं ओर रजोगुण और मध्य में सत्व गुण।

**प.पू.श्री माताजी, १७.५.१९८०**

## अध्याय २१अ

# उत्क्रान्ति का मध्य मार्ग

**बहुत** से महान गुरु पृथ्वी पर 'सत्य' के विषय में बताने के लिये अवतरित हुए, बहुत से गुरु अवतरित हुए और अपने–अपने स्तर पर मानव को समझाने का जी जान से प्रयत्न किया कि आध्यात्मिकता क्या है, परन्तु इतनी विषमता है कि लोग इस बात को कभी भी नहीं समझे कि आध्यात्मिकता हमारे लिये अत्यन्त आवश्यक है तथा हमें परमात्मा से, उनके प्रेम की सर्वव्यापी शक्ति से एकाकारिता प्राप्त करनी है।

उन्होंने अपने सारे प्रयत्न गलत दिशा में ही किये। नि:सन्देह मानव बहुत अधिक बुद्धिमान था । ......उसने खोज आरम्भ कर दी, पर 'सत्य' की नहीं, एक प्रकार से अपनी मुक्ति की खोज – या मेरी समझ में नहीं आता क्या कहूँ – अपनी उन्नति की खोज, और इस दिशा में वे भूल गए कि सर्वप्रथम उन्हें **आध्यात्मिकता की खोज करनी होगी** क्योंकि आध्यात्मिकता ही महत्वपूर्ण है।

हमारे सम्मुख दो प्रकार की यात्राएं थीं, एक बायीं ओर से और एक दायीं ओर से। भारत में न जाने क्यों लोग जंगलों में चले गए और संत बन गए, वे लोग दाँयी ओर की तपस्या कर रहे थे अर्थात एक के बाद एक पंचतत्वों में पैंठना और पंचतत्वों पर स्वामित्व प्राप्त करना।

..... सभी तत्वों की आन्तरिक चेतना के विषय में वो जानते थे और इन्ही कारणों से वे इसकी पूजा करते थे। पूजा से पूर्व इन तत्वों का आह्वान किया जाता था कि **वे पूजा के साक्षी बनें।** पर यह सब दाईं ओर की गतिविधि बन गयी यानी केवल कर्मकाण्ड। बाईं ओर के बिना दायां पक्ष अत्यन्त भयानक होता है। आपमें यदि दायां पक्ष (कार्यान्वित शक्ति) नहीं है तो भी यह अत्यन्त भयानक बात है। परन्तु सर्वप्रथम आपको अपने बायें पक्ष (भक्ति पक्ष) को विकसित करना होगा। **आरम्भ में सहजयोग में हमने यही किया।**

**..... करुणा, प्रेम और सबके लिए सौहार्द्रभाव ही बायां पक्ष (भाव पक्ष) है।** हम इतना ही कह सकते हैं कि देवी का यह आशीर्वाद है जिसका वर्णन देवी महात्म्य में किया गया है। देवी आपके अन्दर भिन्न रूपों में विराजमान हैं। बायीं ओर

की बहुत सी चीज़ें हैं। **........जब मैंने आपको सहजयोग के विषय में बताया था तो मैं आपके बायें पक्ष को बहुत दृढ़ करना चाहती थी।**

..... जिन लोगों ने दाँये पक्ष अपनाए वो अत्यन्त आक्रामक हो गए और उन्होंने पंचतत्वों के सार पर स्वामित्व प्राप्त कर लिया। यहाँ तक तो ठीक था, पर वे लोग अत्यन्त क्रोधी स्वभाव के हो गए, इतने क्रोधी स्वभाव के कि वे लोगों को शापित करने लगे। अत्यन्त कठोर बातें वे कहते तथा सर्वव्यापकता पर वे विश्वास न करते।

..... **जो लोग आक्रामक हैं, भक्ति बिना जो दाँयी ओर का मार्ग पकड़ते हैं, परमात्मा के आशीर्वाद के बिना जो चलते हैं वे वास्तव में राक्षस बन सकते हैं और मानवता के लिये बहुत बड़ा खतरा बन सकते हैं। यह बहुत बहुत गम्भीर चीज़ है।**

..... **आक्रामकता द्वारा आपका उत्थान नहीं होता।** कहते हैं आप बहुत बड़े तपस्वी बन सकते हैं, जो दूसरों को शाप दे सकें, उन्हें कष्टों में डाल सकें और सोचें कि यह बहुत बड़ी शक्ति है। यह बहुत बड़ी शक्ति नहीं है, ऐसा बिल्कुल भी नहीं है, क्योंकि आप अन्य शक्तियों, नकारात्मक शक्तियों द्वारा दबे हुए नहीं होते। आपकी अपनी शक्ति ही आपका जीवन ले लेती है।

**..... अत: कुण्डलिनी जब उठ जाए तो सर्वोत्तम मार्ग भक्ति की ओर चले जाना है, बिना दूसरों की आलोचना किये, बिना उनकी बुराई किये, परन्तु अपने अन्दर अवलोकन करते हुए कि मुझमें क्या कमी है, यह खोजने का प्रयत्न करें कि आपका क्या आदर्श है।**

..... मैं कहूँगी आपने बायें पक्ष पर स्वामित्व पा लिया है, आपमें कुण्डलिनी जागृत भी हो गयी है, परमात्मा से आपकी एकाकारिता है, अब आप दाईं ओर गतिशीलता की ओर आ सकते हैं और **इस पक्ष के विषय में जान सकते हैं,** इसकी अभिव्यक्ति करने का प्रयत्न कर सकते हैं। **अन्य लोगों पर स्वामित्व जमा कर आप इसकी अभिव्यक्ति नहीं करे, स्वयं पर स्वामित्व पाकर भी आप ऐसा कर सकते हैं।** आत्मनिरीक्षण द्वारा और अपने दोषों को देखने से भी आप ऐसा कर सकते हैं। .......आपमें यदि प्रेम है, आपमें यदि भक्ति है तो एक भिन्न तरीके से अन्य लोगों पर प्रभुत्व बनाए रख सकते हैं .........आप प्रभुत्व जमाना ही नहीं चाहेंगे क्योंकि प्रेम, उदारता और विशाल हृदय के सम्मुख लोग स्वत: ही झुक जाते हैं।

..... आध्यात्मिक व्यक्तियों से आशा की जाती है कि वह अत्यन्त विनम्र हों।

........करुणामय, सुहृदय तथा प्रेममय होना ही प्रसन्नता प्राप्ति के लिये सर्वोत्तम उपाय है।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २१.७.२००२**

.....अपनी कठोर तपस्या द्वारा भारत के साधुओं ने दाईं ओर की शक्तियाँ प्राप्त कर लीं। दाईं ओर की सभी शक्तियाँ उनके पास थीं परन्तु दाईं ओर की इन शक्तियों के साथ वे कहाँ पहुँचे? मुझे कहना चाहिये कि वे नर्क में पहुँच गये, वहाँ किसी को भी आत्म–साक्षात्कार नहीं मिला।

..... अत: पहला कार्य जो मैंने किया, वह था कि कुण्डलिनी उठाने के काबिल हो सकूं। मैं जानती थी कि मैं इसी कार्य के लिये आयी हूँ, केवल लोगों की कुण्डलिनी उठाने के लिये ताकि **वे मध्य मार्ग पर आ जाएं, न दायें को जायें और न बायें को। परन्तु मैंने पहले आपको केवल बाईं ओर का ज्ञान तथा कुण्डलिनी उठाने के विषय में बताया।** कुण्डलिनी के माध्यम से आपने सहस्रार भेदन किया और आप वास्तविकता के सच्चे आनन्द के क्षेत्र में प्रवेश कर गये। आपके सभी दुर्गुण समाप्त होने लगे।

**मध्य मार्ग पर सर्वप्रथम मूलाधार आया। मध्य मार्ग पर मूलाधार जागृत कर लेने से आप लोग अत्यन्त पवित्र हो गए, आपमें वासना समाप्त हो गयी, आपका छिछलापन चला गया और आप अत्यन्त पावन व्यक्ति बन गए। जब तक ऐसा नहीं हो जाता आप सहजयोग में नहीं रह सकते।**

अत: पहली चीज ये है कि आप अपने अन्दर पावित्र्य– विवेक (Sense of Chastity) विकसित करें। उसका सम्मान करें और उसका आनन्द लें। आपके मूलाधार जागृत होने के पश्चात् ही यह घटित हो पाया है। बाईं ओर का यह पहला चक्र हैं जहाँ आपके अन्दर श्री गणेश विराजमान हैं।

परन्तु दाईं ओर को भी हमारे अन्दर देवी–देवता विद्यमान हैं। कमियों को दूर करने के लिए हर चक्र पर देवता विराजमान हैं। **श्री गणेश क्योंकि मध्य में हैं इसीलिए हमें उनके शक्तिशाली पावित्र्य का आशिष प्राप्त हुआ और हम पावनता के सौन्दर्य, पावनता की शक्ति को समझने लगे। इस प्रकार से हमने अपने दाईं ओर के दोषों को समाप्त किया।** दाईं ओर युद्ध करने के लिए, हत्या के लिए और क्रोध के लिए थी। इन लोगों के लिए शान्ति न थी। ये केवल इतना ही जानते थे कि किस प्रकार लोगों पर रौब जमाना है और किस प्रकार असहिष्णु होना है।

इस प्रकार वे स्वाधिष्ठान के उच्चतम स्तर तक गए। स्वाधिष्ठान में ऊँचा उठने के

कारण सृजनात्मक लोगों में सृजन करने की आक्रामकता जाग उठी–यश अर्जन करने के लिए सभी प्रकार की अटपटी और गन्दी चीज़ों का सृजन करने की आक्रामकता।

तो ये एक अन्य चीज़ है जो हमें स्वाधिष्ठान से प्राप्त हुई। उन लोगों को जो नाम कमाना चाहते थे या पद हासिल करना चाहते थे उन्हे ये चीज़ दायें स्वाधिष्ठान से प्राप्त हुई।

नाभि चक्र तीसरा चक्र है। इस चक्र पर लोग धन कमाने के लिए निकल पड़े, लक्ष्मी नहीं, धन कमाने के लिए, किसी भी प्रकार से धन कमाने के लिए निकल पड़े। उन्होंने पूरे विश्व को धोखा दिया। जो धन उन्होंने इस प्रकार एकत्र किया उससे सभी प्रकार के दुष्कर्म किए। या तो उन्होंने धोखाधड़ी की या वे आक्रामक हो गए। भारत जैसे बाईं ओर के देशों में धोखाधड़ी बहुत थी और दाईं ओर के देशों में आक्रामकता थी।

मध्य स्वाधिष्ठान पर जब हम होते हैं तब हमारे अन्दर सृजनात्मकता होती हैं – अत्यन्त सुन्दर, अत्यन्त गहनता पूर्ण आध्यात्मिक कला का सृजन। ये सारे गुण समाप्त हो गए और लोग अवतरणों को भी बुरी आदतों से पूर्ण दर्शाने लगे। इस उन्नति के साथ सभी प्रकार की गन्दगी भी आई।

इसके बाद जैसा मैंने आपको बताया नाभि चक्र है। नाभि चक्र पर लोग धन के पीछे पड़ गए। बाईं ओर के लोग धन बना रहे थे और दाईं ओर के धन के कारण आक्रामक हो गए थे। धन कमाने वाले लोगों ने सोचा कि वे विश्व के शिखर पर हैं। जिसने धन प्राप्त कर लिया वह सोचने लगा कि मुझसे श्रेष्ठ कोई भी नहीं है। इस तरह की सोच ने उन्हें समाप्त कर दिया। यह सोच उन्हें समाप्त कर रही है और उन्हें उस बिन्दु तक ले जाएगी जहाँ वे इस बात को समझ सकेंगे कि धन विनाश के लिए नहीं हैं। धन तो निर्माण के लिए है, देश के निर्माण के लिए, मानव में शान्ति, प्रेम, सहयोग तथा सभी प्रकार के अच्छे गुणों के निर्माण के लिए।

तत्पश्चात् यही आक्रामक लोग माँ के चक्र पर आए और यहाँ तो माताएँ भी भयानक थीं जिन्होंने अपने बच्चों पर तथा अन्य सभी लोगों पर रौब जमाने का प्रयत्न किया। अपने बच्चों पर वे कुछ भी बलिदान न कर सकीं। हमारे यहाँ बहुत सी महिलाएं आईं जो अपने पतियों और बच्चों के प्रति बहुत आक्रामक थीं। यहाँ तक कि पुरुषों में भी पितृत्व भाव मृत होकर समाप्त हो गया है।.........यह हृदय चक्र था।

**तत्पश्चात् सामूहिकता का चक्र आया उसे विशुद्धि चक्र कहते हैं। विशुद्धि चक्र पर लोगों ने पूरे विश्व पर कब्ज़ा करना चाहा। पूरे विश्व को उन्होंने**

**अपना साम्राज्य बनाना चाहा ताकि वे सम्राट बन सकें।** उन्होंने साम्राज्य बनाए और इस प्रकार से अमानवीय व्यवहार किए जो कर पाना मानव के लिए असम्भव है। मैं कहना चाहूँगी कि ये लोग वास्तव में राक्षस हैं। ये राक्षसी गुण आज भी बने हुए हैं। इन लोगों के आचरण से और सारे कार–व्यवहार से आप देख सकते हैं कि ये किस प्रकार अन्य लोगों से व्यवहार करते हैं, उनसे किस प्रकार का आचरण करते हैं और ऐसे लोगों का सृजन करते हैं जो आक्रामक हैं और आध्यात्मिकता विरोधी हैं। इन लोगों के कारण यह विश्व दोतरफा बन गया जिसमें ऐसे लोग हैं जो आक्रामक हैं और दूसरों को कष्ट देते हैं। यह दोतरफा विश्व आज भी है, परन्तु बहुत कम है। इसका श्रेय सामूहिक सूझ–बूझ को जाता है। बहुत सी अच्छी संस्थाओं की स्थापना की गई परन्तु वे भी कुछ विशेष कार्य नहीं कर रही हैं। लक्ष्य प्राप्ति में वे कुछ खास सफ़ल नहीं हैं क्योंकि इनके उच्च पदारूढ़ लोग ही सभी कुछ नियंत्रित कर रहे हैं। परन्तु नियंत्रण किसका? **वो स्वयं को नियंत्रित नहीं करते अन्य लोगों को नियंत्रित करते हैं। उनके आचरण ने इस चक्र के सारे कार्य को ही बिगाड़ दिया है।**

## सन्तुलन में रहते हुए सहज का प्रचार–प्रसार होना चहिए –

अपने आप यदि सामूहिक रूप से आप चहुँ ओर देखें तो सर्वत्र युद्ध हो रहे है, लड़ाईयाँ हो रही हैं, मार काट हो रही है और विनाश हो रहा है। यह कैसे हो सकता हैं? इस विश्व में अब बहुत से आध्यात्मिक लोग हैं। कारण ये है कि आध्यात्मिक लोग अत्यन्त मौन हो गए हैं और अपने आध्यात्मिक जीवन का भरपूर आनन्द ले रहे हैं। ये अत्यन्त निश्चेष्ट एवं शान्त हो गए है परन्तु इस प्रकार से शान्ति नहीं आ सकती। **आपको गतिशील होना होगा और इस विश्व में शान्ति लानी होगी। इसके लिए आपको कुछ न कुछ करना होगा।** अपनी उन्नति से हम लोग बहुत संतुष्ट हैं परन्तु हमें यह देखने की चिन्ता नहीं है कि अन्य लोगों ने क्या उन्नति की है, वे कहाँ तक पहुँचे हैं, हम उनसे कहाँ मिल सकते हैं और किस प्रकार उन्हे परिवर्तित कर सकते हैं? अपने स्तर पर मैं बहुत सी चीज़ें परिवर्तित कर सकती हूँ, परन्तु आप लोगों ने अपने स्तर पर कितने लोगों को परिवर्तित किया है? आपने क्या किया है? ये बात देखी जानी है। अभी भी आप आज्ञा पर अपने अहंकार में रहते हैं और अपनी ही शान्ति से अत्यन्त प्रसन्न हैं।

**आज यह सबसे बड़ी विपत्ति है जिसका सामना आज यह विश्व कर रहा**

**है कि जो लोग आध्यात्मिक भी हैं और जिन्होंने महान बुलन्दियाँ प्राप्त कर ली हैं उन्हें तनिक सी भी चिन्ता नहीं है कि क्या किया जाना चाहिए। अपनी आध्यात्मिकता का आनन्द लेने के लिए वे लोग पूजाओं में आते हैं अधिक से अधिक आध्यात्मिकता प्राप्त करते हैं। परन्तु अन्य लोगों को परिवर्तित करने के लिए उन्होंने कोई सामूहिक कार्य नहीं किया।** कुछ लोग, एक दो लोग कार्य कर रहे हैं, बस। बाकी सब मज़े में हैं और इस प्रकार से आनन्द उठा रहे हैं कि लोग उन्हें महान आत्माएं और अच्छे लोग मानते हैं।

**मैं चाहूँगी कि आप लोग अन्तर्वलोकन करके देखें कि आपने कितना सामूहिक कार्य किया है। आप कितने लोगों को लाये हैं। किसके साथ आप बातचीत करते हैं, कितने लोगों को आपने सहजयोग के विषय में बताया है?** केवल इतने से लोग यहाँ हैं। ईसा–मसीह के केवल बारह शिष्य थे, वे आप सबसे कहीं अधिक गतिशील (डाइनेमिक) थे।

अत: अब आप लोग दाईं ओर (क्रियाशक्ति) का उपयोग करें। जब आप लोग दाईं ओर का उपयोग करेंगे तो प्रगतिशील लोगों का सृजन होगा जो कि बीमार, रोगी, अत्यन्त मौन और निष्क्रिय लोग न होंगे। ऐसे लोगों का सृजन सहजयोग का लक्ष्य न था। **सहजयोग का लक्ष्य परिवर्तित करना है बहुत से लोगों को परिवर्तित करना। जो लोग ये कार्य कर रहे हैं, मेरा आशीर्वाद उनके साथ है। परन्तु जो स्वयं तक सीमित हैं, वह कोई अच्छी बात नहीं है।** आपके देश में कितने लोगों ने सहजयोग अपनाया। पता लगाएं कितने लोगों पर आपने सहजयोग कार्यान्वित किया है।

**अत: आपका योग अधूरा है। यह बाईं ओर का अधूरा योग है जिसमें आप बहुत, प्रेममय हैं, बहुत करुणामय हैं। ऐसे हैं, वैसे हैं। आप क्रियाशील हो जाएं।** परन्तु मैंने ये भी देखा है कि लोग लीडर बनना चाहते हैं। परन्तु आपने कितने लोगों को आत्मसाक्षात्कार दिया है, कितने लोगों से सहजयोग की बातचीत की है? मैंने देखा है कि हवाईजहाज़ पर जाते हुए, गलियों में चलते हुए लोग सहजयोग की बात करते हैं, परन्तु यहाँ पर हम सहजयोग को अपनी महानता के लिए और स्वयं को समझने के लिए उपयोग कर रहे हैं। **सहजयोग आपको इसलिए नहीं दिया गया। यह आपको इसलिए दिया गया है कि आप बहुत सारे लोगों को आत्मसाक्षात्कार दें। युवाओं से, युवा पीढ़ी से मेरी प्रार्थना है कि अपनी सहज शक्तियों को बेकार की**

**चीज़ों में वैसे नष्ट न करें जैसे पुराने लोगों ने किया।** अच्छा होगा कि आप आगे बढ़ें। सहजयोग की बातचीत करें और सहजयोग को फैलाएं। इन लोगों की रुचि स्कूल चलाने में, अनाश्रितों की देखभाल करने में तथा ऐसे ही अन्य कार्यो को करने में है। यह आपका कार्य नहीं है। आपका कार्य बहुत से सहजयोगी और सहजयोगिनियाँ बनाना है। परन्तु ऐसा नहीं हो रहा है, मैं देखती हूँ कि ऐसा नहीं हो रहा है। क्रियाशक्ति (राइट साइड) के उपयोग का अभाव है। आपको क्रियाशील होना पड़ेगा। आपको कुछ नहीं होगा।

कोई आपको मार नहीं सकता, कोई आपको परेशान नहीं कर सकता, कोई आपको गिरफ्तार नहीं कर सकता। ये मेरा वायदा है। आपमें शक्तियाँ हैं परन्तु यदि आप इनका उपयोग नहीं करते तो आप ऐसे ही हो जाएंगे। यही कारण है कि हम निश्चेष्टता के स्तर पर आ गए हैं। हमें ये बात समझनी होगी कि **हमें अपनी क्रियाशीलता का उपयोग करना होगा। क्रियाशीलता का बहुत महत्व है।**

..... **आप लोग चाहे जो करें आप तामसिक प्रवृत्ति (लेफ्ट साइड) नहीं हो सकते। अत: पूरी सूझ–बूझ के साथ उचित दिशा में आप अपनी क्रियाशीलता (राइट साइड) का उपयोग करें, हिटलरों की तरह से निरंकुश नियन्त्रक बन कर नहीं। सहजयोगियों में हिटलर भी हुए, परन्तु अब आप लोगों के लिए समय आ गया है कि अब आप पूर्वकालीन सन्तों से भी आगे कुछ करें ताकि सहजयोग कार्यान्वित हो सके।** इसे स्वयं तक सीमित न रखें। अपने परिवार, अपने बच्चों और अपने आनन्द के लिए इसे सीमित न रखें। अपने परिवार, अपने बच्चों और अपने आनन्द के लिए इसे सीमित न करें। सहजयोग इस कार्य के लिए नहीं है। यह तो पूरे विश्व को परिवर्तित करने के लिए है, आपको इसके बारे में सोचना होगा। आप क्या कर रहे है, आप क्या हैं और सहजयोग से आपने क्या उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं?

इसके बाद हम आज्ञा पर आते हैं। आज्ञा पार करने पर सहजयोगी ऐसे बन गए कि वे कुछ भी सहन कर सकते हैं, कोई भी कष्ट उठा सकते हैं। हम ऐसा नहीं चाहते, हम तो अन्य लोगों की तकलीफें और उनकी आक्रामकता दूर करना चाहते हैं। हमारे पास उस प्रकार की व्यवस्था नहीं हैं वैसी सूझ–बूझ हमारे पास नहीं हैं। यदि ये कार्यान्वित हो जाता है तो आप बिल्कुल भिन्न प्रकार के व्यक्ति बन जाएंगे।

..... अत: हम सन्तों जैसे बन गए हैं, जैसे सन्त अपने आश्रम के हॉल के सभागारों में बैठे रहते हैं वैसे ही बन गए हैं, उससे आगे कुछ नहीं।

..... बिना किसी आक्रामकता के हम यदि कुछ सकारात्मक कार्य करने का प्रयत्न करें तो बेहतर होगा। मैं जानती हूँ कि आपमें से कुछ लोग अभी भी बहुत आक्रामक हैं और दिखावा करते हैं। ये बात मैं जानती हूँ। परन्तु यदि सामूहिक रूप से कार्य करने की इच्छा आप में जाग जाए तो आप जान जाएंगे कि आपमें क्या कमियाँ हैं। अभी भी आपके व्यक्तित्व में क्या अभाव हैं। ये बहुत महत्वपूर्ण है। आज्ञा चक्र पर बहुत से सहजयोगी लड़खड़ा जाते हैं । मैं नहीं जानती कि उन्हें क्या हो जाता है? मैंने उन्हे बताया है कि वे आज्ञा चक्र पर सबको क्षमा करें परन्तु इसका अर्थ ये नहीं है कि आप लोगों को गलत कार्य करते चले जाने की आज्ञा दे दें। आप क्योंकि क्षमा करना चाहते हैं इसलिए झगड़ा न करना, कुछ  न कहना, इन चीज़ों से दूर रहना, बस क्षमा कर देना, बहुत आसान है। नहीं। जाकर उस व्यक्ति से बात करें और उसे बताएं कि ये गलत है। आपको इसका सामना करना पड़ेगा। यदि आप इसका सामना नहीं कर सकते तो आप बेकार हैं । किसी भी अन्य साधारण व्यक्ति की तरह से हैं । आपके आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने का क्या लाभ हुआ?

..... अब हमें यह समझना है कि इतना ही काफ़ी नहीं है कि हमारे अन्दर चैतन्य है, कि हम ठीक ठाक हैं तथा लोगों को रोगमुक्त कर सकते हैं । यही अन्तिम शब्द नहीं हैं । नहीं आपको सहजयोग फैलाना है, आपको जनता में जाना है। इस मामले में सामूहिक होकर आपको सहजयोग फैलाना है। विश्वभर में इतने अधिक सहजयोगियों के होते हुए भी हमने कोई विशेष उन्नति नहीं की है। अत: अब  आप ही लोगों ने इसकी योजना बनानी है कि आप क्या करना चाहते हैं, किस प्रकार से इस कार्य को करना चाहते हैं, किस प्रकार से सहजयोग फैलाना चाहते हैं ? ये बहुत महत्वपूर्ण है। आप लोग सहजयोग की बातचीत करने और भजन गाने में बहुत कुशल हैं परन्तु बहुत सारे लोगों को सहजयोग में लाने के पक्के प्रयासों के बिना ये सब चीज़ें व्यर्थ हैं ।

**..... अपनी समस्याओं, अपने शत्रुओं, अपनी शक्तियों के विषय में सोचने के स्थान पर अन्य लोगों को शक्ति देकर उन्हें सहजयोगी बनाने के विषय में सोचें। ऐसा करना बहुत आवश्यक हैं । आप यदि सहस्रार में हैं तो आपके पास ये सब शक्तियाँ हैं । सहस्रार में होकर भी यदि आप सहजयोग नहीं फैलाते तो आत्म-साक्षात्कार लेने का क्या लाभ है? केवल अपने लिए? ऐसा करना अत्यन्त स्वार्थपन है। अत: मैं कहूँगी कि अपनी गरिमा, अपना यश, अपना नाम फैलाने के स्थान पर, कृपा करके, सहजयोग में अधिक से अधिक लोगों को लायें। अत्यन्त**

**गतिशील शक्ति के साथ कार्य करें।**

..... जब तक आप इस कार्य को नहीं करते आप पूर्ण नहीं हैं, आप अधूरे हैं और आदिशक्ति की शक्तियों को आपने पूरी तरह से नहीं समझा है। .........आपने सहजयोग को केवल फैलाना ही नहीं है लोगों को परिवर्तित करना है और उन्हें महसूस करवाना है।

अपना पूर्ण आशिष, पूर्ण प्रेम और पूर्ण शक्तियाँ मैं आपको देती हूँ परन्तु समझने का प्रयत्न करें, ठीक है?

आप सबका हार्दिक धन्यवाद

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, २३.५.२००२**

देवी अपनी शक्ति का उपयोग गणों के माध्यम से करती हैं। ये गण ही आपके अन्दर सभी प्रकार के सुधारों के लिये जिम्मेदार हैं। गण बायीं ओर से कार्य करते हैं, देवी की शक्तियों से पूर्णत: एकरूप, ये गण बायीं तरफ ही होते हैं। देवी को उन्हें बताना नहीं पड़ता, उनका पथ प्रदर्शन नहीं करना पड़ता। उनकी संरचना ही इस प्रकार होती है। .............तो गण आपके शरीर के अन्दर बाईं ओर को सुरक्षा की संरचना करते हैं जिसकी प्रतिक्रिया स्वरूप दाईं ओर को भी सुरक्षा मिलती है। देवी अपने गणों के माध्यम से आपके बाईं ओर की देखभाल करती हैं परंतु दाईं ओर को भी–जो लोग आक्रामक हैं– देवी अपनी शक्तियों से उन्हें भी ठीक करती हैं, ताकि आप सामान्य अवस्था में वापिस आ जाएँ, विनम्र हो जाएं और यह समझ सकें कि आप देवी के बालक हैं और आपको बाल सुलभ आचरण करना है।

**प.पू.श्री माताजी, उत्तर अमेरिका, २१.१०.२००२**

सर्वप्रथम ये बात समझ लें कि सहजयोग आन्तरिक उत्क्रान्ति है जो बाहर की ओर अपनी अभिव्यक्ति करती है। अत: पूर्ण सूझ–बूझ से उत्क्रान्ति प्राप्त करनी है.......आपमें से कुछ लोग बुद्धिवादी हैं। बुद्धिवाद को बौद्धिक रूप देने की बुरी आदत होती है। परमात्मा की दृष्टि में बुद्धिवाद कुछ भी नहीं है, क्योंकि परमात्मा ने ही उसका सृजन किया है। अत: आपको सावधान रहना होगा। कुछ लोग अत्यन्त भावुक होते हैं और अत्यन्त भावुकतापूर्वक अपनी अभिव्यक्ति करते हैं। आपको उन धारणाओं से बाहर आना होगा और समझना होगा कि जीवन की भावनाओं की बहुत भयानक भूमिका हो सकती है.........अपनी स्थिति (मध्यमार्ग) में स्थापित होने से ही आपकी महानता स्थापित होगी, आप महान बन सकेंगे।–––––

**प.पू.श्री माताजी, बोर्डी, १२.२.१९८४**

# अध्याय २२

# सूक्ष्म अवस्था की प्राप्ति–'पुनर्जन्म'

...... **अब** हमें सबसे पहले देखना है कि वास्तव में हमने क्या प्राप्त किया? यह महत्वपूर्ण है। प्रथम घटना जो आपके साथ घटित हुई है, जो बहुत महत्वपूर्ण है, यह है कि आपने सर्वव्यापक शक्ति को अनुभव किया है। ........आपके जीवन में एक नया आयाम प्राप्त हुआ है .......आपने अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता पा ली है। यह एक सूक्ष्म अवस्था है।

**प.पू.श्री माताजी, ७.५.१९९५**

.....सबसे पहली स्वतन्त्रता आपको अपने अहं से मिली। अहं की इस दीवार को आप पार कर चुके हैं, आप इस अहंकार के बन्धन से मुक्त हो चुके हैं जो कि वास्तव में आपके लिये परेशानियों से भरा था। ..........भौतिकता से लिप्त न होने के कारण आपकी आत्मा स्वतन्त्र है।

..... अब जब आप बिल्कुल साफ बन गए, पूर्णरूप से धुल गए, आपका मस्तिष्क पूर्णरूप से बन्धन मुक्त हो गया तो आप सुन्दर शीशे सम बन जाते हैं। इस दर्पण में हम जिस समाज में रह रहे हैं, अब उसका चित्र देख सकते हैं।

..... **आपके अन्तर्जात गुण खो गए थे। सौभाग्यवश कुण्डलिनी की जागृति और सहस्रार के भेदन से आपके अन्तर्जात गुण, जो कि खो गए थे, जाग उठे हैं। आपकी अबोधिता, सृजनात्मकता, अन्दर का धर्म, करुणा, मानवप्रेम, निर्णयात्मक शक्ति और विवेक आदि आपमें सुप्तावस्था में थे– वे सभी जागृत हो गए हैं।**

..... आपके अन्दर का प्रकाश अब आपको बतायेगा कि क्या ठीक है और क्या गलत। ज्ञान के आयाम के प्रति सहस्रार के खुलने के कारण ही यह हो सका है। यह नया नहीं है, आपके अन्तररचित है। अब यह अन्तर्जात गुण प्रगट हो रहे हैं। आप अपनी गरिमा, स्वभाव तथा महानता को देखने लगते हैं, सहज ही आपका एकीकरण हो जाता है।

..... **एकीकरण केवल बाह्य ही नहीं, यह आन्तरिक भी है। अब से पहले हम जो करते थे उसमें हमारा मन कुछ कहता था और हृदय कुछ कहता था और**

**मस्तिष्क कुछ और। अब ये तीनों चीज़ें एक हो गयी हैं। अब आपके मस्तिष्क की बात आपके हृदय और चित्त को पूर्णतया स्वीकार होती है। अब आप स्वयं एकीकृत हो गए हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, १०.५.१९९२**

.....सबसे बड़ी उपलब्धि जो आपने पा ली है वह है अपने अन्तस में, अपने हृदय में, मस्तिष्क में और अपने जीवन में तथा चित्त के अन्दर महान एकाकारिता। आपका मस्तिष्क जो सोचता है, आपका हृदय स्वीकार करता है और आपका हृदय जो स्वीकार करता है वही आपका मस्तिष्क सोचता है। आपका चित्त आपके हृदय तथा आपके मस्तिष्क से एकाकार हो गया है। आपके चित्त, मस्तिष्क तथा हृदय में कोई द्वंद नहीं है। .........**सभी प्रलोभनों पर हावी हो जाने वाली शक्ति तथा आत्मा आपमें है। यह एकाकारिता आपको मानसिक, भावनात्मक तथा आध्यात्मिक रूप से सहजयोग की पूर्ण समझ देती है।**

**प.पू.श्री माताजी, १०.३.१९९२, आस्ट्रेलिया**

.....अब जो अवस्था आपके अन्दर जागृत हुई है, यह मस्तिष्क की एक नयी अवस्था है। संस्कृत भाषा में इसका बहुत सुन्दर नाम है – **'ऋतम्भरा प्रज्ञा'**, एक अति कठिन नाम। ऋतम्भरा प्रकृति का नाम है। व्यक्ति को लगता है पूर्ण प्रकृति ही ज्योतिर्मय हो उठी है। आपकी अवस्था ही विशिष्ट है–वह अवस्था जिसमें आपकी एकाकारिता प्रकृति से है और प्रकृति की एकाकारिता आपसे है। तो परमात्मा भिन्न घटनाओं, कार्यों, प्रेम, सुरक्षा तथा आपके प्रति परमेश्वरी चिंता द्वारा स्वयं प्रकृति के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति कर रहे हैं और यह अनन्त है। ........जब यह ऋतम्भरा प्रज्ञा सहजयोगियों के लिये कार्य करने लगती है तो आप हैरान हो जाते हैं कि किस प्रकार कार्य हो रहे हैं।

**प.पू.श्री माताजी, १९.१.१९८४**

..... अपने मस्तिष्क की इस नयी अवस्था में आप अस्तित्व की एक नयी अवस्था में उन्नत होते हैं और सभी प्रकार की मूर्खताओं से पूर्णत: ऊपर उठ जाते हैं। इस अवस्था में आपमें इतनी शक्ति पैदा हो जाती है कि आप अपने चहुँ ओर विद्यमान नकारात्मक शक्तियों को समाप्त कर सकते हैं।

..... ये बात भी समझ लेनी अत्यन्त आवश्यक है कि यह एक अवस्था है, ये केवल जुबानी ज़माखर्च नहीं है, यह केवल मान लेना नहीं है कि मैं वह हूँ, ये तो एक

अवस्था है।

**आप उस अवस्था तक पहुँच सकते है जहाँ आप इन सब चीज़ों से ऊपर उठ जाएं, जहाँ आपके पास सारा ज्ञान होगा, शुद्ध ज्ञान होगा, अस्तित्व का सूक्ष्म ज्ञान।** यही ज्ञान मार्ग है। बहुत से लोग कहते हैं कि हर कोई ज्ञान मार्ग को नहीं पा सकता, उसके लिये आपको विशिष्ट व्यक्ति होना आवश्यक है, परन्तु ये सारी बातें भ्रामक हैं। सभी लोग ज्ञान मार्ग को प्राप्त कर सकते हैं। हमारे अन्दर यह अन्तर्जात है। यह उत्थान की उपलब्धि है। यह हमारे अन्दर विद्यमान है और हम सब इसे प्राप्त कर सकते हैं। केवल एक बात है कि हममें आत्मविश्वास नहीं।

..... आज तक आपने जो भी कुछ जाना वह सब पुस्तकों में लिखा हुआ है या उसे आपके माता–पिता ने आपको बताया है या वह सब जानकारी जिसकी खोज आपने बाहर की। परन्तु शुद्धतम ज्ञान, सच्चा ज्ञान जो वास्तविक ज्ञान है इसे आप केवल अपने उत्थान द्वारा ही पा सकते हैं और अपने अन्दर स्थापित हो सकते हैं, भली–भाँति उस अवस्था में स्थापित हो सकते हैं। .........सबको अधिकार है कि इसे पा लें।

**..... इस अवस्था तक पहुँच कर आप अत्यन्त ज्ञानमय हो जाते हैं। अपने विषय में ज्ञानमय, अन्य लोगों के विषय में ज्ञानमय, हर उस चीज़ के विषय में जो आपके चहुँ ओर है। परन्तु इस अवस्था को बनाये रखना है और इससे भी ऊपर उठना है जहाँ किसी भी प्रकार का कोई सन्देह न रह जाए। यही उपलब्धि व्यक्ति को प्राप्त करनी है।**

..... हमारी उत्थान प्रक्रिया सभी मानवीय चेतनाओं से ऊपर आ चुकी है। आध्यात्मिक व्यक्ति के लिये अन्य सभी मानवीय चेतनाएं मूल्यहीन हैं। .........यहाँ से न्यूयार्क तक कितने मील का फ़ासला है .......कौन सी रेल कहाँ जाती है इस कपड़े का क्या मूल्य होगा........ ये सारा ज्ञान व्यर्थ है, ये सच्चा ज्ञान नहीं है। आध्यात्मिक व्यक्ति को इन चीज़ों का ज्ञान नहीं होता, **पूरे ब्रह्माण्ड का ज्ञान होता है।** इस ज्ञान में यह नहीं होता कि सितारों की संख्या कितनी है, या ब्रह्माण्ड कितने हैं, नहीं। यह तो **पूर्ण का सूक्ष्म आन्तरिक व्यक्तित्त्व होता है।** वह व्यक्ति इसके विषय में सब कुछ जानता है। वह व्यक्ति सूक्ष्मता में उन बहुत सी चीज़ों को खोज लेता है जिसके विषय में उसने शायद कभी सुना भी न हो और **इस प्रकार व्यक्ति महान ज्ञानमय व्यक्तित्व**

**की अवस्था तक पहुँच जाता है। यही अवस्था हमें प्राप्त करनी है।**

हमारा जन्म मानव के रूप में हुआ और हमें पहले से ही बहुत सी चीज़ों का ज्ञान है परन्तु वास्तविकता का ज्ञान नहीं है। यह ज्ञान पुस्तकें पढ़ने या बौद्धिक खोज या भावनात्मक गतिविधियों से नहीं प्राप्त होगा। **यह शाश्वत है सदा मौजूद है। ये अस्तित्व में है और अस्तित्व में रहेगा। ..........यह परिवर्तित नहीं हो सकता, इसे कोई दूसरा आकार नहीं दिया जा सकता, ये जो है वही है और अब आपको इसी का ज्ञान प्राप्त हो गया है।** ........आँखें खोलकर आप जो कुछ भी कहते हैं वह सत्य होता है।

..... जब आप परमात्मा से एकरूप हो जाते हैं तब परमात्मा आपको क्या देते हैं? वो आपको घटिया, नश्वर भौतिक पदार्थ नहीं देते, शाश्वत स्वभाव का कुछ वरदान आपको देते हैं, सन्तुलन प्रदान करते हैं। शान्तमय स्वभाव और आनन्दमय जीवन भी वे आपको प्रदान करते हैं। .........ये सारे गुण हमारे अन्दर जागृत हो जाते हैं।

..... यह शान्ति मानव की क्रूरता को पूर्णत: समाप्त कर सकती है। इसके अतिरिक्त आपको शक्तियाँ भी प्राप्त हो जाती हैं। आपको ज्ञान प्राप्त हो जाता है – ज्ञान – सभी के विषय में सूक्ष्म ज्ञान। सभी के विषय में आप जान सकते हैं। अपने तथा अन्य लोगों के विषय में आपको ज्ञान प्राप्त हो जाता है। यह ज्ञान आपको विद्यालय या महाविद्यालय में नहीं मिलता। **यह तो आपके अन्दर ही ज्ञान का सागर है। जो कुछ भी आप देखना चाहते हैं, जो कुछ भी आप प्राप्त करना चाहते हैं, सब वहाँ विद्यमान है। यही सच्चा ज्ञान है जिसे सूक्ष्म ज्ञान के माध्यम से आप प्राप्त कर लेते हैं। सूक्ष्म ज्ञान अर्थात चक्रों का ज्ञान, ब्रह्माण्ड का ज्ञान।** इससे आप सभी कुछ प्राप्त कर सकते हैं। अन्य लोगों को ज्ञान देने की आपकी रुचि भी बढ़ जाती है। ..........आपका पूरा दृष्टिकोण ही बदल जाता है और आपको शान्त मस्तिष्क प्राप्त हो जाता है जिसे हर वांछित चीज़ का ज्ञान होता है। व्यक्ति को यही प्राप्त करना होता है।

..... आपको जीवन की वह सारी निधि प्राप्त हो गयी है, वह निधि जो आपके ही अन्दर है। यह आपको वह सारा सुख, सारा आनन्द प्रदान करेगी, सारी वरिष्ठता प्रदान करेगी जो महान वैभव और महानतम शक्ति आपको प्रदान कर सकती है। .........सद्–सद् विवेकबुद्धि आपका स्वभाव बन जाती है, तब आप सदा सन्तुष्ट रहते हैं क्योंकि आप जानते हैं कि आप कोई गलत काम नहीं कर रहे हैं। **चैतन्य लहरियों के**

**माध्यम से आप सत्य–असत्य का अन्तर जानने में कुशल हो जाते हैं। चैतन्य लहरियों पर आप सभी कुछ जान जाते हैं, आप जान जाते हैं कि ठीक क्या है और गलत क्या है।**

**प.पू.श्री माताजी, काना जौहरी, २९.७.२००१**

– हमारे छः दुश्मन हैं– काम, क्रोध, मद, मत्सर, लोभ और मोह अर्थात लिप्सा, मद् का मतलब है अहम्, काम का अर्थ है यौन उद्दण्डता, क्रोध यानी गुस्सा और मत्सर का अर्थ है ईर्ष्या। अज्ञानता, परवरिश, शिक्षा आदि के कारण ये सारी चीज़ें हमारे संस्कार बन गयीं थीं। **जब कुण्डलिनी जागृत होती है और आप परमात्मा के साथ एकरूप हो जाते हैं तो ये सारे दुर्गुण छूट जाते हैं। तत्पश्चात् आप दृढ़ धरातल पर होते हैं, आप महसूस करते हैं कि आपने सत्य को पा लिया है। अब इन विध्वंसक आदतों का आनन्द आप नहीं ले सकते, ये षटरिपु आपको मुक्त कर देते हैं।**

**प.पू.श्री माताजी, २३.४.२०००**

.....अपने अन्दर आप परमेश्वरी साम्राज्य में प्रवेश कर जाते हैं। **मानव का यही सच्चा पुनर्जन्म है।** .........जब आपकी अपनी माँ, आपकी व्यक्तिगत माँ, कुण्डलिनी उठती है तो वे आपको पुनर्जन्म प्रदान करती हैं और इस प्रकार परमचैतन्य से आपका योग हो जाता है।

.....मैंने आपको बताया कि यह कुण्डलिनी एक नन्हें बीज के अंकुर की तरह होती है, यह अंकुर यदि पेड़ बन जाए तो आप हैरान होंगे कि व्यक्ति का पूर्ण परिवर्तन हो जाता है और हमारे अन्दर विद्यमान षटरिपु लुप्त हो जाते हैं, उनसे मुक्त होकर आप आत्मविश्वास से परिपूर्ण हो जाते हैं, आपके अन्दर की आक्रामकता शान्त हो जाती है और अन्य लोगों के दोष आप नहीं देखते, साक्षी बन जाते हैं, बिना प्रतिक्रिया किये, साक्षी रूप से आप सभी चीज़ों को देखने लगते हैं। मस्तिष्क से आप ऊपर उठ जाते हैं। **..........यही आपका पुनर्जन्म है।**

**प.पू.श्री माताजी, १७.४.२०००**

.....बाइबल में बहुत सी कथायें हैं जिनमें एक यह है कि पुनर्जन्म के समय आपके शरीर कब्र से बाहर आयेंगे, यह बात केवल ईसाईयों के लिये नहीं है, बल्कि मुसलमानों और यहूदियों के लिये भी है। इसके विषय में सोचें। इतने वर्षों बाद कब्र में

क्या बचता है? थोड़ी सी हड्डियाँ, और यदि ये हड्डियाँ बाहर आ भी जायें तो किस प्रकार आप इन्हें आत्मसाक्षात्कार दे सकते हैं? नल–दमयन्ति आख्यान में स्पष्ट कहा गया है कि ये **सभी साधक जो परमात्मा को पर्वतों में खोज रहे हैं ये सब कलियुग में पुनर्जन्म लेंगे और उन्हें आत्मसाक्षात्कार प्रदान किया जाएगा।**

**प.पू.श्री माताजी, गणपति पुले, २५.१२.१९९३**

..... सहजयोग में शरीर रहते हुए आपका पुनर्जन्म होता है। इससे पूर्व आप सर्वव्यापक शक्ति से नहीं जुड़े थे, और आप अपनी भावनाओं, इच्छाओं के ही माध्यम से सभी कार्य करते थे। अपनी भावनाओं, इच्छाओं कर्मोतथा अहं की कब्र से आप नहीं निकल पाए थे।

..... ईसा ने कहा था कि अच्छी तरह स्वयं को जान लें। वे जानते थे कि बिना स्वयं को समझे व्यक्ति का पुनर्जन्म नहीं हो सकता।

**प.पू.श्री माताजी, कलकत्ता, अप्रैल १९९५**

..... ईसा मसीह ने मृत्यु के पश्चात पुनर्जन्म लिया था। सहजयोग में हमने भी मृत्यु के पश्चात् जीवन में प्रवेश किया है। यह बात समझ लेनी चाहिये कि पुनर्जन्म हम सबके लिये, पूरे विश्व के लिये है। ये संदेश है कि हमें पुनरुत्थान प्राप्त करना है।

**प.पू.श्री माताजी, टर्की, २२.४.२००१**

..... आप सब मेरा श्रृंगार हैं। पूरे विश्व के लोग देखें कि आप लोग मेरे बच्चे हैं। मैंने वास्तव में आप लोगों के लिये इस प्रकार काम किया है कि अपने जीवन की हर श्वास में आपके लिये सोचा है। ............**जब आप पूर्णत: स्वच्छ हो जाएंगे, पूर्णत: निर्मल हो जाएंगे, प्रेम की शुद्ध मूर्ति बन जाएंगे, वह दिन आपका और मेरा जन्म दिवस होगा।** ...........**आपका पुनर्जन्म हुआ** ........अभी तक आप बच्चे थे। ........अब आप सहजयोग में बड़े बन गए हैं......... आपको दर्शाना होगा कि आप बहुत गहन और वरिष्ठ व्यक्ति हैं।

**प.पू.श्री माताजी, २१.३.२००१**

**मोक्षावस्था**–व्यक्ति को जिस समय मरना है तभी मरना है, क्योंकि जो भी पैदा होता है वह मरता है, मगर आप नहीं जानते कि आपको शाश्वत जीवन प्राप्त हुआ है, आप कभी मर नहीं सकते।

मृत्यु इस शरीर का मिट जाना नहीं है, मृत्यु तब है जब आप अपनी आत्मा का नियन्त्रण पूर्णतया खो दें। एक बार जब आप आत्मसाक्षात्कारी हो जाते हैं तो आपके पास पूरा नियन्त्रण है और यदि आप चाहें तो जन्म लेने के लिए जहाँ चाहें अपनी आत्मा को ले जा सकते हैं। बिना आपकी इच्छा के आपका जन्म न होगा।

आपके लिए मृत्यु जैसा कुछ नहीं है क्योंकि आपको अगर जीवन प्राप्त हुआ है, ऐसा नहीं है कि आप इसी शरीर को कायम रखते हैं। आप अपने वस्त्र बदलते रहेंगे मगर आप जीवित हैं, आप सतर्क हैं और जानते हैं कि इस शरीर की अनुपस्थिति में भी आप सहजयोग और सत्य कार्यों के लिए हर समय वहाँ पर उपलब्ध हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, इटली, ७.५.१९९५**

# अध्याय २३

# सहस्रार का सार–पूर्ण समग्रता

...... सहस्रार वास्तव में छ: चक्रों का समूह है, और यह एक खाली स्थान है, जिसके दोनों तरफ एक हज़ार नाड़ियाँ होती हैं और जब प्रकाश तालूक्षेत्र (लिम्बिक एरिया) में आता है तब ये नाड़ियाँ ज्योतिर्मय होती हैं और वे लौ (ज्वाला) के समान कोमल दिखायी देती हैं, बहुत ही सौम्य लौ के समान दिखाई देती हैं और इन सबकी लौ में वो सभी सात रंग होते हैं जो इन्द्रधनुष में दिखायी देते हैं। परन्तु अन्तिम लौ समग्र लौ बन जाती है। यह बिल्कुल स्वच्छ (crystal clear) लौ होती है। अत: ये सब सात तरह के प्रकाश अन्त में एक स्वच्छ प्रकाश बन जाते हैं .........कुण्डलिनी तालूक्षेत्र में प्रवेश कर मस्तिष्क को प्रकाशित करती है। इस प्रकार मस्तिष्क ज्योतिर्मय होने के पश्चात, सहस्रार लौ के एक बण्डल के समान दिखायी देता है। यह बड़ा गहन विषय है। .......कुण्डलिनी द्वारा मस्तिष्क प्रदीप्त कर देने पर आपके मस्तिष्क में सत्य की अनुभूति होती है, इसीलिये सहस्रार 'सत्यखण्ड' कहलाता है, यानी आप 'सत्य' को, जो आपके मस्तिष्क द्वारा ग्रहण होता है, देखना शुरु कर देते हैं क्योंकि इससे पहले जो कुछ भी आप अपने मस्तिष्क द्वारा देखते हैं, सत्य नहीं होता। जो आप देखते हैं सिर्फ बाह्य रूप ही है। आत्मा के प्रकाश से प्रकाशित हुए बिना मानव मस्तिष्क दिव्यता को नहीं पहचान सकता।

..... सर्वप्रथम आपको जो अनुभूति होती है वह 'सत्य' होती है, जैसे इन सज्ञन को क्या तकलीफ़ है, यह आप अपनी उँगलियों पर देखते हैं, तो पहले आप अपने चित्त से उँगलियों पर देखते हैं। आप अपने चित्त से जानते हैं कि कौन सा चक्र कौनसी उँगली की 'पकड़' है। तब आप अपने मस्तिष्क की सहायता से पहचानते हैं कि कौन सा चक्र खराब है। क्योंकि अगर आप कहें कि इस उँगली की पकड़ है तो इसका मतलब यह नहीं कि यह विशुद्धि चक्र है लेकिन आपका मस्तिष्क यह बता सकता है कि यह विशुद्धि चक्र है और वह दर्शाता है कि इस व्यक्ति को विशुद्धि चक्र की तकलीफ़ है लेकिन यह भी मस्तिष्क का औचित्यस्थापन है, क्योंकि आप पहले देखते हैं कि कौन सी उँगली की पकड़ है और फिर आप बताते हैं कि कौन सा चक्र खराब है।

..... लेकिन जब 'सत्यखण्ड' यानी सहस्रार और ज़्यादा खुल जाता है तो आपको सोचने की जरूरत नहीं पड़ती, आप तुरन्त कह देते हैं। **उस समय आपके**

**चित्त में और आपके सत्य में कोई अन्तर नहीं रह जाता। प्रकाशमान चित्त और प्रकाशमान मस्तिष्क एकाकार हो जाते हैं।** ऐसे व्यक्ति के लिये कोई समस्या नहीं रह जाती और उँगलियों पर भी देखने की ज़रूरत नहीं पड़ती। उँगलियों पर कुछ देखकर और फिर **मस्तिष्क से जानने की कोई ज़रूरत नहीं रह जाती।** जैसा कि आपने सहजयोग में सीखा है कि अगर इस उँगली में कुछ गड़बड़ है तो इसका मतलब आज्ञाचक्र खराब है, अब यह आवश्यक नहीं। आप बस कह देते हैं कि आज्ञाचक्र खराब हैं, **आपने जैसा कहा वास्तव में वैसा ही होता है।**

..... उसके बाद मस्तिष्क और भी ज़्यादा खुलता है। सर्वप्रथम जैसा मैंने बताया यह चित्त के साथ एकाकार हो जाता है। फिर, जब यह पूर्णतया 'आत्मा' के साथ एकाकार हो जाता है तब, आप जो कह देते हैं वह सत्य होता है।

..... इस प्रकार यह मस्तिष्क तीन नये आयामों को प्रकट करता है। सर्वप्रथम यह तार्किक निष्कर्षो (logical conclusions) द्वारा सत्य को व्यक्त करता है। ........तर्कानुसार मस्तिष्क सत्य को स्वीकार करता है, फिर भी मस्तिष्क बाह्यस्तर पर ही कार्यशील रहता है।

..... दूसरी अवस्था में, जैसा मैंने बताया, आप विश्वास करते हैं, पक्की तरह से जान जाते हैं कि इसका अर्थ विशुद्धि चक्र है, इसके बारे में काई शंका नहीं। **इस प्रकार निर्विकल्प की अवस्था आरम्भ हो जाती है, जब मेरे और सहजयोग के बारे में कोई शंका नहीं रह जाती। लेकिन उस समय आपके अन्दर मस्तिष्क का और उन्मोचन (खुलना) आरम्भ हो जाता है।** इसके लिये आपको ध्यान करना पड़ता है, नम्रता में स्थित होकर आपको ध्यान करना पड़ता है। इसी नयी अवस्था के लिये अब आपका चित्त स्वयं आपके मस्तिष्क, प्रदीप्त मस्तिष्क, में विलय हो जाता है। इसके लिये व्यक्ति को अत्यन्त सच्चाई और नम्रतापूर्वक सहजयोग को आत्मसमर्पण करना पड़ता है।

**..... सहस्रार का सार समग्रीकरण है। सहस्रार में सारे चक्र स्थित हैं, अत: सब देवी-देवताओं का समग्रीकरण है और आप उनकी समग्रता की अनुभूति कर सकते हैं अर्थात जब आपकी कुण्डलिनी सहस्रार में पहुँच जाती हैं तो आपका मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक व्यक्तित्व एक हो जाता है, आपका शारीरिक व्यक्तित्व भी इसी में विलय होता चला जाता है और आपको कोई भी समस्या नहीं रहती।**

..... आपके व्यक्तित्व का पूर्णतया समग्रीकरण आवश्यक है। इसके लिये सामर्थ्य अन्दर से आती है। आपकी आत्मा आपको बल प्रदान करती है। आप बस अपनी संकल्प शक्ति लगाते हैं कि **'हाँ मेरी आत्मा कार्य करे'** और अपनी आत्मा के अनुसार ही कार्य करने लगते हैं। और जहाँ आप अपनी आत्मा के अनुसार कार्य करने लगते हैं, आप देखते हैं कि आप किसी चीज़ के दास नहीं हैं, आप समर्थ हो जाते हैं, अर्थात (सम+अर्थ) अपने अर्थ के समतुल्य, सम+अर्थ, समर्थ का अर्थ शक्तिशाली व्यक्तित्व भी है। तो आपका व्यक्तित्व शक्तिशाली बन जाता है और कोई भी प्रलोभन नहीं होता, कोई भी असद्–विचार नहीं होता, कोई समस्या नहीं होती।

..... अत: यह बहुत सरल है कि आप समग्र हो जाएँ। समग्रीकरण से आपको वह शक्ति मिलती है जिससे आप जैसा समझते हैं तद्नुसार कार्य करते हैं, और जैसा आप समझते हैं उससे आप प्रसन्न रहते हैं। **तो आप ऐसी अवस्था में पहुँच जाते हैं जहाँ आप इस 'निरानन्द' को पाते हैं और यह निरानन्द आपको मिलता है। तब आप पूर्णतया आत्मस्वरूप बन जाते हैं।**

**..... निरानन्द अवस्था** में कोई भेद भाव नहीं रह जाता, यह अद्वैत है। 'एक' व्यक्तित्व होता है, अर्थात **आप पूर्णतया समग्र हो जाते हैं और आनन्द में कहीं अपूर्णता नहीं रहती। वह सम्पूर्ण होता है। इसमें प्रसन्नता या दु:ख के पहलू नहीं होते, बल्कि वह बस आनन्द होता है।**

..... आनन्द का अर्थ यह नहीं कि आप ठहाका मार कर हँसें या मुस्कराते रहें। **यह निस्तब्धता (stillness) आपके अन्तरतम का विश्राम भाव (quititude) शांति (peace) आपके व्यक्तित्व की, आपकी आत्मा की, जो चैतन्य लहरियों के रूप में स्फुरित होती है–इनकी आपको अनुभूति होती है।** जब आपको उस शक्ति की अनुभूति होती है तब आप अपने को सूर्य प्रकाश के प्रभाव के समान अनुभव करते हैं, उस सौन्दर्य की छाया चारों ओर बिखरती रहती है।

..... किन्तु पहले हम अपने निजी, स्वार्थी एवं मूर्ख कल्पनाओं से भयभीत होते हैं। उनको फेंक दो। वे हम पर छायी होती हैं क्योंकि हम असुरक्षित थे और क्योंकि हमारे विचार गलत थे, उन्हे फेंक दो। **ईश्वर के साथ एक रूप होकर खड़े रहो,** आप पाओगे कि ये सब भय व्यर्थ थे।

..... मैं कहूँगी कि सहस्रार ईश्वर का आशीर्वाद है। यह अत्यन्त सुन्दर रूप

से (सहजता से) क्रियान्वित हुआ है। सहस्रार भेदना बहुत कठिन कार्य है और जब सचमुच मैंने इसे भेदा तो मुझे पता नहीं था कि यह कार्य इतना सफ़ल होगा!

..... अब आओ सहस्रार के मध्य से इस 'सत्य' को अपने अन्दर जड़ें जमाने दो और जब यह सत्य उस प्रकाश में बदल जाय तो यह आपका मार्गदर्शन करता है, ऐसा प्रकाश जो आपको प्रदीप्त करता है और आपको एक ऐसा व्यक्तित्व प्रदान करता है जिसमें प्रकाश है। तभी आपको समझना चाहिये कि **आपका सहस्रार, आपकी आत्मा द्वारा पूर्णतया प्रज्वलित हो गया।** आपका मुखमण्डल ऐसा होना चाहिये कि लोग जानें कि यह जो व्यक्तित्व सामने खड़ा है, वह प्रकाश है......... सहजयोग में होता क्या है कि आप एक चीज़ को **दृढतापूर्वक पकड़ लेते हैं। वह चीज़ है आपकी आत्मा और आपका व्यक्तित्व एक पतंग की तरह विचरण करता है, जैसे एक पतंग हरेक के ऊपर उड़ती फिरती है, आप एक ही चीज़ से चिपके रहते हैं, वह है आपकी आत्मा।** अगर आप सचमुच ऐसा कर सकें, यथार्थ में और ईमानदारी से –पैसा परिवार और अन्य सांसारिक वस्तुओं के बारे में अधिक चिन्ता किये बिना, तो आप सहजयोग में सफ़ल हैं।

..... आपकी व्यक्तिगत इच्छा का कोई महत्व नहीं, प्रभु की इच्छा का ही महत्व है – **''प्रभु आपकी जैसी इच्छा हो वही हो'' और कितने आश्चर्य की बात है कि आपकी इच्छाएं ही बदल जाती हैं, आपके संकल्प बदल जाते हैं और जो कुछ भी आप कहते हैं वही हो जाता है।** लेकिन जब ऐसा हो जाता है तो लोगों में अहंकार पैदा हो जाता है। **अत: सतर्क रहें।** यह सब 'शक्ति' द्वारा किया जाता है, आपके द्वारा नहीं। **आपकी आत्मा द्वारा, आप द्वारा नहीं। आपको आत्मा होना है।** जब आप आत्मा हो जाते हैं तो आप बस अकर्म में होंते हैं, जहाँ आप जानते नहीं कि आप क्या कर रहे हैं, बस हो जाता है, आप अनुभव नहीं करते, आप अवगत नहीं होते।

इतना सब प्रवचन देने के बाद, आपके ज़्यादातर चक्र खुल गए होंगे लेकिन यह सब मेरा कुण्डलिनी का कार्य है। आपको भी अभ्यास करना है और अपने आपको देखना है। सावधान रहें। अपने आपको दर्पण में देखने और अपना सामना करने की कोशिश करें।...........आप लोग ऊँचे उठ रहे हैं, और ज़्यादा उन्नति करो, बिना अपनी उन्नति के बारे में सोचते हुए। यह बहुत आवश्यक है। ........छोटी–छोटी बातों से सतर्क रहें। इस कृतयुग में आत्मसाक्षात्कार का चरम लक्ष्य प्राप्त करना बहुत ही आसान है।

**प.पू.श्री माताजी, देहली, ४.२.१९८३**

# अध्याय २४

# निरानन्द की अनुभूति

..... **योग का मतलब है जुड़ना,** योग का दूसरा अर्थ होता है युक्ति। एक तो है कि सम्बन्ध जुड़ जाना, लेकिन दूसरा है युक्ति। समझ लेना चाहिये कि युक्ति क्या है? इसमें तीन तरह से समझाया जा सकता है।

१. **पहली तो युक्ति ये है कि हमें इसका ज्ञान आ जाना।** ज्ञान का मतलब बुद्धि से नहीं किन्तु हमारी उँगलियों में, हाथों के अन्दर कुण्डलिनी का पूर्णतया जागृत होना। जब यह ज्ञान हो जाता है तो और भी ज्ञान होने लगता है। बहुत सी बातें जो आप नहीं समझ पाते थे वो अब आप समझने लगते हैं, और समझने लगते हैं कौन सत्य है और कौन असत्य।

२. **अब दूसरी युक्ति क्या है? वो है कि आप हमारे प्रति भक्ति** कर रहे हैं, इस भक्ति को आप करते हैं तब आपको **अनन्य भक्ति** करनी चाहिये। तभी **आप हमसे तदाकारिता प्राप्त करें, जैसा हम सोचते हैं वैसा ही आप सोचने लग जायें। आपका सोच–विचार, कार्य और प्रेम ये सब वैसा ही होना चाहिये जैसा आप मुझसे प्रेम करते हैं और यही अगर प्रेम का स्रोत है तो जो कुएं में है वो ही घट में आना चाहिये। दूसरी चीज़ कैसे आ सकती है? और कोई दूसरी चीज़ आती है तब मैं सोचती हूँ कि किसी दूसरे घट से इन्होंने कोई और कुएं से पानी भरा है। ये घट मेरा नहीं हैं।**

सो ये दूसरी युक्ति (उपाय) है कि **''माँ आप मेरे ह्दय में आओ, मेरे जीवन के हर कण में आप आओ। मेरे दिमाग में आप आओ, मेरे विचारों में आप आओ, मेरे जीवन के हर कण में आप आओ।''** जहाँ भी कहोगे हम हाज़िर हैं, हाथ जोड़ के। वहाँ हम हारे, पर आपको कहना तो पड़ेगा ना, और पूर्ण ह्दय से कहना पड़ेगा, यदि किसी मतलब से सम्बन्ध जुड़ गया तो सब मतलब अपने आप पूरे हो जाएंगे। आपको कुछ करना ही नहीं पड़ेगा।

३. अब तीसरी जो बात है कि हम ये काम कर रहे हैं, हमने ये सजावट की, ये ठीक–ठाक किया। मैंने किया। तो सहजयोगी आप नहीं हैं। सहजयोग में सारे कर्म

अकर्ममय हो जाने चाहियें। ये इसकी तीसरी युक्ति है। मैं कुछ कर रहा हूँ, मैंने किया, जहाँ पर आप बाहरी सूक्ष्म में देखते जाएँ कि क्या मैं सच में ऐसा सोचता हूँ कि मैंने किया? ऐसी मेरे दिमाग में बात आती है क्या? इसका मतलब है कि योग पूरा नहीं हुआ। जब योग पूरा होता है तब आप ऐसा नहीं सोचते, सोच ही नहीं सकते, विचार ही नहीं कर सकते। **अकर्म में ही अपने आप यह हो रहा है।** वो हो रहा है, घटित हो रहा है, वो सब हो रहा है–ऐसा आप बोलने लग जाते हैं और तब कहना चाहिये कि आप पूरी तरह से तदाकारिता में आ जाते हैं।

एक क्षण विचार करें। मैं कर रहा हूँ, मैं क्या कर रहा हूँ? जब तक आप प्रकाश ढूँढ रहे थे तब तक आप कुछ कर रहे थे, क्योंकि आपके अन्दर अहं भाव था। **आप अकेले एक व्यक्ति थे, एक व्यष्टि में आप थे, अब आप समष्टि में, एक समष्टि में आ गए हैं। जब आप सामूहिकता में आ गए तब आप कुछ भी नहीं कर रहे। आप अंग–प्रत्यंग हैं। वो कार्य हो रहा है।**

इसी तरह से आप अपना विवेचन हमेशा करते रहें और अपनी ओर नज़र करें। इस वक्त सबकी भलाई इसी में है कि हम अपनी ओर नज़र करें कि मैं क्या सोचता हूँ। मैं दूसरों के लिये क्या सोचता हूँ? उसके कोई अच्छे गुण मुझको दिखायी देते हैं कि बुरे गुण ही दिखायी देते हैं। दूसरों के यदि अच्छे गुण दिखायी दें और अपने बुरे, तो बहुत अच्छी बात है क्योंकि दूसरों के दुर्गुण तो आप हटा नहीं सकते, उस पर तो आपका अधिकार नहीं, जहाँ अधिकार है आप अपने ही दुर्गुण हटा सकते हैं। तो दूसरों ने क्या किया? दूसरे ऐसे हैं, ऐसा सोचने वाले अभी पूरी तरह से योग में उतरे नहीं। मेरे में क्या त्रुटि है, यह देखने से आप उसे ठीक कर सकते हैं।

..... सहजयोग तो बहुत बड़ी चीज़ है, बड़ी अद्‌भुत चीज़ है लेकिन जो हममें खराबियाँ आ गयी हैं या जो अभी हम इसका मज़ा नहीं उठा पा रहे हैं उसका मतलब हमीं में दोष है और इस सबको प्राप्त करने पर इस युक्ति को गर आपने सीख लिया तो मिलेगा क्या? **सिर्फ आनन्द, निरानन्द**। कुछ और फिर चाहिये ही क्या? आपकी शक्ल ही बदल जायेगी। आप आनन्द में ही बहने लगेंगे।

..... इस समय ऐसा कुछ समा बंध रहा है कि सबको इसमें एकदम से मग्न हो जाना चाहिये और स्वयं को परिवर्तन में डालना ही है। परिवर्तित हमको होना ही है। हमें अपने को पूरी तरह से पवित्र बना देना है।

..... इस परिवर्तन के साथ आशीर्वाद है उस जीवन का जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता जो कबीर ने कहा–''अब मस्त हुए फिर क्या बोलें।' तो आप सब उस मस्ती में आइये, इस मस्ती को आप प्राप्त करें, उस आनन्द में आप आनन्दित हो जायें।

**प.पू.श्री माताजी, देहली, ३०.३.१९९०**

..... सहस्रार के आनन्द को 'निरानन्द' कहते हैं। प्राचीन काल से इसे निरानन्द या निर्मल आनन्द कहा जाता है, बहुत लोग इसे 'निर्मलानन्द' कहते हैं। यह आनन्द वो आनन्द है जो आप सूली पर चढ़ते समय भी अनुभव करते हैं। यह आनन्द वह आनन्द है जो आप उस समय भी अनुभव करते हैं जब आपको विष दिया जाता है। अपनी मृत्युशय्या पर लेटे हुए भी आप उस आनन्द का अनुभव करते हैं। वह आनन्द है निरानन्द।

**प.पू.श्री माताजी, ३१.७.१९८२**

**चैतन्य लहरियाँ**

* चैतन्य लहरियाँ हमारे अन्दर आदिशक्ति की सूक्ष्म शक्ति का प्रवाह है।

**प.पू.श्री माताजी, महावतार, १९८०**

* ये माँ की शक्ति है, हम कह सकते हैं कि यह आदिशक्ति की ऊर्जा है जो चैतन्य लहरी के माध्यम से सर्वत्र कार्य करती है। यह अत्यन्त सूक्ष्म ऊर्जा है जो आपके सहस्रार से बहने लगती है।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ६.५.२००१**

* चैतन्य की इन किरणों की कार्य प्रणाली अति दिलचस्प है, सामान्यत: ये छोटे अर्धविरामों (,) के आकार की बनी होती हैं परन्तु इनके आकारों में परिवर्तन भी होता रहता है। ये अबोधिता के प्रतीक स्वास्तिक का आकार भी ग्रहण कर लेती हैं और हमारे अस्तित्व – हमारी चेतना के प्रतीक ओंकार की शक्ल भी धारण कर लेती हैं। स्वस्तिक रूप धारण कर ये हमारे शरीर के बायीं ओर का तथा ओंकार रूप धारण कर शरीर के दायें भाग का पोषण करती हैं।

**प.पू.श्री माताजी, ५.५.१९९१**

# अध्याय २५

# सत्–चित्–आनन्द

..... हम कहते हैं परमात्मा सत्‌चित् आनन्द है, सत् अर्थात सत्य। मानवीय भाषा में हम सत्य का संगत (relative) रूप जानते हैं पर जिस सत्य की बात मैं आपको बताने वाली हूँ वह पूर्ण है, उसी से सारे सम्बन्ध आरम्भ होते हैं।

**सत् ही पुरुष है,** यही परमात्मा है जो वास्तविक सृजन में भाग नहीं लेता, केवल उत्प्रेरक (catalyst) है। उदाहरण इस प्रकार हो सकता है, मैं सारा कार्य कर रहा हूँ परन्तु मेरे हाथ में एक प्रकाश है जिसके बिना मैं कुछ नहीं कर सकता, यही मेरे सृजन कार्य का सहारा है। परन्तु यह प्रकाश किसी भी प्रकार से मेरा कार्य नहीं करता। इसी प्रकार सर्वशक्तिमान परमात्मा भी इसी प्रकाश की तरह साक्षी मात्र है।

परन्तु परमात्मा का **दूसरा गुण चित्त** है। उत्तेजित होने पर जब उसका दिल धड़कता है तो अपने चित्त से वह सृजन करने लगता है।

परमात्मा का **तीसरा गुण आनन्द** है। आनन्द की अनुभूति है जिसे परमात्मा अपने विचारों तथा सृजन से प्राप्त करता है।

**यह तीनों सत्–चित्–आनन्द जब शून्य बिन्दु पर मिलते हैं तो ब्रह्मतत्व बन जाते हैं। जब यह तीनों गुण एक होते हैं तो न तो कोई सृजन होता है और न ही कोई अभिव्यक्ति। आनन्द की एकाकारिता चित्त से ही तो है क्योंकि चित्त आनन्द में विलय के कगार पर होता है और आनन्द की एकाकारिता सत् से हो चुकी होती है। तीनों गुणों का एक सम्मिश्रण, पृथक करके तीन प्रकार के दृश्यों की सृष्टि करता है।**

आनन्द जब सृष्टि के साथ चलने लगता है तो सृष्टि अधोगति की ओर चल पड़ती है, सत्य की अवस्था से असत्य की ओर, माया या भ्रम की ओर, यह तो दृष्टांत का एक भाग है।

अब जब आपका मिलन सर्वशक्तिमान परमात्मा से होने लगता है तो दृष्टान्त का दूसरा भाग आरम्भ होता है। यह प्रक्रिया अब शनैःशनैः उच्चतर, अधिक सूक्ष्म तथा उत्कृष्टतर होने लगती है। पशुओं की अपेक्षा मानव के आनन्द कहीं सुन्दर हैं।

अतः आनन्द की अभिव्यक्ति में परिवर्तन होने लगता है। आपको एक विशाल आनन्द प्राप्त हो जाता है, उदाहरणतया एक कुत्ते के लिये सौन्दर्य अर्थविहीन है, शालीनता अर्थविहीन है। अतः मानव रूप में एक स्थिति विशेष में पहुँचने तक आप आपना **सत्, जो की चेतना है,** विकसित करते हैं। उसी सीमा तक आप अपना आनन्द तथा सृजनशीलता विकसित करते हैं।

**अब आप जान गये होंगे कि किस प्रकार परमात्मा की सृजनात्मकता, आनन्द एवं उसका प्रकाश मानव हृदय में आत्मा बन कर पहुँचता है।** यह अतिसुन्दर है।

हमारे अन्तःस्थित आत्मा सर्वोत्तम है। उसकी उत्कृष्टता अथाह है। इसी कारण इसका शाश्वत महत्व है। असीम होने के कारण हम उसकी थाह नहीं पा सकते।

**प.पू.श्री माताजी, चै. ल.-१९९३**

......आत्मा realization से पहले ही हृदय में विराजमान है, बिल्कुल अलग, क्षेत्रज्ञ बना हुआ-देखते रहने वाला, उसका काम, वो जैसा भी है, देखने मात्र का-वो करता रहता है। लेकिन उसका प्रकाश हमारे चित्त में नहीं है, वो हमसे अलग है, वो हमारे चित्त में नहीं है।

अब realization के बाद वो प्रकाश हमारे चित्त में आ जाता है, पहले। पहले चित्त में आता है प्रकाश और चित्त, आप जानते हैं, void (भवसागर) में बसा है। उसके बाद उसका प्रकाश सत्य में आ जाता है, क्योंकि हमारा जो मस्तिष्क है, उसमें प्रकाश आ जाने से हम सत्य को जानते हैं। जानते-माने ये नहीं कि बुद्धि से जानते हैं कि ये सत्य है, पर साक्षात में जानते हैं (अनुभव से) कि ये है सत्य। उसके पश्चात उसका प्रकाश हृदय में दिखायी देता है। हृदय, प्रगाढ़ हृदय, बढ़ने लग जाता है, विशाल होने लगता है, उसकी आनन्द की शक्ति बढ़ने लगती है। इसलिये सच्चिदानन्द-**सत्-चित्त और आनन्द-सत् मस्तिष्क में, चित्त हमारे धर्म में और आनन्द हमारी आत्मा में- प्रकाशित होने लगता है।** उसका प्रकाश पहले धीरे-धीरे फैलता है, ये आप सब जानते हैं, उसका प्रकाश धीरे-धीरे बढ़ता है।

यह सूक्ष्म चीज़ होती है, पहले बहुत सूक्ष्म क्योंकि हम जिस स्थूल व्यवस्था में रहते हैं उस व्यवस्था में उस सूक्ष्म को पकड़ना कठिन हो जाता है। धीरे-धीरे वह पकड़ आ जाती है, लेकिन उसका प्रकाश चारों तरफ जब तक नहीं फैलेगा, सिर्फ

कुण्डलिनी ऊपर आ जाने से आपने सदाशिव की पीठ (Seat) को नमस्कार कर दिया, आपके अन्दर की आत्मा का प्रकाश धुँधला–धुँधला बहने लगा, पर अभी इस मस्तिष्क में वो पूरा खिला नहीं। अब आश्चर्य की बात है कि आप अगर मस्तिष्क से इसको फैलाना चाहें तो नहीं फैला सकते। **अपना मस्तिष्क और अपना हृदय – इसका अब बड़ा सन्तुलन दिखाना होगा।** आपको तो पता ही है कि जब आप अपनी बुद्धि से बहुत ज्यादा कार्य करते हैं तो heart failure (हृदय रुकना) हो जाता है और जब आप हार्ट से बहुत ज्यादा काम करते हैं तो आपका ब्रेन फ़ेल हो जाता है। इनका एक सम्बन्ध बना ही हुआ है, पहले से बना हुआ है। **हार्ट और ब्रेन का बहुत ही गहन सम्बन्ध है और उस गहन सम्बन्ध की वजह से जिस वक्त आप पार हो जाते हैं, इसका सम्बन्ध और भी गहन होना पड़ता है। हार्ट और ब्रेन का सम्बन्ध बहुत ही घना होना चाहिये। जिस वक्त यह पूरा हो जाता है (integrate) तब चित्त आपका जो है पूर्णतया परमेश्वर स्वरूप हो जाता है।**

ऐसा ही कहा गया है हठ योग में भी कि मन और अहंकार दोनों का लय हो जाता है। लेकिन ऐसी बात करने से किसी के समझ में ही नहीं आएगा। इसका लय कैसे होगा?मन और अहंकार का, तो लोग वो मन के पीछे लगे रहते हैं, अहंकार के पीछे लगे रहते है, अहंकार को मारते रहो तो मन बढ़ जाता है और मन को मारते रहो तो अहंकार बढ़ जाता है! उनकी समझ में ही नहीं आता कि ये पागलपन क्या है, यह किस तरह से जाए? मन और अहंकार को किस तरह से जीता जाए?

उसका एक ही द्वार है– आज्ञा चक्र । आज्ञा चक्र पर काम करने से मन और अहंकार जो है उसका पूरी तरह से लय हो जाता है और वो लय होते ही हार्ट और ये जो ब्रेन है, इसमें पूरा सामंजस्य पहले आ जाता है– concord लेकिन एकता नहीं आती। पर इस एकता को ही हमको पाना है।

**तो आपका जो हार्ट है, वही हृदय सहस्रार हो जाता है औऱ आपका सहस्रार है वही हृदय हो जाता है। जो आप सोचते हैं वही आपके हृदय में है औऱ जो कुछ आपके हृदय में है, वही आप सोचते हैं। ऐसी जब गति हो जाये तो कोई भी तरह की आशंका, कोई भी तरह का अविश्वास, किसी भी तरह का भय, कोई सी भी चीज़ नहीं रहती।**

जैसे आदमी को भय लगता है, तो उसे क्या करते है! उसे ब्रेन से सिखाते

हैं, देखो भाई, भय करने की कोई बात नहीं, देखो तुम बेकार चीज़ से डर रहे थे, ये देखो प्रकाश लेकर। फिर वह अपनी बुद्धि से तो समझ लेता है, पर फिर भी डरता है ।

लेकिन जब दोनों चीज़ एक हो जाती हैं–आप **इस बात को समझने की कोशिश कीजिये**–कि जिस मस्तिष्क से आप सोचते हैं, जो आपके मन को समझाता है औऱ जो आपके मन को सँभालता भी है, वही मस्तिष्क अगर आपका मन हो जाए, यानी समझ लीजिये ऐसा कोई instrument (यंत्र) हो कि जिसमे accelerator (गति बढ़ाने वाला) और brake (रोकने वाला) दोनों automatic (स्वचालित) हों और दोनों एक हों–जब चाहे ब्रेक बन जाएँ और जब चाहे वो एक्सीलरेटर हो जाये–और वो सब जानता है।

ऐसी जब दशा आ जाए तो आप पूरे गुरु हो गए। ऐसी दशा हमको आनी चाहिये।

**प.पू.श्री माताजी, ५.०५.१९८३**

..... हम सत्–चित्त–आनन्द की बात कर रहे थे। एक बार फिर मुझे संस्कृत शब्द उपयोग करने पड़ रहे हैं। सत्–चित्त–आनन्द पराचेतना है–सर्वव्याप्त शक्ति। चित्त चेतना है। इस क्षण आप लोग चेतन हैं और मुझे सुन रहे हैं। हर क्षण आप लोग चेतन हैं परन्तु यह क्षण मृत हो कर भूत बनता जा रहा है। हर क्षण भविष्य से वर्तमान की ओर आ रहा है। इस क्षण आप लोग चेतन हैं और मुझे सुन रहे हैं। विचार उठता है और फिर इसका पतन होता है। विचार को उठते हुए आप देख सकते हैं परन्तु इसको गिरते हुए आप नहीं देख सकते। इन विचारों के बीच की दूरी 'विलम्ब' कहलाती है। कुछ समय के लिए यदि आप रुक सकें (विचारों को रोक सकें) तो आप चेतन मस्तिष्क को पहुँच जाते हैं और वहीं सत्–चित्त–आनन्द का अस्तित्व है। **आप कह सकते कि सत्–चित्त–आनन्द मस्तिष्क की एक दशा है या मस्तिष्क की वह अवस्था है जहाँ कोई विचार नहीं होता, फिर भी आप चेतन, निर्विचार होते हैं। यह प्रथम अवस्था है जिसमें आप जाते है, पराचेतन अवस्था में।**

**कुछ** लोग सोच सकते हैं कि आत्म–साक्षात्कार द्वारा व्यक्ति को ऐसी अवस्था प्राप्त हो जानी चाहिए जो आदिशंकराचार्य को प्राप्त हुई थी। परन्तु यह सम्भव नहीं है। कुछ साधकों के साथ ऐसा हो सकता है परन्तु सब के साथ ऐसा होना असम्भव है।

निर्विचार होना आपकी प्रथम अवस्था है। आप निर्विचार चेतना में चले जाते हैं। ऐसा तभी घटित होता है जब आप आज्ञा चक्र से ऊपर चले जाते हैं अर्थात्

मस्तिष्क क्षेत्र में प्रवेश करते हैं। जब आपका चित्त सत् (सत्य) बिन्दु को छू लेता है तब वास्तविकता मिथ्या से अलग हो जाती है। आपका व्यक्तित्व दोहरा हो जाता है।

**..... चित्त, जैसा मैंने आपको बताया है, गैस के दीपक में टिमटिमाते प्रकाश की तरह होता है और कुण्डलिनी उसमें गैस है जो आत्मा को छू लेती है तथा आत्मा का प्रकाश मध्य नाड़ीतन्त्र पर फैल जाता है।**

**बाह्य आवरण में चित्त का अर्थ है ध्यान–तत्व (attention part)। इस स्थिति में कुण्डलिनी ब्रह्मरन्ध्र को खोलती है और आप अपने हाथों पर चैतन्य लहरियाँ महसूस करते हैं तथा अन्य लोगों की चैतन्य लहरियाँ भी महसूस कर सकते हैं क्योंकि अब आप सामूहिक–चेतन (collectively conscious) हो जाते हैं। सत्–चित्–आनन्द में से अभी भी आप चित्त मात्र को छू पाते हैं। इस प्रकार आप चित्त भाग को महसूस करने लगते हैं जो कि अब सामूहिक चेतन होने लगता है अर्थात आप सत्त–चित्त–आनन्द रूपी सागर में गिर जाते हैं जहाँ आपको केवल सामूहिक–चेतना महसूस होती है। इसका अर्थ यह है कि आप अन्य लोगों की कुण्डलिनी को महसूस कर सकते हैं।**

.....आप केवल चित्त को महसूस करते हैं, इसके आनन्द को नहीं। पहली अवस्था में चित्त के द्वारा दूसरे व्यक्ति की कुण्डलिनी को महसूस करना तथा दूसरे व्यक्ति की कुण्डलिनी को उठाना है। कुछ समय पश्चात् मेरे फोटो की सहायता से आप किसी भी साधक को आत्मसाक्षात्कार दे सकते हैं। **परन्तु अभी भी आप आनन्द की स्थिति तक नहीं पहुँचे। आरम्भ में आप केवल अपने हाथों पर शीतल लहरियाँ महसूस करते हैं। आपको शान्ति का अहसास होता है और आप निर्विचार होते हैं। निर्विचार चेतना को आप महसूस करते हैं परन्तु इस अवस्था में भी अभी आनन्द की अनुभूति नहीं हुई।**

मैंने हज़ारों मनुष्यों और उनकी समस्याओं का अध्ययन किया है और जानती हूँ कि वास्तविकता क्या है। परन्तु कुछ ऐसे लोग भी है, यद्यपि वो बहुत कम हैं, जो अन्तिम अवस्था तक पहुँच गए हैं। **इस प्रकार प्रथम अवस्था पर जब आप आते हैं तो यह चित्त की अवस्था होती है, चेतना की अवस्था। आप सत् को छू लेते हैं अर्थात आप वास्तविकता को देखने लगते हैं, चैतन्य प्रवाह को आप**

**महसूस करने लगते हैं।** इस समय आप कहने लगते हैं कि यह आ रहा है, यह जा रहा है। अभी–अभी आपने कहा था कि 'यह आ रहा है', आपने यह नहीं कहा कि 'मैं इसे प्राप्त कर रहा हूँ, मैं दे रहा हूँ।' आपकी भाषा से 'मैं' चला जाता है।

**परन्तु अब भी अहं (Ego) और प्रतिअहं (Superego) पूर्णतः सन्तुलित नहीं हुए। वो अब भी बने हुए हैं। परन्तु आपका चित्त उन्नत हुआ है और इसे आप महसूस कर सकते हैं। इस सामूहिक चेतना से आप लोगों को रोगमुक्त कर सकते हैं और उन्हें आत्मसाक्षात्कार दे सकते हैं, और जैसा मैंने आपको बताया विश्व में कहीं पर भी विद्यमान किसी भी व्यक्ति की कुण्डलिनी को महसूस कर सकते हैं और उसके चक्रों को ठीक कर सकते हैं। यहीं पर बैठे हुए आप दूसरे व्यक्ति की स्थिति के विषय में बता सकते हैं। आपका चित्त जहाँ भी जाता है, कार्य करता है, और इस प्रकार आपका चित्त ब्रह्माण्डीय (universal) हो जाता है। आपकी चित्त रूपी बूंद सत्–चित्–आनन्द रूपी सागर से एकरूप हो जाती है।**

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १५.२.१९७७**

# अध्याय २६

# ‘आत्मा’ एवं ‘आत्मबोध’

**आत्मसाक्षात्कार** है क्या? यह स्वयं को पहचानना है। आप स्वयं को नहीं पहचानते, नहीं पहचानते आप स्वयं को। बिना स्वयं को पहचाने आप इस विश्व में जिए जा रहे हैं, क्या आप इस बात की कल्पना कर सकते हैं? आप स्वयं को नहीं जानते, आप नहीं जानते कि आप क्या हैं, आप नहीं जानते कि आप आत्मा हैं तथा ज्ञान, शुद्ध ज्ञान, का स्रोत हैं। सहजयोग में आपको एक साधारण सी बात समझनी होगी कि आप आत्मा हैं, और जो कुछ भी आत्मा नहीं है वो आप नहीं हैं।

**प.पू.श्री माताजी, लन्दन, १४.०७.२००१**

......हमारे अन्दर स्थित पवित्र आत्मा, सर्वशक्तिमान परमात्मा सदाशिव का प्रतिबिम्ब है। हमारे अन्दर परमात्मा प्रतिबिम्बित है, वही पवित्र आत्मा है। यह जल पर चमकते हुए सूर्य के समान है जो स्पष्ट प्रतिबिम्बित होता है। सूर्य यदि पत्थर पर चमकता है तो बिल्कुल प्रतिबिम्बित नहीं होता, पर शीशे पर यदि सूर्य चमकेगा तो न केवल उसमें प्रतिबिम्बित होगा बल्कि अपना प्रकाश पुनःकहीं और प्रतिबिम्बित करेगा। इसी प्रकार मनुष्यों में भी परमात्मा की अभिव्यक्ति उनके व्यक्तित्व के अनुसार होती है। व्यक्ति का व्यक्तित्व यदि स्वच्छ एवं पवित्र है तो प्रतिबिम्बित शीशे पर पड़ते हुए सूर्य के प्रकाश के समान होगा। अतः संत लोग सर्वशक्तिमान परमात्मा को भलीभाँति प्रतिबिम्बित करते हैं।.....सौभाग्य से आप सब लोगों को आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हो चुका है, इसका अर्थ यह है कि सर्वशक्तिमान परमात्मा का प्रतिबिम्ब आपके चित्त के अन्दर पहले से ही कार्यरत है। आत्मा की शक्ति से आपका मस्तिष्क ज्योतिर्मय हो चुका है। आत्मा की शक्ति यही प्रतिबिम्ब है।

**प.पू.श्री माताजी, आस्ट्रेलिया, २६-०२-१९९५**

**.....सर्वशक्तिमान परमात्मा का प्रतिबिम्ब आत्मा ही पूर्ण सत्य एवं आनन्द का स्रोत है। परन्तु मानव अवस्था में आत्मा हमारी चेतना में प्रकाशमान नहीं होती, केवल आत्मसाक्षात्कार के बाद ही आत्मा हमारी चेतना को ज्योतिर्मय करती है। अतः पूर्ण सत्य, पावन प्रेम, शांति एवं आनंद खोजने के लिये व्यक्ति का आत्मा बनना आवश्यक है। यह बात समझना तथा स्वीकार करना प्रथम**

**आवश्यक है क्योंकि हम ये शरीर मन. बुद्धि, भावनाएँ, बन्धन या अहं नहीं हैं। हम कहते हैं – 'मेरा शरीर' 'मेरा मन' परन्तु मेरा कहने वाला यह मैं कौन है ? यही आत्मा है।**

**(परा आधुनिक युग)**

आत्मा क्या है? हमारे अन्त:स्थित हो कर ये कौनसा कार्य करती है तथा परमात्मा से ये किस प्रकार सम्बन्धित है? कहा जाता है कि आत्मा हमारे हृदय में परमात्मा का प्रतिबिम्ब है। आत्मा का प्रतिबिम्ब जल में सूर्य के प्रतिबिम्ब की तरह से है। यद्यपि सूर्य को जल में देखा जा सकता है फिर भी सूर्य जल से बहुत दूर आकाश में है। इसी प्रकार आत्मा भी देखने वाले की दृष्टि के अनुरूप है। यह हर चीज़ से परे है और कुछ भी इसे सीमाबद्ध नहीं कर सकता। परन्तु प्रतिबिम्ब को स्पष्ट दिखाने वाले दर्पण का भी स्वच्छ होना आवश्यक है। दर्पण यदि स्वच्छ न होगा या दर्पण के स्थान पर यदि कोई पत्थर हो तो इसमें प्रतिबिम्ब न देखा जा सकेगा। बिल्कुल ऐसे ही व्यक्ति यदि दर्पण सम इतना स्वच्छ नहीं हुआ है कि वह अपने अन्दर परमात्मा का प्रतिबिम्ब देख सके तो ऐसा व्यक्ति परेशान दिखाई पडता है। बहते हुए पानी पर यद्यपि सूर्य भिन्न रूपों में प्रतिबिम्बित होता है परन्तु वास्तव में वह अपने स्थान पर अडोल है, केवल उसका प्रतिबिम्ब ही अपने आकार बदलता है। इसी प्रकार पापी या धूर्त व्यक्ति में या उन लोगों में जिनके हृदय इच्छाओं और आकांक्षाओं से परिपूर्ण हैं उनमें या तो आत्मा प्रतिबिम्बित ही नहीं होती या क्षण भर के लिए प्रतिबिम्बित होकर लुप्त हो जाती है। अत: ये आवश्यक हो जाता है कि ये हमारे सब अवयव शरीर, मन, बुद्धि अहंकार आदि दर्पण सम बना दिये जाएं, इन्हें दर्पण की तरह स्वच्छ कर दिया जाय।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १८.८.१९७९**

आत्मा की तुलना हम सूर्य से कर सकते हैं। सूर्य बादलों से आच्छादित हो सकता है, सूर्य को ग्रहण लग सकता है, पर वह अपने स्थान पर स्थिर रहता है। सूर्य को आप ज्योतिर्मय नहीं कर सकते, वह तो अपने आप से ही प्रकाशवान है। बादलों को यदि हटा दिया जाए तो आच्छादन समाप्त हो जाता है, और सूर्य एक बार फिर वातावरण में चमक उठता है।

**......इसी प्रकार हमारी आत्मा भी आज्ञानान्धकार से आच्छादित है और यह आच्छादन जब तक रहता है आप आत्मा को नहीं देख सकते।** चाहे थोड़े से बादल हट भी जाएँ तो भी आच्छादन बना रहता है। आत्मा के प्रकाश को चमकते

हुए देखने के लिये आकाश का पूर्णतया साफ होना आवश्यक है। बहुत से तरीकों से इस आच्छादन को हटाने का प्रयत्न किया जा सकता है। इसमें से सर्वप्रथम है यह मान लेना, ये विश्वास कि हम आत्मा हैं और बाकी सब कुछ आच्छादन मात्र है। अपने अन्तस में यह निर्णय करना होगा। आत्मसाक्षात्कार के बाद यह समझ लेना आसान हो जाता है कि आप जो हैं उससे कहीं अधिक हैं, जो आपने अब तक स्वयं को समझा है उससे कहीं भिन्न हैं।

तो नई अवस्था अब जो आती है उसमें अन्धविश्वास नहीं रह जाता। **अब आपका विश्वास आपके अनुभव की देन है।** अतः आपकी बुद्धि को उससे झगड़ा नहीं करना चाहिए, उसको चुनौती नहीं देनी चाहिये। आकाश में सितारे की झलक पाते ही वैज्ञानिक मान लेता है कि कोई सितारा है, **अतः इसी प्रकार आपको भी यदि अपने आत्मसाक्षात्कार की झलक भर प्राप्त हो जाए तो कम से कम आपको यह बात मान लेनी चाहिये कि आप आत्मा हैं। उस अनुभव पर डटे रहें और अपने चित्त को इस सत्य पर लगाये रखें कि आप आत्मा हैं। अपनी बुद्धि से कहें कि वह अब आपको और अधिक धोखा न दे। इस प्रकार आप अपनी बुद्धि की दिशा को मोड़ सकते हैं। वह अब आपकी आत्मा की खोज आरम्भ कर देगी।**

अब एक बार चाहे आपने बादलों को दूर होते हुए देख लिया हो फिर भी अभी बादल हैं। तो बादलों को उड़ाने के लिये **आपको पवन का उपयोग करना होगा–आदि शक्ति की शीतल लहरियों का। आप जानते हैं कि इस शीतल पवन का लाभ उठाने के बहुत से उपाय हैं।** अतः यह पवन किसी अन्य स्त्रोत से आती है। यह स्त्रोत आदिशक्ति का है, आपकी अपनी कुण्डलिनी का है और साकार रूप में भी आपके सम्मुख आदिकुण्डलिनी विद्यमान हैं।

**प.पू.श्रीमाताजी, १८.०६.१९८३**

......जब आप भली भाँति समझ जाएँगे कि आप पवित्र आत्मा हैं और इसमें आपको पूर्ण विश्वास हो जाएगा तो आप आश्चर्यचकित होंगे कि जो कुछ भी आप करेंगे उसके विषय में पूर्णतया विश्वस्त होंगे। हमें अपनी आत्मा की शक्ति पर पूर्ण विश्वास करना होगा, यही पूर्ण आत्म विश्वास है।

**प.पू.श्री माताजी, २६.०२.१९९५**

– आत्मा वह दर्पण है जिसमें आप स्वयं को स्पष्ट देखते हैं और परिवर्तित

होने लगते हैं। आत्मा के जागृत होने के पश्चात अन्तर्दर्शन की भी आवश्यकता नहीं रह जाती, आप स्वयं को देखते हैं कि आपमें क्या कमी है।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, १९९८**

– जो सच्ची बात है, यह आत्मा बताती है, इसलिए उसे सत्यस्वरूप कहते हैं, और क्योंकि जब आत्मा अन्दर जागृत हो जाती है तो हमारा जो चित्त है, माने हमारा अटेंशन है वो जहाँ भी जाता है, वो काम करता है। मतलब चित्त जो है वो जागृत हो जाता है। जहाँ भी आपका चित्त जाएगा वो कार्यान्वित होगा, जहाँ भी आप चित्त डालेंगे, लेकिन इसके लिये पहले अपनी आत्मा में स्थिरता आनी चाहिए। कनेक्शन (योग) पूरा होना चाहिये।

......सबसे बड़ी बात यह है कि हमें अपने को गर पहचानना है तो सर्वप्रथम हमारा सम्बन्ध उस चारों ओर फैली हुई सृष्टि से होना चाहिये और उसके लिये चैतन्य से एकाकारिता के लिये कुण्डलिनी ही उसका मार्ग है।, कोई कुछ भी बताये और मार्ग है ही नहीं।

ज्ञान का अर्थ है कि आप 'स्व' (आत्मा) को पहचानें। 'स्व' को आप यदि नहीं जानते तो आप कुछ नहीं जानते। इसी कलियुग में उस परमतत्व को आप प्राप्त करने वाले हैं जो आपके अन्दर आत्मस्वरूप विराजित है। इसके प्रकाश में आप अपने को जानेंगे, आप जानेंगे कि आपके कौन से दोष गिर गए और अब आप शुद्धचित्त आत्मस्वरूप हो गए।

.....व्यक्ति को समझना चाहिये कि उसका अंतिम लक्ष्य क्या है? हमारे विकास का अन्तिम लक्ष्य आत्मा बनना है, जो कि हमारे हृदय में सर्वशक्तिमान परमात्मा का प्रतिबिम्ब है। यह एकात्मकता (Self Identity) और आत्म ज्ञान (Self Knowledge) भी है।

**प.पू.श्री माताजी, २६.०३.२००१**

.....जब आप सहजयोग में हैं तो आपने स्वयं को स्वच्छ कर लिया है। आपकी कुण्डलिनी ने भी आपको स्वच्छ किया है और अब आप पावन व्यक्तित्व हैं, यही कारण है कि परमात्मा का प्रतिबिम्ब अब आपमें स्पष्ट है।

**प.पू.श्री माताजी, २६.०२.१९९५**

......आप परमेश्वरी प्रेम की सर्वव्यापक शक्ति के साथ एकरूप हो गये हैं। आत्मा ने आपकी चेतना को प्रकाशित कर दिया है और आपके मध्य नाड़ीतन्त्र से

चैतन्य लहरियाँ बहने लगी हैं, जो आपके पूर्ण अस्तित्व को ज्योतिर्मय बना रही हैं। परमचैतन्य की शीतल लहरियों को आप महसूस करने लगे हैं। ये चैतन्य लहरियाँ आपके परमात्मा के प्रेम की सर्वव्यापक शक्ति हैं जो आपके तालुअस्थि क्षेत्र से, आपके हाथों तथा आपकी उँगुलियों के छोरों से बहने लगी है।

......सारे चराचर में एक ही ब्रह्मतत्व बहता है, जब आप अपने को जान लेते हैं तो आपके अन्दर से ही ब्रह्मतत्व बहना शुरु हो जाता है। मैं आपको वही चीज़ देने आयी हूँ जिसको आप हज़ारों वर्षों से खोज रहे थे। यह आपकी अपनी ही है, आपकी अपनी, सिर्फ मुझे उसकी कुंजी मालूम है। मैं अपना कुछ नहीं दे रही हूँ, आपका जो है आपको ही सौंपने आयी हूँ। आप अपने को जान लीजिये और इस ब्रह्मतत्व को पा लीजिये। यही आत्मसाक्षात्कार है, यही परमात्मा का साक्षात्कार है, क्योंकि आत्मा को जाने बगैर आप परमात्मा को नहीं जान सकते।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १७.०२.१९८१**

– बहुत अनुपम चीज़ है सहजयोग। इसको समझें और इसमें रहें। जितना आप उससे तादात्म्य पायेंगे उतना ही आपका आत्मतत्व चमक सकता है। आपको सहजयोग के अभ्यास में यदि ऊपर उठना है तो आपको अपने यन्त्र को सुधारना होगा, दूसरे के यन्त्र को नहीं, इस बात को आपको निश्चित रूप से जानना होगा।

**प.पू.श्री माताजी, २२.०३.१९८३**

......आपको पवित्र आत्मा बने रहना है, यदि आप पवित्र आत्मा हैं तो आप निर्लिप्त हैं। निर्लिप्त व्यक्ति पर कोई आक्रमण नहीं हो सकता।

**प.पू.श्री माताजी, आस्ट्रेलिया, २६.०२.१९९५**

.....मनुष्य का सार और तत्व क्या है? उसका सार और तत्व उसकी आत्मा है। जब आत्मा हमारे अन्दर जागृत हो जाती है तब आनन्द–उसका स्वभाव–हमारे अन्दर स्फुरित होता है।

.....आत्मा तो परमात्मा का सत्यस्वरूप है। आत्मा सत्य के लिए भटकती है। आप आत्मा का जो सत्य स्वरूप है, उस सत्य को जानें।

**प.पू.श्री माताजी, १६.०२.१९८५**

''सद्घनं, चिद्घन नित्यमानन्द घनं क्रियम् । एकमेववाद्वयं ब्रह्मा नेह नानास्ति किंचन ।।

अतीतानुसंधानं भविष्यद् विचारणम् । औदासीन्यमपि प्राप्ते जीवनमुक्तस्य लक्षणम् ।।''

'जो घनीभूत सत्-चित्-आनन्द है, ऐसा एक नित्य अक्रिय ब्रह्म ही सत्य वस्तु है, उसमें नाना पदार्थ कोई नहीं है।'

'बीती हुई बात को याद न करना,भविष्य की चिंता न करना और वर्तमान में हुए दुःखादि में उदासीनता-यह जीवन मुक्त का लक्षण है।'

विवेक चूड़ामणि, ४६६-४२८

# अध्याय २७

# परमात्मसाक्षात्कार (God Realization)

.....आज जो मुख्य प्रश्न हमारे सम्मुख है, वह है कि परमात्मसाक्षात्कार क्या है? सर्वप्रथम आत्मसाक्षात्कार है परन्तु इसके पश्चात बहुत से महत्वाकांक्षी लोग परमात्म–साक्षात्कार को पा लेना चाहते हैं। **पहली और मुख्यतम बात जो हमें समझनी है वह यह कि मानव परमात्मा नहीं बन सकता।** एक प्रकार से आप आत्मा भी नहीं बने हैं क्योंकि आत्मा आपके माध्यम से प्रसारित हो रही है, आपको उपयोग कर रही है, आपको दे रही है और आपकी देख–भाल कर रही है। यदि आप आत्मा बन जायेंगे तो कोई भी शेष नहीं रहेगा। तो इस शरीर के रहते हुए इसी के माध्यम से आत्मा कार्य कर रही है और आपको पूर्ण प्रकाश प्रदान कर रही है, परन्तु व्यक्ति सर्वशक्तिमान परमात्मा नहीं बन सकता। यह बात आपको स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए।

......**परमात्मा के विषय में जानना ही परमात्मसाक्षात्कार है। परमात्मा की कार्यशैली को समझना और सर्वशक्तिमान परमात्मा का अंग–प्रत्यंग बनकर यह समझ लेना कि वह किस प्रकार सब कुछ नियन्त्रित करता है, यही परमात्मा का ज्ञान है।** जैसे मेरी अँगुली मेरे मस्तिष्क के विषय में नहीं जानती परन्तु यह मेरे मस्तिष्क के इच्छानुसार कार्य करती है। अँगुली मस्तिष्क नहीं बन सकती, इसे पूरी तरह से मेरे मस्तिष्क के अनुसार कार्य करना पड़ता है क्योंकि यह मस्तिष्क से इतनी जुड़ी हुई है, मस्तिष्क से इसकी इतनी एकाकारिता है। जब आपको परमात्मसाक्षात्कार हो जाता है, आप मस्तिष्क के विषय में जान जाते हैं तो आप परमात्मा को जान लेते हैं, आप उसकी शक्तियों के विषय में सभी कुछ जान जाते है। जहाँ तक मेरा सम्बंध है मुझे समझ पाना आप लोगों के लिए कठिन कार्य है क्योंकि मैं महामाया हूँ। मेरे विषय में सब कुछ जान पाना आपके लिए बहुत कठिन है। मैं अत्यन्त भ्रान्तिजनक व्यक्ति हूँ और आपको समझ लेना चाहिए कि आखिरकार ये आदिशक्ति हैं, ये सभी कुछ कर सकती है। आप भी सभी कुछ कर सकते हैं परन्तु आप मुझ जैसे नहीं बन सकते। आपको प्रेम के माध्यम से, भक्ति के माध्यम से और प्रार्थना के माध्यम से परमात्मा की शक्तियों को समझना है और इसी प्रकार आप

परमात्मसाक्षात्कारी हो सकते हैं। तब आप प्रकृति को तथा अन्य सभी चीज़ों को नियन्त्रित कर सकते हैं।

..... परमात्मा का ज्ञान प्राप्त करने के लिए पूर्ण नम्रता का होना आवश्यक है। **आप देवी–देवता नहीं बन सकते परन्तु निश्चय ही आप परमात्म–साक्षात्कारी बन सकते हैं अर्थात परमात्मा आपके माध्यम से कार्य करता है, अपनी शक्ति के रूप में आपका उपयोग करता है, आपको अपना माध्यम बनाता है, आप यह जान जाते हैं कि परमात्मा आपके साथ क्या कर रहे हैं, आपको क्या बता रहे हैं, तथा उनकी इच्छा तथा सूचना क्या है? इस प्रकार का सम्बन्ध बन जाता है।** सहजयोग में बहुत लोग लाभान्वित हुए हैं, परन्तु वे नहीं जानते कि यह कैसे हुआ? एक बार जब आप स्पष्ट रूप से समझ जाते हैं कि किस प्रकार चीज़ें कार्यान्वित हो रही हैं तथा आपको कौन सी शक्तियाँ प्राप्त हो रही हैं–तो यह परमात्म–साक्षात्कार है।

ऐसे लोग अत्यन्त शक्तिशाली हो जाते हैं क्योंकि वे बहुत सारी चीज़ों को कार्यान्वित कर सकते हैं–इस प्रकार के बहुत से सन्त हो चुके हैं परन्तु कभी–कभी अहंकार बढ़ जाने के कारण उनका पतन भी हो जाता है। ऐसा उनमें नम्रता, श्रद्धा, भक्ति और समर्पण के अभाव के कारण होता है––––इस्लाम का अर्थ है समर्पण, मोहम्मद साहब ने इस्लाम के विषय में बात की, अर्थात उन्होंने कहा कि समर्पित हो जाइए। बिना समर्पित हुए आप कभी भी परमात्मा को नहीं जान सकते। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि स्वयं को जाने बिना आप परमात्मा को नहीं जान पाएंगे।–––––

निर्विचार समाधि की अवस्था अति सुन्दर है। आपको इस अवस्था में होना चाहिए। इस स्थिति में न तो आप प्रभुत्व जमा रहे होते हैं, न ही किसी से समझौता कर रहे होते हैं, आप अपनी टाँगों पर खड़े होते हैं और अच्छी तरह से जानतेहैं कि किसी विचार, किसी प्रभुत्व या दबाव से आप संचालित नहीं हैं। तो **आप पूर्णत: स्वतन्त्र पक्षी हो जाते हैं, फिर अपनी उड़ान प्राप्त करना आपका कार्य बन जाता है। एक उड़ान निर्विचार समाधि तक है, दूसरी निर्विकल्प समाधि तक और तीसरी परमात्म–साक्षात्कार तक।** मैंने देखा है कि मेरे बहुत समीप रहने वाले लोग भी नहीं समझते। वो इस तरह से बर्ताव करते हैं मानों देवता बन गए हों। वह इतने अहंवादी हैं कि मैं उन पर आश्चर्यचकित हूँ–अन्तत: उन्हें सहजयोग छोड़ना पड़ता है।

मैं चाहे आपकी बहुत अधिक प्रशंसा करूँ, आपके विषय में बहुत कुछ कहूँ

आपको फूल कर कुप्पा नहीं हो जाना चाहिए। यह परीक्षा–स्थल है। यदि मैं आपसे कहूँ यह ठीक नहीं है, इसका सुधार करो तब भी आपको बुरा नहीं मानना चाहिए क्योंकि मुझे यह कार्य करना है। यह मेरा कार्य है और आपका कार्य मेरी बात को सुनना है क्योंकि मुझे आपसे कोई लाभ नहीं उठाना। मैं आपसे कुछ नहीं माँगती। मैं केवल इतना चाहती हूँ कि आपको मेरी सारी शक्तियाँ प्राप्त हो जाएं। जो मैं हूँ, वो आप नहीं बन सकते, परन्तु **कृपया मेरी शक्तियों को तो लेने का प्रयास करें। मेरी शक्तियाँ प्राप्त कर लेना कठिन कार्य नहीं है। यही परमात्म–साक्षात्कार है।**

**यही शिव और सदाशिव का ज्ञान है। शिव के माध्यम से आप सदाशिव को समझते हैं। प्रतिबिम्ब को देखते हैं और प्रतिबिम्ब से समझते हैं कि प्रतिबिम्बक कौन है ?** इस प्रकार आप उस स्थिति में पहुँच जाते हैं जहाँ आप सोचते हैं कि आप परमात्मा के साम्राज्य में स्थापित हो गए हैं तथा परमात्मा को देख सकते हैं, परमात्मा को महसूस कर सकते हैं, उन्हें समझ सकते हैं तथा उनसे प्रेम कर सकते हैं।

परमात्मा आपको आशीर्वादित करें।

**प.पू.श्री माताजी, शिवपूजा, ३.३.१९९६**

# अध्याय २८

# सच्चे सहजयोगी की पहचान

## पंचतत्वों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति

...... जैसा मैंने कहा, हम पाँच तत्वों से बने हैं, ठीक है? तो जब आपको जागृति प्राप्त होती है, जब कुण्डलिनी आपके सहस्रार पर पहुँचकर आपके ब्रह्मरन्ध्र का भेदन करती है तो आपकी एकाकारिता परमेश्वरी शक्ति (डिवाइन पावर) से हो जाती है। यह परमेश्वरी शक्ति तब आपके माध्यम से बहने लगती है। तार जुड़ जाता है। जब ये शक्ति आपमें से बहने लगती है तो क्या होता है? इसकी सूक्ष्मता हमें समझनी चाहिए। सूक्ष्मता ये है कि **जिन पंचतत्वों से हम बने हैं उन्हें ये चैतन्य लहरियाँ शनै: शनै: उनके सूक्ष्म तत्वों में जोड़ने लगती हैं।** कहा गया है, बाइबल में भी कहा गया है, कि 'शब्द' ही परमात्मा है। परन्तु ये 'शब्द' है क्या? आप कह सकते हैं कि 'शब्द' मौन आदेश **(silent commandment)** है। हम इस प्रकार कह सकते हैं। परन्तु भारतीय दर्शन के अनुसार शब्द से बिन्दु की उत्पत्ति होती है, या हम कह सकते हैं कि शब्द नाद बन जाता है और फिर बिन्दु और इस बिन्दु से ये पाँचों-तत्व एक के बाद एक अभिव्यक्त होने लगते हैं।

**१.** प्रथम तत्व जो आता है वह है **'तेज'**। प्रकाश अभिव्यक्त होने वाला प्रथम तत्व है। तो प्रकाश पहले तत्व का सार है। यह सब संस्कृत में लिखा हुआ है। .......तो प्रथम तत्व प्रकाश का सूक्ष्म तत्व है, ज्ञानोदीप्ति (ज्ञान का प्रकाश) हो जाना। परन्तु ज्ञानोदीप्ति का अन्य अर्थ भी है, हम इसे 'तेज' कह सकते हैं। उदाहरण के रूप में **आत्मसाक्षात्कार प्राप्त होने के प्रश्चात् व्यक्ति का मुखमण्डल तेजोमय हो उठता है।** तो हम कह सकते हैं कि प्रकाश का सूक्ष्म तत्व तेजस्विता है, यह तेजस्विता आपके मुखमण्डल पर दिखाई देने लगती है। तेजस्वी मुखमण्डल से लोग बहुत प्रभावित होते हैं और ऐसे आभावान व्यक्ति को विशेष सम्मान देने लगते हैं। आपने मेरे फोटो देखे हैं, बहुत बार आपको उनमें अथाह प्रकाश देखने को मिलता है। यह कुछ और न होकर मेरे अन्दर का प्रकाश है जो सूक्ष्म हो कर दैदीप्यमान हो रहा है। पंचतत्वों में प्रकाश भी एक है। मुझमें जब प्रकाश सूक्ष्म हो जाता है तो यह तेजदायी हो जाता है तथा आपके अन्दर भी यह सूक्ष्म विकास घटित होता है। आपके मुखमण्डल

भी तेजोमय हो उठते हैं। उन पर तेज होता है और आपकी त्वचा का रंग भी भिन्न हो जाता है। इस तेज को समझा जाना चाहिए। जिस स्थूल प्रकाश से हम बने हैं यह उसका सूक्ष्म तत्व (सार तत्व) है।

**२.** तत्पश्चात् **प्रकाश तत्व** से एक अन्य तत्व का उद्भव होता है, जिसे हम संस्कृत में **'वायु'** कहते हैं अर्थात् हवा। इस स्थूल वायु का सूक्ष्म तत्व, आपको प्राप्त होने वाली, शीतल चैतन्य लहरियाँ हैं। शीतल चैतन्य लहरियाँ उसी वायु तत्व का सार हैं। **हमें बनाने वाले पाँच मूल तत्वों में से वायु तत्व का सार ही शीतल चैतन्य लहरियाँ कहलाता है। जब आपका आध्यात्मिक विकास होता है तो ये सभी सूक्ष्म तत्व अपनी अभिव्यक्ति करने लगते हैं। आप केवल लहरियाँ ही नहीं प्राप्त करते, शीतलता का भी अनुभव करते हैं और यही वायु तत्व का सार हैं।**

**३.** इसके पश्चात् **जल तत्व** है। जल भी हमें बनाने वाले तत्वों में से एक है। इसका सूक्ष्म तत्व क्या है? **जल तत्व सूक्ष्म रूप में जब अभिव्यक्त होता है तो यह कठोर त्वचा को कोमल करता है।** त्वचा कोमल हो जाती है। आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति का एक अन्य चिन्ह ये है कि उन्हें स्निग्धता लाने के लिए चेहरे पर किसी क्रीम का प्रयोग नहीं करना पड़ता। **उनके अन्दर का जल तत्व ही उनके चेहरे की त्वचा को चमक और पोषण प्रदान करता है तथा उसे कोमल बनाता है। चेहरे की ये कोमलता प्रत्यक्ष दिखाई देती है। आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति के मुख पर ये अभिव्यक्ति अत्यन्त आवश्यक है।** इसी के साथ-साथ आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति अत्यन्त विनम्र एवं मृदु हो जाता है। किसी से जब वह बातचीत करता है तो उसकी आवाज में प्रेम होता है या यूँ कहें कि जल की शीतलता होती है। तो आपके अन्दर जिस अन्य सूक्ष्मता की अभिव्यक्ति होनी चाहिए आपके आचरण में, आपकी त्वचा पर, दूसरों के प्रति आपके व्यवहार में-वह यह है कि आपको जल की तरह से होना चाहिए। **जल की तरह से गतिशील, शीतलता, शान्ति एवं स्वच्छता प्रदायक होना चाहिए। आत्मसाक्षात्कारी होने के पश्चात् ये गुण आपके व्यक्तित्व का अंग-प्रत्यंग हो जाते हैं।**

**४.** जल तत्व के पश्चात् **अग्नि तत्व** है। **आपमें अग्नि भी है परन्तु यह अत्यन्त शान्त अग्नि है। यह किसी अन्य को नही जलाती, आपके अन्दर की बुराइयों को, आपके माध्यम से अन्य लोगों की बुराइयों को, आपके माध्यम से**

**अन्य लोगों की बुराइयों को भी आपकी ये अग्नि जला देती है।** मान लो कोई अत्यन्त क्रोध से मेरी ओर आता है तो मेरे अन्दर की अग्नि से उसका क्रोध शान्त हो जाता है। इतना ही नहीं गहन आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति को अग्नि जला नहीं सकती। अग्नि की जलन उस तक नहीं आ सकती, यह बात समझ लेनी बहुत आवश्यक है। आप यदि कोई गलत कार्य कर रहे हैं तो अग्नि आपको जला सकती है। परन्तु यदि आप अच्छे सहजयोगी हैं, पूर्णत: विकसित सहजयोगी हैं तो अग्नि आपको कभी जलाएगी नहीं। तो हमें समझना है कि अग्नि तत्व का सार यदि हमें प्राप्त हो जाता है तो अग्नि हमें जला नहीं सकती।

इस प्रकार अग्नि तथा जल, दोनों ही तत्व दिव्य बन जाते हैं। उदाहरणार्थ जिस जल को आप छूते हैं, जो जल आप पीते हैं, **जिस जल में आप अपना हाथ डालते हैं, वह चैतन्यित हो जाता है। इसका क्या अर्थ है? जल की सूक्ष्मता इसमें आ जाती है–शीतल तथा रोगमुक्त करने की शक्ति उस जल में आ जाती है। तो सूक्ष्म होने के पश्चात् सभी शक्तियों की अभिव्यक्ति होने लगती है और इन्हें आप स्वयं देख सकते हैं।** इनके लिए आपको प्रयोग (experiment) नहीं करने पड़ते।

५. अन्त में **पृथ्वी माँ** हैं। पृथ्वी माँ बहुत महत्वपूर्ण हैं, बहुत महत्वपूर्ण। रूस में (डाचा में) लिया गया एक फोटोग्राफ है जिसमें कुण्डलिनी पृथ्वी माँ से निकल रही हैं। स्पष्ट दिखाया गया है कि पृथ्वी माँ ही यह सब दर्शाती है। उदाहरण के रूप मेंआपने फूल देखे हैं, पुष्प यदि आप मेरे कमरे में रखें तो वे खिल उठते हैं, इतने बड़े हो जाते हैं कि लोगों ने कभी इतने बड़े आकार के फूल देखे नहीं होते। मैं उन पर कुछ नहीं करती। मैं तो केवल वहाँ बैठी होती हूँ। फूलों के साथ क्या घटित होता है? धरा माँ का नियम कार्य करता है। माँ ही आपको पोषण प्रदान करती है और आप स्वस्थ हो जाते हैं और इस प्रकार पृथ्वी तत्व की सूक्ष्मता कार्य करती है। पृथ्वी माँ इन सब पेड़ों और पुष्पों को जन्म देती है।

यह हमारे अन्दर भी एक बहुत बड़ी भूमिका निभाती है। पृथ्वी माँ के हमसे गहन सम्बन्ध हैं ......पृथ्वी माँ की बहुत सी सूक्ष्मताऐं हममें आ जाती हैं। इनमें से एक गुरुत्वाकर्षण है। गुरुत्वाकर्षण की अभिव्यक्ति से व्यक्ति अत्यन्त आकर्षक हो जाता है–शारीरिक रूप से नहीं, आध्यात्मिक रूप से। ऐसा व्यक्ति अन्य लोगों को आकर्षित करता है। लोग सोचते हैं कि उसमें कुछ विशेष है। यह पृथ्वी माँ का एक गुण है। पृथ्वी माँ में यदि गुरुत्वाकर्षण न होता तो हम पृथ्वी की गति की तेज़ी से ही दूर जा गिरते।

पृथ्वी माँ के अन्य गुणों की अभिव्यक्ति भी हममें होने लगती है। पृथ्वी माँ की तरह से हम भी अत्यन्त सहनशील एवं धैर्यवान बनने लगते हैं। आप यदि सहनशील नहीं है, उग्र स्वभाव हैं तो पृथ्वी तत्व की सूक्ष्मता की अभिव्यक्ति आपमें नहीं हुई है।

**प.पू.श्री माताजी, १६.१२.१९९८**

पिछली बार मैंने आपको चैतन्य लहरियों के बारे में बताया था। ये क्या हैं, किसकी ओर संकेत करती हैं, तेज, जल, पृथ्वी, वायु और अग्नि तत्वों से 'तन्मात्रा' नामक सूक्ष्म शक्ति हम किस प्रकार प्राप्त करते हैं? परन्तु एक तत्व के विषय में मैंने आपको नहीं बताया था, एक विशेष तत्व के विषय में, जिसे अंग्रेजी भाषा में (ईथर) **आकाश कहते हैं**। यह तन्मात्रा **आकाशतत्व** द्वारा संचालित की जाती है। ईसा मसीह ने, आज्ञा चक्र को खोलने के लिए अपना जीवन बलिदान कर दिया। उनके बलिदान स्वरूप हम आकाश की स्थिति तक पहुँच पाए। इसके बिना यह सम्भव न होता। ........ईसा मसीह ने आपको मस्तिष्क के स्तर से ऊपर उठाया है। यह कठिनतम कार्य है।

ध्यानधारणा में आपको मस्तिष्क से परे जाना पड़ेगा। .......ईसा मसीह ने आपको यह बहुत बड़ा आशीर्वाद दिया है। आपको चाहिए कि इसका आनन्द उठायें। तभी आपके अन्दर आकाश–तत्व कार्य करेगा। यह आपके चित्त के माध्यम से कार्य करता है। यह आपके चित्त के माध्यम से कार्य करता है। आप जानते हैं कि यह मुझमें भी कार्य करता है। अपने चित्त से मैं बहुत से कार्य करती हूँ। कैसे ? मेरा चित्त निर्विचार हो गया है, पूर्णत: निर्विचार। जहाँ भी यह जाता है, कार्य सम्पन्न करता है, परन्तु यदि विचार करने के लिए आप चित्त का उपयोग करेंगे तो यह अपेक्षित कार्य नहीं कर पाता। **व्यक्ति यदि निर्विचारिता में है तो चित्त चमत्कारिक रूप से कार्य करता है, अन्यथा नहीं। अत: चित्त को स्वयं से उठकर, दूसरों पर और फिर मानवता के उच्च स्तर तक जाना होता है, जहाँ आपका सम्पर्क आकाश तत्व से हो जाता है, जिसे हम 'तन्मात्रा' या आकाश तत्व का सार कहते हैं।** आकाश तत्व से हम दूरदर्शन बना सकते हैं, दूरभाष बना सकते हैं अन्यथा यह चमत्कार है। तन्मात्रा से यहाँ बैठे हुए आप कार्य कर सकते हैं। यह कार्य करती है। केवल चित्त कार्य करता है। मैं ये बात जानती हूँ और आप भी यह भलीभाँति जानते हैं। चित्त डालने के लिए आपको मुझसे नहीं कहना पड़ता। आप स्वयं चित्त डालिए और कार्य हो जाएगा।

यह अत्यन्त महत्वपूर्ण उपलब्धि आपने पा ली है। मैं सोचती हूँ, एक बार

जब आप इसे पा लेंगे तो कोई समस्या न रह जाएगी। पृथ्वी तत्व से हमारी अभिव्यक्ति होने लगती है फिर अग्नि, जल तत्व से अभिव्यक्ति होती है।.....तत्पश्चात् हम तेजस तक आते हैं और हमारे मुख मण्डल दीप्तिमान हो उठते हैं। अंत में हमें निर्विचार चेतना (समाधि) प्राप्त हो जाती है। जिसके माध्यम से हमारा चित्त किसी भी प्रकार के विशेष कार्य को करने के लिए स्वतन्त्र हो जाता है। ......चित्त की इस स्थिति में आप महसूस नहीं करते कि आपको क्या प्राप्त हो गया है, आप कहाँ खड़े हैं, कौन से वस्त्र आपने पहने हैं तथा अन्य लोग क्या कर रहे हैं। नहीं, कुछ नहीं।

**प.पू.श्री माताजी, २५.१२.१९९८**

## गुण, काल, एवं धर्म अतीत होना

.......कल मैंने आपको बताया था कि मानवीय चेतना में किस चीज़ का अभाव है और यह भी कि चित्त आत्मा पर नहीं है।

**१.** .....जब चित्त आत्मा पर होगा तो **सर्वप्रथम आप गुणातीत हो जाएंगे** – आप गुणों से ऊपर उठ जायेंगें। इसका अभिप्राय यह है कि अब आप तमोगुणी इच्छाओं और लिप्साओं से लिप्त व्यक्ति नहीं रहे। वहाँ से आपका चित्त दूसरी शैली पर चला जाता है, जहाँ आप **'रजोगुणी'** (आक्रामक) हो जाते हैं। आप दूसरों से स्पर्धा करना चाहते हैं। यह संघर्ष अनुशासन है । अतीत का अर्थ हैं 'परे'। तत्पश्चात् आप **'सत्वगुणी'** हो जाते हैं। इस स्थिति में आप साधना करते हैं और देखते हैं कि इस प्रकार के प्रचण्ड आचरण में क्या गलती है और इस प्रकार के उग्रजीवन से घृणा करने लगते हैं।

इससे मुक्ति पाकर आप सत्य साधना की ओर चल पड़ते हैं। यह स्थिति भी समाप्त हो जाती है और आप **गुणातीत** हो जाते हैं, ऐसा तब घटित होता है जब आपका चित्त आत्मा पर जाता है क्योंकि अब आपका **चित्त आपके जन्मजात बन्धनों, गुणों तथा अहं पर नहीं होता। तो आप इन सबसे ऊपर उठ जाते हैं।** सामान्य लोगों के लिये यह अत्यन्त असाधारण बात है पर अब आपके लिये नहीं। यह स्वत: ही घटित हो जाता है और आप अपने अस्तित्व का आनंद लेते हैं। अब आपको अपनी सुख–सुविधाओं एवं छोटी–छोटी चीज़ों की चिन्ता नहीं रहती। **अभी तक ये तीन गुण (तम–रज–सत) जो किसी न किसी प्रकार से आप पर शासन करते थे, आप इनसे ऊपर उठ जाते हैं। अत: इस प्रकार आप मानवीय चेतना की**

**सीमायें पार कर लेते हैं।**

**२. अब दूसरी स्थिति में आप कालातीत हो जाते हैं। आप समय से ऊपर उठ जाते हैं।** मैं जानती हूँ कि आज मुझे आने में देर हो गयी, ऐसा हो जाता है, परन्तु समय का आप पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। मुझे देर होने के बावजूद भी आप आनन्द ले रहे हैं। घर में बैठी हुई मैं देख रही थी कि आप सब अत्यंत आनन्द की स्थिति में हैं। आप सभी बहुत आनन्द में हें, मेरी अनुपस्थिति में भी आप आनन्द ले रहे हैं। यही समय से ऊपर होना है। आप समय के पाश में नहीं हैं। **जो भी समय है आपका अपना है क्योंकि आप वर्तमान में स्थित हैं। यहाँ खड़े होकर आप भविष्य केबारे में नहीं सोच रहे, आप यह नहीं सोच रहे कि कल** क्या होगा या किस प्रकार आप वायुयान पकड़ेंगे या किस प्रकार कार्य करेंगे? **यहाँ पर आप केवल आनन्द ले रहे हैं, वर्तमान का आनन्द ले रहे हैं और वर्तमान ही वास्तविकता है। यदि आप भूत या भविष्य के बारे में सोच रहे होते तो आप वास्तविकता में न होते।**

मैंने बहुत बार बताया है कि भूतकाल समाप्त हो गया है और भविष्य का कोई अस्तित्व नहीं है। इस क्षण आप यहाँ हैं, हो सकता है मेरी प्रतीक्षा में बैठे हों, हो सकता है कि यहाँ अपनी यात्रा के हर क्षण तथा मुझसे अपने योग का आनन्द ले रहे हों। इस आनन्द का वर्णन किया जा सकता है कि किस प्रकार आप आनन्द ले रहे हैं। अन्यथा लोग घड़ी देख रहे होते और हैरान हो रहे होते कि श्री माताजी क्यों नहीं आईं? क्या समस्या है? वे क्यों नहीं पहुँचीं? आदि–आदि। यह स्थिति कालातीत होने में बहुत सहायक है...........। जब आप समय से ऊपर होते हैं तो उस क्षण के लिये आप ज़िम्मेदार हो जाते हैं, यह ज़िम्मेदारी सामूहिक है, अर्थात आप सब ज़िम्मेदार बन जाते हैं। बहुत हैरानी की बात है कि हम इतने सारे लोग यहाँ हैं परन्तु न कोई लड़ाई है न झगड़ा। एक दूसरे पर हावी होने के मूर्खतापूर्ण विचारों से ऊपर उठकर हम बहुत अच्छी तरह स्थापित हो गये हैं। समय में लिप्त न होने के कारण ऐसा घटित हुआ है। समय अब आपको झुका नहीं सकता।

**३. तत्पश्चात् आप धर्मातीत हो जाते हैं। आप समय से ऊपर उठ जाते हैं। अपने मानवीय स्वभाव से ऊपर उठ जाते हैं, इसका अभिप्राय यह है कि जो भी कार्य आप करते हैं वह धार्मिक होता है, आपके सभी प्रयत्न धार्मिक होते हैं।** यदि आप व्यापार भी करते हैं तो उसे भी धर्मानुकूल करने का प्रयत्न करते हैं क्योंकि

आप धर्म से ऊपर उठ गए हैं। किसी धर्म विशेष का तरीका या कर्मकाण्ड अपनाने की चिन्ता आप नहीं करते। आप इससे ऊपर हैं। उदाहरणार्थ– धर्म में फँसे लोग समझते हैं कि उन्हें प्रात:बहुत जल्दी उठना चाहिये........ और यदि कर्मकाण्ड में कोई गलती या कमी हो जाये तो वे दु:खी हो जाते हैं और घबरा जाते हैं। पर आपके साथ यह बात नहीं है **क्योंकि आप तो हमेशा ही ध्यान में होते हैं, सदैव ध्यान–धारणा की स्थिति में होते हैं। कोई गड़बड़ी भी यदि हो जाए तो आप चेतना (निर्विचारिता) में चले जाते हैं जहाँ आपको सारे समाधान प्राप्त हो जाते हैं।** आप परेशान नहीं होते, बिल्कुल परेशान नहीं होते। यदि कुछ गड़बड़ हो जाए तो कर्मकाण्डी–स्वभाव व्यक्ति को अत्यन्त संकुचित तथा विनम्र बना देता है और कभी–कभी आक्रामक भी बना देता है।

.....आत्मसाक्षात्कार होते ही आप स्वयं को देखने लगते है कि आपमें क्या दोष है।..........आत्मा के प्रकाश में आप स्वयं को देखते है–केवल स्वयं को। ..........आपकी वंशपरम्परा (जीन्स) परिवर्तित हो जाती है। यही सहजयोग है। यहाँ आप आत्मा बन जाते हैं, सभी कुछ परिवर्तित हो जाता है। आप ऐसे व्यक्ति बन जाते हैं जो जानता है कि आनन्द क्या है, जो आनन्द का आनन्द लेता है.........जो अन्य लोगों को आनन्द प्रदान करता है और उन्हें पसन्द करता है.....।

..... आप अब आत्मा बन गये हैं। सत्य यह है कि आप आत्मा हैं। **एक बार जब आप आत्मा बन जाते हैं तो आप गुणातीत, कालातीत और धर्मातीत हो जाते हैं। इन सीमाओं को पार करते ही आप समुद्र में एक बूँद सम हो जाते हैं। बूँद यदि समुद्र से बाहर है तो सदैव वो सूर्य से डरती है कि कहीं धूप इसे सुखा न दे। यह नहीं जानती कि क्या किया जाय और किधर जाया जाए? परन्तु एक बार उसकी एकाकारिता जब समुद्र से हो जाती है तो यह चलती है और आनन्द लेती हैं क्योंकि अब यह अकेली नहीं है, यह अकेली नहीं हैं। आनन्द के सागर की लहरों के साथ यह चल रही है। आपने भी यह स्थिति प्राप्त की है, इसका ज्ञान आपको है.......।**

..... जब आप धर्मातीत हो जाते हैं, धर्म से ऊपर उठ जाते हैं तब धर्म आपका एक अंग बन जाता है, तब आप गलत काम नहीं करते। ऐसा नहीं है कि कोई आपसे कहता है, या आप किसी का अनुसरण करते हैं। क्या ऐसा करने के लिये कोई

विवशता या अनुशासन होता है? परन्तु आप गलत कार्य करना ही नहीं चाहते। कोई असम्मानीय, अप्रिय बात आप नहीं कहना चाहते। आत्मरूप सहजयोगी का यही गुण है। आत्मा बनने के पश्चात आपको कुछ बताना नहीं पड़ता। ये इतना प्रत्यक्ष, स्पष्ट होता है कि जितनी गहराई में व्यक्ति अपने अन्दर जाता है उसे लगता कि उसके अन्दर अत्यन्त महानता और सुन्दर भावनाएँ निहित हैं। अपने सद्गुणों से आप दूसरों के अहं पर विजय पा लेते हैं।..........

.....**तो आत्मा और उसका प्रकाश पथप्रदर्शक तत्व हैं, जिनके द्वारा आप गुणातीत, कालातीत और धर्मातीत बन जाते हैं। आप किसी चीज़ के दास नहीं हैं, आप घड़ी के, समय के दास नहीं हैं, अपने गुणों के भी आप दास नहीं हैं। आप यह भी नहीं देखना चाहते कि आप आक्रामक हैं, तामसिक हैं, या सन्तुलित। आप सहजयोगी हैं और सहजयोगी इन सब चीज़ों से ऊपर होता है। आप गुणातीत हैं। आप धर्मातीत हैं क्योंकि धर्म अब आपका अंग-प्रत्यंग बन गया है,** आपको कोई धर्मानुशासन नहीं मानना पड़ता।..........

..... आपको पता होना चाहिये कि आप आत्मा हैं और आत्मा के रूप में आप इन सब चीज़ों से ऊपर उठ जाते हैं और एक बार जब ऐसा हो जाता है तो, आप हैरान होंगें कि, आपका व्यक्तित्व कितना महान हो गया है!

**प.पू.श्री माताजी, देहली, २१.३.१९९८**

.....जब आप सहजयोग में आ जाते हैं, तो आप सामान्य मनुष्य नहीं रह जाते, आप उससे ऊपर उठ जाते हैं। आपकी पसन्द या ना पसन्द विभिन्न हो जाती है। आपका सारा नज़रिया बदल जाता है। कभी आप शिशुओं की भाँति बर्ताव करते हैं और कभी-कभी तो आप बहुत ही गहन विषयों पर बोलने लगते हैं। साक्षात्कारी आत्मा बनने के बाद आप दूसरों को देखना बन्द कर देते हैं और **स्वयं के प्रति स्वयं को आत्मरूप में ही** देखते हैं। आप जानते हैं कि स्वयं को कैसे सुधारना है।

सहजयोग में जब आप आत्मा बन जाते हैं तब सभी कुछ बदल जाता है। आप एक ऐसे मनुष्य बन जाते हैं जो जानता है कि प्रसन्नता क्या है, प्रसन्नता एवं आनंद कैसे लिया जाये और जो दूसरों को खुशी देता है। सदैव यह सोचता रहता है कि दूसरों को कैसे आनन्दित किया जाये? आप एक बुद्धिमान, सुन्दर और आनन्ददायी व्यक्ति बन जाते हैं।

आपमें एक नये प्रकार का विवेक जागृत होता है–जिसे परमात्मा की सर्वव्यापक शक्ति कहते हैं..........जब आप इस शक्ति से जुड़ जाते हैं तब आप एक साधारण मनुष्य से हज़ारगुना सुखी होते हैं।

**आप अपने जीवन में देखिये, आप कैसे मेरे पास आए, सहजयोग में आए। यह एक दिव्य शक्ति है जिसने सब सम्भव किया। आपने अपने अन्दर एक प्रकार की शक्ति और प्रेम का अनुभव किया। एक बात निश्चित है कि सहजयोगी मेरी सारी शक्ति प्राप्त करते हैं।**

**एक माँ के लिये सबसे प्रसन्नता की बात उसके बेटे या बेटी का बड़ा होकर उसी की तरह बनना है।**

**प.पू.श्री माताजी, ९.१२.१९९१**

आपका लक्ष्य आत्मा बनना है। हमारे अन्त:स्थित आत्मा सर्वोत्तम है, उसकी उत्कृष्टता अथाह है। परमात्मा की सृजनात्मकता, आनन्द एवं उसका प्रकाश मानव के हृदय में आत्मा बनकर पहुँचता है – यह अतिसुन्दर है।

**चैतन्य लहरी १९९३, खण्ड ५, पृ.१५**

आत्मा के दिव्य विवेक में चित्त का स्थित होना आपके लालच, स्वार्थपरता, स्वामित्व भाव और असन्तुष्ट मस्तिष्क को नियंत्रित करता है।

**परा आधुनिक युग**

# अध्याय २९

# पूर्ण समर्पण एवं अखण्ड श्रद्धा

...... आज मैं आपको कुछ ऐसी बातें बताने वाली हूँ जो मुझे बहुत पहले बता देनी चाहिए थी।

जैसे मैंने आपको बताया है, **आपका मुझे पहचानना अत्यन्त आवश्यक है।** उत्थान के लिए मुझे मान्यता देने की शर्त आवश्यक है, मैं इसे बदल नहीं सकती। ईसा–मसीह ने कहा था कि ''मेरे विरुद्ध यदि कुछ कहा गया तो उसे सहन कर लिया जाएगा, क्षमा कर दिया जाएगा परन्तु आदिशक्ति (Holy Ghost) के विरुद्ध कही गई कोई भी बात बर्दाश्त नहीं की जाएगी (Anything against me will be tolerated, will be forgiven but anything  against the Holy Ghost will not be) ये बहुत बड़ी चेतावनी है। सम्भवत: लोग इसका अर्थ नहीं समझते। नि:सन्देह आपमें से कोई भी मेरे विरुद्ध नहीं, ये बात सच है। आखिरकार आप सब मेरे बच्चे हैं, मैं आपको अथाह प्रेम करती हूँ और आप मुझे। यह चेतावनी तो ईसा–मसीह ने आपको दी है। परन्तु हमें समझना चाहिए कि हम उतनी तेज़ी से उन्नति क्यों नहीं कर रहे जितनी हमें करनी चाहिए।

लोगों को जब सम्मोहित कर लिया जाता है तो वे धाराशायी होकर अपने गुरुओं के सम्मुख लमलेट हो जाते है। पूर्णत: धाराशायी हो जाते हैं। .......ऐसे सभी लोग तेज़ी से अन्धकार में, गहन अंधकार में, और पूर्ण विनाश की ओर चले जाते हैं। परन्तु आप सब लोग सहजयोगी हैं और आपने अपना निर्माण करना है।

अभी तक इतने स्पष्ट शब्दों में यह बात आपको बताकर मैं आपके अहं को ठेस नहीं पहुँचाना चाहती थी। सम्भवत: पहली बार मैं ये बात आपको कह रही हूँ – **''कि  आपको मेरे प्रति पूर्णत: समर्पित होना होगा, सहजयोग के प्रति नहीं, मेरे प्रति।'' सहजयोग तो मात्र मेरा एक पक्ष है, सभी कुछ छोड़कर आपको समर्पित होना होगा।** पूर्ण समर्पण– अन्यथा आप आगे उन्नत न हो पाएंगे, बिना कोई प्रश्न किए, बिना कोई बहस किए।

**पूर्ण समर्पण ही एकमेव मार्ग है जिसके द्वारा आप उत्क्रान्ति प्राप्त कर सकेंगे।** आज भी लोगों को पकड़ हो जाती है, उन्हें समस्याएं हो जाती हैं! क्या

कारण है? बहुत से लोग मुझसे पूछते हैं कि श्री माताजी एक बार आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हो जाने के बाद भी क्यों हमारा पतन होता है?

इसका एकमात्र कारण यह है कि समर्पण अधूरा है। **यदि पूर्ण श्रद्धा और पूर्ण समर्पण स्थापित नहीं हुआ, यदि आप अभी तक भी नहीं समझ पाए कि मैं परमेश्वरी हूँ, यदि आप अपेक्षित रूप से इस बात को नहीं समझ पाए तो पतन आवश्यक है।** ये बात आप सब पर लागू नहीं होती। फिर भी आप यदि अपने हृदय में झाँकें, अपने मस्तिष्क में देखें तो आप जान जाएंगे कि जो समर्पण भाव, जो श्रद्धा भाव आपके मन में ईसामसीह, श्री कृष्ण तथा अन्य अवतरणों के प्रति था वह मेरे प्रति नहीं है। श्रीकृष्ण ने कहा था : 'सर्वधर्माणाम् परित्यज्य, मामेकम् शरणम् ब्रज'' अर्थात विश्व के सभी धर्मों को भूलकर मेरी शरण में आ जाओ। धर्म से उनका अभिप्राय हिन्दू, सिक्ख, ईसाई या मुसलिम धर्म नहीं था। उनका अभिप्राय आश्रय (Sustenance) से था। **''सभी अन्य आश्रय भूलकर मेरे प्रति पूर्णत: समर्पित हो जाओ।''** यह बात उन्होंने छ: हजार वर्ष पूर्व कही थी। आज भी ऐसे बहुत से लोग हैं जो कहेंगे कि, हमने स्वयं को पूर्णत: श्रीकृष्ण के प्रति समर्पित कर दिया है। लेकिन आज वो हैं कहाँ? वो लोग भी, जिन्हें मैंने आत्मसाक्षात्कार दिया है, वो भी ऐसा कहते हैं। नि:सन्देह उनमें और मुझमें कोई अन्तर नहीं, परन्तु आज तो केवल मैं हूँ, केवल मैं हूँ जिसने आपको आत्मसाक्षात्कार दिया है। परन्तु हमारी नौकरियाँ, हमारी व्यक्तिगत समस्याएं, हमारी पारिवारिक समस्याएं ही हमारी मुख्य प्राथमिकताएं हो सकती है और समर्पण को हम अन्तिम स्थान देते हैं।

मैं भ्रान्ति रूप (ILLUSIVE) हूँ – यह सत्य है–मेरा नाम महामाया है। नि:सन्देह मैं भ्रान्तिरूप हूँ, परन्तु मेरा ये भ्रान्तिरूप केवल आप लोगों को परखने के लिए है।

**समर्पण उत्थान का महत्वपूर्ण अंग है।** क्यों? क्योंकि जब भी आप भय की स्थिति में फँसे होते हैं, जब आपके अस्तित्व को खतरा होता है, ऐसे समय पर जबकि आज पूरा विश्व आधारविहीन स्थिति में हैं और पूर्ण विनाश की ओर बढ़ रहा है, **यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि आप किसी ऐसे आधार को पकड़ लें जो आपकी रक्षा कर सके। पूरी शक्ति और श्रद्धा के साथ आपको इस अवलम्बन को पकड़े रहना होगा।**

आप यदि सर्वसाधारण जल में भीग रहे हों तो कोई बात नहीं परन्तु यदि आप समुद्र में गोते खा रहे हैं और क्षण–क्षण मृत्यु का भय हो और ऐसे समय एक हाथ आपकी रक्षा के लिए बढ़े तो आपके पास सोचने के लिए समय नहीं होता। एक दम से पूरी ताकत और श्रद्धा से उस हाथ को पकड़ लेना आपके लिए आवश्यक हो जाता है।

**हममें जब बाधाएं होती हैं और जब हम नकारात्मकता से घिरे होते हैं तो हमें इसका आभास हो जाता है और हम थोड़े से हड़बड़ा जाते हैं। यह ऐसा समय होता है जब हम अपने आधार को कसकर पकड़ना चाहते हैं परन्तु बाधाएं हममें ऐसे विचार पैदा कर देती हैं जो अत्यन्त हानिकारक होते हैं। इस प्रकार एक बहुत बड़े संघर्ष का आरम्भ हो जाता है। ऐसी स्थिति में सर्वोत्तम उपाय क्या है? अन्य सभी चीज़ों को भूल जाना ही सर्वोत्तम उपाय है। भूल जाएं कि आप भूतबाधित हैं या आपमें कोई बाधा है। अपनी पूरी शक्ति के साथ, जितनी भी शक्ति आपमें है, आपने मुझसे जुड़े रहना है।**

परन्तु हमारी समर्पण शैली अत्यन्त फैशनेबल एवं आधुनिक है जिसमें सहजयोग का कोई खास महत्व नहीं होता और श्री माताजी तो बस प्रसंग मात्र के लिए होती हैं। मुझे खेद है यह सब नहीं चलेगा। ये सब चीज़ें मुझे आपको नहीं बतानी हैं क्योंकि आप यदि देवी–महात्म्य पढ़ लें तो काफ़ी है। आप यदि देवी के सहस्त्र नाम पढ़ेंगे तो काफ़ी है, कि उन्हें केवल भक्ति द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। केवल समर्पण द्वारा ही उन्हें पाया जा सकता है। उन्हें केवल अपने भक्त–अपने उपासक प्रिय हैं। ऐसा कहीं भी नहीं लिखा कि वे अच्छे वक्ताओं को, वाद–विवाद करने वालों को, अच्छे वस्त्र धारण करने वालों को, ठाट–बाट से रहने वालों को और अच्छी परिस्थितियों में रहने वालों को प्रेम करती हैं। वे केवल अपने उपासकों को प्रेम करती है। यह भक्ति, यह समर्पण उन्माद की तरह से न होकर सतत, निरन्तर, अविरल प्रवाहित और सदैव बढ़ते हुए होने चाहिएं। अब आगे उन्नत होने का केवल यही मार्ग है।

परन्तु हमारे लिए हमारी छोटी–छोटी समस्याएं ही महत्वपूर्ण हैं। किसी को घर की समस्या है, किसी को महाविद्यालय में प्रवेश की समस्या है और किसी ने कुछ और काम करना है। ये सारी चीज़ें श्री कृष्ण वर्णित धर्म हैं। श्रीकृष्ण ने कहा था, 'सर्वधर्माणाम् परित्यज्य मामेकम् शरणम व्रज' सभी धर्मों को त्याग दो, इन सभी तथाकथित धर्मों को जैसे पत्नी–धर्म (पत्नी के कर्तव्य), पति–धर्म (पति के कर्तव्य) पुत्र धर्म, पिता धर्म, नागरिक धर्म और विश्व नागरिक धर्म–ये सभी धर्म पूरी तरह से

त्याग दिए जाने चाहिएं। इन सबको त्याग कर आपको पूर्ण हृदय से समर्पित होना होगा।

मैं जो हूँ वो हूँ, मैं सदा वही थी और वही रहूंगी, न मैं घटूंगी न बढूंगी। मेरा व्यक्तित्व शाश्वत है। इस आधुनिक समय में अपने जन्म का उपयोग करने के लिए, पूर्ण विकास प्राप्त करने के लिए, और परमात्मा जो कार्य आपसे करवाना चाहता है उसे कार्यान्वित करने के लिए। अब यह आप पर निर्भर करता है कि आप मुझसे कितना कुछ प्राप्त कर सकते हैं। समर्पण आरम्भ होते ही आप गतिशील हो उठते हैं। निष्ठा पूर्वक इस स्थिति को बनाए रखें । मैं कहना चाहूंगी कि यह उपलब्धि, प्राप्त करने के लिए ध्यान–धारणा एकमेव मार्ग है।

नि:सन्देह तार्किकता की दृष्टि से आप बहुत से कार्य कर सकते हैं। बुद्धि से आप मुझे स्वीकार कर सकते हैं, भावातिरेक में आप अपने हृदय में मुझे अपने बिल्कुल समीप महसूस कर सकते हैं। परन्तु ध्यान–धारणा के माध्यम से आपको समर्पण करना चाहिए। **समर्पण के अतिरिक्त ध्यान–धारणा कुछ भी नहीं।** यह पूर्ण समर्पण है।

........अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता में, पूर्ण स्वतन्त्रता में आपको समर्पित होना होगा। स्वतन्त्रता का अर्थ अहं नहीं है। यह बात व्यक्ति को समझ लेनी चाहिए कि अहं के कारण स्वतन्त्रता नष्ट हो जाती है, इसकी केवल हत्या ही नहीं हो जाती यह कलंकित हो जाती है, बदसूरत हो जाती है और घिनौनी बन जाती हैं। सूक्ष्मतम रूप में स्वतन्त्रता बिल्कुल अहंकारहित होती है, इसमें बिल्कुल कोणिकता (Angularities) नहीं होती। बांसुरी की तरह से उसमें पूर्ण खालीपन होता है ताकि परमात्मा की मधुर धुन इस पर अच्छी तरह से बजाई जा सके–यही पूर्ण स्वतन्त्रता है, इसमें कोई लटकन नहीं होती।

**हमें महसूस करना है कि हम दलदल में फँसे हुए हैं, अज्ञान के दलदल में, पाप के दलदल में। अज्ञान पाप को बढ़ावा देता है। किस प्रकार हम इस दल–दल से निकलें।** जो व्यक्ति हमें इस दल–दल से खींचने का प्रयत्न करेगा वो भी इसमें फँस जाएगा। दल–दल के समीप आने वाला व्यक्ति दल–दल में फँस जाता है। वह भी इसी दलदल का अंग–प्रत्यंग बन जाता है। अन्य लोगों से जितनी अधिक सहायता लेने का हम प्रयत्न करेंगे उन्हें भी हम उतना ही अधिक दल–दल की ओर घसीटेंगे और इस दल–दल के गर्त में धँसते चले जाएंगे।

अत: कुण्डलिनी के इस वृक्ष को उन्नत होना होगा, विकसित होना होगा और इस वृक्ष से स्वयं परमात्मा, स्वयं परब्रह्म आपको इस दल दल से निकालेंगे। यह वृक्ष इसी दल–दल से निकलता है और परब्रह्म आप सबको एक–एक करके इससे निकालते हैं, अपने हाथों के झूले पर बिठाकर आपको बाहर निकालते हैं। परन्तु जब आपको बाहर निकाला जाता है तब यदि आपकी पकड़ मजबूत न हुई तो आप पुन: नीचे की ओर फिसल सकते है। आप थोड़ा सा ऊपर को आते हैं और फिर नीचे फिसल जाते हैं। दलदल से बाहर निकल आना अत्यन्त आनन्ददायी है परन्तु अभी तक आपके पैर दल–दल से पूरी तरह बाहर नहीं निकले। अभी तक आप पूर्णत: स्वच्छ नहीं हुए। बिना पूरी तरह स्वच्छ हुए आप पूर्ण आशीर्वाद कैसे प्राप्त कर सकते हैं? परमात्मा का पूरा आशीर्वाद मिलना ........आवश्यक है।

**......सहजयोग में आने पर लोग समर्पण नहीं करते ! फिर भी उनकी देखभाल की जाती है, उनका पोषण किया जाता है, उनकी बुद्धि में सुधार होता है, सम्बन्धों में सुधार होता है, हर तरह से वो पहले से अच्छे हो जाते हैं, उनकी परिस्थितियाँ सुधर जाती हैं, हर समय उन्हें सहजयोग का लाभ मिलता रहता है। ये सारा पोषण किसलिए है, ये सारा पोषण किसलिए है? आपके उत्थान के लिए। आपको पूरी तरह से दलदल से निकालने के लिए।**

**अब आपको डटे रहना होगा, समर्पित होना होगा और श्रद्धा करनी होगी।** परन्तु हमारी अपनी सीमाएं हैं, हम चीज़ों को छिपाते हैं और चालाक बनने का प्रयत्न करते हैं। यह भयानक स्थिति है। आप सबको अपने अन्तस में देखने का प्रयत्न करना चाहिए कि अभी तक भी मुझमें ऐसा क्या है? कौन से बन्धन अभी भी आपको समर्पण से दूर किए हुए हैं? कौन सी चीज़ आपको सीमित कर रही है, कौन सी लड़ाई, कौन सा अहं, कौन सा दृष्टिकोण आपको अभी भी इस दल–दल में फँसाए हुए है? कौन से मोह, कौन से सम्बन्ध? आपको इनसे मुक्त होना होगा। इन बन्धनों से जब तक आप मुक्त नहीं हो जाते तब तक यह कार्यान्वित न होगा।

**अधपके लोगों के लिए कोई स्थान नहीं है। यह ''अब या कभी नहीं का प्रश्न है, ईसामसीह ने भी यही बात कही है।'' उन्होंने कहा था, ''आप अपनी श्रद्धा और समर्पण मुझे दें और बाकी सब कुछ मुझपर छोड़ दें।'' ......केवल अपनी भक्ति से, अपनी श्रद्धा और समर्पण से आप मुझे प्राप्त कर सकते हैं।**

आपकी दिव्य शक्तियों की पूर्ण–अभिव्यक्ति ही मेरी उपलब्धि है। यह अत्यन्त सहज है, इसे सहज बना दिया गया है। मैं केवल उन्हीं लोगों से प्रसन्न होती हूँ जो सहज एवं अबोध हैं, जो चालाक नहीं है, जो प्रेममय हैं, जो परस्पर स्नेह करते हैं। मुझे प्रसन्न करना अत्यन्त सुगम है। जब मैं आपको परस्पर प्रेम करते हुए, एक दूसरे की प्रशंसा करते हुए, परस्पर सहायता करते हुए, सम्मान करते हुए, मिलकर हँसते हुए, एक दूसरे की संगति का आनन्द लेते हुए देखती हूँ तो मुझे पहली प्रसन्नता, पहला आनन्द प्राप्त होता है।

......सहजयोग में स्वार्थपरता का कोई स्थान नहीं, कंजूसी का सहजयोग में कोई स्थान नहीं। इसका बिल्कुल भी कोई स्थान नहीं हैं क्योंकि कंजूसी तो संकीर्ण बुद्धि का चिन्ह है। निःसन्देह मैं आपको नहीं कहती कि आप मुझे धन दें। परन्तु जिस प्रकार से हम धन को देखते हैं, जिस प्रकार इससे चिपके रहते हैं; जिस प्रकार भौतिक वस्तुओं तथा भौतिक वैभव, भौतिक पदार्थों और भौतिक उपलब्धियों से चिपके रहते हैं यह अत्यन्त घातक है।

**आपकी माँ आपकी महानतम सम्पति हैं। उन्हीं के माध्यम से आपको भाई–बहन प्राप्त हुए है।**

उस भूतकाल से, उस बीते हुए जीवन से उस दल–दल से मुक्ति पा लें। ये सब अब समाप्त हो जाना चाहिए। आप भली–भांति जानते हैं कि किस प्रकार मेरी प्रेम शक्ति ने आप सबकी रक्षा की। आप ये भी जानते हैं कि हर क्षण किस प्रकार मैंने आपकी सहायता की और जब–जब भी आपने कोई इच्छा की उसे पूर्ण करने के लिए मैं आगे आई। यह, जैसा मैंने कहा, एक पक्ष है– पोषण। परन्तु अब आपका उत्थान आपके अन्दर से आना चाहिए। उत्थान आपके अन्दर से होना चाहिए। इसे आपने प्राप्त करना है, केवल आपने। यह कार्य न तो कोई और सहजयोगी करेगा और न ही मैं। मैं तो केवल आपको सुझाव दे सकती हूँ। केवल सुझाव ही नहीं दे सकती चेतावनी भी दे सकती हूँ। सभी कुछ उपलब्ध है, सभी कुछ भली–भांति कार्यान्वित किया जा चुका है, मुझे सूचित किया जा चुका है, मुझे पहले ही सूचित किया जा चुका है। आपको कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है। सभी कुछ आपके अन्दर विद्यमान है। आपको धन नहीं देना, कुछ भी नहीं देना परन्तु वह समर्पण अपने में विकसित करें।

......''**समर्पण, अपनी सारी कोणिकता, अपनी सारी समस्याओं, अपनी सारी बाधाओं से मुक्ति पाने का सुगमतम उपाय है।**''

अब अपने अन्दर झाँककर देखें कि ''क्या आप समर्पित हैं?'' जो लोग धर्मान्धता पूर्वक मेरा अनुसरण करते हैं वे भी ठीक नहीं है। इस विषय में भी धर्मान्धता नहीं होनी चाहिए। सभी कुछ पूर्णत: युक्तियुक्त बन जाता है। इसके विषय में कोई धर्मान्धता नहीं है।

जैसे कोई कहता है, ''मुझे डॉक्टर के पास जाना है, डॉक्टर से मिलना है।'' तब धर्मान्ध व्यक्ति कह सकता है, ''ओह! मैं डॉक्टर के पास नहीं जा रहा हूँ, मैं नहीं जा रहा हूँ क्योंकि श्री माताजी ने मुझसे कहा कि वे मेरी रक्षा करेंगी और जब वह बीमार पड़ जाता है तो आकर श्री माताजी से लड़ता है, ''माँ आपने मुझे बताया था कि आप मेरी देखभाल करती हैं, अब मैं बीमार क्यों पड़ गया?'' यह धर्मान्धता है।

समर्पण क्या है? अपने अन्तस में आपको कहना चाहिए, ''ये श्री माताजी हैं, वे विद्यमान हैं, वही मेरी चिकित्सिका हैं। वो मेरा इलाज करती हैं या नहीं, मुझे रोगमुक्त करती हैं या नहीं इसके विषय में मुझे कुछ नहीं कहना। मैं केवल उन्हीं को पहचानता हूँ, किसी अन्य को नहीं पहचानता।'' ये बात अत्यन्त युक्तियुक्त है। तर्क ये है कि माँ सर्वशक्तिशाली हैं और इस बात को आप जानते हैं, ये सत्य है। यदि वे सर्वशक्तिशाली हैं तो वो मुझे रोगमुक्त करेंगी। परन्तु यदि वे मुझे ठीक नहीं करती तो ये उनकी इच्छा है, उनकी शक्ति है। वो यदि मुझे ठीक करना चाहेंगी तो ठीक कर देंगी और यदि वे मुझे ठीक नहीं करना चाहती तो किस प्रकार मैं अपनी इच्छा उनपर थोप सकता हूँ?''

..... यही बात युक्तियुक्त है कि श्री माताजी मेरे दर्द को मुझसे भी अधिक महसूस करती हैं। अपनी माँ के लिए ईसा-मसीह के क्रूसारोपित होने के विषय में आपका क्या कहना है? वे स्वयं महालक्ष्मी थीं, इतनी शक्तिशाली। उन्होंने अपने पुत्र को इस प्रकार से बलिदान करवा दिया, उन्हें सामान्य मनुष्य की तरह से कष्ट सहन करवाए। ये बहुत बड़ी बात थी। आपमें सर्वनाश करने की शक्तियाँ हों फिर भी अपने पुत्र का बलिदान करवा देना! आज्ञा चक्र का सृजन करना बहुत ही सूक्ष्म कार्य था।

इसका क्या अर्थ है? क्या इसका अर्थ ये है कि उनके समर्पण में कोई कमी थी? इसके विपरीत उन्हें तो ईसा मसीह पर, उनके समर्पण पर पूर्ण विश्वास था कि वे उन्हें बलिदान के लिए कह सकती हैं और आप अपनी माँ से कुछ भी करने की आशा करते हैं ?

एक अन्य उपाय भी है। कितने लोगों का समर्पण ईसा मसीह सम है?

किसी का भी नहीं, यह बात सत्य है।

ईसा मसीह बड़े भाई क्यों हैं? क्योंकि उन जैसा कोई भी नहीं। उन्होंने सब कुछ सहन किया–सारे भयानक कष्ट सहन किए – क्योंकि वे अपनी माँ के अंग–प्रत्यंग थे। उनकी माँ ने उनसे भी अधिक कष्ट उठाए। महान लक्ष्य, महान प्रसन्नता, महान तथा उच्च जीवन के लिए वे उन कष्टों में से गुजरीं। परन्तु ये झूठे लोग इन सभी बातों का लाभ उठा सकते हैं। जब ये लोगों को दुख देते हैं तो उन्हें कहते हैं ''आखिरकार आपको ये कष्ट उठाने ही हैं।'' देखें किस प्रकार से ये चीज़ों को घुमाते हैं। ''आपको कष्ट उठाने ही होंगे, आपको कष्ट उठाने हैं, बिना कष्ट उठाए आप आरम्भ ही नहीं कर सकते।'' यह अत्यन्त सूक्ष्म सूझ–बूझ है, अत्यन्त सूक्ष्म। यह इस बात को स्पष्ट कर देगी कि सहजयोग में पहले आपका पोषण किया जाता है, आपका लालन–पालन किया जाता है, आपको प्रशिक्षित किया जाता है, ठीक किया जाता है। उसके पश्चात जो भी कुछ आप करते हैं जो भी कष्ट आप उठाते हैं वो आपके लिए कष्ट नहीं होते क्योंकि आप आत्मा बन चुके होते है:

**नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावक:, न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुत:**

आत्मा को न शस्त्र काट सकते हैं, न वायु उड़ा सकती है न अग्नि जला सकती है। आत्मा किसी भी तरह से नष्ट नहीं की जा सकती। आप वही आत्मा हैं। अब आपका पोषण हो चुका है, आप उन्नत हो चुके हैं, पोषित हो चुके हैं। लोग जब सहजयोगियों को देखते हैं तो कहते हैं कि ये पुष्प–सम हैं। उनके चेहरे तेजोमय हैं। वे कितने आत्मविश्वास पूर्ण, कितने सम्मानजनक और कितने सुन्दर हैं!

परन्तु किसलिए? ''परमात्मा के रथ के पहिए बनने के लिए।''

आप ही लोगों को अग्रिम मोर्चे पर मुकाबला करना होगा और बलिदान देना होगा – और ये बलिदान आपके लिए तुच्छ है क्योंकि आत्मा तो केवल देती है, बलिदान नहीं लेती। देना इसका गुण है अत: आप बलिदान नहीं करते, मात्र देते हैं।

सर्वप्रथम माँ को प्रसव पीड़ा होती है। ठीक है। उसे सभी प्रकार के कष्ट होते हैं। ठीक है। परन्तु बच्चा जब बड़ा हो जाता है तो माँ को उस पर गर्व होता है, माँ को पुत्र पर गर्व होता है और पुत्र को माँ पर। एक साथ खड़े होकर वे लड़ाई लड़ते हैं। ऐसा होना तभी सम्भव है जब आप पूर्ण संयमित और सहजयोगी के रूप में भविष्य के

जीवन की तैयारी को स्वीकार करेंगे। एक ऐसा जीवन जो बाहर से संघर्षोऔर समस्याओं से भरा हुआ दिखाई देता है परन्तु अन्दर से अत्यन्त सन्तुष्टिदायक है।

.....सहजयोग में हमें किसलिए विकसित होना है? आगे बढ़ने के लिए, अपने पैरों पर खड़े होने के लिए, महान माँ के महान बच्चों की तरह। कार्य अत्यन्त कठिन है। यह कार्य (सहजयोग) मध्यम दर्जे के लोगों के लिए नहीं है। डरे हुए, भीरु, अक्खड़, धृष्ट लोग यह कार्य नहीं कर सकते। उनमें ये कार्य करने का क्षेम नहीं है। अत: ध्यानधारणा में पूर्ण समर्पण का अभ्यास होना अत्यन्त आवश्यक है। अत: भौतिक पदार्थों के लिए जो भी कार्य आप अब कर रहे हैं वह आपके हित में नहीं। **पहले तो आप नन्हें बच्चे थे, बहुत छोटे थे। अब आपका सामूहिक अस्तित्व है। कोई भी कार्य आप अपने लिए नहीं कर रहे। उस सामूहिक व्यक्ति के लिए कर रहे हैं। उस विराट की चेतना प्राप्त करने के लिए आप उन्नत हो रहे हैं। यही, यही पूर्णत्व आपने प्राप्त करना है।** आपकी नौकरियाँ, आपका पैसा या आपका धन, आपकी पत्नी, आपके पति, आपके बच्चे, माताएं, सम्बन्धी, ये सब मोह अब समाप्त हो गए हैं। अब आप सबको सहजयोग की जिम्मेदारी उठानी होगी। आप सभी समर्थ हैं और इसीलिए आपका पालन किया गया है। जैसे भी आपको अच्छा लगे, जितनी भी आपकी क्षमता है वैसे कार्य करें। पूर्ण समर्पण से आप इसे कार्यान्वित करें। पूर्ण समर्पण ही एकमात्र चीज़ है।

**पूर्ण समर्पण आगे उन्नत होने का एकमेव मार्ग है। कुछ सहजयोगी अधपके हैं। हमें उन्हें छोड़ देना होगा।** हम उन्हें अपने साथ नहीं रख सकते। उनके प्रति सहानुभूति नहीं रखनी, उसका कोई लाभ नहीं। वो यदि ठीक ही जाएंगे तो हम उन्हें वापिस ले आएंगे। आप ये सब मुझ पर छोड़ दें। उनकी ओर न तो अपना चित्त दें, न ही उनके लिए प्रयत्न करें। स्वयं आपको उन्नत होना होगा। आप साधक थे, आपने प्राप्त कर लिया है, इससे पोषण प्राप्त किया है और अब आप उन्नत हो गए है। किसलिए? अपने पैरों पर खड़ा होने के लिए। आज मैं जिस प्रकार आपका सामना कर रही हूँ आपको भी अन्य लोगों का सामना करना है।

समर्पण का अर्थ ये नहीं है कि आप किसी से सहजयोग की बात ही न करें। कुछ लोग सोचते हैं कि मौन रहना ही समर्पण का एकमात्र मार्ग है। आपको केवल ध्यान–धारणा में रहना है। परन्तु अभी आपको इस मौन से बाहर निकलना है। सभी देशों को या सभी राष्ट्रों को, सभी लोगों को, सर्वत्र, ये महान संदेश दें कि पुनरुत्थान

या पुनर्जन्म का समय आ गया है। यही वह समय है और आप सब लोगों में यह कार्य करने की योग्यता है।

कोई यदि इस कार्य के लिए आपका मज़ाक उड़ाता है तो सूझबूझ और विवेक के साथ कार्य करने का प्रयत्न करें। **व्यक्तिगत पसन्द और नापसन्द बलिदान कर दिए जाने चाहिए। ''मुझे ये पसन्द है, मुझे वो पसन्द है,'' त्याग दिए जाने चाहिएं।** ऐसा कहने का ये अभिप्राय भी नहीं है कि आप मशीनसम बन जाएं। नहीं। परन्तु **''मैं'' का दासत्व त्याग दिया जाना आवश्यक है। आदतों की गुलामी का त्याग भी आवश्यक है।** आप हैरान होंगे कि एकबार समर्पित हो जाने के पश्चात् आप बहुत कम खाने लगेंगे, कई बार तो आप बिल्कुल भी कुछ न खाएंगे, आपको भोजन की याद ही न रहेगी। आपको ये भी याद न रहेगा कि आपने क्या खाया है। आप ये भी याद न रख सकेंगे कि आप कहाँ सोए थे और कैसे। आपका यह जीवन दूरबीन की तरह होगा– विस्तृत होता हुआ। अपने स्वप्नों का आप स्वयं सृजन करेंगे, उन्हें पूर्ण करेंगे उनमें सन्तुष्ट होंगे। आप अत्यन्त सामान्य एवं साधारण दिखाई पड़ते हैं, परन्तु वास्तव में आप ऐसे नहीं। पूर्ण समर्पण में, पूर्ण श्रद्धा के साथ आपने अब ये कार्य करना है–केवल अपने हित के लिए, केवल व्यक्तिगत उपलब्धियाँ प्राप्त करने के लिए नहीं। वह सब अब समाप्त हो गया है अब आपने माया के दल–दल से मुक्त होने के लिए दृढ़ भूमि पर खड़े होने के लिए और ऊँची आवाज़ में अपने परम पिता की स्तुतिगान करने के लिए कार्य करना है।

भ्रमजाल में फँसे लोग क्या संगीत दे सकते हैं? वे कौन से गीत गा सकते हैं, कौन सी सुरक्षा प्रदान कर सकते हैं, तथा अन्य लोगों की वे क्या सहायता कर सकते हैं?

आपको इससे पूर्णत: बाहर आना होगा। इसके लिए निरन्तर विवेक की आवश्यकता है– निरन्तर विवेक की। हर पल। इसके लिए आपको अपने बाएं या दाएं के विकारों को नहीं कोसना। कुछ भी नहीं–आप बस इससे मुक्ति पा लें। इस बात पर दृढ़ रहें। आपकी देखभाल करने के लिए साक्षात परब्रह्म आए हैं। दृढ़ता से उन्हें पकड़े रखें। मृत्यु को भी वापिस जाना होगा, इन छोटी–छोटी चीज़ों की तो बात ही क्या है।

आपकी माँ का नाम अत्यन्त शक्तिशाली हैं। आप जानते हैं कि अन्य सभी नामों से यह नाम कहीं शक्तिशाली है, यह अत्यन्त शक्तिशाली मंत्र है। परन्तु आपको इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि किस प्रकार ये मंत्र लेना है। अत्यन्त समर्पण पूर्वक

आपको यह नाम लेना है, किसी अन्य नाम की तरह नहीं।

..... आपको यदि आवश्यकता है तो समर्पण की, समर्पण रूपी प्रध्वंसक (dynamite) की। .....मात्र नाम का प्रभाव है। इसका अर्थ है निष्कलंका अर्थात निर्मला अर्थात 'मलविहीन'। ये मल क्या है? यह भ्रम है। 'बिना किसी भ्रम के।' नि: अर्थात पूर्णत:। सहस्रार का आनन्द हमेशा से निरानन्द कहलाता है। युगों–युगों से इसे निरानन्द या निर्मलानन्द कहते हैं। यह आनन्द ऐसा आनन्द है जिसका आप क्रूसारोपित होकर भी आनन्द लेते हैं। ये ऐसा आनन्द है कि विषपान करके भी आप इसका मज़ा उठाते हैं, मृत्युशय्या पर भी आप इसका आनन्द उठाते हैं। इसे निर्मलानन्द कहते हैं। अत: दूसरी अवस्था के लिए तैयार हो जाएं। आप मोर्चेपर हैं। मुझे बहुत ही कम समय की आवश्यकता है। वास्तव में मुझे निरन्तर विवेक तथा समर्पण वाले लोगों की आवश्यकता है। निरन्तर। क्षण भर के लिए भी यह विवेक एवं श्रद्धा डांवाडोल नहीं होनी चाहिए। केवल तभी हम तेज़ी से उन्नत हो सकेंगे और युद्ध के मैदान में आगे बढ़ सकेंगे।

सम्भवत: अब तक आपको नकारात्मकता की सूक्ष्मताओं का ज्ञान हो गया होगा और इस बात का भी कि किस प्रकार से परमात्मा के कार्य को नष्ट करने के लिए वे अपनी शक्तियों का उपयोग करती हैं। नि:सन्देह नकारात्मक शक्तियाँ सीमित हैं। इनके विरुद्ध आपने किस प्रकार से चौकन्ना, तैयार और समर्पित रहना है। यह बात मैं सिर्फ आप लोगों से कर सकती हूँ, उन लोगों से नहीं जो केक्सटन सभागार (Caxton Hall) आते हैं। उनमें से कुछ अधपके हैं, कुछ बिल्कुल नए हैं, भोले भाले हैं और कुछ पूर्णत: तीसरे दर्जेके। परन्तु यहाँ जिस प्रकार से आज आप मेरे सम्मुख है मैं आपसे वैसे ही स्पष्ट बता देना चाहती हूँ जिस प्रकार से श्री कृष्ण ने अर्जुन को बताया था।

**सर्व धर्माणाम परित्यज्य, मामेकम् शरणम् व्रज।**

इसके अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं। व्रज का अर्थ है जिसने पुनर्जन्म प्राप्त कर लिया है। अत्यन्त अत्यन्त सुदृढ़ व्यक्तित्व। जब आप सुदृढ़ हो जाएंगे तो अवश्य समर्पित हो जाएंगे, जब आप कुशल हो जाएंगे तो अवश्य समर्पित हो जाएंगे।

इससे भ्रम मुक्त होने में आपको सहायता मिलेगी और महान लक्ष्य प्राप्ति में भी यह सहायक होगा। कोई भी नहीं समझता कि ''क्यों श्री माताजी मेरी सहायता करने का प्रयत्न कर रही हैं?'' वो सोचते हैं कि वे बहुत उदार हैं। मैं उदार नहीं हूँ।

मुझमें सहजबुद्धि का प्राचुर्य है। क्योंकि आप लोग ही परमात्मा के आनन्द की अभिव्यक्ति पृथ्वी पर करने के योग्य हैं, आप ही वे बाँसुरियाँ हैं जो परमात्मा की मधुर धुनों को बजाएंगी, परमात्मा आपका उपयोग करेंगे और आपका संचालन करेंगे। मैं यह सब आपको कुशल बनाने के लिए कर रही हूँ। ताकि आप परमात्मा के सुन्दरतम माध्यम बन सकें, उचित माध्यम बन सकें। मैं नहीं जानती कि आप इस बात को समझते भी हैं या नहीं कि वह जीवन कितना मधुर, कितना सुन्दर होगा– समर्पण का जीवन, सूझ–बूझ से परिपूर्ण, अत्यन्त युक्तियुक्त। पूर्णत: समर्पित, पूरा पोषण प्राप्त करते हुए और उच्च लक्ष्य के लिए इसे समर्पित करते हुए। बिल्कुल वैसे ही जैसे पत्ते उच्च लक्ष्य के लिए सूर्य की किरणों से पोषण प्राप्त करके भिन्न रंगों को प्राप्त करते हैं ताकि मानव इनका उपयोग कर सके। कोई भी चीज़ इसके लिए कार्यान्वित होती है परन्तु इतना नि:स्वार्थ, इतना विस्तृत, इतना महान गतिशील लक्ष्य!.

आप सागर बन जाते है, चाँद बन जाते हैं, सूर्य बन जाते हैं, पृथ्वी बन जाते हैं, आप आकाश बन जाते हैं, महा व्योम बन जाते हैं – और आप आत्मा बन जाते हैं। सभी सितारे और ब्रह्माण्ड बनकर आप उनका कार्य सम्भाल लेते हैं। यह इतनी महान चीज़ है। क्योंकि आप अपने तत्व पर कूद पड़े हैं। इसी प्रकार आप सभी के तत्व पर पहुँच सकते हैं। परन्तु उस तत्व के प्रति समर्पित रहें क्योंकि मैं ही इन सबका तत्व हूँ। मैं ही तत्व हूँ – 'तत्वमय:'। मैं ही तत्व हूँ, अपने तत्व से जुड़े रहें।

मैं कुण्डलिनी हूँ, मैं ही सार तत्व हूँ। हम केवल उसी चीज़ के समर्पण को समझते हैं जो स्थूल रूप से बड़ी दिखाई देती है, जो स्थूल रूप मे दिखाई देती है। परन्तु अत्यन्त सूक्ष्म, अत्यन्त गहन, अत्यन्त प्रभावशाली अत्यन्त गतिशील, निरन्तर एवं शाश्वत् चीज़ों के प्रति हम समर्पित नहीं होते। उनके प्रति समर्पित होने के विषय में हम सोच भी नहीं सकते। पर्वतसम दिखाई देने वाले किसी भी विशालकाय व्यक्ति के सम्मुख जो हमें सताने के लिए आता हो, जो हिटलर की तरह से हो, जो कुगुरु हो, हम समर्पित हो सकते हैं। परन्तु अपने सूक्ष्म अस्तित्व के सम्मुख – जिसे आप अपनी आँखों से देख नहीं सकते, कानों से जो सुनाई नहीं देता, अणु बम की तरह से जिसका प्रभाव अत्यन्त शक्तिशाली है – समर्पित होना हमारे लिए कठिन है। बिना विखण्डित हुए अणु सर्वत्र होता है परन्तु विखण्डित होने पर यह इतना गतिशील हो उठता है कि आप इसे स्वीकार कर लेते हैं। तब यह ऊर्जा की अत्यन्त गतिशील शक्ति बन जाता है। अब क्योंकि आपका चित्त ब्रह्माण्ड की सूक्ष्मता में प्रवेश कर गया है

अत: और अधिक गहनता में उतरते जाएं। जड़ को जल के स्रोत तक ले जाने वाली पृथ्वी उस स्रोत की तरह से ही है। आपकी कुण्डलिनी भी आदिकुण्डलिनी की तरह से है और परब्रह्म इसकी शक्ति हैं।

ये सब चीज़ें आत्मसाक्षात्कार के पश्चात् परिपक्वता प्राप्त करने के बाद समझ आएंगी। इससे पूर्व इन्हें समझ पाना असम्भव है। यही कारण है कि पिछले आठ वर्षों में मैंने आपसे ये सारी बातें नहीं कहीं। आपके साथ मेरा व्यवहार अत्यन्त मधुर एवं उत्साह बढ़ाने वाला था। सदैव मैंने आपको यही महसूस करवाया कि आप मुझ पर एहसान कर रहे हैं। ये कोई आसान कार्य नहीं है।

इन सभी धारणाओं से परे आप अपनी आत्मा (Spirit) बन गए हैं, जिम्मेदार बनने के लिए, वह बनने के लिए जिसके लिए आप बने हैं, अब आप तैयार हैं।

जैसे समुद्री जहाज को बनाकर समुद्र में लाया जाता है, उसे परखा जाता है और देखा जाता है कि यह अब समुद्र में तैरने के योग्य है। अब यह दूसरी अवस्था है जहाँ पर आपने निकल पड़ना (Sailout) है, जब आपको जहाज और समुद्र का पूर्ण ज्ञान है। पूर्ण स्वतन्त्रता और विवेक के साथ आपने अपने लंगर खोल देने हैं। बिना आँधी, तूफानों और चक्रवातों से डरे, क्योंकि अब आपको सारा ज्ञान है। पार करते जाना आपका कार्य है।

परमात्मा आपको धन्य करें।

**प.पू.श्री माताजी, ३१.७.१९८२**

# अध्याय ३०

# एकमात्र कार्य–सहजयोग प्रचार प्रसार

...... आप लोग महान साधक हैं। सत्य एवं प्रेम साधक होने के कारण ही आप यह सब पा सके अन्यथा यह प्राप्त करना असम्भव था। केवल एक व्यक्ति को परिवर्तित करना दुष्कर है, पर आप लोग इतने विवेकशील एवं गहन थे कि यह सूक्ष्म ज्ञान आपमें प्रवेश कर गया। विश्वास नहीं होता कि कितने महान लोगों ने इस कलियुग में जन्म लिया है! कोई विश्वास नहीं कर सकता है कि इतने सन्त, नबी और वली मेरे सामने बैठे हैं। **आध्यात्मिकता के इतिहास में ऐसी घटना पहले कभी नहीं घटी।**

**प.पू.श्री माताजी, २१.३.१९९३**

.....**यह अत्यन्त महत्वपूर्ण समय है। मानव के इतिहास में ऐसा महत्वपूर्ण समय कभी नहीं आया और भविष्य में भी ये समय कभी नहीं आएगा। यह ऐसा काल है जिसमें आपने न केवल चेतना और आत्मज्ञान को प्राप्त किया है परन्तु आप आत्मज्ञान देना भी जानते हैं।**

.....आप जानते हैं मुझे अत्यन्त कठोर परिश्रम करना पड़ा, अपने शैशव काल से ही मैंने कठोर परिश्रम किया है ......मैं अत्यन्त कठिन परिस्थितियों से गुज़री हूँ, परन्तु मेरे लिये सबसे कष्टकर समय वह होता है जब मैं उन लोगों को देखती हूँ जिन्हें मैंने आत्मसाक्षात्कार दिया है और जो आत्मसाक्षात्कारी हैं, फिर भी अन्य लोगों के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी महसूस नहीं करते ........... **आज विश्व की, मानवता की रक्षा करना हमारा मुख्य कार्य है........... हमें केवल यही कार्य करना है।**

.....आप सबको यह जानना होगा कि आपमें यह विशेष चीज़ घटित हुई है। आप चाहे हिमालय जाते, चाहे भूखों मर जाते, चाहे वर्षों तक परमात्मा के गुणगान करते, चाहे आप सभी प्रकार के कर्मकाण्ड और तपस्या करते, तो भी आपको आत्मसाक्षात्कार प्राप्त नहीं हुआ होता, आत्मसाक्षात्कार की प्राप्ति असम्भव होती। मैं यह बात जानती थी, इसलिये सारी समस्याओं, उथल–पुथल और दबावों का सामना करते हुए मुझे कठोर परिश्रम करना पड़ा। कार्य क्या था? केवल यह देखना कि आप सबका सृजन हो गया है।

आप सब मेरे हाथ हैं, अब आपको कार्य करना है। हर उँगली को कार्य

करना है और यही बात मैं आपको बताती चली आ रही हूँ कि अब यह हमारी ज़िम्मेदारी है कि हमें केवल स्वयं ही सहजयोगी नहीं बनना, यह बसन्त का समय है हमें बहुत से सहजयोगी बनाने चाहियें।

.....**महानतम कार्य जो आप मेरे लिये कर सकते हैं वह है सहजयोग फैलाना** ....... सहजयोगी के हृदय में हर समय उत्कट इच्छा होनी चाहिये कि सहजयोग प्रचार के मार्ग खोज निकालने हैं। .........आपका एक ही कार्य है, वह है अन्य लोगों का अन्तर्परिवर्तन करना। ऐसी विधियाँ खोज़ निकालें जिनके माध्यम से आप अन्तर्परिवर्तन कर सकें, **आदि शक्ति के संदेश को प्रसारित कर सकें।** ........आप लोगों के साथ आदिशक्ति हैं, जो महान हैं, बहुत तीक्ष्ण हैं और बहुत चमत्कारिक हैं। ये अत्यन्त प्रभावशाली हैं।

**.....वास्तव में मैं आप सभी सहजयोगियों को विश्व परिवर्तन के लिये जी जान से कार्य करते हुऐ देखना चाहती हूँ। विश्व का परिवर्तन होना ही चाहिये। आप ही लोग, कोई अन्य नहीं, संसार को बचा सकते हैं। कोई प्रधानमन्त्री, कोई राष्ट्रपति, कोई अन्य मन्त्री न तो विश्व को परिवर्तित कर सकता है, और न ही उसे बचा सकता है। केवल आपको ही यह कार्य करने का अधिकार है। आप ही में वह शक्ति है। क्या आपको अपने उच्चपद, अपने अस्तित्व का एहसास है, जो इतना ऊँचा उठ गया है ? ये एहसास जब आपमें हो जाएगा, तो आप अन्य लोगों के प्रति अपने प्रेम और करुणा की अभिव्यक्ति के लिये और उन्हें भी यह एहसास दिलाने के लिये वे क्या हैं, जी जान से लग जाएंगे। केवल सहजयोग द्वारा ही आप इस विश्व की रक्षा कर सकते हैं, कोई अन्य मार्ग नहीं है।**

.....यह गतिहीन कार्य नहीं है, यह तो बहुत ही बड़ा आन्दोलन है जिसे विस्फोटक होना है, यदि ऐसे महान कदम न उठाए गए तो मैं नहीं जानती प्रलय का दोष किस पर आएगा!

.....आप आध्यात्मिक कार्यकर्ता हैं, आप सामाजिक कार्यकर्ता नहीं। आप सामाजिक कार्य कर सकते हैं, कोई बात नहीं, परन्तु आपका मुख्य कार्य तो मानव को परिवर्तित करना है। **मानव में सबसे बड़ी बीमारियाँ हैं–उसकी तुच्छता, क्रूरता, अन्य लोगों को कष्ट देना और क्रोध। ये सभी रोग बाह्य नहीं हैं, ये आन्तरिक हैं। इन रोगों को ठीक किया जा सकता है। आज इसी चीज़ की आवश्यकता है।**

......यद्यपि करुणा के कारण चित्त सदैव शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, आर्थिक तथा विवाह सम्बन्धों में दु:खी लोगों पर भटकता है, पर ये आपका कार्य नहीं है और न ही मेरा है। .........**सहजयोगी बनाने का आनन्द तो अथाह होता है।** .........आपमें गहन भाईचारा, एकाकारिता, आनन्द, प्रेम और करुणा का आनन्द विकसित हो उठता है। यह आनन्द एक भिन्न स्तर का होता है, सर्वसाधारण आनन्द जैसा नहीं।

.....अब आप लोग ज्योतिर्मय हो चुके हैं। प्रबुद्ध लोग यदि प्रकाश नहीं दे सकते तो उस प्रकाश का क्या लाभ है? इन छोटी-छोटी मोमबत्तियों को देखिये, जितना भी प्रकाश इनमें है, ये फैला रही हैं उसे। प्रकाश देने के लिये ये स्वयं जल रही हैं। हम यदि प्रकाश नहीं दे सकते तो हमें साक्षात्कारी होने का क्या लाभ है ?

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ३.६.२००१**

.....अब हम एक नये युग में प्रवेश कर रहे हैं या यें कहें कि अब ''सत्ययुग'' स्थापित हो चुका है। .......अब आपको शपथ लेनी है कि अब हम सहजयोग को नए विशाल एवं अधिक गतिशील तरीके से आरम्भ करेंगे। इसके लिये पहली आवश्यक चीज़ है संघ-शक्ति अर्थात आपकी सामूहिकता-यह सामूहिकता अत्यन्त दृढ़, सुगठित, सूझबूझपूर्ण तथा प्रेम के योग्य होनी चाहिये। .....आपको अब अत्यन्त **सृजनात्मक** बनना होगा। .......आपको किसी भी सहायता की आवश्यकता नहीं है, आप तो शक्ति से परिपूर्ण हैं। परमेश्वरी शक्ति तो आपमें विद्यमान है। इस परमेश्वरी शक्ति का उपयोग किया जाना चाहिये। .........जो शक्ति आपको प्राप्त हुई है वह मानव का उद्धार करने के लिये है। यह शक्ति आपको लोगों की कुण्डलिनी जागृत करने के लिये दी गयी है। ये कार्य आप कर सकते हैं। एक व्यक्ति हज़ारों लोगों की कुण्डलिनी जागृत कर सकता है।

हमारे परमेश्वरी विश्वविद्यालय में कोई डिग्री नहीं है, हम कोई प्रमाण पत्र नहीं देते, आपने यदि आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर लिया है तो आप सहजयोगी हैं, कुण्डलिनी ने यदि आपका सहस्रार खोल दिया है तो आप सहजयोगी हैं। **परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि ऐसा सहजयोगी सच्चा सहजयोगी हो।** यह इस बात पर निर्भर करता है कि आप कितने आनन्द में हैं और अन्य लोगों को आत्मसाक्षात्कार देने के लिये आप कितने इच्छुक हैं। आत्मसाक्षात्कार का आनन्द क्या आप अन्य लोगों से बाँटना चाहते हैं?

.....हम पूरे विश्व से सम्बन्धित हैं। अब आप व्यक्तिवादी नहीं हैं। जैसा मैंने

कहा बूँद अब सागर बन गयी है, समुद्र से अपना तदात्म्य करें। आपने यदि देखा हो तो समुद्र का स्तर निम्नतर होता है फिर भी सभी नदियाँ इसमें आकर गिरती हैं। समुद्र स्वयं सूखकर आकाश में बादलों का सृजन करता है और वहाँ पर बादल वर्षा बन कर फिर उसी समुद्र में गिरते हैं। अत: जो लोग विनम्र होंगे उनकी ओर अधिकाधिक सहजयोगी आकर्षित होंगे। अत्यन्त विनम्र, करुणामय व उदार बनें और अत्यन्त आनन्ददायक भी ।

.....**आपकी माँ की केवल यही इच्छा है कि अब आप सहजयोग की जिम्मेदारी अपने कंधों पर ले लें और सबको बताते चले जाएँ। आत्मसाक्षात्कार देने का हर सम्भव प्रयास करें।** आत्मसाक्षात्कार से अधिक कोई अन्य चीज़ लोगों को लाभ नहीं पहुँचायेगी। बाकी दान करना, पैसा देना आदि सब बेकार है, सर्वोत्तम बात तो जी जान से जिज्ञासुओं को खोज निकालना और उन्हें आत्मसाक्षात्कार देना है। जितने अधिक से अधिक लोगों को आप आत्मसाक्षात्कार देंगे, मैं तथा सर्वशक्तिमान परमात्मा उतने ही अधिक आभारी होंगे।

**प.पू.श्री माताजी, ३१.१२.२०००**

.....**पूरे विश्व में परमात्मा की इच्छा का प्रसार करने के लिये ही आप पृथ्वी पर विद्यमान हैं।** इस स्थिति में पहुँच कर भी यदि आप अपनी ही इच्छाएँ तथा अपने विषय में विचार बनाने शुरु कर देंगे तो कब आप परमात्मा की इच्छा बन पायेंगे।

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १९७६**

.....आदिशक्ति की यह शक्ति जो आपने अपने अन्दर प्राप्त कर ली है इसे अब विवेकशील तरीकों से प्रसारित किया जाना चाहिये।

.....यह उच्चतम, बहुमूल्यतम एवं अत्यन्त महत्वपूर्ण शक्तिहै जो आपको प्राप्त हो गयी है। जब कभी आप किसी उत्तम या हितकर कार्य के लिये सोचते हैं तो **यह शक्ति आपके उस विचार में प्रवेश कर जाती है** और तत्पश्चात ये विचार पूरे ब्रह्माण्ड में, आपके देश में तथा लोगों में प्रसारित हो जाते हैं। ........इस शक्ति को सामूहिकता की चिन्ता होती है तथा व्यक्ति की भी। यह पूरे विश्व की चिन्ता करती है और किसी देश विशेष की भी। इस आधुनिक काल में विश्व भर के लोगों को, उनके जीवन को बेहतर बनाने के लिये यह शक्ति कार्यरत है।

**प.पू.श्री माताजी, मास्को, १७.९.१९९५**

–सर्वशक्तिमान परमात्मा जो सर्वत्र विद्यमान हैं, जिन्होंने सभी कुछ किया है, और परमात्मा की इच्छा ने, जिसने सब कुछ संचालित किया है, **अब आप के माध्यम से कार्य करना है। ...........आपको सर्वव्यापी परमात्मा का प्रतिनिधि बनना है।**

**प.पू.श्री माताजी, १०.५.१९९२**

**.....आपको मोक्ष प्राप्त हो गया है। अब अन्य लोगों का भी उद्धार करें। आप ही माध्यम हैं। बिना माध्यमों के यह सर्वव्यापी शक्ति कार्यान्वित नहीं हो सकती, यही शैली है। आप यदि सूर्य को देखें तो इसका प्रकाश इसकी किरणों के माध्यम से फैलता है, आपकी धमनियों के माध्यम से, आपके हृदय का रक्त प्रसारित होता है। धमनियाँ अति सूक्ष्म होती हैं। आप ही वह रक्त वाहिकायें हैं जिनके माध्यम से मेरा प्रेम रूपी यह रक्त सभी लोगों में प्रवाहित होगा।** रक्त वाहिकायें ही यदि टूटी हुई होंगी तो लोगों तक रक्त नहीं पहुँचेगा, यही कारण है कि आप लोग महत्वपूर्ण हैं।

**प.पू.श्री माताजी, सितम्बर १९८१**

.....आप लोगों को चाहिये कि समय की सीमा को समझें, अपने महत्व को पहचानें और इस बात के प्रति चेतन हों कि सृष्टि में उत्थान के महानतम कार्य करने के लिये किस प्रकार आपको चुना गया है। तो अब आलस्य के लिये कोई समय बाकी नहीं हैं, अब आपको जागना होगा, उठना होगा।

**प.पू.श्री माताजी, इटली, ४.५.१९८६**

यह आप समझ लीजिये, और ये चीज़ अपनी गाँठ में बाँध लीजिए कि जितने भी संत साधुओं ने यहाँ मेहनत की है, जो भी बड़े–बड़े अवतरण हो गये हैं, जो भी कार्य परमात्मा के दरबार के लिये हुआ है, अब वह सब पूरा हो गया है, और अब आप स्टेज पर हैं। यह आपकी जिम्मेदारी है कि अब केवल आप ही स्टेज पर न रहें, लेकिन सबको ऊपर खीचें। आप ऐरे–गैरे नत्थू खैरे नहीं हैं, मैं जानती हूँ, लेकिन अभी भी आपने अपने को पहचाना नहीं। उसे जान लेने पर आपको आश्चर्य होगा कि क्या यह शक्ति, प्रचंड शक्ति, ब्रह्म शक्ति माँ ने हमें दी है!

**.....तो पहले अपने को जान लीजिये, और जब जाना जाता है, तो दिया भी जाता है। जब तक दीपक में प्रकाश नहीं होता, उसको जलाया जाता है, तब वो सबको प्रकाश देता है, क्योंकि ये उसका कार्य है। इसी प्रकार एक दीप से**

**अनेक दीप जलाने की जो बात है–उसका साक्षात सहजयोग है।**

**प.पू.श्री माताजी, दिल्ली, १०.२.१९८१**

.....अब रवि, शशि, तारागण और पूरे ब्रह्माण्ड को केवल एक कार्य करना है, उन्हें देखना है कि सहजयोग भली भाँति फैल रहा है, स्थिर हो रहा है और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर रहा है। सभी तत्व विविध प्रकार से कार्य कर रहे हैं। आपको मुझ पर नहीं स्वयं पर विश्वास करना है। आपको यह कहना है कि आप ही मेरे मार्ग हैं, आप ही शक्ति के स्रोत हैं। गरिमामय, सुन्दर तथा संतोषप्रद ढंग से कार्य कीजिये। परमात्मा की कृपा से आप सहजयोग की नीव बनेंगे और अपने विवेक, विश्वास, प्रेम तथा सामर्थ्य से सहजयोग रूपी भवन का निर्माण करेंगे।

**प.पू.श्री माताजी, ९.१२.१९९१**

.....सहजयोग लोगों का धर्मपरिवर्तन मात्र नहीं है, यह व्यक्ति का स्वभाव परिवर्तन मात्र भी नहीं है, यह तो नयी रचना है, आगे बढ़ते हुए उस नए मानव की जिसमें परमात्मा की इच्छा को आगे ले जाने की योग्यता है। परमात्मा सर्वशक्तिमान है, सर्वव्यापी है और सर्वज्ञ है। ........उस शक्ति का एक भाग आपमें भी है। उनकी सर्वज्ञता को प्रमाणित करने के लिये आपको हर समय याद रखना है कि आप सहजयोगी हैं।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, १०.५.१९९२**

.....आज मुझे यह कहना है कि अब बहुत से वर्ष गुज़र चुके हैं। रात–दिन मैंने कठोर परिश्रम किया और मेरी एकमात्र इच्छा यही थी कि आप लोग इसे गम्भीरता से लें और कार्यान्वित करें ..........आप लोगों को मेरे हाथ मज़बूत करने होंगे। लोग कहते हैं कि देवी के एक हज़ार हाथ हैं, परन्तु अब वो एक हज़ार हाथ भी आपसे माँग रहे हैं कि अपने दो हाथों समेत आ जाओ और इसे कार्यान्वित करो।

**प.पू.श्री माताजी, कबेला, ६.५.२००१**

..... हर सहजयोगी का यह कर्तव्य है कि वह जाने कि सारी दुनिया आपकी तरफ आँख लगाए बैठी हुई है और आप अपने गौरव को पहचाने। पूरा विश्व आपकी ओर देख रहा है और यह घटित होने की आशा कर रहा है। .....सबसे बड़ी चीज़ आपकी 'माँ' की आशा है कि आप पूरे विश्व का उद्धार करेंगे। ये सोचें कि आपने यह कार्य करना है। आप ही लोग चलते, बोलते, घूमते परमेश्वरी प्रेम के जंगल हैं, वह ऋतम्भरा प्रज्ञा हैं ........आप अपने और समय के महत्व को समझने का प्रयत्न करें।

**प.पू.श्री माताजी, बोर्डी – १२.०२.१९८४**

# अध्याय ३१

# पूजा–महत्व एवं नियमाचरण

## परिचय

सहजयोगी होने के नाते श्री आदिशक्ति की साक्षात रूप में या उनके फोटो की पूजा करने की आज्ञा प्राप्त होने का सौभाग्य हमें प्राप्त है। गरिमामयी मां साक्षात रूप में या अपनी सर्वव्यापक उपस्थिति के माध्यम से हमारी पूजा को स्वीकार करती हैं। जब–जब भी हम श्री माता जी का ध्यान तथा उनसे प्रार्थना करते हैं, वे हमारे साथ होती हैं। अत: श्री माता जी की पूजा करते हुए सहजयोगियों का एक उत्तरदायित्व होता है। श्री माता जी के चरण कमलों पर पूरी तरह से चित्त स्थिर करके उनकी पूजा की जानी चाहिए। पूजा के समय अनचाहे से भी चित्त विक्षेप (ध्यान का हटना) सम्मान विहीनता सम है। मंत्रोच्चारण, महादेवी की महिमा–वर्णन के लिए तथा श्रद्धापूर्वक समर्पित की गई भेंट को स्वीकार करने के लिए, देवी से प्रार्थना के रूप में होता है।

शुद्ध श्रद्धा का उदय हृदय से होता है और इसकी प्रतिबिम्ब ''आत्मा'', देवी माँ की शुभ पूजा करने से प्रसन्न होती हैं। श्री माता जी के अनुसार पूजा अति सुन्दर लहरियों का आह्वान करती है तथा हर उपस्थित व्यक्ति दैवी आनन्द का अनुभव करता है।

पूजा अन्तस का एक भाग बन जानी चाहिए। अपने एक पत्र में श्री माताजी ने कहा है कि पूजा हृदय में करनी चाहिए। पूजा के दृश्य हृदय में उतर कर हमारे लिए निरन्तर आनन्द के स्त्रोत बन जाने चाहिएं।

**हृदय को आदिशक्ति का सिंहासन बन जाने दीजिए और इस प्रकार गंगा जल की तरह पवित्र तथा अमृत की तरह शुभकर बने चित्त से श्री माता जी के चरण कमलों की पूजा कीजिए।**

आदि शंकराचार्य ने कहा कि आध्यात्मिक विकास के लिए पूजा अत्यन्त सहायक है और यह आदिशक्ति की कृपा का आह्वान करती है। बल देकर उन्होंने कहा है कि सर्व – व्यापक शक्ति से जब चित्त का एकाकार हो जाता है तो निर्विकल्प अवस्था में योगी, इष्ट तथा पुजारी के द्वैत से ऊपर उठ जाता है। जब हमारी देवी मां

निरन्तर विद्यमान हैं तो हम पूजा स्वीकार करने के लिए उनका आह्वान किस प्रकार कर सकते हैं? पूरा ब्रह्मांड ही जब उनके विराट अस्तित्व में स्थित है तो हम उन्हें क्या भेंट कर सकते हैं?

उनके असीम (विराट) रूप के दर्शन कर पाने में असमर्थ हम सब सहजयोगियों को अपनी पूजा का शुभ–अवसर प्रदान करने के लिए श्री माताजी ने सीमित (मानव) रूप धारण किया है। इस कृपा के लिए हमारा रोम–रोम उनके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए ।

मनस्त्वं व्योमस्त्वं मरूदसिसारथिरसि
त्वमापस्त्वं भूमिस्त्वयि परिणतायां नहि परम्।
त्वमेव स्वात्मानं परिणामयितुं विश्ववपुषा।
चिदानन्दकारं शिवयुवति भावेन विभूषे ।।
अर्थात
तुम हो मन, वायु, आकाश, अग्नि, जल और भूमि तुम्हीं हो।

तू मन है, तू आकाश है, तू वायु है और वायु जिसका सारथि है– वह अग्नि भी तू है। तू जल है और तू भूमि है, तेरी परिणति के बाहर कुछ भी नहीं है। तूने ही अपने आपको परिणत करने के लिए चिदानन्दकार को विराट देह के भाव द्वारा व्यक्त किया हुआ है।

**प.पू.श्री माताजी, चैतन्य लहरी, १९९१**

## पूजा का अधिकार

**''सहज योग के विषय में आज मैंने आपको कुछ रहस्य बताने है– एक रहस्य यह है कि पूजा के लिए आपको मध्यम प्रकार के लोगों को नहीं लाना चाहिए क्योंकि पूजा को सहन करना अति कठिन है। मेरे अस्तित्व, चरणों तथा कर – कमलों का मूल्य अभी तक लोगों ने नहीं समझा है। वे यहां आने के योग्य नहीं हैं।** अत: भाई, बहन या मित्र होने के नाते किसी व्यक्ति को न लाएं । यह अनुचित है। असह्य देकर आप उस व्यक्ति के उत्थान के अवसर बिगाड़ रहे हैं। वह इसे सहन नहीं कर सकता । पूजा बहुत ही कम लोगों के लिए है। अत: याद रखें कि पूजा अधिक लोगों के लिए नहीं है।

अब **चरणामृत–** अर्थात मेरे चरणों का अमृत भी सभी के लिए नहीं होता और न ही पूजा की आशिष सब के लिए होती है। अत: जो लोग पूरी तरह तैयार नही हैं

उनसे बचने का प्रयत्न करें। सर्वप्रथम वे सन्देह करना शुरु कर देंगे। नियम –आचरण सम्बन्धी समस्या भी होगी। आवश्यक सम्मान के साथ वे पूजा को स्वीकार न सकेंगे। **यहाँ आना अत्यन्त सौभाग्य से होता है और यह सौभाग्य हर किसी को नहीं प्रदान किया जा सकता।**

यदि आप समझ सकें तो यह सहजोग का रहस्य है और प्रारम्भ में इस रहस्य के विषय में बहुत कम लोगों को बताना है। एक दिन सभी रहस्य उघड़ने वाले हैं – परन्तु सब के लिए नहीं। जब आप इस सत्य हो पहचान जाएंगे कि आप सौभाग्यशाली हैं तो आप के आचरण से प्रकट होगा कि यह सौभाग्य आपको प्रदान किया गया है। आज विश्वभर में ध्यान करने वाले बहुत से लोग हैं। मैं इन सब लोगों के विषय में सोच रही हूँ। आपको भी इनके विषय में सोचना है और यह समझना है कि ये भी आपकी तरह ही विराट अस्तित्व के अंग–प्रत्यंग हैं। **परन्तु आप लोग मेरे अस्तित्व के सतर्क अंश हैं।**

अत: इस समय यह पूजा आप केवल अपने तथा लंदन के लोगों के लिए ही नहीं बल्कि पूरे विश्व के हित के लिए कर रहे हैं। **विश्वभर के सहजयोगियों के अतिरिक्त आप स्वयं को उन सहजयोगियों की तरह अभिव्यक्त कर रहे हैं जो मुझे पहचान चुके हैं और मुझसे दूसरे लोगों को आशिष देने के लिए प्रार्थना कर रहे हैं जिससे कि वे भी मुझे पहचान सकें। मुझे आशा है इस पूजा से मेरी पहचान आपको और अधिक स्पष्ट हो जायेगी। मुझे पहचानकर आप केवल अपने आपको पहचानेगें तथा सभी कार्य बड़े सुन्दर ढ़ंग से होने लगेंगे।**

मैं केवल यह चाहती हूँ कि आप निष्कपट बनें तथा सहजयोग में कपट न करें। कपट करने से आपको भी बहुत हानि होगी तथा अन्य सहजयोगियों को भी, अत: छल न करें। छल द्वारा क्योंकि आप मुक्ति पथ को हानि पहुँचाएंगे तो आप दण्डित होंगे और परिणाम स्वरूप आप ही हानि पीड़ित होंगे। अत: निष्कपट बनने का प्रयत्न करें, यह कठिन कार्य नहीं है।

कपट का मार्ग नहीं अपनाना है। बहुत से लोग सोचते हैं कि माँ ताड़ना कर रही हैं, परन्तु ताड़ना जैसे शब्द गलत हैं, तथा इनका प्रयोग मेरे लिए नहीं होना चाहिए। सौभाग्यवश आप यहाँ हैं और आपको यह पता होना चाहिए कि सौभाग्य केवल योग्य व्यक्तियों को ही प्रदान किया जाता है। आप सब योग्य व्यक्ति हैं इसी

कारण मैं यह सब आपको बतला रही हूँ।

**निष्कपटता आपकी सफलता की कुन्जी है। यह एक सौभाग्य है कि मैं यह कुन्जी आपको दे रही हूँ।** पाश्चात्य बुद्धि के लोगों को यदि आप कुछ बतायें तो वे दंड इत्यादि अवांछनीय शब्दों का प्रयोग कर देते हैं। **आपको सम्मान सूचक तथा उचित शब्दों का प्रयोग मेरे प्रति करना चाहिए।**

यदि आपकी आचरण विधि ठीक नहीं है तो आप उलटे-सीधे कार्योद्वारा सभी कार्य बिगाड़ लेते हैं। अत: सावधान रहिए। इस अवसर को सौभाग्य मानिये। आप सभी विशेष व्यक्ति हैं और यह अवसर आपके प्रति विशेष कृपा है। जन-साधारण से मैं इस प्रकार बातें नही कर सकती। परन्तु आपको यह सब मैं इसलिए बता सकती हूँ क्योंकि पूरी कुन्जी मैं आपको देना चाहती हूँ।

स्वयं को देखकर यदि आप यह जान सकें कि आप कितने सौभाग्यशाली हैं, कि सहजयोग क्या है, तब आप समझेंगे कि यहाँ पर विद्यमान होना कितने सौभाग्य तथा सुफल की बात है। आपकी सुकृतियों के कारण यहाँ पर आपकी उपस्थिति से आपके कितने जीवन पुरस्कृत हो गये हैं? यह ज्ञान आपको और अधिक निष्कपटता पूर्वक पूजा करने में सहायक होगा।

ईश्वर आपको धन्य करें।

**पूजा के पश्चात आप अवश्य ध्यान करें क्योंकि ध्यान के बिना आप मेरी लहरियों का अमृतपान नहीं कर सकते। सदा ऐसा ही होता है, बहुत ही कम पूजाओं में मेरी लहरियों को पूरी तरह सोखा जा सका। केवल अबोधिता द्वारा ही आप मेरी पूरी लहरियों को आत्मसात कर सकते हैं। अपने मस्तिष्क को प्रश्न न पूछते हुए, दुराचरण न करते हुए, लहरियों की सुधापान करने की आज्ञा स्पष्ट रूप से दीजिए। ऐसा करना आपकी अपनी पुष्टता, उन्नति तथा आन्नद के लिए है।**

ईश्वर आपको आशिष प्रदान करें।

**प.पू.श्री माताजी, ५.५.१९८०**

अब पूजा के लिए आप लोगों को समझना है कि साक्षात्कार के बिना पूजा का कोई अर्थ नहीं, क्योंकि आप ''अनन्य'' नहीं हैं, अर्थात आपको अपने विराट रूप के प्रति चेतन होना है। कृष्ण ने भक्ति को अनन्य बताते हुए कहा कि मैं अनन्य भक्ति प्रदान करूंगा। वे अनन्य भक्ति चाहते हैं। अनन्य अर्थात जहाँ दूसरा कोई न हो अर्थात

जब आप साक्षात्कारी हों। अन्यथा वे कहते हैं। ''पुष्पम् फलम् तोयम्'' अर्थात ''पुष्प, फल व जल, स्वीकार्य है मुझे, समर्पित जो करो.''

परन्तु जब देने की बात आती है तो वे कहते हैं–'अनन्य भक्ति पूर्वक आप को मेरे पास आना है, अर्थात, ''मुझ से एकाकारिता हो जाने के पश्चात ही आप में भक्ति जागती है, उससे पूर्व नहीं, इससे पूर्व आपके सम्बन्ध नहीं जुडे होते।

**पूजा मनुष्य की बायीं ओर की भावना की अभिव्यक्ति है , यह दायीं ओर की उग्रता को, विशेषतया अति उग्र स्वभाव को तथा उग्र वातावरण को निष्प्रभावित करती है । पूजा क्योंकि भक्ति तथा समर्पण की अभिव्यक्ति है अत: यह उग्र स्वभावी व्यक्तियों के लिए हितकर है।** पूजा करने से होता क्या है? ऐसा पाया गया है और अब मैं भी तुम्हें बता रही हूँ कि पूजा द्वारा आपको अपने अन्दर के सुप्त देवी–देवताओं को जगाना है । परन्तु क्योंकि ये देवता, ये आदिदेव मेरे साथ हैं इसलिए आप मेरी पूजा करो और मेरे अन्दर के सभी देवता जागृत होंगे तथा परिणामत: आपके अन्त:स्थित देवता भी जागृत हो जायेंगे। अत: मेरा आशिष ग्रहण करने योग्य बनने के लिए आपकी लहरियों का सुधरना अति आवश्यक है ।

**यदि ग्रहण–सामर्थ्य ही अच्छी नहीं है तो किसी भी पूजा या भावाभिव्यक्ति का कोई लाभ नहीं। तो सर्व प्रथम हम एक प्रकार से अपने यंत्र (शरीर) या प्रक्षेपण –यन्त्र को तैयार करते हैं। यह तैयारी भिन्न देवी –देवताओं को प्रार्थना द्वारा – अर्थात कुंडलिनी पूजा द्वारा होती है। मेरी कुण्डलिनी की प्रार्थना करने से आप अपने प्रतिबिम्ब को सुधार लेते हैं क्योंकि आपकी प्रार्थना से मेरी लहरियों का बहाव आपकी ओर हो जाता है तथा आपकी कुण्डलिनी को जागृत कर देता है। यह जागृति ही आपके उत्थान का प्रारम्भ है ।**

एक बार जब आपका यन्त्र ठीक हो जाता है तो आप अपनी अभिव्यक्ति बाहर की ओर करते हैं।

किस प्रकार करते हैं आप यह अभिव्यक्ति? ब्रह्माण्ड की रक्षक के रूप में देवी की शक्तियों का महिमागान करके उसकी पूजा– अर्चना द्वारा आप यह कार्य करते हैं।

**महा–देवी की शक्तियों का गुणगान बारम्बार करके अपनी भावाभिव्यक्ति (हृदय–प्रेम) को जब आप प्रतिध्वनित करते हैं। तब आपकी अभिव्यक्ति अति शक्तिशाली हो जाती है।** एक अति सूक्ष्म घटना घटित होगी जो कि

चमत्कारिक है । यह सब बातें अति साधारण लगती हैं – जैसे **मेरे चरण धोना अति साधारण प्रतीत होता है । अब आप इन चरणों को देखिए। मैं नहीं जानती कि आप इनमें पूरे ब्रह्माण्ड को देखते हैं या नहीं – मैं तो इसे यहाँ देखकर आश्चर्यचकित रह जाती हूँ!**

**मेरे चरण धोते समय आप क्या करते हैं? वास्तव में मेरे चरण घोर परिश्रम करते हैं और तब इन्हें आराम पहुँचाने के लिए आप थोड़ा सा जल इन पर डालते हैं और यह संकेत देते हैं कि इन चरणों द्वारा किये गये प्रयत्नों को आप अनुभव कर सकते हैं। और तब एक प्रकार का मधुर तथा संगीतमय प्रेम इन चरणों से बह निकलता है।** जैसे आज जब मैं आ रही थी तो अचानक पॉल को खड़े देखा–वही हुआ, देखो कितनी सावधानी तथा समझदारी है–श्री माताजी आ रही हैं। कहीं वे खो न जायें। बस इतने भर से करुणा बहने लगी क्योंकि यह प्रेम तो सब कुछ समझता है। किसी वस्तु की इसे आशा नहीं, परन्तु केवल प्रेम को स्वीकार करने वाले व्यक्ति की उपस्थिति में ही यह उत्तेजित होता है ।

आप कैसे कह सकते हैं कि आप ग्राही (पानेवाले) हैं ? इन छोटी–छोटी बातों की अभिव्यक्ति द्वारा । अत: जब आप मेरे चरणों को आराम पहुँचाते हैं, इन्हे धोते हैं, साफ करते हैं तो आपको पता होता है कि इनका महत्व क्या है, आप इस महत्व को पहचानते हैं। यह मान्यता आप किस प्रकार प्रकट करेंगे? यह छोटे–छोटे समारोह इसलिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि यह आपकी मान्यताओं को प्रकट करते हैं। अज्ञानता में यदि आप इन्हें करेंगे तो यह जीवनहीन होंगे और ज्ञान –पूर्वक समझ कर करने पर पूर्णतया जीवन्त बन जायेंगे। **मेरे चरणों को आराम पहुँचाने के लिए आप तेल इत्यादि अन्य वस्तुएं लगाते हैं। इस तरह आप हृदय से कहते हैं–**

**''श्री माताजी आपने घोर परिश्रम किया है, आपके चरण कमलों ने भी बहुत परिश्रम किया है।''**

सामान्य रूप (बुद्धि–प्रयोग) से यदि आप यही बात कहें तो यह महत्वहीन है। **परन्तु मेरे चरणों के प्रति आपका प्रेम महत्वपूर्ण है।** जैसे बच्चे के प्रेम पूर्वक माँ के गाल पर हाथ रख देने मात्र से माँ का हृदय प्रेम से द्रवित हो उठता है। यह आचरण पारस्परिक है। यह अति सूक्ष्म क्रिया है जो इसी प्रकार कार्य करती है । **हृदय से आप जितना मुझे प्रेम करते हैं उतना ही अधिक आनन्द आप पाते हैं। तर्क तथा बुद्धि**

**प्रयोग से यह आनन्द नहीं मिल सकता।**

सर्व प्रथम आपका शुद्धिकरण आवश्यक है। परन्तु आपकी प्रेम अभिव्यक्ति श्री माता जी के प्रति होनी ही चाहिए। यही चरमसीमा है जिसे प्राप्त करते ही आप सर्वशक्तिमान बन जाते हैं और दूसरे लोगों को भी यह शक्ति दे सकते हैं। परन्तु यह देना भी एक दूसरे के आश्रय पर निर्भर है क्योंकि देवी आपके विषय में सब कुछ जानती हैं। यदि आप कोई अनुचित प्रयास करेंगे तो देवी आपको स्पष्ट रूप से बिना किसी संकोच के कह देगीं कि ऐसा नहीं होना चाहिए। फिर भी कार्य को करने के लिए आपको पता होना चाहिए कि इसे परस्पर आश्रित होना है। यह एकतरफा नहीं हो सकती। निष्कपटता एकतरफा नहीं हो सकती, यह दोनों ओर से होनी चाहिए । तभी यह भलीभांति कार्य कर सकती है । और तब आप एक प्रकार के समभाव स्नेह के रूप में प्रेम को लाते हैं और अन्तस में एक सुन्दर हलचल का अनुभव होता है ।

**पूजा वास्तव में प्रोत्साहन देने वाली क्रिया है । यह आपको एक नये साम्राज्य में ले जाती है । वास्तव में यह चमत्कार है । एक बार जब आप पूजा कर लेते हैं तो अपने मौन से भी बहुत सी अभिव्यक्ति कर सकते हैं। आपका मौन भी अत्यन्त शक्तिशाली बन जाता है।**

पश्चिमी देश के लोगों को विशेषतया अपनी अबोधिता को स्थापित करना है। यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सबसे पहले इसी पर आक्रमण होता है । बहुत सी दुष्ट शक्तियाँ इस पर आक्रमण करती हैं। अत: हमें अपनी अबोधिता को दृढ़ करना है। यह अत्यन्त शक्तिशाली गुण है। यह कोई बुराई नहीं देखता। अबोधिता कुछ नहीं देखती, केवल प्रेम करती है। बचपन में बच्चा नहीं जानता कि माता–पिता या कोई अन्य बच्चे से घृणा करता है। निष्कपटता पूर्वक बच्चा रहता है । परन्तु अचानक जब उन्हें पता चलता है कि लोग परस्पर प्रेम नहीं करते तो उन्हें सदमा पहुंचता है ।

अत: पश्चिमी देशों के लिए श्री गणेश अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वे ही हर चीज के सार है । यही कारण है कि सर्वप्रथम हम श्री गणेश की पूजा करते हैं। परमात्मा ने सर्वप्रथम श्री गणेश की रचना की क्योंकि वही उनके सबसे बड़े पुत्र हैं, उनके पहले बेटे हैं। आपके भाईयों में से वे सबसे बड़े भाई हैं और यद्यपि कार्तिकेय को सदा बड़े भाई का स्थान दिया जाता है और गणेश जो स्वयं को छोटा भाई कहते हैं, फिर भी उनका सृजन पहले किया गया था। क्योंकि श्री गणेश सदा शिशुसम हैं इसलिए वे आप सबसे छोटे हैं। समझने की यह अत्यन्त सूक्ष्म बात है कि छोटा होते

हुए भी वे इतने विवेकशील हैं। वे साक्षात विवेक हैं। क्या आप इतने बुद्धिमान बच्चे की कल्पना कर सकते हैं? आयु में आप सदा श्री गणेश से बड़े हैं परन्तु विवेक में वे ही सबसे बड़े हैं।

**इसी तरह से आपको समझना चाहिए कि छोटी –छोटी क्रियाओं से, मंत्रोच्चारण से किस प्रकार हम अपने अन्दर के देवताओं का आह्वान करते हैं क्योंकि आप जागृत हैं, आपका हर शब्द जागृत है, अत: अब आपके मंत्र भी सिद्ध हैं।**

इस गुरु पूजा पर मैं आपको सिद्ध करने व सिद्धि स्थापना की विधि बताने वाली हूँ। हर चक्र और उसके शासक देवता की सिद्धि प्राप्त करने की विधि। निसंदेह इस गुरु पूजा पर यह कार्य होगा। परन्तु यह पूजा पूरी सूझबूझ तथा पूर्ण मान्यता के साथ इसे परम सौभाग्य मानते हुए होनी चाहिए।

सभी देवता और ऋषिगण इस पर ईर्ष्या कर रहे हैं। आपके लिए महान लाभ तथा सौभाग्य है, अत: इसका पूरा लाभ उठायें। बहुत ही छोटी–छोटी चीजें मुझे प्रसन्न कर सकती हैं–आप जानते हैं कि आपकी माँ बहुत ही साधारण चीजों से प्रसन्न हो जाती हैं। कितने हृदय से आपने पूजा की– बस इसी का महत्व है ।

क्योंकि आप निर्विचार समाधि में चले जायेंगे, अत: इसके विषय में अधिक सोचने –विचारने के स्थान पर इसे समझना, महसूस तथा अनुभव करना है । यही ऊर्ध्वगति है ।

**प.पू.श्री माताजी, १९.७.१९८०**

.....विग्रह, अर्थात पृथ्वी माँ का चैतन्य लहरियों का स्वयंभु: मूर्तरूप, की पूजा करने में लोगो के सामने बहुत सी समस्याएं थीं। सर्वप्रथम उन्हें सविकल्प समाधि में ध्यान मग्न होना पड़ता था। इस अवस्था में उन्हें विग्रह पर ध्यान लगाना पड़ता था।

**विग्रह से तात्पर्य चैतन्यलहरियों से परिपूर्ण मूर्ति से है। उस मूर्ति को देखते हुए अपनी कुण्डलिनी को ऊर्ध्व–मुखी करने की चेष्टा जिज्ञासु किया करते थे और कुंडलिनी भी आज्ञा चक्र तक आ जाया करती थी। सहस्त्रार भेदन कर कुंडलिनी का बाहर आना अति दुष्कर कार्य था क्योंकि उस अवस्था में जिज्ञासु को साकार से निराकार की ओर जाना पड़ता है। अमूर्त का ध्यान करना असम्भव कार्य था। मुसलमानों तथा कई अन्य लोगों ने ऐसा करने का प्रयत्न किया। इन**

**परिस्थितियों में आवश्यक था कि जटिलताओं को दूर करने के लिए निराकार को साकार रूप में मान लिया जाये। ज्योंही आप साकार का ध्यान करते हैं आप स्वयं निराकार हो जाते हैं।** उदाहरण–स्वरूप यदि अपने समक्ष पड़ी बर्फ़ जब आप छूते हैं तो यह पिघलने लगती है और आपको शीतलता की प्रचीति होनी शुरु हो जाती है ।

समस्या का समाधान अब सहज ही हो गया है। **पूजा एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा आप साकार को निराकार में परिवर्तित कर उसकी अनुभूति करते हैं। आपके सारे चक्र ऊर्जा के केन्द्र हैं और सभी चक्रों पर उनके निदेशक देवता विद्यमान हैं। निराकार होते हुए भी उन्हें साकार रूप प्रदान किया जाता है। जब आप पूजा करते हैं तो उनका साकार रूप परिवर्तित हो कर चैतन्य लहरियों के रूप में प्रवाहित होने लगता है और इस प्रकार से सभी गलत धारणाएं, मान्यताएं, जिन्होंने आत्मा को ढका हुआ था, दूर हो जाती हैं। पूजा के विषय में आप सोच नहीं सकते क्योंकि पूजा का क्षेत्र विचार–क्षेत्र से परे है ।** आपको समझना है कि आप पूजा के प्रति तार्किक दृष्टिकोण नहीं अपना सकते। आपको अपने चक्रों का सर्वाधिक लाभ उठाना है और इसके लिए आपको पूजा तथा चैतन्यलहरियों के बहाव पर ध्यान केन्द्रित करना है। लहरियों का यह बहाव अज्ञानान्धकार रूपी बादलों को फाड़ देगा। अत: आपका केवल एक ही कार्य है , एक ही साधन है कि पूजा पर ध्यान केन्द्रित करें और साक्षी बनें। आप ही 'दृष्टा' हैं। दृष्टा शब्द के दो अर्थ हैं, पहला यह है कि वह केवल तटस्थ रहकर देखता है , वह केवल ज्ञान है , बिना किसी विचार और प्रतिक्रिया के देखना मात्र है और सहज रूप से ग्रहण करता है। आपके और देवताओं के बीच आवश्यक समानता की कमी कई बार मेरे लिए बोझिल बन जाती है।

एक ओर आपके मंत्रोच्चारण से देवता जागृत हो जाते हैं और दूसरी ओर आप अपने अन्तस में उनसे कुछ ग्रहण नहीं करना चाहते। अत: अपने शरीर में उत्पन्न उस अतिरिक्त शक्ति का संचय मुझे करना पड़ता है ।

अत: अपने हृदय को खुला रख कर, बिना बुद्धिप्रयोग के पूजा करना आपके हित में होगा। आज हम पूजा की विधि में परिवर्तन कर रहे हैं। पहले हम हवन करेंगे और फिर पूजा। यही उपयुक्त होगा क्योंकि इस तरह हम अग्नितत्व को जागृत करेंगे जो सभी दोषों को जला देगा। मेरे चरण धोने का भी वही प्रभाव होता है जो हवन की अग्नि प्रज्वलित करने का। आज पहले हम हवन करेंगे और फिर पूजा। दोनों समान हैं।

आप मेरी पूजा जल अथवा अग्नि से कर सकते हैं।

**अग्नि का सारतत्व कान्ति में है। जो भी बुराई है उसको जला दिए जाने पर यह कान्ति आप सब के शरीर तथा चेहरे को आभामय बनाती है और जब आप हवन करते हैं तो सारा वातावरण चैतन्य लहरियों से परिपूर्ण हो जाता है।**

परमात्मा आपको आशिष दें।

**प.पू.श्री माताजी, १८.६.१९८३**

आज मैं आपको पूजा का महत्व बताऊंगी।

प्राचीन ईसाई भी ''मैरी'' की प्रतिमा, तस्वीर या सम्भवत: येशु की माँ की रंगीन शीशे पर बनी आकृति की पूजा – आराधना किया करते थे।

परन्तु बाद में जब लोग अधिक तार्किक बनने लगे, और पूजा के महत्व के ज्ञानाभाव में इस महत्व का वर्णन न कर पाये, तो उन्होंने नियमित रूप से की जानी वाली पूजा का महिमा गान त्याग दिया।

ईसा के पूर्व भी लोग एक विशेष प्रकार का मण्डप बनाते थे जिसमें जिहोवा की पूजा के लिए भी स्थान बनाया जाता था। अब सहजयोग में जिहोवा सदाशिव हैं तथा माँ मैरी महालक्ष्मी हैं।

वे पहले भी अवतरित हुईं। सीता, राधा तथा फिर माँ मैरी के रूप में वे अवतरित हुईं 'देवी महात्म्य' नामक पुस्तक में ईसा के जन्म के विषय में स्पष्ट रूप से लिखा हुआ है। ईसा राधा के पुत्र थे, राधा महालक्ष्मी हैं। अत: डिम्ब (अण्डा) के रूप में एक अन्य अवस्था में उनका जन्म हुआ और आधे अण्ड ने श्री गणेश के रूप में पुन: अवतरण लिया और शेष आधा भाग महाविष्णु, जो कि हमारे भगवान ईसा हैं, के रूप में अवतरित हुआ।

महाविष्णु का वर्णन पूर्णतया ज़ीज़स क्राइस्ट का चित्रण है। महालक्ष्मी अवतरित हुईं और निर्मल परिकल्पना (इच्छा) से अपने शिशु को जन्म दिया। ऐसा उन्होंने राधा रूप में भी किया था। अत: ईसा महान ईश्वर के (विराट के) पुत्र हैं। वास्तव में विष्णु ही महाविष्णु तथा विराट बनते हैं। अब यह विष्णु–तत्व विराट का रूप धारण करता है और राम, कृष्ण तथा विराट अर्थात अकबर भी बनता है। अत: ईसा स्वयं ओंकार हैं तथा चैतन्य लहरियाँ भी स्वयं ही हैं। शेष सभी अवतरणों को शरीर धारण करने के लिए धरा माँ का तत्व (पृथ्वी तत्व) लेना पड़ा। ईसा का शरीर

पूर्णत: ओंकार है तथा श्री गणेश उनका पृथ्वीतत्व हैं।

अत: हम कह सकते हैं कि ईसा श्री गणेश की अवतरित शक्ति हैं। यही कारण है कि वे जल पर चल सकते थे। वे देवत्व का निर्मलतम रूप हैं क्योंकि वे केवल चैतन्य लहरियाँ मात्र ही हैं। अत: मेरे साक्षात्–रूप की पूजा जब आप करते हैं तो इसमें अवास्तविक कुछ भी नहीं। ईसा और माँ मैरी के जीवन काल में ही लोगों को उनकी पूजा करनी चाहिए थी। ईसाईयों के दस धर्माचरणों में यह कहा गया है कि जिस का सृजन पृथ्वी तथा आकाश ने किया है उसका पुन: सृजन, पुनरुत्पत्ति और पूजा नहीं की जानी चाहिए। **अवतारों का सृजन परमात्मा ही करते हैं। केवल आधुनिक काल में ही अवतरणों का चित्र लेना सम्भव है, पहले इसकी सम्भावना नहीं थी। पृथ्वी माँ द्वारा सृजित का अभिप्राय स्वयम्भु रचनाओं से है। अब स्वयम्भु रचनाएं बहुत स्थानों पर पायी जा सकती हैं। कुछ साक्षात्कारी आत्माओं ने भी सुन्दर प्रतिमाओं की संरचना की है।**

मैं जब पुर्तगाल गयी तो वहाँ लेडी ऑफ राक्स, चट्टान देवी का उत्सव था। जब मैं उत्सव स्थान पर गयी तो वहाँ पर माँ मैरी की पाँच इंच आकार की, बहुत छोटी सी, प्रतिमा थी जिसका चेहरा ठीक मेरे जैसा था। वहाँ के लोगों ने मुझे बताया कि दो छोटे बच्चों ने खरगोश का पीछा करते हुए इस प्रतिमा को पाया। उन्हें चट्टानों के नीचे खोह में से प्रकाश का आभास हुआ। वे प्रकाश के स्त्रोत की खोज में लगे रहे और अन्तत: उन्हें प्रकाश का स्त्रोत यह मूर्ति प्राप्त हुई। उन्होंने इसे बाहर निकाला और इसी के प्रकाश में वे गुफा में चलते रहे। बाहर एकत्रित बहुत से लोग यह देख आश्चर्यचकित रह गये।

लोग अब उस मूर्ति की पूजा उसी स्थान पर करते हैं। यह प्रतिमा उन्हें ठीक उसी प्रकार चैतन्य लहरियाँ प्रदान करती है जैसे मैं आपको, परन्तु जिस मात्रा में लहरियाँ मैं देती हूँ उतनी यह नहीं दे सकती। हो सकता है कि वहाँ कुछ अन्य प्रतिमाएं भी आपको चैतन्य लहरियाँ प्रदान करें। भारत में भी, आप में से कुछ लोग गणपतिपुले गये। वहाँ महागणेश अर्थात् ईसा स्वयम्भु रूप में पृथ्वी माँ के गर्भ से प्रकटित हुए। महागणेश के शरीर के नीचे का भाग तथा उनका शिरोभाग समूचा पहाड़ है। वहाँ पर समुद्र का पानी भी मीठा है तथा मीठे पानी के कई कुएं भी वहीं विद्यमान हैं।

यदि आपको याद हो तो वहाँ कई लोगों ने मेरे चित्र लिए और उनमें से कुछ चित्रों में मेरे हृदय में से प्रकाश प्रस्फुटित हो रहा है। कुछ लोगों ने मुझे बताया कि कुछ

चित्रों में प्रकाश नहीं था लेकिन जब उन्होंने नैगेटिव से पुन: चित्र बनाए तो उन चित्रों में भी प्रकाश पाया गया।

**आपको यह अवश्य जानना चाहिए कि दैवी शक्ति के साम्राज्य में विभिन्न प्रकार के चमत्कार होते हैं। ठीक यही बात पूजा में है। जब हम पूजा करते हैं तो सर्वप्रथम श्री गणेश की आराधना करते हैं और इस प्रकार आप अपने अन्दर श्री गणेश को जागृत तथा स्थापित करते हैं। उनके रूप में मेरी पूजा करके आप में अबोधिता प्रतिष्ठित होती है। पर आप देखेंगे कि चैतन्य लहरियाँ बढ़ती हैं, आप अपने अन्दर शान्ति का अनुभव करते हैं।**

जब आप श्री गणेश के नामों का उच्चारण करते हैं तो आप उनके गुणों से परिचित होते हैं, जब आप उनके गुणों की आराधना करते हैं तो वे आपके द्वारा अपने गुणों व शक्तियों को प्रस्फुटित करते हैं। इस प्रकार से यह दैवी शक्ति कार्य करती है मानों आपको उन गुणों से प्लावित कर देती है। तब आप आदिशक्ति की आराधना करते हैं।

**पूजा करने से आदिशक्ति के समस्त (सातों) चक्र जागृत हो उठते हैं तथा इन चक्रों द्वारा वे अपना कार्य शुरु कर देता हैं। सृष्टि में पहली बार ऐसा अवतरण हुआ है।** यह ठीक उसी प्रकार से है जैसे आप पहले एक कमरा बनाते हैं फिर दूसरा और फिर तीसरा। इस प्रकार सात कमरे बना कर गृह का निर्माण कार्य पूरा होता है। आपको गृह की कुंजियाँ मिल जाती हैं और आप अपने गृह को खोलते हैं। इसी प्रकार से मैं सामूहिक रूप से आत्मसाक्षात्कार प्रदान करती हूँ। ऐसा होना पहले सम्भव नहीं था लेकिन अब सातों चक्रों के समन्वय से यह सम्भव हो पाया है। और अब आप आदिशक्ति की आराधना कर रहे हैं। मेरा आपके समान मानव–रूप, मेरा महामाया रूप है। मैं आप जैसा व्यवहार करती हूँ और स्वयं को ठीक आप जैसा बना लिया है, यद्यपि यह कार्य बहुत कठिन था। आपको सहजयोग समझाने की प्रक्रिया में और आपको आपमें निहित आपकी शक्ति बतलाने में मेरे शरीर को बहुत कुछ सहन करना पड़ता है।

यदि आप मेरे प्रति रुक्ष व्यवहार करते हैं, मेरा सम्मान नहीं करते तो ईसा को बहुत क्रोध आता है क्योंकि वे कह चुके हैं कि वे परम–चैतन्य के विरुद्ध कुछ भी सहन नहीं करेंगे। अत: मेरा आज्ञा चक्र तेज़ी से घूमना शुरु कर देता है और क्रोध

उगलने लगता है। परन्तु मुझे इसे सहन करना पड़ता है। मैं आपको नहीं बता सकती कि ईसा उस समय आपको मुझसे क्या कहलवाना चाहते हैं क्योंकि वे अपने कार्य को तत्काल अंजाम देना चाहते हैं। परन्तु मुझे थोड़ा सा सावधान रहना पड़ता है ताकि आप परेशान न हो जायें। साथ ही **पूजा के समय यदि आप मेरे प्रति विरोध अथवा सन्देह ग्रस्त हैं और चैतन्य लहरियां स्वयं में समाहित नहीं करते तो मुझे समस्या होती है। चैतन्य लहरियाँ क्योंकि - बह रही हैं और आप उन्हें आत्मसात नहीं कर पा रहे हैं तो मेरी समझ में नहीं आता कि मैं किस प्रकार उन्हें अपने में सीमित रख सकूं। इन्हें सीमित करने में मुझे कष्ट भुगतना पड़ता है। यह सभी चीज़ें प्रतीकात्मक है और यह प्रतीक वास्तव में कार्य करते हैं। उदाहरणार्थ, आप किसी को प्यार से एक पुष्प भेट करते हैं तो उसे अत्यधिक आनन्द और कृतज्ञता की अनुभूति होती है। और आप जब मुझे पुष्प, जल अथवा कोई अन्य चीज़ भेंट करते हैं तो तत्व और चक्रों पर स्थित देवता प्रसन्न हो जाते हैं और वे अपने गुणों की तथा तुम्हारे प्रति आशिष रूप में चैतन्य -लहरियों की वर्षा करते हैं। इस प्रकार दैवी शक्ति कार्य करती है और पूजा के पश्चात आप इस शक्ति द्वारा किए गए कार्य की शनै:-शनै: अनुभूति करते हैं।**

अब हम इस समय यहाँ पूजा कर रहे हैं और विश्व भर में सहजयोगियों को इस पूजा का ज्ञान है. वे ध्यान मग्न बैठे हैं और इस तरह वे भी आशीर्वाद प्राप्त कर रहे हैं। इसीलिए हम उन्हें पूजा प्रारंभ होने का समय बता देते हैं। अत: समय पर हमें पूजा में बैठ जाना चाहिए ताकि ध्यान-मग्न हो कर अन्यत्र बैठे सहजयोगी भी आप ही की तरह लाभान्वित हो सकें।

यदि अभी तक भी पूजा के महत्व की इन थोड़ी सी बातों के ज्ञान के योग्य आप नहीं हैं तो भी चिन्ता की कोई बात नहीं। आपकी अनभिज्ञता तथा निर्दोष भाव को परमात्मा जानते हैं तथा आपको क्षमा प्रदान करते हैं। **विनम्र हृदय से पूजा करते हुए यदि आपसे अनजाने में कोई भूल हो जाती हैं तो आपको दोष-भाव-ग्रस्त नहीं होना चाहिए। धीरे-धीरे आप सब जान जायेंगे। लेकिन यदि आप जान बूझ कर गलती करते हैं तो यह अच्छा नहीं हैं। जैसे हम अपने बच्चों को क्षमा करते हैं वैसे ही परमात्मा भी अपने अबोध बच्चों को क्षमा कर देते हैं।** अत: आप इस विषय में निश्चिन्त हो जाइये और हृदय में आनन्द की अनुभूति के लिए पूजा को सहज रूप

से कीजिए।

परमात्मा आप पर कृपा करें।

**प.पू.श्री माताजी, २४.५.१९८६**

जैसे आप सब विश्वास करते हैं 'मैं आदिशक्ति हूँ।' इसका प्रमाण भी आपके पास हैं। पूजा के माध्यम से भी आप इसका प्रमाण प्राप्त कर सकते हैं। इससे भी अधिक, पूजा से मेरे चक्रों पर स्थित देवता उल्लसित होते हैं और अधिक लहरियाँ छोड़ना चाहते हैं। जब वे बहुत सी चैतन्य लहरियाँ छोड़ने लगते हैं तो आप आश्चर्यचकित रह जाते हैं कि **किस प्रकार पूजा के पश्चात आप इन लहरियों में शराबोर होकर अत्यन्त उच्च स्तर तक उन्नत हो जाते हैं।** नि:सन्देह यह सत्य है कि पूजा के समय आप काफ़ी उच्चस्तर का अनुभव करते हैं क्योंकि आप समझते हैं कि आप उस ऊंचाई को बनाये रख सकते हैं। कुछ लोग वास्तव में इस स्तर को बनाए रख सकते हैं परन्तु प्राय: लोग यो-यो नामक खिलौने की तरह ऊपर नीचे होते रहते हैं। अत: उस अवस्था को बनाए रखने के लिए मनुष्य को निर्विचार समाधि में ध्यान लगाना चाहिए। परन्तु केवल देवी की पूजा की ही आज्ञा है। परमात्मा की पूजा की आज्ञा भी है, परन्तु हमें ज्ञान होना चाहिए कि देवी कौन हैं और परमात्मा कौन हैं।

अत: ऐरे-गैरे की अन्धा-धुन्ध पूजा स्वीकार नहीं की जानी चाहिए। आप हैरान होंगे कि सहजयोग के पहले चार वर्षोमें मैने एक भी पूजा की आज्ञा नहीं दी। यहां तक कि लोगों ने कहा ''आप हमारी गुरु हैं, आप हमें गुरु पूजा की आज्ञा दीजिए।'' मैंने कहा ''नहीं, मैं ऐसा नहीं करूंगी।'' तब चार वर्षों के पश्चात लोगों ने नवरात्रि - दिवस पर एक पूजा करनी चाही। मैंने कहा ''ठीक है आप ऐसा कर सकते है।'' **थोड़े से लोग थे जिन्होंने अनुभव किया कि पूजा उन्हें अत्यधिक लहरियाँ और उन्नत आध्यात्मिकता प्रदान कर सकती है। अचानक उन्होंने कई नए आयाम छू लिए और मुझसे प्रार्थना करने लगे कि, ''श्री माताजी कृपया आप हमें पूजा का अवसर दीजिए।''** लोगों को पूजा की विधि का भी ज्ञान न था। उलझन पूर्ण कार्य होते हुए भी मुझे पूजा के विषय में सब कुछ बताना पड़ा। इस तरह सदा मैं यह सब करती रही।

आपको आश्चर्य होगा कि पहली बार जब मैं देहली गयी (यदि कोई मेरा वह फोटो ढूंढ सके तो आप जान पायेंगे। तो मैं तो सिकुड़ती चली गयी, मेरा पूरा शरीर संकोच से सिकुड़ गया। सदमे के कारण मैं अति क्षीण हो गयी क्योंकि वे लोग

प्लास्टिक की पुरानी वस्तुओं का प्रयोग पूजा में कर रहे थे। मैंने सोचा '' हे परमात्मा अब क्या करें?'' इससे पूर्व मैं पूजा के लिए कोई पैसा देने की आज्ञा भी नहीं देती थी। तब मैंने कहा कि ''ठीक है हर पूजा के लिए एक पाई देना शुरु कीजिए,'' और इस प्रकार लोगों ने थोड़े–थोड़े पैसे देने शुरु किये जिसे धीरे–धीरे उन्होंने बढ़ा दिया। यह मैंने इसलिए किया क्योंकि मुझे पता था कि वो लोग ये नहीं जानते कि पूजा में चाँदी की वस्तुओं का प्रयोग किया जाता है। हर वस्तु पर मेरा नाम लिखा जाने लगा ताकि आपके पास रहते हुए भी आपको याद रहे कि वह मेरी सम्पत्ति है।

इस प्रकार हमारी समझ में यह आने लगा कि पूजा में एक विशेष प्रकार की धातु और विशेष प्रकार की विधि का प्रयोग करना है। इन धातुओं का हम पर एक विशेष प्रभाव होता है और किस धातु से आप पूजा करते हैं उसका भी एक विशेष प्रभाव होता है। यह सब अध्यात्म विज्ञान है और पूजा के उत्तम परिणाम प्राप्त करने के लिए, विज्ञान की तरह से ही, इसका ज्ञान होना हमारे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

इस तरह से पूजा का प्रारम्भ हुआ। मैं सोचती हूँ कि अब लोगों में पूजा की अच्छी समझ आ गई है। महाराष्ट्र में लोग पूजा विधि में बहुत कुशल हैं और इस विषय में उनसे तर्क करना अति कठिन है। उन्होंने कहा ''श्री माताजी हमारा आपको एक साड़ी भेंट करना उचित है।'' तो मैंने कहा ''आप मुझे एक साधारण साड़ी दें, मँहगी साड़ी मैं स्वीकार नहीं करूंगी।'' इस तरह से छोटी–छोटी वस्तुओं के लिए वे मुझ से तर्क करते रहे और फिर कहने लगे ''हम आपको नकली साड़ी भेंट नहीं कर सकते।'' मैंने उत्तर दिया ''ठीक है मुझे साड़ी भेंट करो या जो मर्जी।'' और अब आप इतनी मंहगी साड़ी देने लगे हैं। मैंने कई बार प्रार्थना पूर्वक आपको समझाने का प्रयत्न किया कि मैं अब वृद्ध हो गई हूँ और एक वृद्ध देवी को आप कोई साधारण वस्तु भेंट कर सकते हैं। परन्तु कोई इस बात को स्वीकार करने के लिए तैयार ही नहीं। देखें हम किस तरह इस मामले को निपटा पाते हैं। अत: इन बातों से कोई अन्तर नहीं पड़ता। परन्तु जिस कार्य को आप करना चाहते हैं, उसे कितना महत्व देते हैं। इससे अन्तर पड़ता है। यह बहुत महत्वपूर्ण है। परन्तु जिस कार्य को आप करना चाहते हैं, उसे पूर्ण चित्त, श्रद्धा तथा महत्व देना आवश्यक है। बिना उच्च प्राथमिकता दिए कार्य नहीं होता। बिना आवश्यक महत्व दिये कार्य सफल नहीं होता।

**यह समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है कि यदि आप पूजा से लाभान्वित होना चाहते हैं तो इसे सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी। पूजा से पूर्व यदि आपका मन**

**शैतानी या संदेह कर रहा है तो शांत हो जाने की आज्ञा दीजिए क्योंकि यह मन आपके विरुद्ध कार्य कर सकता है।**

अत: पूजा के लिए ग्रहणशील बन कर तैयार रहना है और इससे लाभान्वित होना है।

**प.पू.श्री माताजी, १८.१२.१९८९**

## पूजा के फल तथा आशिष के विषय में बताते हुए श्री माताजी :

''पूजा एक बाह्य भेंट है, परन्तु पूजा का प्रसाद और आशिष फल किस प्रकार प्राप्त करना है, इस का ज्ञान आपको होना चाहिए। पूजा या प्रार्थना का उदय आपके हृदय से होता है। मन्त्र आपकी कुण्डलिनी के शब्द हैं। परन्तु यदि पूजा हृदय से नहीं की गई और मंत्रोच्चारणा के साथ यदि कुण्डलिनी का सम्बन्ध नहीं जुड़ा तो पूजा केवल कर्मकाण्ड बन कर रह जाती है।''

पूजा में निर्विचार हो जाना, पूजा के साथ हृदय का पूर्णतया जुड़ा होना आवश्यक है। पूर्ण निष्कपटता से हृदय के साथ पूजा सामग्री को एकत्रित करें तथा भेंट करें। पूजा में भेट चढ़ाने के विषय में कोई दिखावा या बंधन नहीं होना चाहिए। हाथ धोना ठीक है, परन्तु क्या आपका हृदय भी स्वच्छ है? चित्त जब हृदय पर होता है तो यह अन्यत्र नही ंभटकता। यद्यपि आप बाहर से शांत होते हैं, आपके अन्तस में द्वन्द चल रहा होता है, अत: अधिक देर तक आपको मौन नहीं रहना है। यदि मनुष्य का हृदय स्वच्छ नहीं है तो मौन अति हानिकारक बन जाता है। परन्तु  अवांछित वार्तालाप भी महाविपत्ति का कारण बन सकता है।

पूजा में पूर्ण श्रद्धा से आप मंत्रोच्चारण कीजिए। श्रद्धा का कोई विकल्प नहीं है। गहन श्रद्धा उत्पन्न हो जाने पर ही आप पूजा करें ताकि स्वयं आपका हृदय सारी पूजा को करे। उस समय आशिष लहरियाँ बहने लगती हैं, क्योंकि आत्मा कहती है, ''इस समय कोई विचार कैसे आ सकता है?''

लोग अपने गिलास में मदिरा उड़ेलते हैं। आपकी पूजा भी उसी प्रकार की है। आपकी श्रद्धा भी मदिरा है, जिसे आप पूजा तथा मंत्रोच्चारण में उड़ेलते हैं। सब कुछ भूल कर जब वह सुरापान आप कर रहे होते हैं, तो किस प्रकार कोई विचार आपको आ सकता है और तब आनन्द का वर्णन शब्दों में कैसे किया जा सकता है? उस दैवी सुरा को विचाररूपी तुच्छ प्रकार के गिलास में पुन: कौन उड़ेलना चाहेगा?

इस दैवी सुरा पान करने का आनन्द सर्वदा विद्यमान रहने वाला तथा शाश्वत है। यही आपका वैभव बन जाता है। मेरी उपस्थिति में ऐसी बहुत सी पूजाएं हो चुकी हैं। हर बार एक महान लहर आकर आपको एक नये साम्राज्य में ले जाती है। ऐसे बहुत से साम्राज्यों का अनुभव आपका अपना हो जाता है। यह अनुभव आपके व्यक्तित्व को विशालता प्रदान कर आपके लिये आनन्द के नये द्वार खोल देते हैं।

**हृदय में पूजा करना सर्वोत्तम है। मेरी जिस तस्वीर को आप देख रहे हैं, उसे यदि हृदय-गम्य कर सकें या, पूजा के पश्चात इसकी झलक हृदय की गहराईयों में उतार सकें तो वह आनन्द जो आप उस समय प्राप्त करते हैं, शाश्वत तथा अनन्त बन सकता है। परमात्मा आपको आशिष प्रदान करें।**

**श्री माताजी की पूजा के समय पालन करने योग्य नियमाचरण।**

श्री माताजी की कृपा से और अनुभव द्वारा कुछ ऐसे मार्गदर्शक नियम बनाए गए हैं जिनका श्री माताजी की पूजा करते समय हम सभी को पालन करना चाहिए ताकि हमें पूजा का अधिकतम लाभ मिल सके। श्री माताजी की पूजा के कार्यक्रम का उचित स्थान एवं समय तो दैवी शक्ति स्वयं निश्चित करती हैं, इसलिए हमें अपनी ओर से पूजा के लिए किसी विशेष स्थान और समय पर बल नहीं देना चाहिए। इसके अतिरिक्त पूजा के स्थान पर सभी कार्य अत्यन्त शान्तिपूर्वक करने चाहिए।

सौभाग्यवश यदि हम जब साक्षात श्री माताजी की पूजा के समय उपस्थित हों तो हमें सदैव उनके आगमन से पूर्व ही पूजा के स्थान पर एकत्र हो बन्धन लेकर, ध्यान में बैठ जाना चाहिए। जब श्री माताजी पधारें तो सभी को उनके सम्मान में खड़े हो जाना चाहिए और उनके स्थान ग्रहण करने के उपरान्त ही बैठना चाहिए। पूजा में हमे लम्बे समय तक बैठना पड़ सकता है इसलिए अपने चित्त की एकाग्रता के लिए अच्छा होगा कि पूजा से पहले हम कुछ (भोजन आदि) खा लें और पूजा में ढीले, आरामदायक वस्त्र पहन कर बैठें।

सभी की ओर से केवल कुछ लोग ही श्री माताजी की पूजा करते हैं, इसलिए हमें यह सोचकर निराश नहीं होना चाहिए कि हम पूजा नहीं कर रहे। सहजयोग में सभी कुछ दैवी शक्ति द्वारा पूर्वनियोजित होता है, अत: प्रथम ग्रहण किया गया स्थान, बिना किसी विशेष कारण के, नहीं छोड़ना चाहिए और इस बात की चिन्ता नहीं करनी चाहिए कि हम श्री माताजी से दूर बैठे हैं। ईश्वर द्वारा प्रदत्त वह स्थान ईश्वर की खोज

में हमारी प्रगति के लिए उपयुक्त है। हमारी आन्तरिक गहनता श्री माताजी से हमारी शारीरिक निकटता से कहीं अधिक महत्वपूर्ण हैं।

सहजयोग सामूहिकता पर आधारित है और श्री माताजी पूजा के समय जो चैतन्य प्रवाहित करती हैं उससे पूजा के लिए चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से वे हमारे चक्रों की शुद्धि करती हैं।

इसके अतिरिक्त ऐसी पूजाओं द्वारा साधक कई अन्य शक्तियाँ प्राप्त कर सकता है। इसलिए पूजा के ऐसे अवसरों पर, इधर उधर की बातें सोचकर, बिना अपना समय व्यर्थ किए, हमें पूर्ण एकाग्रता से अपना चित्त श्री माताजी की पूजा में लगा कर पूजा का अधिकतम लाभ उठाने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए।

पूजा का हर क्षण बहुमूल्य होता है, अत: हर सहजयोगी को पूजा के ऐसे प्राप्त सुअवसरों से अधिकतम लाभ उठाने का प्रयत्न करना चाहिए।

ऐसी पूजा के समय सहजयोगियों को याद रखना चाहिए कि वे साक्षात आदिशक्ति के समक्ष बैठे हैं। अत: श्री माताजी की आज्ञा के बिना उन्हें आखें बन्द नहीं करनी चाहिएं। चित्त सदैव पूरी तरह से पूजा की ओर होना चाहिए और छोटी –छोटी परेशानियों के अनुभव के कारण चित्त की एकाग्रता भंग नहीं होनी चाहिए। **सहजयोगियों को चाहिए कि वे पूजा में ऐसे नए लोगों को लेकर न आएं जिन्होंने अभी श्री माताजी के दिव्य–स्वरूप को नहीं पहचाना क्योंकि इससे पूजा में चैतन्य प्रवाह पर असर पड़ सकता है।**

प्रत्येक व्यक्ति को हृदय से हर क्षण पूजा के कार्यक्रम में मग्न रहना चाहिए और चित्त द्वारा चैतन्य लहरियों को अधिकाधिक आत्मसात करने का प्रयत्न करना चाहिए। इससे न केवल हमारे व्यक्तिगत उत्थान में सहायता मिलती है बल्कि श्री माताजी के साकार रूप द्वारा प्रसारित चैतन्य लहरियों को ठीक से ग्रहण करने पर श्री माताजी को भी आराम मिलता है।

पूजा के उपरान्त, श्री माताजी की आज्ञा से, साधक श्री माताजी के दर्शन कर सकते हैं।

**श्री माताजी की आज्ञा के बिना कोई भी व्यक्ति श्री माताजी को न छुए। ऐसा करना दैवी–नियमाचरणों के विरुद्ध है।**

जब श्री माताजी पूजा के स्थान से प्रस्थान करती हैं तो प्रत्येक व्यक्ति को

उनके सम्मान में खड़े हो जाना चाहिए।

सहजयोगी को चाहिए कि जाने से पहले, यदि सम्भव हो, श्रद्धापूर्वक प्रसाद ग्रहण कर उसका आनन्दलाभ करें।

**श्री माताजी के फोटो के प्रति आवश्यक नियमाचरण**

श्री माताजी की तस्वीर हमारे घर में या अन्यत्र जहाँ भी स्थापित हो साक्षात श्री माताजी की प्रतीक है। अत: इसे पूर्ण सम्मान के साथ, सभी नियमाचरणों का पालन करते हुए रखना चाहिए। घर के किसी ऊँचे स्थान पर प्रतिष्ठापित कर श्री माताजी के फोटो को प्राय: इधर उधर नहीं करना चाहिए।

श्री माताजी का चित्र गृह सुसज्जित करने की वस्तु नहीं है अत: प्रतिदिन इसकी पूजा कर, पुष्पार्पण किया जाना चाहिए। फोटाग्राफ को गुलाब जल से साफ कर इस पर कुंकुम लगाया जाना चाहिए। प्रात: एवम् सायं श्री माताजी के चित्र के सम्मुख दीपक या मोमबत्ती जला कर मन्त्रोच्चारण करना वांछनीय (अभीष्ट) हैं।

भूल से, यहाँ तक कि नींद में भी श्री माताजी के चित्र की ओर पैर या टांगे नहीं फैलाई जानी चाहिए। यदि अनजाने से ऐसा हो जाये तो नम्रता पूर्वक क्षमायाचना की जानी आवश्यक हैं।

सामूहिक पूजा, ध्यान-धारणा, तत्पश्चात् आरती तथा मन्त्रोच्चारण के माध्यम से वहाँ विद्यमान रह कर हमारी पूजा को स्वीकार करने की प्रार्थना हम परम पूज्य श्री माताजी से करते हैं। अत: पूजा तथा आरती के पश्चात कुछ समय तक शांत रहकर श्रद्धा समर्पण के उस वातावरण को बनाये रखना आवश्यक है क्योंकि उस समय चैतन्य लहरियों से श्री माताजी की निराकार रूप में उपस्थिति प्रकट होती है। इस समय सहजयोगी शांति पूर्वक ध्यान मग्न रह कर श्री माताजी द्वारा आशिष रूप में भेजी गई चैतन्य लहरियों को अधिकाधिक आत्म-सात कर आनन्द प्राप्त करें।

सामूहिक पूजा तथा ध्यान के समय व्यक्तिगत मामलों या जो मामले सहजयोग से सम्बन्धित न हों, पर बातचीत न करें क्योंकि ऐसा करने से हमारा चित्त लक्ष्य से भटक जाता हैं।

पूजा के पश्चात बंधन लें, यह चैतन्य लहरियों का कवच है जो हमारी रक्षा करता है। अत: निर्विचारिता में रहकर श्री माताजी के प्रति पूर्ण सम्मान तथा श्रद्धा पूर्वक बंधन लेना चाहिए। सन्तुलित तथा निर्विचार रहने के लिए हमें अपनी कुंडलिनी

ऊपर उठानी चाहिए। इस क्रिया के अभ्यास से अन्तर्ध्यान मात्र (केवल चित्त को अन्दर ले जा कर) होने से हमारी कुंडलिनी उत्थित हो जायेगी ।

**पूजा के लिए क्या आवश्यक है ?**

अब तक आपको यह ज्ञान प्राप्त हो चुका है कि श्रद्धा तथा निर्विचार समाधि के अतिरिक्त कुछ भी आवश्यक नहीं। पूजा उत्सव एक ऐसी मधुर अभिव्यक्ति है जो मनुष्यों को अर्पण तथा ग्रहण करने का नाटक करने की आज्ञा देती है। कहावत

**''परमात्मा सौ गुना लौटाते हैं!''**

प्रकट करती है कि ईश्वर अधीर हैं कि हम लोग यह अर्पण करने का नाटक करें क्योंकि परमात्मा हमें अपनी कृपा तथा प्रेम में नहला देने के लिए अति उत्सुक हैं।

आप इस प्रलेख को तीन प्रक़ार से प्रयोग कर सकते हैं:–

१. साक्षात, श्री माताजी के समक्ष, एक विशेष पूजा के लिए स्वयं को तैयार करने के लिए।

२. उन सहजयोग केन्द्रों के पथ–प्रदर्शक के रूप में जो किसी विशेष अवसर पर सामूहिक पूजा करना चाहते हों।

३. घर पर एक साधारण पूजा के पथ –प्रदर्शक के रूप में।

पहला मार्ग पूर्ण उत्सव है जो मानव को श्री माताजी के समक्ष एक विशेष पूजा के लिए स्वयं को तैयार करने की आज्ञा देता है। भेंट जो चढ़ाई जाती है, महत्वहीन नहीं होती। पूजा और मंत्र बनाने वाले ऋषियों को ज्ञान था कि वे क्या कर रहे हैं, और श्री माताजी ने नियमाचरण बनाये हैं। इससे ज्ञात होता है कि पूजा विधि में बड़ा लचीलापन है तथा परिस्थितियों के प्रति अनुकूलन–शीलता है (एडाप्टेबिलिटी)

पूजा करने का अभिप्राय यह होता है कि लोग उन देवताओं को प्रसन्न कर सकें जिनकी पूजा श्री माताजी के समक्ष की जाती है, कोई भी कर्मकाण्ड लहरियों के ज्ञान तथा कृपा अनुभूति का स्थान नहीं ले सकता। इसके विपरीत कर्मकाण्ड लहरियों के विरुद्ध कार्य करता है। यद्यपि हम अपनी माँ ''श्री माताजी'' से प्रेम करते हैं, फिर भी बिना सम्मान भावना के परमात्मा की पूजा नहीं हो सकती। अत: सम्मान तथा नियमाचरणों, की आवश्यकता है। परमात्मा के प्रति जितनी अधिक श्रद्धा तथा प्रेम हममें है उतना ही अधिक सम्मान हमसे प्रकट होता है। प्रारम्भ करने के लिए प्रथम आवश्यकता इस समारोह की खोज तथा इसके विषय में पढ़ना है।

दूसरे स्थान पर यह प्रलेख उन केन्द्रों के लिए पथ–प्रदर्शक है जो किसी विशेष अवसर पर सामूहिक पूजा करना चाहते हैं। इस कार्यविधि का नियमपूर्वक अनुसरण महत्वपूर्ण है। इस के कुछ भाग छोड़े भी जा सकते हैं, भजन गाना या मौन रहना या श्री माताजी के नामों का उच्चारण हमारी इच्छानुसार है क्योंकि ये सब कार्य भी स्वयं में अर्पण स्वरूप ही हैं।

तीसरे स्थान पर घर में साधारण पूजा है। श्री माताजी के चरण कमलों को सामान्य रूप से धोना, इत्र व पुष्प भेट करना एक या दो मंत्र उच्चारण करना, दीपक और अगरबत्ती जलाना पर्याप्त है।

**प.पू.श्री माताजी, चैतन्य लहरी, १९९१, खण्ड १**

माँ ही कर्ता, माँ ही भोक्ता;
– श्रद्धा का है सार यही।

जाहि विधि राखे ताहि विधि रहिये,
– पूर्ण समर्पण भाव यही।

ढाई आखर प्रेम पढ़े जो
– ज्ञानी पण्डित होवे सोय।

इधर–उधर क्यों खोजे बंदे,
– माँ तो तेरे अन्दर होय।

## श्री मातृ–वंदना

आदिशक्ति जग जननी माँ,
'निर्मल' बन धरती पर आईं।
'सहजयोग' का सुधा कलश वे,
अपने बच्चों के हित लाईं।।

'पुनर्जन्म' देना है सबको,
'माँ' रूप इस कारण आईं।
शुद्ध कामना; ध्यान–धारणा,
सहज ज्ञान वे लेकर आईं।।

सहज भाव से, सहज मार्ग पर,
पूर्ण समर्पण से सब आओ।
रोग–शोक–चिन्ताओं से फिर,
सहजयोग में मुक्ति पाओ।।

सहजयोग ही महायोग है,
कलियुग का वरदान यही।
आओ करें 'मातृ–वन्दना',
' माँ निर्मल' अनुदान यही।।

जय श्री माताजी

विनीत – डॉ.सरोजिनी अग्रवाल, लीला अग्रवाल

## सर्वाधिकार सुरक्षित

बिना पूर्व आज्ञा के इस पुस्तक के किसी भी भाग की प्रतिलिपि या किसी भी रूप में प्रसारण वर्जित है। कोई भी व्यक्ति अनधिकृत रूप से यदि इसका प्रकाशन करता है तो उस पर हानिपूर्ति का दावा किया जाएगा।

- ओ मेरे बच्चो, वास्तव में आप मेरे सहस्रार से जन्मे हैं। अपने हृदय में मैंने आपका गर्भ धारण किया और ब्रह्मरन्ध्र से आपको पुनर्जन्म दिया। मेरे प्रेम की गंगा आपको सामूहिक चेतना के साम्राज्य में लाई है।

यह प्रेम मेरे मानवीय शरीर से कहीं महान है। यह आपका पोषण करता है, आपको शान्त करता है और सुरक्षा प्रदान करता है। शनैः शनैः यह आपकी चेतना को दिव्य आनन्द के योग्य बनाता है। परन्तु यह प्रेम आपको सुधारता भी है और आपमें काट-छाँट भी करता है। यह आपका पथ-प्रदर्शन करता है, दिशा-निर्देश देता है, सच्चे ज्ञान के रूप में प्रकट होता है। यह आपके सदमों को झेलता है और पथप्रदर्शक-पत्ते की तरह आपको सत्य की कठोर धरातल पर स्थापित करता है। आध्यात्मिक बुलंदियों पर पहुँचने की आपकी आकांक्षाओं को पूर्ण करने के लिए यह शक्ति प्रदान करता है।

प.पू.माताजी श्री निर्मला देवी